* श्रीनेमिनाथाय नमः *

जिनवाणी संग्रह

अर्थात्

बृहद् जैन सिद्धान्त संग्रह।

सम्पादक—

व्याकरण रत्न, पं० सतीशचन्द्र जैन, न्यायतीर्थ।

पं० कस्तूरचंद छावड़ा "विशारद"

प्रकाशक—

दुलीचंद पन्नालाल, परवार

मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

बड़ाबाजार, कलकत्ता।

द्वितीय संस्करण १५०० | दीपावली २४५२ | मूल्य सवा दो रुपया।

प्रकाशक—
दुलीचंद पन्नालाल परवार
मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,
पो० ब० ६७४८ कलकत्ता।

प्रथम खंड हनुमान प्रेसमें तथा द्वितीय खंड
लक्ष्मीप्रिंटिंग वर्क्स प्रेसमें छपा है।

मुद्रक :—
भोलानाथ बर्म्मन
लक्ष्मी प्रिंटिंग वर्क्स,
२८०, अपरचितपुर रोड, कलकत्ता।

प्रकाशकीय वक्तव्य।

बंधुओ! हम आपकी गहरी सहानुभूतिका अनुभव करते हुए सिर्फ तीन हो महिनेमें यह द्वितीयावृत्ति लेकर सेवामें उपस्थित होरहे हैं। हमें स्वप्नमें भी ऐसी आशा नहीं थी कि आप लोग इतना प्रेम दिखावेंगे। सिर्फ २-२॥ महिनेमें प्रथमावृत्ति खप गई, यह आनंद की बात है। इस नई आवृत्तिमें हमने अरहंतपाशा केवली, शिखर महात्म्य, विद्यावती कृत अनेक पद, संसार दुःख दर्पण, अठारह नाते की कथा आदि और भी बहुतसे आवश्यक विषयोंका समावेश कर दिया है। इससे संग्रह की महत्वता और भी बढ़ जाती है।

जिन जिन महाशयोंके प्रकाशित विषयोंका हमने इसमें समावेश कर दिया है उन उन महाशयोंके प्रति हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

श्रीमान् परोपकारी बन्धु बा० छोटेलाल जी जैन एम० आर० ए० एस० ने सदैवकी भांति अपनी शुभ सम्मति द्वारा हमें पूर्ण सहायता दी है इस महित्ती कृपाके लिये कृतज्ञ हैं।

सम्पादक महाशयोंको भी हम धन्यवाद दिये बगैर नहीं रह सके कि जिनने अपना अमूल्य समय दे कर हमें उपकृत किया है।

प्रथमावृत्ति की आलोचना जैनमित्र, जैनजगत, परवार बन्धु, खंडेलवाल जैन हितेच्छु आदि प्रसिद्ध पत्रोंने विस्तृत रूपसे खूब ही उत्तम की थी इस कृपाके लिये भी कार्यालय उनका आभारी है। आशा है आप सज्जन इसी तरह कृपा दृष्टि रखेंगे।

दीपावली—वीर सं० २४५२

निवेदक—
जीवन्द पन्नालाल, देवरी सागर

बड़ाभारी सुभीता ।

१) एक रुपया प्रवेश फी जमा करादेने से हम अपने छपाये तमाम ग्रन्थ पौनी कीमत में दिया करते हैं। नवीन ग्रन्थ जब तैयार होता है बराबर १५ दिन पहिले खबर दी जाती है, जिन्हें नहीं लेना होता है उनका पत्र आनेसे नहीं भेजा जाता। अब बताइये कितना लाभ है ?

आजही पत्र लिखकर ग्राहक बन जावें अगर आप स्वयं ग्राहक हों तो अपने इष्ट मित्रों को बनाने की कृपा करें।

"मैनेजर"

समर्पण

जैनधर्म और जैन जातिके परम उपकारी श्रीमान् जैनधर्म-
भूषण, धर्मदिवाकर श्रीब्रह्मचारी शीतलप्रशादजी
सम्पादक—"जैनमित्र और वीर"
के :—

कर कमलों में तुच्छ भेंट यह सादर अर्पण करता हूं।
जैनधर्मके नावक पर यह प्रेम पुष्प सर धरता हूं॥
प्रेम आपसे बाल वृद्ध, गुण मुग्ध, सभ्य जन करते हैं।
धर्म स्वरूप समझ कर सच्चा सत्य सौख्य यश भरते हैं॥
हे शांत हृदय! अब पूज्यवर कृपया इसे अपनाइये।
कर कमलों में ग्रहण कर सत्य मार्ग दिखलाइये॥

विनीत—
"सम्पादक"

मंदिरों के लिये बड़ाभारी सुभोता।

काश्मीरी केशर।

पवित्र केशर हमारे यहां हर समय तैयार रहती है बहुत ही कम नफा लेकर भेजी जाती है एक वार परीक्षा अवश्य कीजिये। ३) तोला।

स्फटिक की मालायें।

चमकती हुई सुन्दर मालायें, हमारे यहां से मंगाईये। १) की ४ तथा २५) रुपया सैकड़ा।

दशांग धूप।

पवित्रता के साथ तैयार की हुई यह दशांग धूप बहुत ही उत्तम और सुगंधित है दाम ५) रुपया सेर आधपाव का डब्बा ॥≈)

हमारा पता—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

बड़ाबाजार—कलकत्ता।

विषय-सूची

प्रथम खंड

नं०	नाम	पृष्ठ
१,	णमोकार मंत्र ...	१
२,	णमोकारमंत्रका माहात्म्य	१
३,	पंच परमेष्ठी नाम	२
४,	चौवीस तीर्थङ्करोंके नाम	२
५,	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	३
६,	द्रव्य संग्रह ...	१७
७,	अद्याष्टक स्तोत्र	२०
८,	दृष्टाष्टक स्तोत्र	२१
९,	सुप्रभात स्तोत्र ...	२२
१०,	मोक्ष शास्त्र ...	२३
११,	जिन सहस्रनाम	३५
१२,	एकीभाव स्तोत्र (सं०)	४४
१३,	स्वयंभू स्तोत्र (भाषा)	४७
१४,	निर्वाणकांड (गाथा)	५०
१५,	निर्वाणकांड (भाषा)	५१
१६,	महावीराष्टक (संस्कृत)	५३
१७,	महावीराष्टक (भाषा)	५४
१८,	अकलङ्क स्तोत्र (सं०)	५५
१९,	भक्तामर स्तोत्र (सं०)	५८
२०,	कल्याणमंदिर सं०	६३
२१,	कल्याण मंदिर भा०	६८
२२,	विषापहार स्तोत्र	७२
२३,	एकीभाव स्तोत्र भा०	७५
२४,	इष्ट छत्तीसी (अर्थ सहित) ...	७९
२५,	दर्शन पाठ ...	८६
२६,	दौलत-कृत स्तुति	८९
२७,	बुधजनकृत स्तुति	९१
२८,	जिनवाणीकी स्तुति	९२
२९,	पञ्चपरमेष्ठी आरती	९३

नं०	नाम	पृष्ठ
३०,	आलोचना पाठ	८४
३१,	पंच मङ्गल रूपचंद	८७
३२,	छहढाला (दौलत)	१०४
३३,	सामायिक पाठ (भाषा) ...	११५
३४	सामायक पाठ (सं०)	१२०
३५	आरती संग्रह (दीपचन्द) ...	१२३
३६	चेतन सुमतिकी होली	१२५
३७	आसाराम कृत होली	,,
३८	मानिक कृत ,,	,,
३९	गंगा कवि कृत ,,	१२६
४०	मेवाराम कृत ,,	,,
४१	मानिक कृत ,,	१२७
४२	दौलत कृत ,,	,,
४३	इंग्लिश शिक्षा पर होली	,,
४४	तीर्थंकरोंकी स्तुति प्रभाती	
४५	जवाहर कृत ,,	,,
४६	प्रभाती दौलत कृत	१२८
४७	,, ,,	,,
४८	णमोकार महिमा ,,	१२९
४९	प्रभाती भागचंद कृत	१३०
५०	प्रभाती जैनदास कृत	१३०
५१	,, भवानी कृत	,,
५२	भजन मानिक कृत	१३१
५३	खम्माच नवल कृत	,,
५४	झंझोटी मोहनलाल कृत	,,
५५	राग देश विहारी कृत	१३२
५६	भजन मानिक कृत	,,
५७	रेखता हीरालाल कृत	,,
५८	गजल हजारी कृत	१३३
५९	लावनी ,,	,,
६०	भजन संग्रह	१३४
६१	परमार्थ जकड़ी दौलत	१३६
६२	,, राम कृष्ण कृत	१३७
६३	,, (दौलत)	१३८
६४	फूलमाल पचीसी	१४२
६५	पुकार पच्चीसी ...	१४५
६६	कृपण पच्चीसी	१४८
६७	उपदेश ,,	१५४
६८	धरम ,,	१५६
६९	अध्यातम ,,	१५९
७०	जिन गिरास्तवन	१६२
७१	जिनदर्शन	१६३

नं०	नाम	पृष्ठ
७२	जिनवर पच्चीसी	१६४
७३	सूतक निर्णय	१६८
७४	जिन गुण मुक्तावली	१७१
७५	सुवा बत्तीसी	१७४
७६	नामावली स्तोत्र	१७७
७७	हुक्का निषेध	१७८
७८	नेमि व्याह	१८१
७९	लावनी (मानिक)	१८३
८०	वेश्या कुटलाई	१८४
८१	प्रतिमा चालीसी	१८५
८२	समुच्चय पूजा	१९०
८३	चंद्रप्रभू जिन पूजा	,, १९२
८४	शांतिनाथ पूजा	,, १९७
८५	पार्श्वनाथ पूजा	,, २००
८६	महावीर स्वामी	२०५
८७	मेरी भावना	२०७
८८	अरहंत पाशा केवली	२०९
८९	शिखर माहात्म्य	२२७
९०	मोहरस स्वरूप—	२३६
९१	लेश्या स्वरूप—	२३७
९२	कुदेवादिकीसेवाकाफल	२३७
९३	भोजनोंको प्रार्थनाएं	२३८
९४	माताकापुत्रीकोउपदेश	,,
९५	किसकाजन्मसफल है	२४०
९६	जीव प्रति उपदेश	२४०

दूसरा खण्ड।

नं०	नाम	पृष्ठ
१	दुखहरण बिनती	२४१
२	जिनेन्द्र स्तुति	२४३
३	विनती भूधर कृत	२४४
४	विनती ,,	२४५
५	बिनती (नाथूरामजी)	२४६
६	विनती (भूधर)	२४७
७	धारें भाषा	२४८
८	प्रातःकाल स्तुति	२४९
९	सायंकाल स्तुति	२५०
१०	संकट हरण विनती	२५१
११	स्तोत्र भूधरदास कृत	२५४
१२	अरहंत परमेष्ठी मङ्गल	२५६

नं०	नाम	पृष्ठ
१३	श्रीसिद्ध परमेष्ठीमङ्गल	२५८
१४	श्रीआचार्यपरमेष्ठीमङ्गल	२६०
१५	उपाध्याय परमेष्ठी "	२६३
१६	साधु परमेष्ठी मंगल	२६४
१७	बारहमासा सीताजी	२६७
१८	बाईस परिषह	२६९
१९	बारहमासाश्रीमुनिराज	२७४
२०	बाईसपरिषह(रत्नचन्द)	२७८
२१	बारह मासा राजुल	२८२
२२	बारह भावना (भैया)	२८८
२३	बारह भावना (भूधर)	२८९
२४	बारह भावना(बुधजन)	२९०
२५	बारह भावना (रत्नचन्द)	२९२
२६	वैराग्य भावना	२९५
२७	समाधिमरण	२९७
२८	अठारह नाते	२९९
२९	,, कथा	३०१
३०	तीर्थंकरोंके चिन्ह	३०४
३१	बारह चक्रवर्ती	३०५
३२	नवनारायण	,,
३३	नव प्रतिनारायण	,,
३४	बलभद्र	,,
३५	नव नारद	३०६
३६	ग्यारह रुद्र	,,
३७	चौबीस कामदेव	,,
३८	चौदह कुलकर	,,
३९	बारह प्रसिद्ध पुरुष	,,
४०	विदेहके २० तीर्थङ्कर	३०७
४२	भविष्यकी चौबीसी	,,
४३	गुण स्थान	३०८
४४	सोलह कारण भावना	,,
४५	श्रावकोंके उत्तर गुण	,,
४६	श्रावकको ५३ क्रिया	,,
४७	ग्यारह प्रतिमाओंका स्वरूप	३१०
४८	श्रावकोंके १७ नियम	३१२
४९	सात व्यसनका त्याग	३१३
५०	बाईस अभक्ष्यका त्याग	,,
५१	श्रावकके षट कर्म	,,
५२	दश लक्षण धर्म	३१३
५३	लघु अभिषेक पाठ	३१३
५४	विनय पाठ	३१७
५५	देवशास्त्र गुरुकी पूजा	३१९

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
५६	बीस तीर्थंकर पूजा	३२२	७८	रविव्रत पूजा	३७५
५७	अकत्रिमचैत्यालयोंका	३२६	७९	पावापुरसिद्धक्षेत्रपूजा	३७९
५८	सिद्ध पूजा	३२७	८०	चम्पापुरजी क्षेत्रपूजा	३८१
५९	सिद्धपूजा भावाष्टक	३३१	८१	जन्म कल्याणक पूजा	३८४
६०	सोलह कारणकाअर्घ	३३२	८२	सम्मेद शिखर विधान	३८७
६१	दश लक्षण धर्मकाअर्घ	;,	८३	दीपमालिका विधान	३९९
६२	रत्नत्रयका अर्घ	;,	८४	खंडगिरीक्षेत्र पूजा	४०५
६३	सोलह कारण पूजा	३३३	८५	आराधना पाठ	४०६
६४	दशलक्षण धर्मपूजा	३३५	८६	शान्ति पाठ	४१०
६५	पंच मेरु पूजा	३४१	८७	भाषा स्तुति पाठ	४११
६६	रत्नत्रय पूजा	३४३	८८	सुगंधदशमी व्रतकथा	४१३
६७	दर्शन ,,	३४४	८९	अनंत चौदशव्रत कथा	४१६
६८	ज्ञान ,,	३४६	९०	रत्नत्रय व्रत कथा	४१९
६९	चारित्र ,,	३५०	९१	दश लक्षण व्रत कथा	४२२
७०	नन्दीश्वर,,	,,	९२	मुक्तावली व्रत कथा	४२५
७१	निर्वाण क्षेत्र पूजा	३५२	९३	पुष्पांजलि व्रत कथा	४२८
७२	देव पूजा	३५५	९४	नंदीश्वर व्रत कथा	४३१
७३	सरस्वती पूजा	३५८	९६	निशि भोजन कथा	४३६
७४	गुरु पूजा	३६१	९७	रविव्रतकथा	४३८
७५	मक्शी पार्श्वनाथपूजा	३६४	९८	जेष्ठजिनवर कथा	४४०
७६	गिरनार क्षेत्र पूजा	३६७	९९	शील माहात्म्य	४४२
७७	सोनागिरि सिद्ध क्षेत्र	३७२	१००	चेतन चरित्र	४४४

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
१०१	दौलत कृत पद	४४७	११०	पार्श्व पूजन	४५२
१०२	पद (बुधजन कृत)	,,	१११	राजुल वैराग्य	४५२
१०३	पद भूधर कृत	४४८	११२	जीवनकी चार पर्यायें	४५२
१०४	गजल न्यामत कृत	४४८	११३	धर्म निष्ठा	४५३
१०५	अटलनियमभूरामलजी	४४८	११४	पर्यूषण पर्व भजन	४५३
१०६	दश अभिलाषा	४५०	११५	गुर्वावली	४६१
१०७	जैन महत्व	४५०	११६	मंगलाष्टक	४६२
१०८	नारी भूषण	४५१	११७	लावनी तीर्थंकरचिन्ह	४६३
१०८	हमारा कर्त्तव्य	४५१	११८	संसार दुखदर्पण	४६४

चित्र परिचय।

श्री १०८ पूज्य आचार्य शान्तिसागरजी महाराज एक दिन सामायक कर रहे थे कि एक बड़ा भारी सर्प उनके ऊपर चढ़ गया, परन्तु आचार्यजी महाराज ध्यानमें लीन ही रहे आये। यह दृश्य कई महाशयोंने अपनी आंखों देखा है।

"प्रकाशक"

* श्रीपरमात्मने नमः *

जिनवाणी संग्रह

पहला अध्याय

१ णमोकार मंत्र

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।

इस णमोकार मन्त्रमें पांच पद, पैंतीस अक्षर, अट्ठावन मात्राएं हैं॥

२ णमोकार मन्त्रका माहात्म्य

णमोकार है मंत्र सर्व पापोंका हर्ता।
मंगल सबसे प्रथम यही शुचि ज्ञान सुकर्ता॥
संसार सार है मन्त्र जगतमें अनुपम भाई।
सर्व पाप अरिनाश मंत्र सबको सुखदाई॥ १॥
संसार छेदके लिये मन्त्र है सर्व प्रधाना।
विषको अमृत करे जगतने यह सब माना॥
कर्म नाश कर ऋद्धि सिद्धि शिव सुखका दाता॥
मंत्र प्रथम जिन मंत्र सदा तू क्यों नहिं ध्याता॥२॥

सुर सम्पत्ति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती।
सर्व विपत्ति विनाश ज्ञानकी ज्योती होती॥
पशु पक्षी नर नारि श्वपच जो धारण करते।
ज्ञान, मान, धन, धान्य और सुख सम्पति भरते।
जीवन्धर थे स्वामि एक जन करुणा धारी।
कुत्तेको दे मन्त्र शीघ्र गति भली सुधारी॥
मंत्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये।
ध्याये जो जन उसे सर्व सुख हों मनचाये॥४॥

"सतीश"

३ पञ्च परमेष्ठीके नाम

अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधु।
ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा। ॐ नमः सिद्धेभ्यः॥

नोट—अ सि आ उ सा नाम पञ्च परमेष्ठीका है। ॐ में पञ्च परमेष्ठीके नाम ही २४ तीर्थङ्करोंके नाम गर्भित हैं।

४ चौबिस तीर्थंकरोंके नाम

१ ऋषभदेव,	२ अजितनाथ,	३ संभवनाथ,
४ अभिनन्दननाथ,	५ सुमति नाथ,	६ पद्मप्रभ,
७ सुपार्श्वनाथ:	८ चन्द्रप्रभ,	९ पुष्पदन्त,
१० शीतलनाथ,	११ श्रेयांशनाथ,	१२ वासुपूज्य,
१३ विमलनाथ,	१४ अनन्तनाथ,	१५ धर्मनाथ,
१६ शांतिनाथ,	१७ कुन्थुनाथ,	१८ अरनाथ,
१९ मल्लिनाथ,	२० मुनिसुव्रतनाथ,	२१ नमिनाथ,
२२ नेमिनाथ,	२३ पार्श्वनाथ,	२४ वर्द्धमान।

श्रीसमन्तभद्र स्वामी विरचित।

५ श्रीरत्नकरण्ड श्रावकाचार

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्धूतकलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्यादर्पणायते ॥ १ ॥
देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणम्।
संसारदुःखतः सत्वान्यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥
सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः।
यदीयप्रत्यनीकानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ ३ ॥
श्रद्धानं परमार्थानां माऽऽप्तागमतपोभृताम्।
त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥
आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना।
भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥ ५ ॥
क्षुत्पिपासाजरातङ्कजन्मांतकभयस्मयाः।
न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥ ६ ॥
परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती।
सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥
अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सतो हितम्।
ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरजः किमपेक्षते ॥ ८ ॥
आप्तोपज्ञमनुल्लङ्घ्यमदृष्टेष्टविरोधकम्।
तत्वोपदेशकृत्सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥ ९ ॥
विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः।
ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥ १० ॥

इदमेवेदृशमेव तत्वं नान्यन्न चान्यथा।
इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसंशया रुचिः ॥ ११ ॥
कर्मपरवशे सांते दुःखैरन्तरितोदये।
पापबीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकाङ्क्षणा स्मृता ॥ १२ ॥
स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते।
निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्मता निर्विचिकित्सिता ॥ १३ ॥
कापथे पथि दुःखानां कापथस्थेऽप्यसम्मतिः।
असंपृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा दृष्टिरुच्यते ॥ १४ ॥
स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयाम्।
वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगूहनम् ॥ १५ ॥
दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलैः।
प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितिकरणमुच्यते ॥ १६ ॥
स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथापेतकैतवा।
प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं वात्सल्यमभिलप्यते ॥ १७ ॥
अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम्।
जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥ १८ ॥
तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनन्तमतीस्मृता।
उद्दायनस्तृतीये ऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥
ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः।
विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥ २० ॥
नाङ्गहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिम्।
न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहन्ति विषवेदनाम् ॥ २१ ॥
आपगासागरस्नानमुच्चयः सिकताश्मनाम्।

गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥
वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः ।
देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥ २३ ॥
सग्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्त्तवर्त्तिनाम् ।
पाखण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम् ॥ २४ ॥
ज्ञानं पूजां कुलं जातिं वलमृद्धिं तपो वपुः ।
अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥ २५ ॥
स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः ।
सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना ॥ २६ ॥
यदि पापनिरोधोऽन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ।
अथ पापास्रवोऽस्त्यन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ॥ २७ ॥
सम्यग्दर्शनसम्पन्नमपि मातङ्गदेहजम् ।
देवा देवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसम् ॥ २८ ॥
श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकिल्विषात् ।
कापि नाम भवेदन्या सम्पद्धर्माच्छरीरिणाम् ॥ २९ ॥
भयाशास्नेहलोभाच्च कुदेवागमलिंगिनाम् ।
प्रणामं विनयं चैव न कुर्युः शुद्धदृष्टयः ॥ ३० ॥
दर्शनं ज्ञानचारित्रात्साधिमानमुपाश्नुते ।
दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्ष्यते ॥ ३१ ॥
विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः ।
न सन्त्यसति सम्यक्त्वे वीजाभावे तरोरिव ॥ ३२ ॥
गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् ।
अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥ ३३ ॥

न सम्यक्त्वसमं किञ्चित्त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि ।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ॥ ३४ ॥
सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ्नपुंसकस्त्रीत्वानि ।
दुष्कुलविकृताल्पायुर्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः ॥ ३५ ॥
ओजस्तेजोविद्यावीर्य्ययशोवृद्धिविजयविभवसनाथः ।
महाकुला महार्था मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः ॥ ३६ ॥
अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः ।
अमराप्सरसां परिषदि चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे ॥ ३७॥
नवनिधिसप्तद्वयरत्नाधीशाः सर्वभूमिपतयश्चक्रम् ।
वर्तयितुं प्रभवन्ति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ॥ ३८ ॥
अमरासुरनरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः ।
दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः॥३९॥
शिवमजरमरुजमक्षयमव्याबाधंविशोकभयशङ्कम् ।
काष्ठागतसुखविद्याविभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः ॥४०॥

देवेन्द्रचक्रमहिमानममेयमानम्
राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्रशिरोर्चनीयम् ।
धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकम्
लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः ॥ ४१ ॥

अन्यूनमतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात् ।
निःसन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥ ४२ ॥
प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यम् ।
बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः ॥ ४३ ॥
लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च ।

आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥
गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम् ।
चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥ ४५ ॥
जीवाजीवसुतत्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च ।
द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥ ४६ ॥
मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभदवाप्तसंज्ञानः ।
रागद्वेषनिवृत्त्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥
रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्त्तना कृता भवति ।
अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥
हिंसानृतचौर्य्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च ।
पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रम् ॥ ४९ ॥
सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानाम् ।
अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानाम् ॥ ५० ॥
गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणशिक्षाव्रतात्मकं चरणम् ।
पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासङ्ख्यमाख्यातम् ॥ ५१ ॥
प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्च्छेभ्यः ।
स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥
सङ्कल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान् ।
न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥
छेदनबन्धनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः ।
आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पञ्च ॥ ५४ ॥
स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे ।
यत्तद्वदन्ति सन्तः स्थूलमृषावादवैरमणम् ॥ ५५ ॥

परिवादरहोभ्याख्या पैशुन्यं कूटलेखकरणं च ।
न्यासापहारितापि च व्यतिक्रमाः पञ्च सत्यस्य ॥ ५६ ॥
निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं ।
न हरति यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणम् ॥ ५७ ॥
चौरप्रयोगचौरार्थादान विलोपसदृशसन्मिश्राः ।
हीनाधिकविनिमानं पञ्चास्तेये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥
न तु परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत् ।
सा परदारनिवृत्तिः स्वदारसन्तोषनामापि ॥ ५९ ॥
अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषः ।
इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पञ्च व्यतीचाराः ॥ ६० ॥
धनधान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता ।
परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥ ६१ ॥
अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि ।
परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पञ्च लक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥
पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकम् ।
यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥
मातंगो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः ।
नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमम् ॥ ६४ ॥
धनश्रीसत्यघोषौ च तापसा रक्षकावपि ।
उपाख्येयास्तथा श्मश्रुनवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥
मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकम् ।
अष्टौमूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥ ६६ ॥
दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणम् ।

अनुबृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ६७ ॥
दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि ।
इतिसङ्कल्पो दिग्व्रतमामृत्यणुपापविनिवृत्यै ॥ ६८ ॥
मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्य्यादाः ।
प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥
अवधेर्बहिरणुपापप्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम् ।
पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥
प्रत्याख्यानतनु त्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः ।
सत्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥ ७० ॥
पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचः कायैः ।
कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महताम् ॥ ७२ ॥
ऊर्द्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनाम् ।
विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पंच मन्यन्ते ॥ ७३ ॥
अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः ।
विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥ ७४ ॥
पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पञ्च ।
प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥ ७५ ॥
तिर्य्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम् ।
कथाप्रसङ्गप्रसवःस्मर्त्तव्यः पाप उपदेशः ॥ ७६ ॥
परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधश्टङ्गश्टङ्खलादीनाम् ।
वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥ ७७ ॥
वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः ।
आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥ ७८ ॥

आरम्भसङ्गसाहसमिथ्यात्वरागद्वेषमदमदनैः ।
चेत कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥ ७६ ॥
क्षितिसलिलदहनपवनारम्भविफलं वनस्पतिच्छेदं ।
सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥ ८० ॥
कन्दर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च ।
असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥ ८१ ॥
अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् ।
अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥ ८२ ॥
भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः ।
उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ८३ ॥
त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये ।
मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८४ ॥
अल्पफलबहुविघातान्मूलकफलमार्द्राणि शृङ्गावेराणि ।
नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥ ८५ ॥
यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात् ।
अभिसन्धिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद्व्रतं भवति ॥ ८६ ॥
नियमो यमश्च विहितौ द्वेधा भोगोपभोगसंहारे ।
नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८७ ॥
भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु ।
ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥
अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्त्तुरयनं वा ।
इति कालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ८९ ॥
विषयविषतोऽनुपेक्षानुस्मृतिरतिलौल्यमतितृषाऽनुभवो ।

भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमा पञ्च कथ्यन्ते ॥ ९० ॥
देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा ।
वैयावृत्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ९१ ॥
देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य ।
प्रत्यहमणुव्रतानां प्रति संहारो विशालस्य ॥ ९२ ॥
गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च ।
देशावकाशिकस्य स्मरन्ति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥ ९३ ॥
संवत्सरमृतुरयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च ।
देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ ९४ ॥
सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपञ्चपापसंत्यागात् ।
देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥ ९५ ॥
प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ ।
देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च ॥ ९६ ॥
आसमयमुक्ति मुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन ।
सर्वत्र च सामयिकाः सामयिकं नाम शंसन्ति ॥ ९७ ॥
मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यंकबन्धनं चापि ।
स्थानमुपवेशनं वा समयं जानन्ति समयज्ञाः ॥ ९८ ॥
एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च ।
चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥ ९९ ॥
व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्यामन्तरात्मविनिवृत्या ।
सामयिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥ १०० ॥
सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं ।
व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ १०१ ॥

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेपि ।
चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १०२ ॥
शीतोष्णदंशमशकपरीषहमुपसर्गमपि च मौनधराः ।
सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ १०३ ॥
अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम् ।
मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥
वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे ।
सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥
पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु ।
चतुरभ्यवहार्य्याणां प्रत्याख्यानं सदेच्छाभिः ॥ १०६ ॥
पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणाम् ।
स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्य्यात् ॥ १०७ ॥
धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान् ।
ज्ञानध्यानतपो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ १०८ ॥
चतुराहारविसर्ज्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः ।
स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥
ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे ।
यत्प्रोषधोपवासव्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदम् ॥ ११० ॥
दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये ।
अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥
व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात् ।
वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम् ॥ ११२ ॥
नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन ।

अपसूनारम्भाणामार्य्याणामिष्यते दानम् ॥ ११३ ॥

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम् ।
अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा ।
भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥

क्षितिगतमिववटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले ।
फलतिच्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृतां ॥ ११६ ॥

आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन ।
वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः ॥ ११७ ॥

श्रीषेणवृषभसेने कौण्डेशः शूकरश्च दृष्टान्ताः ।
वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ ११८ ॥

देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणम् ।
कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यम् ॥ ११९ ॥

अर्हच्चरणसपर्यामहानुभावं महात्मनामवदत् ।
भेकः प्रमोदमत्तः कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥

हरितपिधाननिधाने ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि ।
वैयावृत्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे ।
धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः ॥ १२२ ॥

अन्तक्रियाधिकरणं तपःफलं सकलदर्शिनः स्तुवते ।
तस्माद्यावद्विभवं समाधिमरणे प्रयतितव्यं ॥ १२३ ॥

स्नेहं वैरं सङ्गं परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः ।
स्वजनं परिजनमपि च क्षान्त्वा क्षमयेत्प्रियैर्वचनैः ॥ १२४ ॥

आलोच्य सर्वमेनः कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजं ।
आरोपयेन्महाव्रतमामरणस्थायि निश्शेषं ॥ १२५ ॥
शोकं भयमवसादं क्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा ।
सत्वोत्साहमुदीर्य च मनः प्रसाद्यं श्रुतैरमृतैः ॥ १२६ ॥
आहारं परिहाप्य क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम् ।
स्निग्धं च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥ १२७ ॥
खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
पंचनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्सर्वयत्नेन ॥ १२८ ॥
जीवितमरणाशंसे भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः ।
सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः ॥ १२९ ॥
निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् ।
निष्पिबति पीतधर्मा सर्वैर्दुःखैरनालीढः ॥ १३० ॥
जन्मजरामयमरणैः शोकैर्दुःखैर्भयैश्च परिमुक्तम् ।
निर्वाणं शुद्धसुखं निःश्रेयसमिष्यते नित्यम् ॥ १३१ ॥
विद्यादर्शनशक्तिस्वास्थ्यप्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः ।
निरतिशया निरवधयो निःश्रेयसमावसन्ति सुखं ॥ १३२ ॥
काले कल्पशतेऽपि च गते शिवानां न विक्रिया लक्ष्या ।
उत्पातोऽपि यदि स्यात् त्रिलोकसम्भ्रान्तिकरणपटु ॥ १३३ ॥
निःश्रेयसमधिपन्नास्त्रैलोक्यशिखामणिश्रियं दधते ।
निष्किट्टिकालिकाच्छविचामीकरभासुरात्मानः ॥ १३४ ॥
पूजार्थाज्ञैश्वर्यैर्बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठैः ।
अतिशयितभुवनमद्भुतमभ्युदयं फलति सद्धर्मः ॥ १३५ ॥
श्रावकपदानि देवैरेकादश देशितानि येषु खलु ।

स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥ १३६ ॥
सम्यग्दर्शनशुद्धः संसारशरीरभोगनिर्विण्णः ।
पञ्चगुरुचरणशरणो दर्शनिकस्तत्वपथगृह्यः ॥ १३७ ॥
निरतिक्रमणमणुव्रतपञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि ।
धारयते निःशल्यो योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः ॥ १३८ ॥
चतुरावर्त्त त्रितयश्चतुःप्रणामः स्थितो यताजातः ।
सामयिको द्विनिषद्यस्त्रियोगशुद्धस्त्रिसन्ध्यमभिवन्दी ॥ १३६ ॥
पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगुह्य ।
प्रोषधनियमविधायी प्रणधिपरः प्रोषधानशनः ॥ १४० ॥
मूलफलशाकशाखाकरीरकन्दप्रसूनबीजानि ।
नामानि योऽत्ति सोऽयं सचित्तविरतो दयामूर्तिः ॥ १४१ ॥
अन्नं पानं खाद्यं लेह्यं नाश्नाति यो विभावर्याम् ।
स च रात्रिभुक्तिविरतः सत्वेष्वनुकम्पमानमनाः ॥ १४२ ॥
मलबीजं मलयोनिं गलन्मलं पूतिगन्धिबीभत्सं ।
पश्यन्नङ्गमनङ्गाद्विरमति यो ब्रह्मचारी सः । ॥ १४३ ॥
सेवाकृषिवाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपारमति ।
प्राणातिपातहेतोर्योऽसावारम्भविनिवृत्तः ॥ १४४ ॥
बाह्येषु दशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्ममत्वरतः ।
स्वस्थः सन्तोषपरः परिचित्तपरिग्रहाद्विरतः ॥ १४५ ॥
अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहिकेषु कर्मसु वा ।
नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स मन्तव्यः ॥ १४६ ॥
गृहतो मुनिवनमित्वा गुरूपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य ।
भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखण्डधरः ॥ १४७॥

पापमरातिर्धर्मो बन्धुर्जीवस्य चेति निश्चिन्वन् ।
समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति ॥ १४८ ॥
येन स्वयं वीतकलंकविद्या दृष्टिक्रियारत्नकरण्डभावम् ।
नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिषु विष्टपेषु ॥१४९॥

सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव
सुतमिव जननी मां शुद्धशीला भुनक्तु ।
कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनीता-
ज्जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ॥ १५० ॥

६ द्रव्यसंग्रह

जीवमजीवं दव्वं जिनवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं । देविन्दविंद वंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥ जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेह परिमाणो । भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोढ- गई ॥ २ ॥ तिक्काले चदुपाणा इंदिय बलमाउ आणपाणोय । ववहारा सो जीवो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स ॥ ३ ॥ उवओगो दुवियप्पो दंसण णाणं च दंसणं चदुधा । चक्खु अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं ॥ ४ ॥ णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदि ओही अणाणणाणाणि । मणपज्जय केवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च ॥५॥ अट्ठचदुणाणदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं । ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥ ६ ॥ वण्ण रस पञ्च गंधा दो फासा अट्ठ णिच्चया जीवे । णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ॥ ७ ॥ पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णियच्चयदो । चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥ ववहारा सुहदुक्खं

पुग्गलकम्मफलं पभुंजेदि। आदाणिच्छयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ॥ ९ ॥ अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा। असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असङ्खदेसो वा ॥१० ॥ पुढविजलतेउवाऊवणप्फदी विविहथावरेइंदी। विगतिग चदुपञ्चक्खा तसजीवा होंति संखादि ॥११॥ समणा अमणा णेया पञ्चेंदिय णिम्मणापरे सव्वे। बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदराय ॥१२॥ मग्गणगुणठाणेहिं य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया। विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥ १३॥ णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा। लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयेहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥ अज्जीवो पुण णेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं। कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥ १५ ॥ सद्दो बन्धो सुहमो थूलो सण्ठाणभेदतमछाया। उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥१६॥ गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी तोयं जह मच्छाणं अच्छंताणेव सो णेई ॥ १७ ॥ ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी। छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ॥१८॥ अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं। जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १९ ॥ धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये। आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो ॥२०॥ दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो। परिणामादो लक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो ॥२१॥ लोयायासपदेसे इक्केक्के जे ट्ठिया हु इक्केक्का। रयणाणं रासीमिव ते कालाणू असंखदव्वाणि ॥२२॥ एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं। उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पञ्च अत्थिकाया दु ॥२३॥ संति

जदो तेणेदे अत्थीति भणंति जिणवरा जम्हा। काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४॥ होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे। मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥२५॥ एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि। बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥२६॥ जावदियं आयासे अविभागी पुग्गलाणुवट्ठद्धं। तं खुपदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥२७॥ आसवबंधणसंवरणिज्जर मोक्खा सुपुण्णपावा जे। जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो ॥२८॥ आसवदि जेण कम्मं परिणामेणाप्पणो स विण्णेओ। भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि ॥२९॥ मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहादओऽथ विण्णेया। पण पण पणदह तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥३०॥ णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि। दव्वासवो स णेओ अणेयभेदो जिणक्खादो ॥३१॥ बज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भावबंधो सो। कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो ॥३२॥ पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बंधो। जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति ॥३३॥ चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ। सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणेअण्णो ॥ ३४ ॥ वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपिहा परीसहजओ य। चारित्तं बहुभेयं णायव्वा भावसंवरविसेसा ॥३५॥ जहकालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण। भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ॥३६॥ सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो। णेओ स भावमोक्खो दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो ॥३७॥ सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं

पावं हवंति खलु जीवा। सादं सुहाउणामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च ॥३८॥ सम्मद्दंसण णाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे। ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा ॥ ३९ ॥ रयणत्तयंण वट्टइ अप्पाणं मुयत्तु अण्णदवियम्हि। तम्हा तत्तियमइओ होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा ॥४०॥ जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवम- पणो तं तु। दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि ॥ ४१ ॥ संसय विमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स। गहणं सम्मं णाणं सायारमणेयभेयं च ॥४२॥ जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टु मायारं। अविसेसदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णये समये ॥४३॥ दंसणपुव्वं णाणं छदुमत्थाणं ण दुण्णि उवओगा। जुगवं जम्हा केवलिणाहे जुगवं तु ते दोवि ॥४४॥ असुहादो वि- णिवित्ती सुहेपवित्ती य जाण चारित्तं। वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिण भणियं ॥ ४५ ॥ वहिरब्भंतर किरिया रोहो भवकारणप्पणासट्ठं। णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारि त्तं ॥४६॥ दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह ॥ ४७ ॥ मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु। थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्त- झाणप्पसिद्धीए ॥४८॥ पणतीस सोल छप्पण चदु दुगमेगं च जवह झाएह। परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरुव एसेण ॥ ४९ ॥ णट्ठचदुघायकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमइओ। सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ॥ ५० ॥ णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा। पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो ॥५१॥ दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे। अप्पं परं च

जुंजइ सो आयरिओ मुणी झेओ ॥५२॥ जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो। सो उवझाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥५३॥ दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं। साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स ॥ ५४ ॥ जं किंचि विचिंतंतो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू। लद्धूणय एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्छयं झाणं ॥ ५५ ॥ मा चिट्ठ मा जंपह किं वि जेण होइ थिरो। अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे झाणं ॥ ५६ ॥ तवसुदवदवं चेदा झाणरहधुरन्धरो हवे जम्हा। तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह ॥५७॥ दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचय चुदा सुदपुण्णा। सोधयतु तणुसुत्तधरेण णेमिचन्दमुणिणा भणियं जं ॥५८॥

७ अद्याष्टकस्तोत्रम्।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम। त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥१॥ अद्य संसारगम्भीरपारावारः सुदुस्तरः। सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥ अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते। स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥३॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम्। संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥ अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम्। दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥५॥ अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः। नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः। सुखसङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७

अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम्। सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥८॥ अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः। उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥९॥ अद्यहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः भुवनत्रयपूज्योहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥१०॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः। तस्य सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥११॥

इतिअष्टाष्टकं स्तोत्र संपूर्णम्

८ दृष्टाष्टकस्तोत्रम्।

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारि भव्यात्मनां विभवसम्भवभूरि हेतुः। दुग्धाब्धिफेनधवलोज्ज्वलकूटकोटीनद्धध्वजप्रकरराजिविराजमानम् ॥ १ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैकलक्ष्मीधामर्द्धिवर्द्धितमहामुनिसेव्यमानम्। विद्याधरामरवधूजनमुक्तदिव्यपुष्पाञ्जलिप्रकरशोभितभूमिभागम् ॥ २ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादिवासविख्यातनाकगणिकागणगीयमानम्। नानामणिप्रचयभासुररश्मिजालव्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालम् ॥३॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुरसिद्धयक्षगन्धर्वकिन्नरकरार्पितवेणुवीणा। सङ्गीतमिश्रितनमस्कृतधीरनादैरापूरिताम्बरतलोरुदिगन्तरालम् ॥४॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विलसद्विलोलमालाकुलालिललितालकविभ्रमाणम्॥ माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासिनीनां लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यम् ॥ ५ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं मणिरत्नहेमसारोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणाद्यैः सन्मङ्गलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्विभ्राजितं विमलमौक्तिकदामशोभम् ॥६॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वरदेवदारुकर्पूरचन्दनतरुष्कसुगन्धिधूपैः।

मेघायमानगगने पवनाभिघातचञ्चच्चलदमलकेतनतुङ्गशालम् ॥७॥
दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्रच्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृन्दैः ।
दोधूयमानसितचामरपङ्क्तिभासं भामण्डलद्युतियुतप्रतिमाभिरामम्
॥८॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकारपुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमिः ।
नित्यं वसन्ततिलकश्रियमादधानं सन्मङ्गलं सकलचन्द्रमुनीन्द्रवन्द्य-
म् । ॥९॥ दृष्टं मयाद्य मणिकाञ्चनचित्रतुङ्गसिंहासनादिजिनबिम्ब-
विभूतियुक्तम् । चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे सन्मङ्गलं सकल-
चन्द्रमुनीन्द्रवन्द्यम् ॥ १० ॥

॥ इति दृष्टाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

६ सुप्रभातस्तोत्रम् ।

श्रीपरमात्मने नमः ॥ यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेको-
त्सवे यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे । यन्निर्वाणग-
मोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः सङ्गीतस्तुतिमङ्गलैः प्रसरतां
मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपाद-
युगदुर्धरकर्मदूर । श्रीनाभिनन्दनजिनाजितशंभवाख्य ! त्वद्ध्यानतो
ऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥२॥छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमानदेवाभि-
नन्दनमुनेसुमते जिनेन्द्र ! पद्मप्रभारुणमणि द्युतिभासुराङ्ग त्व० ॥३
अर्हन् सुपार्श्वकदलीदलवर्णगात्र प्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौर ।
चन्द्रप्रभस्फटिकपाण्डुर पुष्पदंत त्व० ॥४॥ संतप्तकाञ्चनरुचे जिन
शीतलाख्य श्रेयान्विनष्टदुरिताष्टकलङ्कपङ्क । बंधूकबंधुररुचे जिन-
वासुपूज्य त्व० ॥५॥ उद्दण्डदर्पकरिपो विमलामलाङ्गस्थेमन्ननतजि-
दनंतसुखाम्बुराशे । दुष्कर्मकल्मषविवर्जित ।

धर्मनाथ त्व० ॥ ६ ॥ देवामरीकुसुमसन्निभ शांतिनाथ कुन्थो दया गुणविभूषणभूषिताङ्ग । देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ त्व० ॥ ७ ॥ यन्मोहमल्लमदभञ्जनमल्लिनाथ क्षेमङ्कराविनथशासनसुव्रताख्य । यत्सम्पदा प्रशिमतो नमिनामधेय त्व० ॥ ८ ॥ तापिच्छगुच्छरुचिरोज्वल नेमिनाथ घोरोपसर्गविजयन् जिन पार्श्वनाथ । स्याद्वाद सूक्तिमणिदर्पणवर्द्धमान त्व० ॥ ९ ॥ प्रालेयनीलहरितारुणपीतभासं यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनीन्द्रः । ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिन वल्लभानां त्व० ॥१० । सुप्रभातं सुनक्षत्रं माङ्गल्यं परिकीर्तितम् । चतुर्विंशतितीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥११॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् । देवता ऋषयः सिद्धाः सुप्रभातं दिने सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्वसुखावहम् ॥१३॥ सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलित चक्षुषाम् । अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥ सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य वीरः कमललोचनः ॥ येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥ १५ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमङ्गलम् । त्रैलोक्यहितकर्तॄणां जिनानामेव शासनम् ॥ १६ ॥

इति सुप्रभातस्तोत्रं समाप्तम् ॥

१० मोक्षशास्त्रम् ।

(आचार्य श्रीमदुमास्वामिविरचितम्)

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवास्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्त-

न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाऽ
धिकरणस्थितिविधानतः ॥७॥ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभा-
वाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥९॥
तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः
स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रिया
निन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहाऽवायधारणाः ॥१५॥ बहुबहुवि
धक्षिप्राऽनिःसृताअनुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥
व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं
द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥२०॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥
क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥ ऋजुविपुलमती
मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धि-
क्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्ययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो
द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनः-
पर्ययस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकादीनि
भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥ मतिश्रुतावधयो विपर्य
यश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैग-
मसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ॥३३॥

ज्ञानदर्शनयोस्तत्वं नयानां चैव न लक्षणम् ।
ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिक-
पारिणामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम्
॥२॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि

च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्र संयमासंयमाश्च ॥५॥ गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाऽज्ञानाऽसंयमताऽसिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥ ६ ॥ जीवभव्याऽभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥१८॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुश्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥ अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहाः ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥ ३० ॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥३१॥ सचित्तशीतसंवृत्ताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥३५॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥ अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्छनजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥ ४६ ॥ लब्धिप्रत्ययं च

॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्करावालुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥ नारकानित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेकत्रिसप्तदश सप्तदश द्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमासत्त्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बुद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥१२॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥१३॥ पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥ दशयोजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयःससामानिकपरिषत्काः ॥१९ ॥ गंगासि-

न्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकांतासुव-
र्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः
पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरि-
वृता गंगासिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनश-
तविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागायोजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुणद्विगु-
णविस्तारा ॥२५॥ वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः उत्तरा दक्षिणतुल्याः॥२६
भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम्
॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थि-
तयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः॥२९॥तथोत्तराः॥३०॥विदेहेषु
सङ्ख्येयकाला ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशत.
भागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥प्राङ्मानु
षोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः
कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिप-
ल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥
दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्रसामानिक-
त्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्वि-
षिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः
॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः
स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः॥ ९ ॥ भवनवासि-
नोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥
व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः

॥ ११ ॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२ ॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥ बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्र महाशुक्र शतारसहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥ २० ॥ गतिशरीरपरिग्रहाऽभिमानतो हीनाः ॥२१॥ पीतपद्मशुक्लेश्याद्वित्रिशेषेषु ॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालयालौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥ २५ ॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिकमनुष्येभ्यःशेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः ॥२८॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥ २९ ॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥आरणाच्युतादूर्द्धमेकेकेन नवसुग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरापल्योपममधिकम् ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तरा ॥ ३४ ॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥ व्यन्तराणां च ॥३८॥ परापल्योपममधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अजीवकाया धर्म्माधर्म्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आआकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥ असङ्ख्येयाः प्रदेशाः धर्म्माधर्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः ॥ ९ ॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्म्माधर्म्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहार विसर्प्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥ १६ ॥ गति स्थित्युपग्रहौ धर्म्माधर्म्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥ शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुखदुखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्त्तनापरिणामक्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥ २३ ॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवःस्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥ २६ ॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥ सद्द्रव्यलक्षणम् ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पित सिद्धेः ॥ ३२ ॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ नजघन्यगुणानाम् ॥ ३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥ ३७ ॥ गुणपर्य्ययवद्द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥४० ॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥ सद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥५॥

कायवाङ्मनः कर्म्मयोगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिके-र्य्यापथयोः ॥४॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्य विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाऽजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्च तुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्श-नावरणयोः ॥ १० ॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरो-भयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूतव्रत्यनुकम्पादान सरागसंयमा-दियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलिश्रुतसङ्घधर्म्म देवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारि-त्रमोहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ माया-तैर्यग्यानस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥ स्वभा-वमार्दवं च ॥१८॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥१९॥ सरागसंय-मसंयमासंयमाऽकामनिर्ज्जराबालतपांसि दैवस्य॥२०॥सम्यक्त्वं च ॥ २१ ॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥ २३ ॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नताशीलव्रतेष्वनतीचारोऽ भीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौशक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्य करणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो नीचै-र्वृत्त्यनुत्सेकौचोत्तरस्य ॥ २६ ॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पञ्च ॥ ४ ॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च ॥ ५ ॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माऽविसंवादाः पञ्च ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरण—वृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पञ्च ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥ ९ ॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥ १३ ॥ असदभिधानमनृतम् ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥ मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥ मूर्छा परिग्रहः ॥ १७ ॥ निःशल्यो व्रती ॥ १८ ॥ अगार्यनगारश्च ॥ १९ ॥ अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥ दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणान्तिकी सल्लेखनां जोषिता ॥ २२ ॥ शङ्काकांक्षाविचिकित्साऽन्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥२३॥ व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ॥२४॥ बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीताऽपरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्य-

सुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणाऽतिक्रमाः ॥ २९ ॥ ऊर्ध्वाध-स्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयनप्रेष्य प्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥ कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्या-समीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥ योगदुःप्रणिधा नान्यनादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३ ॥ अप्रत्यवेक्षिताऽप्रमार्जितो-त्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥ सचित्त-सम्बन्धसन्मिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥ ३५ ॥ सचित्तनिक्षेपापिधान-परव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥३६॥ जीवितमरणाशंसामित्रा-नुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥ ३८ ॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरति प्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ सक-षायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥ प्रकृति स्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥ आद्योज्ञानदर्शनावरणवेदनी-यमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥ पञ्चनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्वि चत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमम् ॥५॥ मतिश्रुतावधिमनः पर्य्ययके-वलानाम् ॥ ६ ॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचला प्रचला प्रचलास्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥८॥ दर्शन चारि-त्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्या स्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्य-क्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यऽकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगु प्सास्त्रीपुन्नपुंसकवेदाः अनंतानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्व-लनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥ ९ ॥ नारकतैर्यग्योन मानुषदेवानि ॥ १० ॥ गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसंङ्घात

संस्थानसंहननस्पर्शरसगंधवर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वास विहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रसमुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेयशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥ १६ ॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ताः ॥ २० ॥ विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥ स यथानाम ॥ २२ ॥ ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययाः सर्वतोयोगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्वेद्यः शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आस्रवनिरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥ ४ ॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाऽकिंचन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥ ६ ॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरा लोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाञ्चाऽलाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाऽज्ञानाऽदर्शनानि ९ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥ एकादश जिने ॥११॥

बादरसम्पराये सर्वे ॥ १२ ॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥ दर्शन-मोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्री-निषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥ १५ ॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतिः ॥ १७ ॥ सामा-यिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराययथाख्यातमिति चारित्रम् ॥ १८ ॥ अनशनावमौदर्य्यवृत्तिपरिसङ्ख्यानरसपरित्याग-विविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९ ॥ प्रायश्चित्तविनय-वैयावृत्त्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥ नवचतुर्दशप-चद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचनाप्रतिक्रमणतदु-भयविवेकव्युत्सर्गतपच्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥ ज्ञानदर्शन-चारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्ष्यग्लानगण-कुलसंघसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥ उत्तमसंहन नस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमाऽऽन्तमुहूर्तात् ॥ २७ ॥ आर्तरौ-द्रधर्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥ परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥ आर्तममनोज्ञस्य स-म्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥ विपरीतं मनोज्ञ-स्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥ निदानं च ॥ ३३ ॥ तदविरतदेश-विरतप्रमत्तसंयतानाम् ॥ ३४ ॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम् ॥ ३६ ॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥ ३७ ॥ परे केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि॥३९॥ त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥

वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोसंक्रांतिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशांतमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्ज्जराः ॥४५॥ पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातकानिर्ग्रन्था ॥४६॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥९॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥१॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥ ४ ॥ तदनन्तरमूर्द्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथा गतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाम्बुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७ ॥ धर्मास्तिकायाऽभावात् ॥८॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यञ्जनसन्धिविवर्जितरेफम् । साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥ १ ॥ दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति । फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥ २ ॥ तत्त्वार्थसूत्रकर्तारं गृद्धपिच्छोपलक्षितम् । वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥३॥

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनामतत्त्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रं समाप्तम् ।

११ श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम्

(भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं)

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् ॥ नाम्नामष्टसह

स्त्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥ श्रीमान्स्वयम्भूवृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः। स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २ ॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः। विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥ ३ ॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः। विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥ विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णुरमेयात्म विश्वरीशो जगत्पतिः। अनन्तविदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः॥६॥ युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः परःपरतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः॥७॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः। मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः॥८॥ प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः। ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥ सिद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः। सिद्धः सिद्धांतविद्ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥१०॥ सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः। प्रभूष्णुरजरोजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥११॥ विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः। परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासन। पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः। तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः। मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥३॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः। अ-

चलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥ अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत्। शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ।५। वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः। वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥६॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनः। प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७॥ हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः। स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥८॥ सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥ सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः। विश्रुतो विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात्। भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः। स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट् विश्वभुग्विश्वनायकः। विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥२॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन्। विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥ ३ ॥ विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः। वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥ क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिःशान्तिभाक्सलिलात्मकः। वायुमूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥५॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः। सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥ ७ ॥ मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तकः। स्वतन्त्रस्तन्त्र-

कृत्स्नान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥ ८ ॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः । नित्यो मृत्युंजयो मृत्युरमृतात्मामृतो द्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः । महाब्रह्म-पतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ १० ॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्म दमप्रभुः प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥ ११ ॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः । पद्मेशः पद्मसम्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ १ ॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः-स्तुतीश्वरः । स्तवनोर्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥ गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः । गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः॥३॥गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः । शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥४। अगण्यः पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः । धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्य निरोधकः ॥ ५ ॥ पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः । निर्द्वन्द्वो निर्मदः शांतो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥ निर्निमेषो निराहारो निःक्रियो निरुपप्लवः । निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूताङ्गो निरास्रवः ॥ ७ ॥ विशालो विपुलज्योतिरतुलोचिन्त्यवैभवः । सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभृत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः। धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥९॥ पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनोगतिः । त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥ १० ॥ कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः । प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ११ ॥

इति महादिशतम् ॥ ४ ॥

श्रीवृक्षलक्षणःश्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥ सिद्धिदः सिद्धिसङ्कल्पः सिद्धात्मा सिद्धसाधनः। बुद्धबोध्योमहाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः॥२॥वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः। वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥ ३ ॥ अनादिनिधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः। युगादिकृद्युगाधारो युगादिजगदादिजः ॥४॥ अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक्। अनिन्द्रियोऽहमिन्द्रार्च्यो महेन्द्रमहितो महान् ॥ ५ ॥ उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः। अगाह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्यः परमेश्वरः॥६॥अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धि: समग्रधीः प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्रयः प्रत्यग्रोऽग्रिमोऽग्रजः ॥ ७ ॥ महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः। महायशो महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥८ ॥ महाधैर्यो महावीर्या महासम्पन्महाबलः। महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥९॥ महामतिर्महानीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः। महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ॥१०॥ महामहा महाकीर्तिर्महाकांतिर्महावपुः। महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥११ महामहापतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः। महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥५॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः। महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः। महामैत्री महामेयो महोपायो महोदयः ॥ २ ॥ महाकारुण्यको मंता महामन्त्रो महायतिः। महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः॥३॥ महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक्। महात्मा महसांधाम

महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः । महापराक्रमोऽनंतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥५॥महाभवाब्धिसंतारिर्महा-मोहाद्रि सूदनः । महागुणाकरः क्षांतो महायोगेश्वरः शमी ॥ ६ ॥ महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिहात्मज्ञो महा-देवो महेशिता ॥७॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्ये योऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥ ८ ॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः । दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिपरमः परमोदयः । प्रक्षीणबंधकामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१०॥ प्रणवः प्रणयः प्राणः प्रणादः प्रणतेश्वरः प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥११॥ आनन्दोनंदनो नंदो वन्द्योऽनिंद्योऽभिनन्दनः । कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिंजयः ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥६॥

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत् । अंतकृत्कांतगुःकां-तश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥१॥ अजितो जितकामारिरमितोऽमितशास-नः । जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ॥२॥ जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः । महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥३॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुव्रतो मनुरुत्तमः । अभे-द्योऽनत्ययोऽनश्वानधिकोऽधिगुरुःसुधीः ॥४॥ सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः । विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्ट प्रत्ययः कमणोऽनघः ॥५॥ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी । अग्राह्यो ज्ञाननि ग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥६॥ सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुरा-ननः । श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥७॥ सत्यात्मा सत्य-विज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः

सत्यपरायणः॥८॥ स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः। अणो रणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥ सदायोगः सदाभोगः सदा तृप्तः सदाशिवः। सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥ सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत्। सुगुप्तो गुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥७॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः। मनीषिधिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥ १ ॥ नैकरूपो नयस्तुङ्गो नैकात्मा नैकधर्मकृत्। अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥ २ ॥ ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भःप्रभास्वरः। पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥ लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता। मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ॥४॥ धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः। धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥५॥ अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः। सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥ सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः। अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥ वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः। प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मङ्गलं मलहानघः ॥ ८ ॥ अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः। अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानेकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः। सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः शवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः। अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः॥ ११ ॥ त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः। त्रिजगत्पतिपूजाङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥ १२ ॥

इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढ़व्रतः। सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥१॥ पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः। आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥२॥ युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः। कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥३॥ कल्याणप्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्मा विकल्मषः। विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः॥४॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः। जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥ ५ ॥ चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः। सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥६॥ आदित्यवर्णो भर्माभःसुप्रभः कनकप्रभः। सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥७॥ तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः। संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः॥८॥ निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः। हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ॥९॥ द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजाम्बूनदद्युतिः। सुधौतकलधौतश्रीःप्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥१०॥ शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरक्षमः। शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥ ११ ॥ शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः। शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान्कामितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः। सुस्थितः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ॥१३॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥६॥

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥ तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः। तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥२॥ जगच्चूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः। कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोका-

लोकप्रकाशकः ॥३॥ अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरूकःप्रभामयः। लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥ मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः। प्रशान्तरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥ मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः। आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥ ६ ॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभावविन्। सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥ ७ ॥ श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयङ्करः। उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥ ८॥ लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः। धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥ ९ ॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः। भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥ १० ॥ समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः। कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥११॥ अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः। त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १२ ॥ समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः। सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः। धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥ १० ॥

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः। समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥ १ ॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः। स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं भवेत् ॥२॥ त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक्। त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥३॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक्। त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यङ्गः स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ॥ ४ ॥

त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ।।५।। दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः । दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥ ६ ॥ युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया । भवन्तं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥ ७ ॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः । यः स पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥ ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः । पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥

इति भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितादिपुराणान्तर्गतं
जिनसहस्रनामस्तवनं समाप्तम् ।

१२ एकीभावस्तोत्रम् ।

(श्रीवादिराजप्रणीतम्)

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो घोरं दुःखं भवभवगतो दुर्निवारः करोति । तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे भक्तिरुन्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तया कोपरस्तापहेतुः ॥ १ ॥ ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं त्वामेवाहुर्जिनवर ! चिरं तत्त्वविद्याभियुक्ताः । चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्भासमानस्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥ २ ॥ आनन्दाश्रुस्नपितवदनं गद्गदं चाभिजल्पन्यश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमन्त्रैर्भवन्तम् । तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्निष्कास्यन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥ ३ ॥ प्रागेवेह त्रिदिवभवनादेष्यता भव्यपुण्यात्पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम् । ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्वान्तगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन ! वपुरिदं

यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥ लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निर्निमित्तेन बंधुस्त्वय्येवासौ सकलविषया शक्तिरप्रत्यनीका। भक्तिस्फीतां चिरमधिवसन्मामिकां चित्तशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव ततःक्लेशयूथं सहेथा ॥५॥ जन्माटव्यां कथमपि मया देव! दीर्घं भ्रमित्वा प्राप्तैवेयं तव नयकथा स्फारपीयूषवापी। तस्या मध्ये हिमकरहिमव्यूहशीते नितान्तं निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःखदावोपतापाः ॥६॥ पादन्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकी। हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः। सर्वाङ्गेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति॥७॥पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्तिपात्र्या पिबन्तं कर्मारण्यात्पुरुषमसमानन्दधाम प्रविष्टम्। त्वां दुर्वारस्मरमदहरं त्वत्प्रसादैकभूमिं क्रूराकाराः कथमिव रुजाकण्टका निर्लुठन्ति ॥८॥ पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्नमूर्तिर्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः। दृष्टिप्राप्तो हरति स कथं मानरोगं नराणां प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्तिहेतुः ॥९॥ हृद्यप्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्तिशैलोपवाही सद्यः पुंसां निरवधिरुजाधूलिबन्धं धुनोति। ध्यानाहूतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं प्रविष्टस्तास्याशक्यः क इह भुवने देवलोकोपकारः॥१०॥ जानासि त्वं मम भवभवे यच्च यादृक्च दुःखं जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि। त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या यत् कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ॥११॥ प्रापद्दैवं तवनुतिपदैर्जीवकेनोपदिष्टैः पापाचारी मरणसमये सारमेयोऽपि सौख्यम्। कः संदेहो यदुपलभते वासवश्रीप्रभुत्वं जल्पञ्जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कारचक्रम्॥१२॥शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि

त्वय्यनीचा भक्तिर्नो चेदनवधिसुखा वञ्चिका कुञ्चिकेयम् । शक्यो-द्घाटं भवति हि कथं मुक्तिकामस्य पुंसो मुक्तिद्वारं परिदृढमहा-मोहमुद्राकवाटम् ॥१३॥ प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात् पन्था मुक्तेः स्थपुटितपदः क्लेशगर्तैरगाधैः । तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्त्वावभासो यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारतीरत्नदीपः ॥१४॥ आत्मज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानन्दहेतुः कर्मक्षोणीपटल-पिहितो योऽनवाप्यः परेषाम् । हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भ-क्तिभाजः स्तोत्रैर्बन्धप्रकृतिपुरुषोद्दामधात्रीखनित्रैः ॥१५॥ प्रत्यु-त्पन्ना नयहिमगिरेरायता चामृताब्धेर्या देव त्वत्पदकमलयोः सङ्गता भक्तिगङ्गा । चेतस्तस्यां मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालितांहः कल्माषं यद्भवति किमियं देव सन्देहभूमिः ॥१६॥ प्रादुर्भूतस्थिरपदसुख त्वामनुध्यायतो मे त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा । मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमभ्रेषरूपां दोषात्मानोऽप्यभिमतफला-स्त्वत्प्रसादाद्भवन्ति ॥१७॥ मिथ्यावादं मलमपनुदन्सप्तभङ्गीतरंगैर्वा-गम्भोधिर्भुवनमखिलं देवपर्येति यस्ते । तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चे-तसैवाचलेन व्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति ॥१८॥ आ-हार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः शस्त्रग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः । सर्वाङ्गेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां तत्किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥१९॥ इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते तस्यैवेयं भवलयकारी श्लाघ्यतामा-तनोति । त्वं निस्तारी जननजलधेः सिद्धिकान्तापतिस्त्वं त्वं लो-कानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ॥२०॥ वृत्तिर्वाचामपर-सदृशो न त्वमन्येन तुल्यः स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी नः

क्रमन्ते । मैवं भूवंस्तदपि भगवन्भक्तिपीयूषपुष्टास्ते भव्यानामभिमतफलाः पारिजाता भवन्ति ॥२१॥ कोपावेशो न तव न तव क्वापि देवप्रसादो व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम्। आज्ञावश्यं तदपि भुवनं संनिधिर्वैरहारी क्वैवंभूतं भुवनतिलक ! प्राभवं त्वत्परेषु ॥२२॥ देव स्तोतुं त्रिदिवगणिकामण्डलीगीतकीर्तिं तोतूर्ति त्वां सकलविषयज्ञानमूर्तिं जनो यः। तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जाहूर्ति पन्थास्तात्त्वग्रन्थस्मरणविषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः॥२३॥ चित्ते कुर्वन्निरवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं देव त्वां यः समयनियमादादरेण स्तवीति श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम्॥२४॥ भक्तिप्रह्वमहेन्द्रपूजितपद ! त्वत्कीर्तने न क्षमाः सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम्। अस्माभिस्तवनच्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते स्वात्माधीनसुखैषिणां स खलु नः कल्याणकल्पद्रुमः॥२५॥ वादिराजमनु शाब्दिकलोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः। वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्यसहायः ॥ २६ ॥

इति श्रीवादिराजकृतमेकीभावस्तोत्रम्।

१३ स्वयंभूस्तोत्र भाषा ।

चौपाई ।

राजविषैंजुगलनि सुख किया। राज त्याग भवि शिवपद लिया॥ स्वयंबोध स्वंभू भगवान। वंदौ आदिनाथ गुणखान ॥१॥ इंद्रक्षीरसागरजल लाय। मेरु न्हवाये गाय बजाय। मदन विनाशक सुख करतार। वंदौ अजित अजत पदकार॥२॥ शुक्लध्या

न करि करम विनाशि। घाति अघाति सकल दुखराशि ॥लह्यो मुकतिपदसुख मविकार। वंदौ संभव भवदुख टार ॥३॥ माता पच्छिम रयनमझार। सुपने सोलह देखे सार॥ भूप पूछि फल सुनि हरषाय। वंदौं अभिनन्दन मन लाय ॥४॥ सब कुवादवादी सरदार। जीते स्यादवादधुनिधार॥ जैनधरमपरकाशक स्वामि। सुमतिदेव-पद करहुं प्रनामि ॥५॥ गर्भ अगाऊ धनपति आय। करी नगरशोभा अधिकाय॥ बरख रतन पञ्चदश मास। नमौं पदमप्रभु सुखकी रास ॥६॥ इन्द्र फनिंद्र नरिंद्र त्रिकाल। वानो सुनि सुनि होहिं खुस्याल॥ द्वादश सभा ज्ञानदातार। नमौं सुपारसनाथ निहार ॥७॥ सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं। दोष अठारह कोई नाहिं॥ मोहमहातमनाशक दीप। नमौं चन्द्रप्रभ राख समीप ॥८॥ द्वादशविध तप करम विनाश। तेरह भेद चरित परकाश॥ निज अनिच्छ भविइच्छ करान। वंदौं पुहपदंत मन आन॥ ६ ॥ भविसुखदाय सुरगतैं आय। दशविध धरम कह्यो जिनराय॥ आपसमान सबनि सुखदेह। वदौं शीतल धर्मसनेह ॥१०॥ समता सुधा कोपविषनाश। द्वादशांगवानी परकाश॥ चारसंघ आनन्ददातार। नमौं श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥ रतनत्रय चिरमुकुट विशाल। शोभे कंठ सुगुनमनिमाल॥ मुक्तिनार भरता भगवान। वासुपूज वंदो धर ध्यान ॥१२॥ परमसमाधीरूप जिनेश। ज्ञानी ध्यानी हितउपदेश॥ कर्मनाशि शिवसुख विलसंत। वंदौं बिमलनाथ भगवंत ॥ १३ ॥ अंतर बाहिर परिग्रह डारि। परमदिगंबरव्रतकों धारि॥ सर्वजीवहित राह दिखाय। नमौं अनंत वचनमनकाय ॥ १४ ॥ सात तत्त्वपञ्च सतिकाय। अरथ नवों छ दरब बहु भाय॥

लोक अलोक सकल परकाश। वंदौं धर्मनाथ अविनाश ॥ १५ ॥ पञ्चम चक्रवरति निधिभोग। कामदेव द्वादशम मनोग ॥ शांतिकरन सोलम जिनराय। शान्तिनाथ वंदौं हरखाय ॥ १६ ॥ बहुथुति करे हरष नहिं होय। निंदे दोष गहैं नहिं कोय ॥ शीलमान परब्रह्मस्वरूप। वंदौं कुंथुनाथ शिवभूप ॥ १७ ॥ द्वादशगण पूजें सुखदाय। थुतिवंदना करें अधिकाय ॥ जाकी निजथुति कबहुं न होय। वंदौं अरजिनवर पद होय ॥१८॥ परभव रतनत्रय अनुराग। इस भव ब्याहसमय वैराग ॥ बालब्रह्म पूरन व्रत धार। वंदौं मल्लिनाथ जिनसार ॥ १९ ॥ विन उपदेश स्वयं वैराग। थुति लौकांत करैं पग लाग ॥ नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं। वंदौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं॥२०॥ श्रावक विद्यावंत निहार। भगतिभावसौं दिया अहार ॥ बरसे रतनराशि ततकाल। वंदौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥ सब जीवनकी वंदी छोर। रागदोष द्वो बंधन तोर ॥ रजमति तजि शिवतियसों मिले। नेमिनाथ वंदौं सुखनिले ॥ २२ ॥ दैत्य कियो उपसर्ग अपार। ध्यान देखि आयो फनिधार ॥ गयो कमठ शठ मुख कर श्याम। नमौं मेरुसम पारसस्वाम ॥२३॥ भवसागरतें जीव अपार। धरमपोतमें धरे निहार ॥ डूबत काढ़े दया विचार। वर्द्धमान वंदौं बहुबार ॥ २४ ॥

दोहा—चौबीसौं पदकमलजुग, वंदौं मनवचकाय। 'द्यानत' पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥ २५ ॥

नवीन छपे ग्रंथोंकी सूची—

पद्मपुराण १०) हरिवंशपुराण ८) विमलपुराण ६)

मल्लिनाथपुराण ४) शांतिनाथपुराण ६)

दूसरा अध्याय

१४ निर्वाणकाण्ड (गाथा)

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो। उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥ वीसं तु जिणवरिन्दा अमरा सुरवंदिदा धुदकिलेसा। सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ २ ॥ वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे। आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाण गया णमो तेसिं॥३॥ णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो। बाहत्तरिकोड़ीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥ रामसुवा वेण्णि सुणा लाडणरिंदाण पञ्चकोडीओ। पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥ पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोड़ीओ। सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥ संते जे बलभद्दा जादुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ। गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥७॥ रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो। णवणवदी कोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥ णंगाणंगकुमारा कोड़ीपञ्चद्ध-मुणिवरा सहिया। सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥९॥ दहमुहरायस्स सुवा कोड़ीपञ्चद्धमुणिवरा सहिया। रेवा-उहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१०॥ रेवाणइए तीरे पच्छि-मभयम्मि सिद्धवरकूडे। दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥११॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे। इंदजीदकुंभयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥ पावागिरिवर–

सिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो। चलणाणईतडग्गे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ॥१३॥ फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगि-रिसिहरे। गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥ णायकुमारमुणिंदो वाल महावाल चेव अज्झेया। अट्ठावयगिरि-सिहरेणिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥ अचलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे। आहुट्टयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥ वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे। कुल-देसभूषणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥ जसरहरायस्स सुआ पञ्चसयाइं कलिंगदेसम्मि। कोडिसिलाकोडिमुणि णिव्वा-णगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥ पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्त-मुणि पञ्च। रेसंदो गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १९ ॥

१५ निर्वाणकाण्ड [भाषा]

(कविवर भैया भगवतीदासजी रचित)

दोहा—वीतराग वंदों सदा, भावसहित सिर नाय।
कहूं कांड निर्वाणकी भाषा सुगम बनाय ॥१॥

चौपाई—आष्टापदआदीसुरस्वामि। वासुपूज्य चंपापुरि नामि। नेमिनाथस्वामी गिरनार। वंदौं भाव भगति उरधार ॥१॥ चरम तीर्थंकर चरम शरीर। पावापुर स्वामी महावीर॥ शिखरसमेद जिनेसुर बीस। भावसहित बंदौं जगदीस ॥ २ ॥ वरदतराय रु इंद मुनिन्द। सायरदत्त आदि गुणवृंद ॥ नगरतारवर मुनि उठकोड़ि। वंदौं भावसहित करजोड़ि ॥३॥ श्रीगिरनारशिखर विख्यात। कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात ॥ संबु प्रदुम्न कुमर द्वै भाय। अनिरुधआदि

नमूं तसु पाय ॥ ४ ॥ रामचन्द्रके सुत द्वै वीर । लाडनरिंद आदि गुणधीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्तिमझार । पावागिरि वंदौं निरधार ॥५॥ पांडव तीन द्रविड राजान । आठकोड़ि मुनि मुकति पयान ॥ श्रीशत्रुंजयगिरिके शीस । भावसहित वंदौं निश दीस ॥६॥ जे बलिभद्र मुकतिमें गये । आठकोड़ि मुनि औरहिं भये ॥ श्रीगजपंथशिखर सुविशाल । तिनके चरण नमूं तिहुं काल ॥७॥ राम हनू सुग्रीव सुडील । गवगवाख्य नील महानील ॥ कोड़ि निन्याणवें मुक्तिपयान । तुंगीगिरि वंदौं धरि ध्यान ॥ ८ ॥ नङ्ग अनङ्ग कुमार सुजान । पञ्चकोड़ि अरु अर्धप्रमान ॥ मुक्ति गये सिद्धुनागिरसीस । ते वंदौं त्रिभुवनपति ईस ॥ ९ ॥ रावणके सुत आदि कुमार । मुक्त गये रेवातट सार ॥ कोड़ि पञ्च अरु लाख पचास । ते वंदौं धरि परम हुलास ॥१० रेवानदी सिद्धवरकूट । पश्चिमदिशा देह जहं छूट ॥ द्वै चक्री दश कामकुमार । ऊठकोड़ि वंदौं भवपार ॥११॥ बड़वाणी बड़नयर सुचङ्ग दक्षिण दिश गिरिचूल उतङ्ग ॥ इंद्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण । ते वंदौं भवसागरतर्ण ॥१२॥सुवरणभद्रआदि मुनि चार । पावागिरिवर शिखरमझार ॥ चेलना नदी तीरके पास । मुक्ति गये वंदौं नित तास ॥१३॥ फलहोड़ी बड़गाम अनूप । पश्चिमदिशा द्रोणगिरिरूप ॥ गुरुदत्तादि मुनीसुर जहां । मुक्ति गये वंदौं नित तहां ॥१३॥ बाल महाबाल मुनि दोय । नागकुमार मिले त्रय होय ॥ श्रीअष्टापद मुक्तिमझार । ते वंदौं नित सुरतसंभार ॥१५॥ अचलापुरकी दिश ईशान । तहां मेढ़गिरि नाम प्रधान ॥ साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय । तिनके चरन नमूं चित लाय ॥ १६ ॥ वंशस्थल बनके ढिग होय । पश्चिमदिशा

कुंथगिरि सोय ॥ कुलभूषण देशभूषण नाम। तिनके चरणन करूं ह प्रणाम ॥१७॥ जसरथराजाके सुत कहे। देशकलिंग पांचसौ लहे ॥ कोटि शिला मुनि कोटिप्रमान। वंदन करूं जोर जुगपान ॥ १८ ॥ समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद। रेसंदीगिरि नयनानन्द ॥ वरदत्तादि पंच ऋषिराज। ते वंदौं नित धरमजिहाज ॥ १९ ॥ तीन लोकके तीरथ जहां। नित प्रति वंदन कीजे तहां। मन वच कायसहित सिर नाय। वंदन करहिं भविक गुण गाय ॥२०॥ संवत सतरहसौ इकताल। अश्विन सुदि दशमो सुविशाल ॥ "भैया" वंदन करहि त्रिकाल जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥ २१ ॥

इति निर्वाणकांड भाषा।

१६ महावीराष्टकस्तोत्रम्।

शिखरिणी छन्दः।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिद्चितः। समं भांति ध्रौव्य-व्ययजनिलसन्तोऽन्तरहिताः ॥ जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानु-रिव यो। महावीरस्वामो नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥ अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं। जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ॥ स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला। महावीर० ॥२॥ नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं। लस-त्पादाम्भोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां ॥ भवज्ज्वाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि। महावीर० ॥ ३ ॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह। क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥ लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा। महावीर० ॥४॥ कनत्स्वर्णा-

भासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः । महावीर० ॥ ५ ॥ यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकल्लोलविमला । बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥ इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता । महावीर० ॥ ६ ॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम-सुभटः । कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ॥ स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनः । महावीर० ॥ ७ ॥ महामोहातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग् । निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मङ्गलकरः ॥ शरण्यः साधूनां भवभयभृत्तामुत्तमगुणो । महावीर० ॥८॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् । यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥ ९ ॥

१७ महावीराष्टक भाषा

पं० गजाधरलालजी, न्यायतीर्थ

जिन्होंकी प्रज्ञामें, मुकुरसम चैतन्य जड़ भी, स्थिती नाशोत्पत्ती, युत झलकते साथ सब ही। जगद्ज्ञाता मार्ग, प्रकट करते सूर्यसम जो, महावीरस्वामी, दरश हमको दें प्रकट वे ॥१॥ जिन्होंके दो चक्षू, पलक अरु लाली रहित हो, जनोंको दर्शाते, हृदयगत क्रोधादिलयको। जिन्होंकी शांतात्मा, अतिविमलमूर्ती स्फुटमहा, महावीरस्वामी, दरश हमको दें प्रकट वे ॥२॥ नमंते इंद्रोंके, मुकुटमणिकी कांति धरता, जिन्होंके पादोंका युग, ललित, संतप्त जनको। भवाग्नीका हर्ता, स्मरण करते ही सुजल है, महावीरस्वामी, दरश हमको दें प्रकट वे ॥ ३ ॥ जिन्होंकी पूजा से, मुदित-

मन हो मैंढक जबै, हुआ स्वर्गी ताहो, समय गुणधारो अति-सुखी। लहैं जो मुक्तीके, सुख भगत तो विस्मय कहा, महावीर-स्वामी, दरश हमको दें प्रगट वे ॥ ४ ॥ तपे सोने ज्यों भी, रहित वपुसे, ज्ञानगृह हैं, अकेले नाना भी, नृपतिवर सिद्धार्थ सुत—हैं। न जन्मे भी श्रीमान्, भवरत नहीं अद्भुतगती, महावीरस्वामी दरश हमको दें प्रकट वे ॥ ५ ॥ जिन्होंकी वाग्गंगा, अमल नयकल्लोल धरती, न्हवाती लोगोंको, सुविमल महा ज्ञान जलसे। अभी भी सेते हैं, बुधजन महाहंस जिसको, महावीरस्वामी, दरश हमको दें प्रकट वे ॥ ६ ॥ त्रिलोकीका जेता, मदनभट जो दुर्जय महा, युवावस्थामें भी, वह दलित कीना स्वबलसे। प्रकाशी मुक्तीके, अतिसुखदाता जिनविभू, महावीरस्वामी, दरश हमको दें प्रकट वे ॥ ७ ॥ महामोहव्याधी, हरणकरता वैद्य सहज, बिना इच्छा बंधू, प्रथितजग कल्याण करता। सहारा भव्योंको सकल जगमें उत्तम गुणी, महावीरस्वामी, दरश हमको दें प्रकट वे ॥८॥

संस्कृत वीराष्टक रच्यो, भागचन्द्र रुचिवान।
तस भाषा अनुवाद यह, पढ़ि पावे निर्वान ॥ ६ ॥

१८ अकलंक स्तोत्र।

शार्दूल विक्रीडित छन्द।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितम्। साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि॥ रागद्वेषभया मयान्तकजरा लोलत्वलोभादयो, नालं यत्पदलंघनाय स महादेवो मया वंद्यते ॥ १ ॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरभवा तीव्रार्चिषा वन्हिना।

यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः ॥ सोऽयं किं मम शङ्करो भयतृषारोषार्तिमोहक्षयं । कृत्वा यः स तु सर्वबित्तनुभृ-तां क्षेमंकरःशङ्करः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्दैत्येन्द्रवक्षः-स्थलम् । सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥ नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतम् । विश्वंव्याप्यविजृम्भते सतु महाविष्णुःसदृष्टो मम ॥ ३ ॥ ऊर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः । पात्री दण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थि-तिम् ॥ आविर्भावयितु भवन्ति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशाम् । क्षुत्तृ-ष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥ ४ ॥ योजग्ध्वा-पिशितंसमत्स्यकबलं जीवंच शून्यं वदन् । कर्त्ताकर्मफलं न भुंक्त इतियो वक्ता स बुद्धःकथम् ॥ यज्ज्ञानं क्षणवर्ति वस्तु सकले ज्ञातुं न शक्तंसदा । यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धो मम ॥५॥

स्रग्धरा छन्द–ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूल-पाणिः कथं स्यात् । नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथ सांगनः सात्मजश्च ॥ आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मा-न्तरायः । सक्षपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेग विभ्रांतचेताः । शम्भुः खट्वाङ्गधारीगिरिपतितनयापांग लीलानुविद्धः । विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमेद्गोपनाथस्य मोहादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥ ७ ॥

शार्दूल विक्रीडित छन्द–एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रे सहस्रं भुजानेकः शेषभुजङ्गभोगशयने व्यादाय निद्रायते । द्रष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगा देकश्चतुर्वक्त्रता । मेते मुक्तिपथं वदन्तिवि-दुषा मित्येतदत्यद्भुतम् ॥८॥

स्रग्धरा छन्द – यो विश्वं वेदवेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिणः पार-दृश्वा पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम्। तं वन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषंतं बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवंवा ॥ ६ ॥

शार्दूलविक्रीडित छन्द – मायानास्ति जटाकपालमुकुटं चन्द्रो न मूर्द्धावली खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुःशूलं न चोग्रं मुखं। कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः सोऽस्मान् पातु निरंजनो जिनपतिः सर्वत्रसूक्ष्मःशिवः ॥१०॥ नो ब्रम्हांकितभूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं नो चंद्रार्ककराङ्कितं सुरपतेर्वज्रांकितं नैव च। षड् वक्त्राङ्कित बौद्धदेव हुतभुग्यक्षोरगैर्नाङ्कितं नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदंजैनेन्द्रमुद्रांकितं ॥ ११ ॥ मौञ्जी दण्डकमण्डलु प्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो। रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कौपीनखट्वाङ्गना। विष्णोश्चक्रगदादि शङ्खमतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं। नग्नंपश्यतवादिनोजगदिदं जैनेंद्रमुन्द्राङ्कितम् ॥ १२ ॥ नाहङ्कारवशी कृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं। नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया। राज्ञःश्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो बौद्धोघान्सकलान् विजित्य सघटः पादेनविस्फालितः ॥

स्रग्धराछन्द–खट्वाङ्गंनैवहस्ते नच हृदि रचिता लम्बते मुण्डमाला। भस्माङ्गं नैवशूलं नच गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं चन्द्रार्द्धं नैव मूर्द्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्र। तंवन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं ॥१४॥

किं वाद्योभगवानमेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ, काले योजनतासुधर्मं निहितो देवोऽकलङ्कोजिनः। यस्यस्फारविवेक मुद्रलहरी

जालेऽप्रमेयाकुला, निर्मग्ना तनुतेतरां भगवती ताराशिरः कम्पनम् ॥१५॥ सा तारा खलु देवता भगवती मन्यापिमन्यामहे, षण्मासा-वधि जाड्य सांख्यभगवद्भट्टाकलंकप्रभोः। वाक्कलोल परम्पराभिर-मतेनूनं मनोमज्जन व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः सन्ताड्नितेन-स्ततः ॥ १६ ॥ इति श्रीअकलङ्कस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

१६ भक्तामर-स्तोत्रम्।

वसन्ततिलका वृत्तम्।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपापतमो वितान-तम्। सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादावालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्व बोधादुद्भूतबुद्धि पटुभिः सुरलोकनाथैः। स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैस्तोष्ये कि-लाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥ बुद्धया विनापि विबुधार्चितपाद-पीठ स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम्। बालं विहाय जलसं-स्थितमिन्दुबिम्ब मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥ वक्तुं गुणान् गुणसमुद्रशशाङ्ककान्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्धया। कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतु मलमम्बु-निधिं भुजाभ्याम् ॥४॥ सोऽहं तथापि तव भक्ति वशान्मुनीश कर्तुं स्तवं विगतिशक्तिरपि प्रवृत्तः। प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्। यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतुः ॥ ६ ॥ त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसंनिबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभा-

आम् । आक्रान्तलोकमलिनीलनशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वर-
मन्धकारम् ॥ ७ ॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमारभ्यते तनु-
धियापि तव प्रभावात् । चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफ-
लद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः ॥८॥ आस्तां तवस्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः कुरुते
प्रभैव पद्माकरेषु जलजानि विकाशभाञ्जि ॥ ९ ॥ नात्यद्भुतं भुवन-
भूषण भूतनाथ भूतेर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः । तुल्याभवन्ति
भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥
दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य
चक्षुः । पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं जलनिधे-
रसितुं क इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत ! तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः
पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥ वक्त्रं क्व ते सुर-
नरोरगनेत्रहारि निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् । बिम्बं कलङ्क-
मलिनं क्व निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाश-कल्पम् ॥१३॥
सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलाप शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घ-
यन्ति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं कस्तान्निवारयति सञ्च-
रतो यथेष्टम् ॥१४॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभिर्नीतं मना-
गपि मनो न विकारमार्गम् । कल्पान्त कालमरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्त्तिरपव-
र्जिततैलपूरः कृत्स्नं जगत्त्रय मिदं प्रकटीकरोषि । गम्यो न जातु
मरुतां चलिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥
नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्ज-

गन्ति। नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनी-न्द्रलोके ॥ १७ ॥ नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम्। विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्प कान्ति वि-द्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्क बिम्बम् ॥ १८ ॥ किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु नाथ। निष्पन्नशालिवन-शालिनि जीवलोके कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु। तेजोमहामणिषु याति यथा महत्वं नैवं तु काच शकले किरणा-कुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेपि ॥ २१ ॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मी प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥ २२ ॥ त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसमादित्यवर्णममलं तमसः पुर-स्तात्। त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिव पदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम्। योगीश्वरं विदितयोगमनेक-मेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २४ ॥ बुद्धस्त्वमेव विबु-धार्चितबुद्धिबोधात्त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात्। धा-तासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद्व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्त-मोऽसि ॥ २५ ॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ! तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय। तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ॥ २६ ॥ कोविस्मयोऽत्र यदि

नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश । दोषैरुपात्त-
व बुधाश्रयजातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥
उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति
॥ २८ ॥ सिंहासने मणिमयखशिखा विचित्रे विभ्राजते तव वपुः
कनकावदातम् । बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रि-
शिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्रा-
जते तव वपुः कलधौत कान्तम् । उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥ छत्रत्रयं तव विभाति
शशाङ्ककान्त मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर प्रतापम् । मुक्ताफलप्र-
करजाल विवृद्धशोभं प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥ ३१ ॥
गम्भीरताररवपूरितदिग्विभागस्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन् खेदुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः
प्रवादी ॥ ३२ ॥ मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजातसन्तानकादिकु-
सुमोत्करवृष्टिरुद्धा । गन्धोदबिन्दु शुभमन्दमरुत्प्रयाता दिव्या
दिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुम्भत्प्रभावलयभू-
रिविभा विभोस्ते लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती । प्रोद्य-
द्दिवाकर निरन्तर भूरि संख्या दीप्त्या जयन्त्यपि निशामपि सोम-
सौम्याम् ॥ ३४ ॥ स्वर्गापवर्गगममार्ग विमार्गणेष्टः सद्धर्मतत्त्व,
कथनैकपटुस्त्रिलोक्याः । दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभा-
षास्वभाव परिणामगुणैःप्रयोज्यः ॥ ३५ ॥ उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्ज-
कान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र
जिनेन्द्र धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥ ३६ ॥ इत्थं

यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य। यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकासिनोऽपि ॥ ३७ ॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम्। ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥ ३८ ॥ भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः। बद्धक्रमः क्रमगत हरिणाधिपोपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥ ३९ ॥ कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम्। विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्। आक्रामति क्रमयुगेन निरस्त शङ्कस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥ वल्गत्तुरंगगज गर्जितभीमनाद माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्। उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं त्वत्कीर्तनात्तम इवाशुभिदामुपैति ॥ ४२ ॥ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगावतारतरणातुरयोधभीमे। युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥ ४३ ॥ अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ। रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयान-पात्रास्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ॥ ४४ ॥ उद्भूतभीषणजलोदरभार भुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः। त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः। त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतब-

न्धभया भवन्ति ॥ ४६ ॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि संग्राम वारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् । तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां भक्त्या मया विविधवर्णविचित्रपुष्पाम् । धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

॥ इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं भक्तामरस्तोत्रं ॥

२० कल्याणमन्दिरस्तोत्रं ।

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि भीताभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रिपद्मम् । संसारसागरनिमज्जदशेषजंतुपोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥१॥ यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् । तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतोस्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥२॥ युग्मम् ॥ सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूपमस्मादृशाः कथमधीश भवन्त्यधीशाः । धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धो रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः ॥ ३ ॥ मोह क्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत । कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मान्मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ॥ ४ ॥ अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ जडाशयोऽपि कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य । बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ॥ ५ ॥ ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः । जाता तदेवमसमीक्षितकारितेयं जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽ-

पि ॥ ६ ॥ आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन संस्तवस्ते नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति। तीव्रातपोपहतपान्थजनान्निदाघे प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि ॥ ६ ॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिलीभवन्ति जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्मबन्धा। सद्यो भुजङ्गममया इव मध्यभागमभ्यागते वनशिखण्डिनो चन्दनस्य ॥ ८ ॥ मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि। गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमनैः ॥ ६ ॥ त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः। यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नूनमन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ १० ॥ यस्मिन्हरप्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन। विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन, पीतं न किं तदपि दुर्द्धरवाडवेन ॥ ११ ॥ स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपि प्रपन्नास्त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः। जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥ १२ ॥ क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो ध्वस्तस्तदा वद कथं किल कर्मचौराः। प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥ १३ ॥ त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूप-मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोशदेशे। पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य-दक्षस्य सम्भवपदं ननु कर्णिकायाः ॥१४॥ ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति। तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥१५॥ अन्तः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्। एत-

त्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥ १६ ॥ आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या। ध्यातो जिनेन्द्र भवतीह भवत्प्रभावः । पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं किं नाम नो विषविकारमपाकरोति ॥१७॥ त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि नूनं विभो हरिहरादिधिया प्रपन्नाः । किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शङ्खो नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥१८॥ धर्मोपदेश-समये सविधानुभावा-दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः । अ-भ्युद्गते दिनपतौ स महीरुहोऽपि किं वा विबोधमुपयाति न जीव-लोकः ॥१९॥ चित्रं विभो कथमवाङ्मुखवृन्तमेव विष्वक्पतत्य-विरला सुरपुष्पवृष्टिः । त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश ! गच्छ-न्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥२०॥ स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भ-वायाः पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति । पीत्वा यतः परमसंमद-सङ्गभाजो भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ॥२१॥ स्वामिन्सुदू-रमवनम्य समुत्पतन्तो मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः । येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुङ्गवाय ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥२२॥ श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नसिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिन-स्त्वाम्। आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्चामीकराद्रिशिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥ २३ ॥ उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन लुप्त-च्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव । सांनिध्यतोऽपि यदि वा तव वीत-राग ! नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥ २४ ॥ भो भो प्रमादमवधूय भजध्वमेनमागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम् । एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥ ॥ २५ ॥ उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ तारान्वितो विधु-

स्यं विहताधिकारः। मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजात्त्रिधा धृतधनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥ २६ ॥ स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन-कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन। माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥२७॥ दिव्यस्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपानामुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान्। पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ २८ ॥ त्वं नाथ जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि यत्तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठलग्नान्। युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव चित्रं विभो यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥ २६ ॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्गतस्त्वं किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश। अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतुः ॥ ३० ॥ प्राग्भारसम्भृतनभांसि रजांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि। छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥ ३१ ॥ यद्गर्जदूर्जितघनौघमदभ्रभीमं भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारम्। दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे तेनैव तस्य जिन दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ ३२ ॥ ध्वस्तोर्ध्व-केशविकृताकृतिमर्त्यमुण्डप्रालम्बभृद्भयदवक्त्रविनिर्यदग्निः। प्रेत-व्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःख-हेतुः ॥ ३३ ॥ धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसन्ध्यमाराधयन्ति विधिवद्विधुतान्यकृत्याः। भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः पाद द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥ ३४ ॥ अस्मिन्नपारभववा-रिनिधौ मुनीश ! मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ॥३५॥

जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव! मन्ये मया महितमीहितदान-
दक्षम्। तेनेह जन्मनि मुनीश! पराभवानां जातो निकेतनमहं म-
थिताशयानाम्॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन पूर्वं विभो
सकृदपि प्रविलोकितोऽसि। मर्माविधो (भिदो) विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ ३७ ॥ आकर्णितोपि महितोऽपि
निरीक्षितोपि नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या। जातोऽ-
स्मि तेन जनबांधव दुःखपात्रं यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-
शून्याः॥३८॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य कारुण्यपुण्यवसते
वशिनां वरेण्य। भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय दुःखाङ्कुरो-
द्दलनतत्परतां विधेहि॥३९॥ निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्यमा-
साद्य सादितरिपुप्रथितावदानम्। त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानव-
न्ध्यो वन्ध्योऽस्मि तद्भुवनपावन हा हतोऽस्मि॥४०॥ देवेन्द्रवन्द्य
विदिताखिलवस्तुसार संसारतारक विभो भुवनाधिनाथ। त्राय-
स्व देव करुणाहृद मां पुनीहि सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बुराशेः॥४१॥
यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रिसरोरुहाणां भक्तेः फलं किमपि सन्ततस-
ञ्चितायाः। तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव
भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि॥४२॥ इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र
सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागाः। त्वद्बिम्बनिर्मलमुखाम्बुजब-
द्धलक्ष्याः ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः॥४३॥ जननयन-
कुमुदचन्द्र—प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा। ते विगलितमलनि-
चया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते॥४४॥

२१ कल्याण मन्दिर (भाषा)

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।
बंदू परमानन्दमय, घट घट अन्तर लीन ॥

चौपाई ।

निर्भय करण परम परधान । भव समुद्र जल तारण यान ॥
शिव मन्दिर अघहरण अनिन्द । बन्दू पार्श्व चरण अरविन्द ॥१॥
कमठ मान भञ्जन बरवीर । गरिमा सागर गुण गम्भीर ॥
सुर गुरु पारि लहै नहिं जासु । मैं अजान गुणु जम्पूं तासु ॥२॥
प्रभु स्वरूप अति अगम अथाह । क्यों हमसे यह होय निवाह ॥
ज्यों दिन अन्ध उलूको पोत । कहि न सकै रवि किरण उद्योत ॥३॥
मोह होन जानैं मन माहिं । तोहि न तुल गुण बरणे जाहिं ॥
प्रलय पयोधि करै जल बौन । प्रगटहि रत्न गिने तिहि कौन ॥४॥
तुम असंख्य निर्मल गुण खान । मैं मतिहीन कहौं निज बान ॥
ज्यों बालक निज बाहिं पसार । सागर परिमित कहे बिचार ॥५॥
जो योगीन्द्र करहिं तप खेद । तेउ न जानहिं तुम गुण भेद ॥
भक्ति भाव मुझ मन अभिलाष । ज्यों पक्षी बोलैं निज भाष ॥६॥
तुम यश महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन आधार ॥
आवै पवन पद्म सर होय । ग्रीष्म तपन निवारै सोय ॥७॥
तुम आवत भविजन मन मांहिं । कर्म निबन्ध शिथिल हो जाहिं ॥
ज्यों चन्दन तरु बोलैं मोर । डरहिं भुजङ्ग चलैं चहुं ओर ॥८॥
तुम निरखत जन दीन दयाल । सङ्कट तैं छूटैं ततकाल ॥
ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर । ते तज भागहिं देखत भोर ॥९॥

तुम भविजन तारक किम होय। ते चितधार तिरहि ले तोय ॥
यह ऐसे कर जान स्वभाव। तरहिं मशक ज्यों गर्भित बाव ॥१०॥
जिन सब देव किये वश वाम। तिन छिनमें जीतो सो काम।
ज्यों जल करै अग्नि कुल हान। बड़वानल पीवै सोपान ॥११॥
तुम अनन्त गुरुवा गुण लिये। क्यों कर भक्त धरै निज हिये ॥
है लघु रूप तरहिं संसार। यह प्रभु महिमा अगम अपार ॥ १२ ॥
क्रोध निवार कियो मन शान्ति। कर्म सुभट जीते केहि भांति ॥
यह पटुतर देखहु संसार। नील वृक्ष ज्यौं दहै तुषार ॥ १३ ॥
मुनि जन हिये कमल निज टोहि। सिद्धस्वरूप सम ध्यावें तोहि ॥
कमल कणिका बिन नहिं और। कमल वीज उपजनकी ठौर ॥१४॥
जब तुम ध्यान धरै मुनि कोय। तब विदेह परमातम होय ॥
जैसे धातु शिला तनु त्याग। कनक स्वरुप धवैं जब आग ॥१५॥
जाके मन तुम करहु निवास। विलय जाय सब विग्रह तास ॥
ज्यों महन्त बिच आवे कोय। विग्रह मूल निवारै सोय ॥१६॥
करहिं विविध जो आतम ध्यान। तुम प्रभाव तें होय निदान ॥
जैसे नीर सुधा अनुमान। पीवत विष विकारकी हान ॥ १७ ॥
तुम भगवन्त विमल गुण लीन। समल रूप मानहिं मतिहीन ॥
ज्यों नलिया रोग दृग गहै। वर्ण विवर्ण शङ्ख सो कहै ॥ १८ ॥

दोहा—निकट रहित उपदेश सुन, तरुवर भयो अशोक। ज्यों रवि उगते जीव सब, प्रगट होत भुवि लोक ॥ १६ ॥ सुमन वृष्टि ज्यों सुर करहिं, हेठ बीठ मुख सोय। त्यों तुम सेवत सुमन जन बन्ध अधोमुख होय ॥२०॥ उपजी तुम हिय उदधि तें वाणी सुधा समान। जिहिं पीवत भविजन लहैं, अजर अमर पदथान ॥ २१ ॥

कहहिं सार तिहुंलोकको, यह सुर चामर दोय। भाव सहित जो जिन नमैं, तिस गति ऊरध होय ॥ २२ ॥ सिंहासन गिरि मेरु सम, प्रभु धुन गरजत घोर। श्याम सुतन घनरूप लख, नाचत भविजन मोर ॥ २३ ॥ छवि हित होय अशोक दल, तुम भामण्डल देख। वीतरागके निकट रह, रहे न राग विशेष ॥ २४ ॥ सीख कहै तिहुंलोकको, यह सुर दुंदुभिनाद। शिव पथ सारथ वाह जिन, भजो तजो परमाद ॥ २५ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छवि देन। त्रिविध रूप धर मनहुं शशि, सेवत नखत समेत ॥२६॥

पद्धड़ी छन्द—प्रभु तुम शरीर दुति रत्न जेम, परताप पुञ्जजिमि शुद्ध हेम। अति धवल सुयश रूपा समान, तिनके गुण तीन विराजमान ॥ २७ ॥ सेवहिं सुरेन्द्रकर नमत भाल, तिन सीस मुकुट तज देय माल। तुम चरण लगत लहलहै प्रीत, नहिं रमहिं और सुमन रीत ॥ २८ ॥ प्रभु भोग विमुख तन कर्म दाह, जन पार करत भवजल निवाह। ज्यों माटी कलस सुपक्य होय, ले भार अधोमुख तिरै सोय ॥ २९ ॥ तुम महाराज निर्धन निरास, तुम तज वैभव सब जग प्रकाश। अक्षर स्वभाव सेहि लिखे न कोय, महिमा अनन्त भगवन्त होय ॥ ३० ॥ कोपियो कमठ निज वैर देख, तिन करी धूलि वर्षा विशेष। प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन, सो भयो पापि लम्पट कलीन ॥ ३१ ॥ गरजत घोर घन अन्धकार, चमकत विद्युत जल मुसलधार। वरषंत कमठ धर ध्यान रुद्र, दुस्तर करन्त निज भव समुद्र ॥३२॥

वस्तु छन्द —भेजे तुरत पिशाच गण ! नाश पास उपसर्ग कारण।
अग्नि जाल भूकंत मुख । धुनि करत जिमि मत्तवारण ॥
काल रूप विकराल । तन रुण्डमाल निज कण्ठ ।
तुम निशंक यह रंक निज । करे कर्म दिढ़ गंठ ॥ ३३ ॥

चौपाई ।

जे तुप चरण कमल तिहुंकाल, सेवहिं तज माया जञ्जाल ।
भाव भक्ति मन हर्ष अपार, धन धन जगमें तिन अवतार ॥ ३४॥
भवसागर महिं फिरत अजान, मैं तुम सुयश सुनों नहिं कान ।
जो प्रभु नाम मन्त्र मन धरै, तासों विपति भुजङ्गन डरै ॥३५॥ मन वांछित फल जिन पद मांहि । मैं पूरब भव पूजे नाहिं ॥ माया मगन मैं फिरो अज्ञान । करहिं रङ्क जन मुझ अपमान ॥ ३६ ॥ मोह तिमिर छाये दृग मोहि । जन्मान्तर देखो नहिं तोहि ॥ तो दुर्जन सङ्गति मुझ गहे । मरम छेदके कुबचन कहे ॥ ३७ ॥ सुनो कान यश पूजे पांय । नेनन देखो रूप अघाय ॥ भक्ति हेतु न भयो चितचाव । दुख दायक क्रिया विन भाव ॥ ३८ ॥ महाराज शरणागत पाल । पतित उधारण दीन दयाल ॥ सुमरण करूं नाय निज सीस । मुझ दुख दूर करो जगदीश ॥३९॥ कर्म निकन्दन महिमा सार । अशरण शरण सुयश विस्तार ॥ नहिं सेबूं तुमरे प्रभु पायं । तो मुझ जन्म अकारथ जाय ॥ ४० ॥ सुरपति बन्दित दयानिधान । जगतारण जगपति जगयान ॥ दुखसागर ते मोहि निकास । निर्भयथान देहु सुखरास ॥ ४१ ॥ मैं तुम चरण कमल गुणगाय । बहुविधि भक्ति करी मनल्याय । जन्म जन्म प्रभु पाऊं तोय । यह सेवा फल दीजे मोय ॥४२॥

रोडक छन्द — यहि विधि श्री भगवन्त सुयश जे भव जन भाषहिं। ते निश पुण्य भण्डार सञ्च चिर पाप प्रणासहिं॥ रोम रोम हुलसन्त अन्त प्रभु गुण मन ध्यावे। स्वर्ग सम्पदा भुञ्ज वेग पञ्चम गति पावें॥४३॥

दोहा—यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्रकी बुद्ध।
भाषा कहत बनारसी, कारण समकित शुद्ध॥ ४४॥

२२ विषापहार स्तोत्र भाषा

दोहा—आतम लीन अनन्त गुण, स्वामी ऋषभ जिनेन्द्र।
नित प्रति बन्दित चरण युग, सुर नागेन्द्र नरेन्द्र॥१॥

चौपाई।

विश्व सुनाथ विमल गुण ईश। विहरमान बन्दों जिन बीस॥ गणधर गौतम शारदमाय। बर दीजे मोहि बुद्धि सहाय॥ २॥ सिद्ध साधु सत गुरु आधार। करूं कवित्त आतम उपकार॥ विषापहार स्तवन उद्धार। सुक्ख औषधी अमृतसार॥ ३॥ मेरा मंत्र तुम्हारा नाम। तुम हो गारुड़ गरुड़ समान॥ तुम सम वैद्य नहीं संसार। तुम स्याने तिहुं लोक मझार॥४॥ तुम विषहरण करन जग सन्त। नमो २ तुम देव अनन्त॥ तुम गुण महिमा अगम अपार। सुरगुरु शेष लहैं नहिं पार॥ ५॥ तुम परमातम परमानन्द। कल्पवृक्ष यह सुखके कन्द॥ मुदित मेरु नय मण्डित धीर। विद्यासागर गुण गम्भीर॥ ६॥ तुम दधिमथन महा वरवीर। संकट विकट भय भञ्जन भीर॥ तुम जगतारण तुम जगदीश। पतित उधारण विश्वे बीश॥ ७॥ तुम गुणमणि चिन्तामणि

राश। विघ्नबेलि चितहरण वितास॥ विघ्नहरण तुम नाम अनूप मंत्र यंत्र तुमही मणिरूप॥ ८॥जैसे वज्र पर्वत परिहार। त्यों तुम नाम जू विषापहार॥ नागदमन तुम नाम सहाय। विषहर विष-नाशक क्षणमाय॥ ९॥ तुम सुमरण चिंते मनमांहिं। विष पीवे अमृत हो जाहिं॥ नाम सुधारस वर्षे जहां। पाप पङ्कमल रहै न तहां॥ १०॥ ज्यों पारसके परसे लोह। निज गुण तज कंचनसम होइ॥ त्यों तुम सुमरण साधे सूंच। नीच जो पावे पदवी ऊंच ॥११॥ तुमहिं नाम औषधि अनुकूल। महा मंत्र सर जीवन मूल। मूरख मर्म न जाने भेव। कर्म कलङ्क दहन तुम देव॥१२॥ तुम ही नाम गारुड गह गहै। काल भुजङ्गम कैसे रहै॥ तुम्ही धनन्तर हो जिनराय। मरण न पावेको तुम ठाय॥१३॥ तुम सूरज उदकाघट जास। संशय शीन न व्यापे तास॥ जीवे दादुर वर्षे तोय। सुन वाणी सरजीवन होय॥१४॥ तुम बिन कौन करै मुझ पार। तुम कर्त्ता हर्त्ता किरपाल॥१५॥ शरण आयो तुम्हरी जिनराज। अब मो काज सुधारो आज॥ मेरे यह धन पूंजी पूत। साह कहै घर राखो सूत॥ १६॥ करौं वीनती बारंबार। तुम बिन कर्म करैको क्षार॥१७॥ विग्रह ग्रह दुख विपति वियोग। और जु घोर जलंधर रोग॥ चरण कमल रज टुक तन लाय। कुष्ट व्याधि दीरघ मिट जाय॥१८॥ मैं अनाथ तुम त्रिभुवन नाथ। मात पिता तुम सज्जन साथ॥ तुम सा दाता कोई न आन। और कहां जाऊं भगवान ॥ १९॥ प्रभुजी पतित उधारन आह। बांह गहेकी लाज निबाह॥ जहां देखों तहां तुमही आय। घट २ ज्योति रही ठहराय॥२०॥ बाट सुघाट विषम भय जहां। तुम बिन कौन सहाई तहां। विकट व्या-

धि व्यंतर जल दाह । नाम लेत क्षण मांहिं विलाह ॥२१॥ आचार्य मानतुङ्ग अवसान । संकट सुमिरो नाम निधान ॥ भक्तामरकी भक्ति सहाय । प्रण राखे प्रगटे तिस ठाय ॥२२॥ जुगल एक नृप विग्रह ठयो । वादिराज नृप देखन गयो ॥ एकीभाव कियो निस-न्देह । कुष्ट गयो कञ्चन सम देह ॥२३॥ कल्याण मन्दिर कुमुद-चन्द्र ठयो । राजा विक्रम विस्मय भयो ॥ सेवक जान तुम करी सहाय । पारसनाथ प्रगटे तिस ठाय ॥२४॥ गई व्याधि विमल मनि लही । तहां फुनि सनिधि तुमही कही ॥ भवसुदत्त श्रीपाल नरेश । सागर जल शंकट सुविशेष ॥२५॥ तहां पुनि तुम ही भये सहाय । आन-न्दसे घर पहुंचे जाय ॥ सभा दुश्शासन पकड़ो चीर । द्रुपदी प्रण राखो कर धीर ॥ २६ ॥ सीता लक्ष्मण दोनो साज । रावण जीत विभीषण राज ॥ सेठ सुदर्शन साहस दियो । शूलीसे सिंहासन कियो ॥२७ ॥ वारिषेन नृप धरिहो ध्यान । ततक्षण उपजो केवल ज्ञान ॥ सिंह सर्पादिक जीव अनेक । जिन सुमिरे तिन राखी टेक ॥२८॥ ऐसी कीरति जिनकी कहूं । साह कहै शरणागत रहूं ॥ इस अवसर जीवे यह बाल । मुझ सन्देह मिटे तत्काल ॥ २६ ॥ बन्दी छोड़ विरद महाराज । अपना विरद निबाहो आज ॥ और आलंब-न मेरे नाहिं । मैं निश्चय कीनो मन माहिं ॥ ३० ॥ चरण कमल छोड़ों ना सेव । मेरे तो तुम सतगुरु देव ॥ तुम ही सूरज तुम ही चन्द । मिथ्या मोह निकंदन कंद ॥३१॥ धर्मचक्र तुम धारण धीर विषहर चक्र बिड़ारन वीर ॥ चोर अग्नि जल भूत पिशाच । जल जङ्गम अटवी उदवास॥३२॥दुर दुशमन राजा वश होय । तुम प्रसाद गजे नहिं कोय ॥ हय गज युद्ध सबल सामंत । सिंह शार्दूल महा

भयवंत ॥ ३३ ॥ दृढ़ बंधन विग्रह विकराल । तुम सुमरत छूटें तत्काल ॥ पांयन पनहीं नमक न नाज । ताको तुम दाता गजराज ॥३४॥ एक उथाप थप्यो पुन राज । तुम प्रभु बड़े गरीब निवाज ॥ पानीसे पैदा सब करो । भरी डाल तुम रीतो करो ॥ ३५ ॥ हर्त्ता कर्त्ता तुम किरपाल । कीड़ो कुञ्जर करत निहाल ॥ तुम अनन्त अल्प मो ज्ञान । कंह लग प्रभुजी करों बखान ॥ ३६ ॥ आगम पन्थ न सूझे मोंहि । तुम्हरे चरण बिना किम होहि ॥ भये प्रसन्न तुम साहस कियो । दयावन्त तब दर्शन दियो ॥ ३७ ॥ साह पुत्र जब चेन न भयो । हंसत हंसत वह घर तब गयो ॥ धन दर्शन पायो भगवन्त । आज अङ्ग मुख नयन लसन्त ॥ ३८ ॥ प्रभुके चरण कमलमें नयो । जन्म कृतारथ मेरो भयो ॥ कर युग जोड़ नवाऊं शीश । मुझ अपराध क्षमो जगदीश ॥ ३९ ॥ सत्रह सौ पन्द्रह शुभ थान । नारनौल तिथि चौदस जान ॥ पढ़े सुने तहां परमानन्द । कल्प वृक्ष महा सुख कन्द ॥ ४० ॥ अष्ट सिद्धि नव निधि सो लहे । अचलकीर्ति आचार्य कहे ॥ याको पढ़ो सुनो सब कोय । मनवांछित फल निश्चय होय ॥ ४१ ॥

दोहा—भय भञ्जन रञ्जन जुगत, विषापहार अभिराम ।
संशय तज सुमिरो सदा, श्रीजिनवरको नाम ॥ ४२ ॥

॥ इति श्रीविषापहार भाषा स्तोत्र सम्पूर्ण ॥

२३ एकीभाव स्तोत्र भाषा

दोहा—वादराज मुनिराजके ! चरण कमल चित लाय ।
भाषा एकीभावकी, करूं स्वपर सुखदाय ॥

चौबीस मात्रा काव्य छन्द ।

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी। सो मुझ कर्म प्रबन्ध करत भव २ दुख भारी॥ ताहि तिहारी भक्ति जगत रवि जो निरवारै। तो अब और कलेश कौन सो नाहिं विदारै॥ १॥ तुम जिन ज्योति स्वरूप दुरित अन्धियारि निवारी। सो गणेश गुरु कहैं तत्व विद्याधनधारी॥ मेरे चित घर मांहिं बसौ तेजो मय यावत। पाप तिमिर अवकाश तहां सो क्यों कर पावत॥ २॥ आनन्द आंसू वदन धोय तुम सों चित साने। गद्गद सुरसों सुयश मन्त्र पढ़ पूजा ठाने॥ ताके बहुविधि व्याध व्याल चिर-काल निवासी। भजैं थानक छोड़ देह बम्बईके वासी॥ ३॥ दिवतैं आवनहार भये भवि भाग उदय बल। पहले ही सुर आय कनक मय कीय महीतल॥ मनगृह ध्यान दुवार आय निवसे जग नामी। जो सुवर्ण तन करो कौन यह अचरज स्वामी॥ ४॥ प्रभु सब जगके विना हेतु बान्धव उपकारी। निरावर्ण सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी॥ भक्ति रचित मम चित्त सेज नित वास करोगे। मेरे दुःख सन्ताप देख किम धीर धरोगे॥ ५॥ भव भवमें चिर काल भ्रमों कछु कहिय न जाई। तुम थुति कथा पियूष वापिका भाग न पाई॥ शशि तुषार घनसार हार शीतल नहिं या सम। करत न्हौन ता माहि क्यों न भव ताप बुझै मम॥ ६॥ श्री विहार परिवाह होत शुचि रूप सकल जग। कमल कनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग॥ मेरो मनसर्वंग परस प्रभुको सुख पावै। अब सो कौन कल्याण जो न दिन २ ढिग आवै॥ ७॥ भव तज सुख पद बसे काम मद सुभट संघारे। जो तुमको निरखत सदा प्रिय दास तिहारे। तुम वचनामृत पान भक्ति अञ्जलि सो पीवै। तिनै

भयानक क्रूररोग रिपु कैसे छीवै ॥ ८ ॥ मानथम्भ पाषाण आन पाषाण पटन्तर। ऐसे और अनेक रत्न दीखें जग अन्तर ॥ देखत दृष्टि प्रमाण मान मद तुरत मिटावे। जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर पावे ॥ ९ ॥ प्रभु तन पर्वत परस पवन उरमें निबहै है। तासों तत्क्षण सकल रोग रज बाहर ह्वै है। जाके ध्याना हूत बसो उर अम्बुज मांही। कौन जगत उपकार करण समरथ सो नाहीं ॥ १० ॥ जन्म २ के दुख सहे सबते तुम जानो। याद किये मुझ हिये लगैं आयुधसे मानो ॥ तुम दयालु जगपाल स्वामि मैं शरण गही है। जो कुछ करना होय करो परमाण वही है ॥ ११ ॥ मरण समय तुम नाम मन्त्र जीवक तैं पायो। पापाचारी स्वान प्राण तज अमर कहायो ॥ जो मणिमाला लेय जपै तुम नाम निरंतर। इन्द्र संपदा लहै कौन संशय इस अन्तर॥१२॥ जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित्र साधैं। अनवध सुखकी सार भक्ति कूंची नहिं हाथैं ॥ सो शिव वांछिक पुरुष मोक्ष पट केम उघारे। मोह मुहर दृढ़ करी मोक्ष मन्दिरके द्वारे ॥ १३ ॥ शिवपुर केरो पन्थ पाप तम सो अति छायो। दुख सरूप बहु कूप खाड़ सो विकट बतायो ॥ स्वामी सुख सों तहां कौन जन मारग लागे। प्रभु प्रवचन मणि दीप जौनके आगे आगे ॥ १४ ॥ कर्म पटल भू माहिं दबी आतम निधि भारी। देखत अति सुख होय विमुख जन नाहिं उघारी ॥ तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चय कर धारैं। थुति कुदाल सों खोदि बन्द भू कठिन विदारैं ॥ १५ ॥ स्याद्वाद गिर उपज मोक्ष सागर लों धाई। तुम चरणाम्बुज परस भक्ति गङ्गा सुखदाई ॥ मोचित निर्मल थयो न्होन रवि पूरव तामैं। अब

वह होय मलीन कौन जिन संशय यामैं ॥ १६ ॥ तुम शिव सुख-मय प्रगट करत प्रभु चिन्तन तेरे। मैं भगवान समान भाव यों वरते मेरे ॥ यदपि झूठ है तदपि तृप्त निश्चल उपजावै। तुम प्र-साद सकलङ्क जीव वांछित फल पावै ॥ १७ ॥ वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै। भङ्ग तरङ्गिन विकथ वाद मल मलिन उथापै। मन सुमेर सो मथै ताहि जे सम्यक ज्ञानी। परमामृत सों तृप्त होंहिं ते चिर लौं प्राणी ॥ १८ ॥ जो कुदेव छविहीन बसन भूषण अभिलाषै। बैरी सो भयभीत होय सो आयुध राखै ॥ तुम सुन्दर सर्वाङ्ग शत्रु समरथ नहिं कोई। भूषण बसन गदादि ग्रहण काहेको होई ॥ १९ ॥ सुरपति सेवा करे कहा प्रभु प्रभुता मेरो। सोशलाघ ना लहै मिटै जग सों जग फेरो ॥ तुम भव जल-धि जिहाजि तोहि शिव कन्थ उचरिये। तुही जगत् जनपाल नाथ थुति को थुति करिये ॥ २० ॥ वचन जाल जड़ रूप आप चिन्मूरत झांई। तातें थुति आलाप नाहिं पहुंचे तुम तांई ॥ तो भी निष्फल नाहिं भक्ति रस भीने वायक ॥ सन्तनको सुरतरु समान वांछित वरदायक ॥ २१ ॥ कोप कभी नहिं करो प्रीत कबहुं नहिं धारो। अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारो ॥ तदपि आनि जग बहै बैर तुम निकट न लहिये। यह प्रभुता जग तिलक कहां तुम बिन सरधरिये ॥ २२ ॥ सुर तिय गावै सुयश स्वर्गगति ज्ञान स्वरूपी। जो तुमको थिर होय नमैं भवि आनन्द रूपी ॥ ताहि क्षेमपुर चलन बाट बांकी नहिं हो है। श्रुतिके सुमिरण मांहिं सो न कब ही तर मोहै ॥ २३ ॥ अतुल चतुष्टय रूप तुमैं जो चितमें धारे। आदर हो तिहुं काल माहिं जग थुति विस्तारे ॥ सो स्वीकृत शिव

पन्थ भक्ति रचना कर पूरे। पञ्च कल्याणक ऋद्धि पाय निश्चै दुख चूरे ॥ २४ ॥ अहो जगत्पति पूज्य अवधि ज्ञानी मुनि हारे। तुम गुण कीर्तन माहिं कौन हम मन्द विचारे ॥ थुति छल सो तुम विषै देव आदर विस्तारे। शिव सुख पूरण हार कल्पतरु यही हमारे ॥ २५ ॥ वादराज मुनिराज शब्द विद्याके स्वामी। वादराज मुनिराज तर्क विद्यापति नामी ॥ वादराज मुनिराज काव्य करता अधिकारी। वादराज मुनिराज बड़े भवजन उपकारी ॥२६॥

मूल अर्थ बहु विधि कुसुम, भाषा सूत्र मझार।
भक्तिमाल भूदर करी, करो कण्ठ सुखकार ॥ १॥

तीसरा अध्याय

२४ इष्ट छत्तीसी।

सोरठा—प्रणमूं श्री अरहंत, दयाकथित जिन धर्मको। गुरु निरग्रंथ महंत, अवर न मानूं सर्वथा ॥ १ ॥ बिन गुणकी पहिचान जानै वस्तु समानता। तातैं परम बखान, परमेष्टी गुणको कहूं ॥२॥ रागद्वेषयुत देव, मानै हिंसाधर्म पुनि। सग्रन्थगुरुकी सेव, सो मिथ्याती जग भ्रमै ॥ ३ ॥

अरहंतके ४६ मूल गुण।

दोहा—चौतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ।
अनंत चतुष्टय गुणसहित, छीयालीसों पाठ ॥ ४ ॥

अर्थ—३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, ४ अनंतचतुष्टय ये अरहंतके ४६ मूलगुण होते हैं। अब इनका भिन्न २ वर्णन करते हैं।

जन्मके १० अतिशय।

अतिशय रूप सुगन्ध तन, नाहिं पसेव निहार। प्रियहितवचन अतौल बल, रुधिर श्वेत आकार। लच्छन सहसरु आठ तन, समचतुष्कसंठान। वज्रवृषभनाराच युत,ये जनमत दश जान ॥६॥

अर्थ—१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हित मितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल बल, ७ दुग्धवत् श्वेत रुधिर, ८ शरीरमें एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्रसंस्थान १० वज्रवृषभनाराचसंहनन ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही उत्पन्न होते हैं।

केवलज्ञानके १० अतिशय।

योजन शत इकमें सुभिक्ष,गगनगमन मुख चार। नहिं,अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार ॥ सब विद्या ईश्वरपनों, नाहिं बढ़ै नख केश। अनिमिष दृग छायारहित, दश केवलके वेश ॥८॥

अर्थ—१ एक सौ योजनमें सुभिक्षता; अर्थात् जिस स्थानमें केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ योजनमें सुकाल होता है, २ आकाशमें गमन, ३ चार मुखोंका दीखना, ४ अदयाका अभाव, ५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना ९ नेत्रोंकी पलकें नहीं झपकना, १० छायारहित शरीर। ये १० अतिशय केवलज्ञान उत्पन्न होनेसे प्रगट होते हैं ॥८॥

देवकृत १४ अतिशय।

देवरचित हैं चार दश, अर्द्ध मागधी भाष। आपस मांहीं मित्रता निरमल दिश आकाश ॥९॥ होत फूल फल ऋतु सबे, पृथवी कांच समान। चरण कमलतल कमल है, नभ तैं जय जय बान ॥१०॥ मन्द सुगन्ध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि। भूमिविषैं कंटक नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि ॥११॥ धर्मचक्र आगे रहे, पुनि वसु मङ्गल सार। अतिशय श्रीअरहन्तके, ये चौतीस प्रकार ॥

अर्थ—१ भगवानकी अर्द्धमागधी भाषाका होना, २ समस्त जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना, ५ सब ऋतुके फल पुष्प धान्यादिकका एक ही समय फलना, ६ एक योजनतककी पृथिवीका दर्पणवत निर्मल होना, ७ चलते समय भगवान्के चरण कमलके तले सुवर्ण कमलका होना, ८ आकाशमें जय जय ध्वनिका होना, ९ मंदसुगन्धित पवनका चलना, १० सुगन्धमय जलकी वृष्टि होना, ११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ समस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका चलना, १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घन्टादि अष्ट मङ्गल द्रव्योंका साथ रहना। इस प्रकार सब मिलाकर ३४ अतिशय अरहन्त भगवानके होते हैं ॥१२॥

अष्ट प्रातिहार्य्य।

तरु अशोकके निकटमें, सिंहासन छविदार। तीन छत्र सिरपर लसें भामंडल पिछवार ॥१३॥ दिव्यध्वनि मुखतें खिरै पुष्पवृष्टि सुर होय। ढारैं चौसठि चमर लख। बाजैं दुंदुभि जोय ॥१४॥

अर्थ—१, अशोकवृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भग-

वानके सिरपर तीन छत्रका फिरना, ४ भगवानके पीछे भामण्ड-लका होना, ५ भगवानके मुखसे दिव्यध्वनिका होना, ६ देवोंके द्वारा पुष्पवृष्टिका होना, ७ यक्षदेवोंद्वारा चौसठ चंवरोंका ढुरना, दुंदुभी बाजोंका बजना ये आठ प्रातिहार्य हैं।

अनन्तचतुष्टय।

ज्ञान अनन्त अनन्त सुख, दरस अनन्त प्रमान।
बल अनन्त अरहंत सो, इष्टदेव पहिचान ॥१५॥

अर्थ—१ अनन्तदर्शन अनन्तज्ञान, ३ अनन्तसुख, ४ अनन्तवीर्य जिसमें इतने गुण हों, वह अरहन्त परमेष्ठी है।

अष्टादशदोषवर्जन।

जनम जरा तिरषा क्षुधा विस्मय आरत खेद। रोग शोक मद मोह भय निद्रा चिन्ता खेद ॥१६॥ राग द्वेष अरु मरण जुत, यह अष्टादश दोष। नाहिं होत अरहंतके सो छवि लायक मोष।

अर्थ—१, जन्म, २ जरा,३ तृषा, ४ क्षुधा, ५ आश्चर्य, ६ अरति (पीड़ा), ७ खेद, (दुःख), ८ रोग, ९ शोक. १० मद, ११ मोह, १२ भय, १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ पसीना, १६ राग, १७ द्वेष, १८ मरण ये १८ दोष अरहन्त भगवानमें नहीं होते ॥१७॥

सिद्धोंके ८ गुण।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरलघु अवगाहना।
सूच्छम वीरजवान निराबाध गुन सिद्धके ॥१८

अर्थ—१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघुत्व, ५ अव-गाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य्य, ८ अव्याबाधत्व ये सिद्धोंके ८ मूलगुण होते हैं॥

आचार्यके ३६ गुण —द्वादश तप दश धर्मजुत पालैं पञ्चाचार।
षट् आवशिक त्रयगुप्ति गु न आचारज पद्सार॥

अर्थ-तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३ ये आचार्य महाराजके ३६ मूलगुण होते हैं। अब इनको भिन्न २ कहते हैं॥ १९॥

द्वादश तप।

अनशन ऊनोदर करै, व्रतसंख्या रस छोर। विविक्तशयन आसन धरै काय कलेश सुठोर। प्रायश्चित धर विनयजुत वैयाव्रत स्वाध्याय। पुनि उत्सर्ग विचारकै धरै ध्यान मन लाय॥२१॥

अर्थ—१ अनशन, २ ऊनोदर, ३ व्रतपरिसंख्यान, ४ रसपरित्याग, ५ विविक्तशय्याशन, ६ कायक्लेश, ७ प्रायश्चित लेना, ८ पांच प्रकारका विनय करना, ९ वैयाव्रत करना, १० स्वाध्याय करना ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना), और १२ ध्यान करना ये बारह प्रकारके तप है॥२१॥

दश धर्म—छिमा मारदव आरजव, सत्यवचन चित पाग।
संजम तप त्यागी सरव, आकिंचन तियत्याग॥

अर्थ-१ उत्तमक्षमा, २ मार्दव, ३ आर्जव, ४ सत्य, ५ शौच, ६ संयम, ७ तप, ८ त्याग, ९ आकिंचन, १० ब्रह्मचर्य ये दश प्रकारके धर्म हैं॥ २२॥

षट आवश्यक—समता धर बंदन करै, नाना थुती बनाय।
प्रतिक्रमण स्वाध्यायजुत, कायोत्सर्ग लगाय॥

अर्थ-१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना) २, बंदना, ३ स्तुति (पञ्चपरमेष्ठीकी स्तुति) करना, प्रतिक्रमण (लगे

हुए दोषोंपर पश्चाताप) करना, ५ स्वाध्याय, और ६ कायोत्सर्ग (ध्यान) करना ये छह आवश्यक हैं ॥२३॥

पंचाचार और तीन गुप्ति ।

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, वीरज पंचाचार ।
गोपे मनवचकायको, गिन छत्तीस गुन सार ॥

अर्थ—१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्य्याचार, १ मनोगुप्ति मनको वशमें करना, २ वचनगुप्ति वचनको वशमें करना, ३ कायगुप्ति शरीरको वशमें करना, इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं ॥२४॥

उपाध्यायके २५ गुण ।

चौदह पूरबको धरें, ग्यारह अङ्ग सुजान ।
उपाध्याय पच्चीस गुण, पढ़ैं पढ़ावैं ज्ञान ॥२५॥

अर्थ—११ अङ्ग १४ पूर्वको आप पढ़ें और अन्यको पढ़ावें ये ही उपाध्यायके २५ गुण हैं ॥२५॥

ग्यारह अङ्ग ।

प्रथमहि आचारांग गुनि, दूजा सूत्रकृतांग । ठाण अङ्ग तीजो सुभग, चोथो समवायांग ॥२६॥ व्याख्या प्रज्ञप्ति पंचमो, ज्ञातृ कथा षट आन । पुनि उपासकाध्ययन है, अन्तःकृत दशठान ॥ अनुत्तरणउत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान । बहुरि प्रश्नव्याकरणजुत, ग्यारह अङ्ग प्रमान ॥

अर्थ—१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अन्तःकृतदशांग, ६ अनुत्तरोत्पाददशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, ११ वि-

पाकसूत्रांग, ये ग्यारह अङ्ग हैं ॥२८॥

चौदह पूर्व ।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तीजो वीरजवाद । अस्ति नास्ति परवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद ॥ छट्ठो कर्मप्रवाद है. सतप्रवाद पहिचान । अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमों प्रत्याख्यान ॥३०॥ विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महत । प्राणवाद किरिया बहुल, लोकबिंदु है अन्त ॥३१॥

अर्थ—१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणि पूर्व, ३ वीर्य्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्प्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये १४ पूर्व हैं ॥

सर्वसाधुके २८ मूलगुण ।

पंचमहाव्रत—हिंसा अनृत तस्करो, अब्रह्म परिग्रह पाय । मनवचननें त्यागवो, पंचमहाव्रत थाय ॥३२॥

अर्थ—१ अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत, ये पांच महाव्रत है । पांच समिति—ईर्य्या, भाषा, एषणा,पुनि क्षेपन, आदान । प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पांचों समिति विधान ॥

अर्थ—१ ईर्य्या समिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति ४ आदाननिक्षेपणसमिति,५ प्रतिष्ठापनासमिति, ये पांच समिति हैं ॥

पांच इन्द्रियोंका दमन ।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोध ।

षट आवशि मंजन तजन, शयन भूमिको शोध ॥

अर्थ—१ स्पर्शन (त्वक्), २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, और ५ श्रोत्र—इन पांच इंन्द्रियोंका वश करना सो इन्द्रियदमन है (छह आवश्यक आचार्यके गुणोंमें देखो) ॥३४॥

शेष सात गुण ।

वस्त्रत्याग कचलोंच अरु, लघु, भोजन इकबार ।

दांतन मुखमें ना करें, ठाड़े लेहिं अहार ॥३५॥

अर्थ—१ यावज्जीव स्नानका त्याग, २ शोधकर (देख भाल कर) भूमिपर सोना, ३ वस्त्रत्याग (दिगम्बर होना), केशोंका लौंच करना, ५ एक बार लघु भोजन करना, ६ दन्तधावन नहीं करना, ७ खड़े खड़े आहार लेना, इन सात गुणोंसहित २८ मूल गुण सर्व मुनियोंके होते हैं ॥३४॥

साधर्मी भवि पाठनको, इग्छनीसी ग्रन्थ ।

अल्पबुद्धि बुधजन रच्यो, हितमित शिवपुरपन्थ ॥

इति पंचपरमेष्टी १४३ मूलगुणोंका वर्णन समाप्त ।

२५ दर्शनपाठ ।

अनादिनिधन महामंत्र ।

णमो अरहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते हो "जय जय जय निःसहि, निःसहि. निःसहि" इस प्रकार उच्चारण करके उपर्युक्त महामंत्रका ६ वार पाठ करे । तत्पश्चात्—

चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं । सिद्ध मंगलं साहू मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मङ्गलं । चत्तारि लोगुत्तमा । अरिहन्त लोगोत्तमा सिद्ध लोगुत्तमा । साहू लोगुत्तमा । केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ॥२॥ चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं पव्वज्जामि । सिद्धसरणं पव्वज्जामि । साहूसरणं पव्वज्जामि । केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वजामि ॥ ॐ ह्रौं ह्रौं स्वाहा ॥

वर्तमान चौबीस तीर्थंकरोंके नाम ।

श्रीऋषभः १ अजितः २ संभवः ३ अभिनन्दनः ४ सुमतिः ५ पद्मप्रभः ६ सुपार्श्वः ७ चंद्रप्रभः ८ पुष्पदन्तः ९ शीतलः १० श्रीयांस ११ वासुपूज्यः १२ विमलः १३ अनन्तः १४ धर्मः १५ शांतिः १६ कुन्थुः १७ अरः १८ मल्लिः १९ मुनिसुव्रतः २० नमिः २१ नेमिः २२ पार्श्वनाथः २३ महावीरः २४ इति वर्तमानकालसम्बन्धो चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं यतो देव, हेतुमक्षयसम्पदः ॥१॥ अद्य संसारगम्भीरपारावारः सुदुस्तरः । सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥३॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम् । संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥ अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम् । दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥५॥ अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः । नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः । सुखसंगं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥ अद्य क-

माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् । सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ताज्ञानदिवाकरः । उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥९॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥ चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने । परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥११॥ अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥१२॥ न हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥१३॥ जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने । सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ १४ ॥ जिनधर्मविनिर्मुक्तं मा भवत् चक्रवर्त्यपि । स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितम् ॥१५॥

इस प्रकार बोलकर साष्टांगनमस्कार करना चाहिये । नमस्कारके पश्चात् पूजनके लिये चांवल चढ़ाना हो तो नीचे लिखा श्लोक तथा मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्सुभक्त्या ।
दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतौघैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योअक्षतान् निर्वपामि ।

यदि पुष्पोंसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा श्लोक पढ़ें ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् ।
कुन्दारविन्दप्रमुखप्रसूनैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥२॥

ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय देवशास्त्रगुरुभ्यः पुष्पं निर्वपामि ।

यदि किसीको लोंग, बदाम, इलायची या कोई प्रासुक हरा

फल चढ़ाना हो तो, नीचे लिखा श्लोक और मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाऽप्यगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।

फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्यः फलं निर्वपामि ॥

यदि किसीको अर्घ चढ़ाना हो, तो नीचे लिखा श्लोक पढ़ें ।

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर् नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोग्यान जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं ।

इस प्रकारके द्रव्योंमेंसे जो द्रव्य हो, उसी द्रव्यका श्लोक व मन्त्र पढ़कर वह द्रव्य चढ़ाना चाहिये। तत्पश्चात् नीचे लिखी दोनों स्तुतियां अथवा दोनोंमेंसे कोई एक स्तुति अवश्य पढ़नी चाहिये।

२६ दौलतराम कृत स्तुति

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्दरसलीन ।

सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन ॥

जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरनसूर ॥ जय ज्ञान अनन्तानन्तधार । दृगसुख वीरजमण्डित अपार ॥ १ ॥ जय परमशांति मुद्रा समेत । भविजनको निज अनुभूति हेत ॥ भवि भागनवश जोगे वशाय । तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय ॥ २ ॥ तुम गुण चिन्तत निज पर विवेक । प्रगटै, विघटैं आपद अनेक ॥ तुम जगभूषण दूषणवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ३ ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप । परमात्म परमपावन अनूप ॥ शुभ

अशुभ विभाव अभाव कीन । स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥४॥ अष्टादशदोष विमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गंभीर ॥ मुनि गणधरादि सेवत महंत । नवकेवल लब्धिरमा धरन्त ॥ ५ ॥ तुम शासन सेय अमेय जीव । शिव गये जाहिं जै हैं सदीव ॥ भव-सागरमें दुःख छारवारि । तारनको और न आप टारि ॥ ६ ॥ यह लखि निजदुःखगदहरणकाज । तुमही निमित्त कारण इलाज ॥ जानें तातै मैं शरण आय । उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥७॥ मैं भ्रम्यो अपनपो बिसरि आप । अपना ये विधिफल पुण्य-पाप ॥ निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ ८ ॥ आकुलित भयो अज्ञानधारि । ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ॥ तन परणतिमें आपो चितारि । कबहूं न अनुभयो स्वपदसार ॥६॥ तुमको बिन जाने जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु नारक नर सुर गतिमंझार । भव धर धर मस्यो अनन्तवार ॥१०॥ अब काललब्धिबलतै दयाल । तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शान्त भयो मिट सकलद्वंद । चाख्यो स्वातमरस दुखनिकन्द ॥११॥ तातैं अब ऐसो करहु नाथ । बिछुरै न कभी तुव चरण साथ ॥ तुम गुणगणको नहिं छेव देव । जग तारनको तुम विरद एव ॥ १२ ॥ आतमके अहित विषय कषाय । इनमें मेरी परिणति न जाय ॥ मैं रहूं आपमें आप लीन । सो करो होहुं ज्यों निजाधीन ॥ १३ ॥ मेरे न चाह कुछ और ईश । रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारनके कारज सु आप । शिव करहु हरहु मम मोहताप।१४। शशि शांतकरन तपहरनहेत । स्वमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय । त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥ १५ ॥

त्रिभुवन तिहुंकाल मंझार कोय। नहिं तुम बिन निजसुख दाय होय॥ मो उर यह निश्चय भयो आज। दुखजलधि उतारन तुम जिहाज॥ १६॥

दोहा—तुमगुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूं त्रियोग संभार॥

२७ अथ बुधजनकृत स्तुति

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो शरणजी। यों विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरनजी॥ तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकारजी। या बुद्धिसेती निज न जाण्या, भ्रम गिण्या हितकारजी॥ १॥ भवविकट वनमें करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हरयो। तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरतो फिरयो॥ धन घड़ी यो धन दिवस योही, धन जनम मेरो भयो। अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो॥ २॥ छवि वीतरागी नगनमुद्रा, दृष्टि नासापै धरै। वसुप्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटि रविछविको हरै॥ मिट गयो तिमर मिथ्यात मेरो उदय रवि आतम भयो। मो उर हरख ऐसो भयो, मनु रङ्क चिन्तामणि लयो॥३॥ मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, बीनऊं तव चरनजी। सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरनजी॥ जाचूं नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथजी। 'बुध' जाचहूं तुव भक्ति भवभव, दीजिये शिवनाथजी॥४॥

इस प्रकार एक या दोनों स्तुति पढ़कर पुनः साष्टांग नमस्कार करना चाहिये। तपश्चात् नीचे लिखा श्लोक पढ़कर गंधोदक मस्तकपर तथा हृदयादि उत्तम अंगोंमें लगाना चाहिये।

निर्मलं निर्मलीकरणं पवित्रं पापनाशनम् ।
जिनगन्धोदकं वंदे अष्टकर्मविनाशकम् ॥ १ ॥

यदि आशिका लेनी हो, तो यह दोहा पढ़कर लेना चाहिये ।

दोहा—श्रीजिनवरकी आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
भवभवके पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥ २ ॥

तत्पश्चात् नीचे लिखे दो अथवा एक कवित्त पढ़कर शास्त्रजीको साष्टांग नमस्कार करके शास्त्रजीको सुनना चाहिये । अथवा थोड़ा बहुत किसी भी शास्त्रका स्वाध्याय करना चाहिये ।

२८ जिनवाणी माताकी स्तुति ।

वीरहिमाचलतैं निकसी, गुरुगौतमके मुख कुंड ढरी है । मोह महाचल भेद चली, जगकी जड़ता तप दूर करी है ॥ ज्ञानपयोनिधिमाहिं रली बहुभङ्ग तरङ्गनिसों उछरी है । या शुचि शारद गंगनदी प्रति, मैं अंजुलीकर शीस धरी है ॥ १ ॥ या जगमंदिरमें अनिवार अज्ञान अंधेर छयो अति भारी । श्रीजिनकी धुनि दीपशिखासम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥ तो किस भांति पदारथपांति, वहां लहते रहते अविचारी । या विधि संत कहैं धनि हैं धनि, हैं जिन वैन बड़े उपकारी ॥ २ ॥

रात्रिको भी इसी प्रकार दर्शन करके तत्पश्चात् दीप धूपसे नीचे लिखी अथवा जिसपर रुचि हो वह आरती करना चाहिये ॥

२९ पंचपरमेष्ठीकी आरती ।

मनवचतनकर शुद्ध पंचपद, पूजो भविजन सुखदाई । सबजन मिलकर दीप धूप ले, करहुं आरती गुणगाई ॥ टेक ॥ प्रथमहिं

श्री अरहंत परमगुरु, चौतिस अतिशय सहित बसैं ॥ प्रातिहार्य वसु अतुल चतुष्टय, सहित समवसृत मांहि लसैं। क्षुधा तृषा भय जन्म जरा मृत, रोग शोक रति अरति महा। विस्मय खेद स्वेद मद निद्रा, राग द्वेष मिल मोह दहा ॥ इन अष्टादश दोष रहित नित, इन्द्रादिक पूजत आई ॥सब० ॥ दूजे सिद्ध सदा सुख-दाता, सिद्धशिलापर राजत हैं। सम्यक्दर्शन ज्ञान वीर्य अरु, सूक्ष्मपणाको छाजत है ॥ अगुरु लघू अवगहन शक्ति धर, बाधा-विन अशरीरा हैं। तिनका सुमरण नित्य किये तें, शीघ्र नशात भव पीरा है ॥ या कारण नित चित्तशुद्ध कर, भजहु सिद्ध शिवके राई। सब० ॥ तीजे श्रीआचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी हैं। दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज, पंचाचार प्रचारी है ॥ द्वादशतप दशधर्म गुप्तित्रय, षट् आवश्यक नित पालें। सब मुनिजनको प्रायश्चित दे, मुनिव्रतके दूषण टालें ॥ ऐसे श्रीआचार्य गुरुनकी, पूजा करिये चित लाई। सब० ॥ चौथे श्रीउवझायकरणपंकजरज, सुखदा भविजनको। ग्यारह अंग सुपूर्व चतुर्दश, पढ़ैं पढ़ावें मुनि गनको ॥ मुनिके सब आचरण आचरें, द्वादश तपके धारी हैं। स्याद्वाद सुखकारी विद्या, सब जगमें विस्तारी हैं ॥ ऐसे श्री-उवझाय गुरुनके, चरणकमल पूजहुं भाई। सब०॥ पंचमि आरति सर्वसाधुकी, आठवीस गुण मूल धरें। पचमहाव्रत पंचसमिति-धर, इन्द्रिय पांचों दमन करें ॥ षट् आवश्यक केशलोंच, इक बार खड़े भोजन करते। दांतन स्नान त्याग भू सोवन, यथाजात मुद्रा धरते ॥ या विधि "पन्नालाल" पंचपद, पूजत भवदुख नश जाई। सब० ॥

इस प्रकार आरता बोलकर नीचे लिखा श्लोक दोहा और मंत्र पढ़कर आरतीको मस्तक चढ़ावे ।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्काञ्चनभाजनस्थैर जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन यजेऽहम्

दोहा—स्वपरप्रकाशनयोति अति, दीपक तमकर हीन ।
जासूं पूजूं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥१॥

३० आलोचना पाठ ।

दोहा—वन्दों पांचो परम गुरु, चौबीसौं जिनराज ।
कहूं शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज ॥१॥

सखी छन्द (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी । हम दोष किये अति भारी ॥ तिनकी अब निर्वृतिकाजा । तुम शरन लही जिनराजा ॥ २ ॥ इक बे ते चऊ इन्द्री वा । मनरहित सहित जे जीवा ॥ तिनकी नहिं करुना धारी । निरदई ह्वे घात विचारी ॥ ३ ॥ समरम्भ समारम्भ आरम्भ । मनवचतन कीने प्रारम्भ ॥ कृत कारित मोदन करिकै । क्रोधादि चतुष्टय धरिके ॥ ४ ॥ शत आठ जु इम भेदनतैं । अघ कीने परछेदनतें ॥ तिनकी कहुं को लों कहानी । तुम जानत केवल ज्ञानी ॥ ५ ॥ विपरीत एकांत विनयके । संशय अज्ञान कुनयके ॥ वश होय घोर अघ कीने । वचतें नहिं जात कहीने ॥ ६ ॥ कुगुरु-नकी सेवा कीनी । केवल अदयाकरि भीनी ॥ या विधि मिथ्यात भ्रमायो । चहुंगति मधि दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसा पुनि झूठ जु चोरी । परवनितासों दृगजोरी ॥ आरम्भपरिग्रह भीनो । पुन पाप

जु या विधि कीनो ॥ ८ ॥ सपरस रसना घ्राननको । चख कान विषय सेवनको ॥ बहु करम किये मनमानी । कछु न्याय अन्याय न जानी ॥ ६ ॥ फल पञ्च उदंबर खाये । मधु मांस मद्य चित चाहे ॥ नहिं अष्ट मूलगुणधारी । विसन जु सेये दुखकारी ॥१०॥ दुइ बीस अभख जिन गाये । सो भी निशदिन भुंजाये ॥ कछु भेदाभेद न पायो । ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥११॥ अनंतान जु बधी जानो । प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ॥ संज्वलन चौकरी गुनिये । सब भेद जु षोड़श मुनिये ॥१२॥ परिहास अरति रति शोग । भय ग्लानि तिवेद संजोग ॥ पनवीस जु भेद भये इम । इनके वश पाप किये हम ॥ १३ ॥ निद्रावश शयन कराई । सुपने मधि दोष लगाई ॥ फिर जागि विषय वन धायो । नाना विध विषफल खायो ॥ १४ ॥ किये हार निहार विहारा । इनमें नहिं जतन विचारा ॥ विन देखी धरी उठाई । विन शोधी भोजन खाई ॥ १५ ॥ तब ही परमाद सतायो । बहु विध विकलप उपजायो ॥ कछु सुधि बुधि नाहिं रही है । मिथ्या मति छाय गई है ॥ १६ ॥ मरजादा तुम ढिग लीनी । ताहू में दोष जु कीनी ॥ भिन्न २ अब कैसे कहिये । तुम ज्ञान विषै सब पइये ॥ १७ ॥ हा हा मैं दुठ अपराधी । त्रसजीवन राशि विराधी ॥ थावरकी जतन न कीनो । उरमें करुणा नहिं लीनी ॥ १८ ॥ पृथिवी बहु खोद कराई । महलादिक जागां चिनाई । पुन विन गाल्यो जल ढोल्यो । पङ्खातैं पवन विलोल्यो ॥ १६ ॥ हा हा मैं अदयाचारी । बहु हरितकाय जु विदारी ॥ या मधि जीवनिके खंदा । हम खाये धरि आनन्दा ॥ २० ॥ हा में परमाद बसाई । बिन देखे अगनि

जलाई। तामधि जे जीव जु आये। ते हू परलोक सिधाये ॥२१॥ बांधो अन रात्रि पिसायो। ईंधन बिन सोध्यो जलायो॥ झाडू ले जांगा बुहारी। चिण्टो आदिक जीव विदारी॥ २२॥ जल छानि जीवानी कीनी। सोहू पुनि डारि जु दीनो॥ नहिं जल-थानक पहुंचायो। किरिया बिन पाप उपाई॥ २३॥ जल मल-मोरिन गिरवायो कृमि कुल बहु घात करायो॥ नदियनि बिच चीर धुवाये। कोसनके जीव मराये॥ २४॥ अन्नादिक शोध कराई। तामैं जु जीव निसराई॥ तिनका नहिं जतन कराया। गरियालै धूप डराया। २५॥ पुनि द्रव्य कमावन काज। बहु आरम्भ हिंसा साज॥कीये तिसनावश भारी। करुना नहिं रञ्च विचारी॥ २६॥ इत्यादिक पाप अनंता। हम कीने श्रीभगवंता॥ सन्तति चिरकाल उपाई। वानीतैं कहिय न जाई ॥२७॥ ताको जु उदय जब आयो। नानाविध मोहि सतायो॥ फल भुंजत जिय दुख पावै। वचनैं कैसैं करि गावै॥ २८॥ तुम जानत केवल ज्ञानी। दुख दूर करो शिवथानी॥ हम तौ तुम शरन लही है। जिन तारन विरद सही है॥ २९॥ जो गांवपती इक होवै। सो भी दुखिया दुख खोवै॥ तुम तीन भुवनके स्वामी। दुख मेटो अंतरजामी॥ ३०॥ द्रोपदिको चीर बढ़ायो। सीता पति कमल रचायो॥ अंजनसे किये अकामी। दुख मेटो अन्तरयामी ॥३१॥ मेरे अवगुन न चितारो। प्रभु अपनो विरद निहारो॥ सब दोष रहित करि स्वामी। दुख मेटहु अन्तरजामी॥ ३२॥ इन्द्रादिक पदवी न चाहूं। विषयनि मैं नाहिं लुभाऊं॥ रागादिक दोष हरीजे। परमातम निजपद दीजे॥३३॥

श्री १०८ आचार्य शांतिसागरजी, मुनि संघ सहित विराजे हैं।

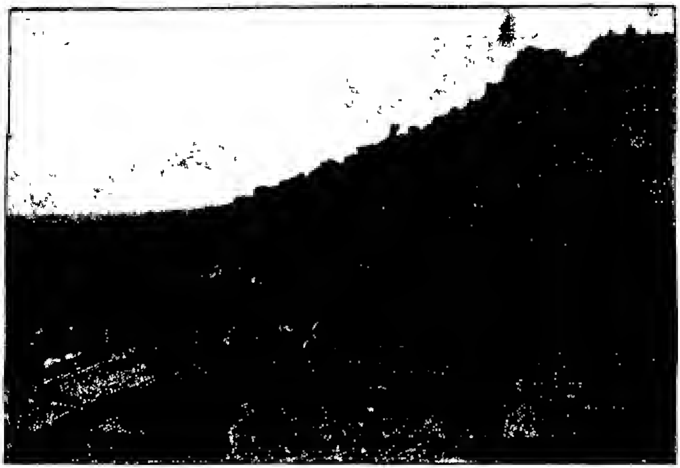

श्रीविन्ध्यागिरीजी, श्रावणवेलगोला ।

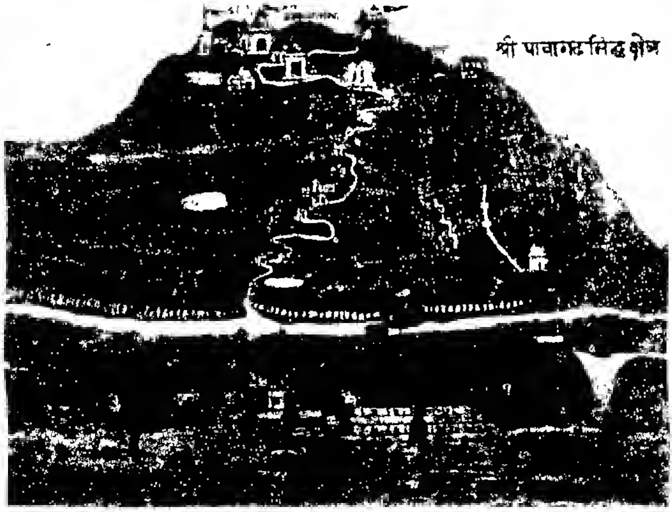

श्रीसिद्धक्षेत्र पावागढ़जी ।

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोहि ।
सब जीवनके सुख बढ़ै, आनन्द मङ्गल होय ॥३४॥
अनुभव माणिक पारखी; जौहरी आप जिनन्द ।
येही वर मोहि दीजिये, चरन शरण आनन्द ॥३५॥

इति आलोचना पाठ ।

स्वर्गीय कविवर पं० रूपचन्द्रजी पांडे कृत—

३१ पंचकल्याणक पाठ

श्रीगर्भकल्याणक ॥

पणविवि पञ्च परम गुरु, गुरु जिनशासनो । सकलसिद्धिदातार सु, विघनविनासनो ॥ शारद अरु गुरु गौतम, सुमतिप्रकासनो मङ्गल कर चऊ-संघहिं, पापपणासनो ॥

पापै पणासन गुणहि गरुआ, दोष अष्टादश रहे । धरि ध्यान कर्म विनाशि केवल—ज्ञान अविचल जिन लहे । प्रभु पञ्चकल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं । त्रैलोक्यनाथ सु देव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥१॥

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो । अवधिज्ञान - परवान सु इन्द्र पठाइयो ॥ रचि नव बारह योजन, नयरि सुहावनो । कनकरयणमणिमण्डित, मन्दिर अति बनो ॥

अति बनी पौरि पगारि परिखा, सुबन उपवन सोहिए । नर नारि सुन्दर चतुरभेख सु, देख जनमन मोहिए ॥ तहां जनकगृह छह मास प्रथमहि रतनधारा बरषियो । पुनि रुचिकवासनि जननि सेवा, करहिं सब विधि हरषियो ॥२॥

सुरकुञ्जरसम कुञ्जर धवल धुरन्धरो। केहरि केशरशोभित, नखशिखसुन्दरो ॥ कमलाकलशन्हवन, दोय दाम सुहावनो। रवि शशि मण्डल मधुर, मीन जुग पावनी ॥

पावनि कनक घट युगम पूरण, कमलकलित सरोवरो। कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥ रमणीक अमरविमान फणिपति,—भुवन भुवि छविछाजये। रुचि रतन राशि दिपन्त दहन सु, तेजपुञ्ज विराजिये ॥३॥

ये सखि सोलहो सुपने, सूती सयनहीं। देखे माय मनोहर, पच्छिम-रयनहीं ॥ उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो। त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहि भासियो ॥

भासियो फल तिहि चिन्ति दम्पति, परम आनन्दित भए। छहमास परि नवमास पुनि तहं, रयन दिन सुखसूं गये ॥ गर्भावतार महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं। भणि 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥

श्रीजन्म कल्याणक।

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो। तिहूंलोक भयो छोभित; सुरगण भरमियो ॥ कल्पवासि घर घंट; अनाहद बज्जियो। जोतिष घर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥

गज्जियो सहजहिं शंख भावन,—भुवन शब्द सुहावने। विंतरनिलय पटु पटहि वज्जिय, कहत महिमा क्यों बने ॥ कंपत सुरासन अवधि बल जिन,—जनम निहचै जानियो। धनराज तब गजराज माया,—मयी निरमय आनियो ॥५॥

योजन लाख गयन्द, वदन-सौ निरमए। वदन वदन वसु दन्त

दन्त सर संठये ॥ सर सर सौ-पणवोस कमलिनी छाजहीं। कम-लिनी कमलिनी कमल, पचोस विराजहीं ॥

राजहीं कमलिनी कमल अठोतर; सौ मनोहर दल बने। दल दलहिं अपछरा नटहिं नवरस, हावभाव सुहावने॥ मणि कनक-कंकण वर विचित्र, सु अमरमण्डप सोहिये। घन घण्ट चंवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहिये ॥

तिहिं करि हरि चढ़ि आयउ, सुरपरिवारियो। पुरहिं प्रदच्छना देत सु, जिन जयकारियो॥ गुप्त जाय जिन—जननहिं, सुखनिद्रा रचो। मायामय शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची ॥

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये। तब परम हरषित हृदय हरिने, सहस लोचन पूजिये ॥ पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र उछंग धरि प्रभु लोनऊ। ईशानइन्द्र सु चन्द्रछवि शिर, छत्र प्रभुके दोनऊ ॥७॥

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुहि ढारहीं। शेष शक्र जयकार शब्द उच्चारहीं ॥ उच्छव सहित चतुर्विधि, सुर हरषित भए। यो-जन सहस निन्याणवे, गगन उलंघिए ॥

लंघि गये सुरगिरि जहां पांडुक-वन विचित्र विराजही। पां-डुकशिला तहां अर्द्धचन्द्रसमान, मणि छवि छाजही॥ योजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंचो गणी। वर अष्ट मङ्गल कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी ॥८॥

रचि मणिमण्डप शोभित मध्य सिंहासनो। थाप्यौ पूरब-मुख तहां, प्रभु कमलासनौ ॥ बाजहिं ताल मृदङ्ग; वेणु वीणा घने। दुन्दुभि प्रमुख मधुर धुनि और जु बाजने ॥

बाजने बाजहिं सचीं सब मिलि, धवल मंगल गावहीं। पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब. देव कौतुक धावहीं॥ भरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं। सौधर्म अरु ईसानइन्द्र सु, कलस ले प्रभु न्हावहीं॥ ६॥ वदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये। एक चार वसु योजन, मान प्रमानिये॥ सहस-अठोतर कलशा; प्रभुके सिर ढरै। फुनि शृंगारप्रमुख आचार सबै करै॥ करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि फुनि मातहिं दियो। धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो॥ जनमाभिषेक महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं। भण 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ १०॥

श्रीतप कल्याणक।

श्रमजलरहित शरीर, सदा सब मल रहिउ। छीर-वरन वर रुधिर,प्रथम आकृति लहिउ॥ प्रथम सारसंहनन, सुरूप विराजहीं। सहज--सुगन्ध सुलच्छन, मण्डित छाजहीं॥ छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने। दश सहज अतिशय सुभग मूरति,बाललील कहावने॥ आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचित उचित जु नित नये। अमरोपुनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगये॥ ११॥ भवतन—भोग-विरत्त, कदाचित चिन्तए। धन यौवन प्रिय पुत्त, कलत्त अनित्तए॥ कोई न शरन मरन दिन, दुख चहुं गति भर्यो। सुख दुख एकहि भोगते, जिय विधवश पर्यो॥

पर्यो विधि वश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो। तन अशुचि परतैं होय आश्रव, परिहरै तो संवरो॥ निर्जरा तपबल होय समकित,—बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो। दुर्लभ विवेक बिना

न कबहूं, परम धरम विषै रम्यो ॥१२॥ ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया। लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया॥ कुसुमांजलि दे चरन, कमल शिरनाइया। स्वयंबुद्ध प्रभु थुति करि, तिन समुझाइया॥ समुझाय प्रभु ते गये निजपद, पुनि महोच्छव हरि कियो। रुचिरुचिर चित्र विचित्र शिविका, कर सुनन्दन वन लियो॥ तहं पञ्चमुष्टी लोंच कीनों, प्रथम सिद्धनि नुति करी। मण्डित महाव्रत पंच दुर्द्धर, सकल परिग्रह परिहरी॥ १३ ॥ मणिमयभाजन केश, परिट्ठिय सुरपती। छीर-समुद्र-जल खिपिकरि, गये अमरावती॥ तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो। मौनसहित तप करत, काल कछु तहं गयो॥ गयो कछु तहं काल तपबल, रिद्धि वसु विधि सिद्धिया। जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया॥ खिपि सातवें गुण जतन विन तहं, तीन प्रकृति जु बुधि बढ़। करि करण तीन प्रथम शुकलबल, क्षिपकश्रेणी प्रभु चढ़े ॥१४॥ प्रकृति छतीस नवै गुण,-थान विनासिया। दशमें सूच्छम लोभ-प्रकृति तहं नासिया। शुकल ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभू पूरियो। बारहमें गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियो॥ चूरियो त्रेसठि प्रकृति इहविधि, घातिया कर्मह तणो। तपकियो ध्यान प्रयंत बारह,विधि त्रिलोक शिरोमणो॥ निःकर्मकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं। भण 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥१६॥

श्रीज्ञानकल्याणक।

तेरहमें गुण – थान, संयोगि जिनेसुरो। अनन्तचतुष्टयमण्डित, भयो परमेसुरो॥ समवशरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो। आगम जुगति प्रमाण, गगनतल परिठयो॥ परिठयो चित्रविचित्र

मणिमय, सभामण्डप सोहिये। तिहं मध्य बारह बने कोठे बैठ सुरनर मोहये॥ मुनि कल्पवासिनी अरजिका पुनि, ज्योति-भोम-भुवन तिया। पुनि भवन व्यंतर नभग सुर नर, पशुनि कोठे बैठिया ॥१६॥ मध्यप्रदेश तीन, मणि पीठ तहां बने। गंधकुटी सिंहासन कमल सुहावने॥ तीन छत्र सिर शोभित, त्रिभुवन मोहये। अन्तरीक्ष कमलासन, प्रभुतन सोहिये॥

सोहए चौसठि चमर ढरत, अशोकतरु तल छाजिये। फुनि दिव्यधुनि प्रतिशब्द जुत तहं, देवदुंदुभि बाजए॥ सुरपुहुपवृष्टि सुप्रभामंडल, कोटि रवि छवि छाजए। इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए॥ १७॥ दुइसै योजन मान; सुभिच्छ चहूं दिशी। गगन गमन अरु प्राणी;-वध नहिं अहनिशी॥ निरुपसर्ग निरहार; सदा जगदीसए। आनन चार चहूंदिशि; शोभित दीसये॥ दीसये अशेष विशेष विद्या, विभव वर ईसुरपनो। छायाविवर्जित शुद्धफटिक; समान तनप्रभुको बनो॥ नहिं नयन पलक पतन कदाचित्; केश नख सम छाजहीं। ये घातियाछ्यजनित अतिशय; दश विचित्र विराजहीं॥ १८॥ सकल अरथमय मागधि; भाषा जानिये। सकल जीवगन मैत्री—भाव बखानिये। सकल ऋतुज फलफूल, वनस्पति मन हरै। दर्पणसम मनि अवनि; पवन गति अनुसरै॥ अनुसरै परमानन्द सबको; नारि नर जे सेवता। योजन प्रमाण धरा सुमार्जहिं; जहां मारुत देवता॥ पुनि करहि मेघकुमार गंधो—दक सुवृष्टि सुहावनी। पदकमलतर सुर खिपहिं कमल सु; धरणि शशिशोभा बनी॥ १९॥ अमल गगन तल अरु दिशि तहं अनुहारहीं। चतुरनिकाय देवगण; जय जयकारहीं॥

धर्मचक्र चले आगे; रवि जहं लाजहीं। फुनि भृंगार-प्रमुख वसु; मंगल राजहीं॥ राजहीं चौदह चारु अतिशय; देवरचित सुहावने। जिनराज केवल ज्ञानमहिमा; अवर कहत कहा बने॥ तब इंद्र-आनि कियो महोच्छव; सभा शोभित अति बनी॥ धर्मोपदेश दियो तहां; उच्छरिय वानी जिनतनी॥ २०॥ क्षुधा तृषा अरु राग; द्वेष असुहावने। जनम जरा अरु मरण; त्रिदोष भयावने॥ रोग शोक भय विस्मय, अरु निद्रा घणी। खेद स्वेद मद मोह; अरति चिंता गणी॥ गणिये अठारह दोष तिनकरि; रहित देव निरञ्जनो॥ नव परमकेवल लब्धिमंडित; शिवरमणि-मनरञ्जनो॥ श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा; सुनत सब सुख पावहीं। भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं॥२१॥

श्री निर्वाण कल्याणक।

केवलदृष्टि चराचर; देख्यो जारिसो। भविजनप्रति उपदेश्यो; जिनवर तारिसो॥ भवभयभीत महाजन; शरणै आइया। रत्नत्रय-लच्छन शिवपंथ लगाइया॥ लगाइया पंथ जु भव्य फुनि; प्रभु तृतिय सुकल जु पूरियो। तजि तेरहें गुणथान योग; अयोग पथ-पग धारियो॥ पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती। इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो, समयमें पंचमगती॥२२॥ लोक-शिखर तनुवात,-वलयमहं संठियो। धर्मद्रव्यविन गमन न; जिहिं आगे कियो॥ मयनरहित मूषोदर; अंबर जारिसो। किमपि हीन निजतनुते, भयौ प्रभु तारिसो॥ तारिसो पर्जय नित्य अविचल; अर्थपर्जय क्षणक्षयी। निश्चयनयेन अनन्तगुण विवहार, नय वसु गुणमयी॥ वस्तु स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परणति परिणयो।

चिद्रूप परमानन्द मंदिर, सिद्ध परमातम भयो ॥ १३ ॥ तनुपरमाणू दामिनिपर, सब खिर गये । रहे शेष नखकेशरूप; जे परिणये ॥ तब हरिप्रमुख चतुरविधि; सुरगण शुभ सच्या । माया मई नखकेश रहित जिनतनु रच्यो ॥ रचि अगर चन्दन प्रमुख; परिमल; द्रव्य जिन जयकारिया । पद पतत अग्निकुमार मुकटानल सुविधि संस्कारियो ॥ निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पाइयो । भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मङ्गल गाइयो ॥ मैं मतिहीन भक्तिवश भावना भाइयो । मंगल गीत प्रबन्ध सो निज गुण गाइयो ॥ जे नर सुनहिं बखानहीं स्वर धरि गावहीं । मन वांछित फल ते नर निश्चय पावहीं ॥ पावैं ते आठों सिद्धि नवनिधि मन प्रतीत जो आनिये । भ्रम भाव छूटें सकल मनके, जिन स्वरूप ये जानिये । पुनि हरैं पातक टरत विघ्न सो होय मङ्गल नित नये । भण रूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसंगहि गये ॥

॥ इति श्रीजिनेन्द्रनिर्वाण कल्याण मङ्गलं समाप्तम् ॥

३२ छहढाला

श्रीयुत पण्डित दौलतरामजी कृत—

तीन भुवनमें सार, वीतराग विज्ञानता ।

शिवस्वरूप शिवकार, नमहुं त्रियोग सम्हारिके ॥

प्रथमढाल—चौपाई छन्द १५ मात्रा ।

जे त्रिभुवनमें जीव अनन्त । सुख चाहैं दुखतें भयवन्त ॥ तातें दुखहारी सुखकार । कहैं सीख गुरु करुणाधार ॥ १ ॥ ताहि सुनो भवि मन थिर आन । जो चाहो अपनो कल्यान ॥ मोह महा मद

पियो अनादि। भूल आपको भरमत वादि॥ २॥ तास भ्रमण की है बहु कथा पै कछु कहूं कही मुनि यथा॥ काल अनन्त निगोद मंझार। बीतीं एकेन्द्री तन धार॥ ३॥ एक श्वासमें अठदशबार। जन्मो मरो भरो दुख भार॥ निकस भूमि जल पावक भयो। पवन प्रत्येक वनस्पति थयो॥ ४॥ दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी। त्यों पर्याय लहो त्रस तणी॥ लट पिपील अलि आदि शरीर। धरधर मरो सही बहुपीर॥ ५॥ कबहूं पंचेंद्रिय पशु भयो। मन बिन नि-पट अज्ञानो थयो। सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर। निबल पशु हति खाए भूर॥६॥ कबहूं आप भयो बलहीन सबलनकर खायो अति दीन॥ छेदन भेदन भूखरु प्यास। भार बहन हिम आतप त्रास॥७॥ वध बंधन आदिक दुख घनै। कोट जीभकर जात न भनै॥ अतिसंक्ले-श भावतैं मरो। घोर शुभ्र सागरमें परो॥ ८॥ तहां भूमि परसत दुख इसो। बीछू सहस डसें नहिं तिसो॥ तहां राध श्रोणित वाहिनी। कृमि कुल कलित देह दाहिनी॥ ६॥ सेमरतरु जुत दल असिपत्र। असि ज्यों देह विदारें तत्र॥ मेरुसमान लोह गलिजाय। ऐसी शीत उष्णता थाय॥ १०॥ तिल तिल करें देहके खण्ड। असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचण्ड॥ सिंधु नीरतें प्यास न जाय। तो पण एक न बूंद लहाय॥ ११॥ तीन लोकको नाज जो खाय। मिटै न भूख कणा न लहाय॥ ये दुख बहु सागरलों सहै। करम योगतें नरगति लहै॥ १२ जननी उदर बसो नवमास। अङ्ग सकु-चतें पाई त्रास॥ निकसत जे दुख पाये घोर। तिनको कहत न आवे ओर॥ १३॥ बालपनेमें ज्ञान न लह्यो। तरुण समय तरुणी रत रह्यो॥ अर्द्धमृतक सम बूढ़ापनो। कैसे रूप लखें आपनो॥१४॥

कभी अकाम निर्जरा करै। भवनत्रिकमें सुर—तन धरै॥ विषय चाह दावानल दह्यो। मरत विलाप करत दुःख सह्यो॥१५॥ जो विमानवासी हू थाय। सम्यक्‌दर्शन बिन दुख पाय॥ तहंते चय थावर तन धरै। यों परिवर्तन पूरे करै॥ १६॥

द्वितीय ढाल—पद्धरीछंद १५ मात्रा।

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञान चर्ण। वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण॥ ताते इनको तजिये सुजान। सुन तिन संक्षेप कहूं बखान॥ १॥ जीवादि प्रयोजन भूततत्त्व। सरधै तिन मांहि विपर्ययत्व॥ चेतनको है उपयोग रूप। विन मूरति चिन्मूरति अनूप॥२॥ पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल। इनतैंन्यारी है जीव चाल॥ ताकूं न जान विपरीति मान। करि करै देहमें निज पिछान॥३॥ मैं सुखी दुखी मैं रङ्क राव। मेरो धन गृह गोधन प्रभाव॥ मेरे सुत तिय मैं सबल दीन। वे रूप सुभग मूरख प्रवीन॥४॥ तन उपजत अपनो उपजजान। तन नशत आपको नाश मान। रागादि प्रगट ये दुःख दैन। तिनहीको सेवन गिनत चैन॥५॥ शुभ अशुभ बंधके फल मझार। रति अरत करै निजपद विसार। आतम हितहेतु विराग ज्ञान। ते लखे आपकूं कष्ट दान॥६॥ रोके न चाह निज शक्ति खोय। शिवरूप निराकुलता न जोय। या ही प्रतीत युत कछुक ज्ञान। सो दुखदायक अज्ञान जान॥७॥ इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त। ताकूं जानो मिथ्या चरित्त॥ यो मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह। अब जे गृहीत सुनिये सुतेह॥८॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव। पोखैं चिर दर्शन मोह एव॥ अन्तर रागादिक धरें जेह। बाहर धन अंबरतें सनेह॥९॥ धारे कुलिंग लहि महत भाव। ते कुगुरु जन्म जल

उसलनाव ॥ जे राग द्वेष मलकरि मलीन । बनितागदादि जुत चिन्ह चीन्ह ॥१०॥ तेहैं कुदेव तिनकी जु सेव । शठ करत न तिन भवभ्रमणछेव ॥ रागादि भाव हिंसा समेत । दर्वित त्रसथावर मरण खेत ॥११॥ जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म । तिस सरधे जीव लहे अशर्म ॥ यांकू गृहीत मिथ्यात जान । अब सुन ग्रहीत जो है अ-जान ॥१२॥ एकान्त बाद-दूषित समस्त । विषयादिक पोशक अ-प्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतको अभ्यास । सोहै कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥ जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह । धर करत विविध विध देहदाह ॥ आतम अनात्मके ज्ञान हीन । जे जे करनी तन करन छीन ॥१४॥ ते सब मिथ्या चारित्र त्याग । अब आतमके हितपंथ लाग ॥ जगजाल भ्रमणको देय त्याग । अब दौलत निज-आतमसु पाग ॥१५॥

तृतीय ढाल । जोगी रासा ।

आतमको हित है सुख सो सुख, आकुलता विन कहिये । आकुलता शिवमांहि न तातैं, शिव मग लाग्यो चहिये ॥ सम्यक्-दर्शन ज्ञान चरन शिव, मग सो दुविधि विचारो । जो सत्यारथ रूपसो निश्चय, कारण सों व्यवहारो ॥१॥ परद्रव्यनतैं भिन्न आप मैं, रुचि सम्यक्त भला है । आप रूपको जानपनो सो, सम्यक ज्ञान कला है ॥ आपरूपमें लीन रहे थिर, सम्यक चारित सोई । अब विवहार मोख-मग सुनिये, हेतु नियतको होई ॥ २ ॥ जीव अजीव तत्व अरु आश्रव, बंधरु संवर जानो । निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्योंको त्यों सरधानो ॥ है सोई समकित विवहारी, अब इन रूप बखानो । तिनको सुन सामान्य विशेषे, दिढ़ प्रतीति उर

आनो ॥ ३ ॥ बहिरातम अन्तरआतम परमातम जीव त्रिधा है। देह जीवको एक गिने, बहिरातम तत्व मुधा है॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविधिके, अन्तर आतम ज्ञानी। द्विविधि संग बिन शुध उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी॥ ४। मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती आगारी। जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिवमगचारी॥ सकल निकल परमातम द्वैविधि तिनमें घाति निवारी। श्री अरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी॥ ५॥ ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल वर्जित सिद्ध महंता। ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें शर्म अनन्ता॥ बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर आतम हूजे। परमातमको ध्याय निरन्तर, जो नित आनंद पूजे॥ ६॥ चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं। पुद्गल पंचवरण रस गंध दो फरसवसू जाके हैं॥ जिय पुद्गलको चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी। तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिन मूर्ति निरूपी॥ ७॥ सकलद्रव्यको वास जासमें, सो आकाश पिछानो। नियत वर्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमानो॥ यों अजीव अब आश्रव सुनिये, मन वच काय त्रियोगा। मिथ्या अविरत अरु कषाय पर,—माद सहित उपयोगा॥ ८॥ ये ही आतमको दुखकारण, तातैं इनको तजिये। जीव प्रदेश बँधै विधिसों सो, बंधन कबहुं न सजिये॥ शमदमतैं जो कर्म न आवैं, सो संवर आदरिये। तप बलतैं विधि झरन निरजरा, ताहि सदा आचरिये॥ ९॥ सकलकर्मतैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुख कारी। इहिविधि जो सरधा तत्वनकी, सो समकित व्यवहारी॥ देव जिनेन्द्र गुरू परिग्रह बिन, धर्मदयायुत सारो। येहू मान सम-

कितको कारण, अष्ट अंग जुत धारो ॥ १०॥ वसुमद टारि निवारि त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो। शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो ॥ अष्ट अंग अरु दोष पचीसों, अब संक्षेपहु कहिये। बिन जाने तें दोष गुननकों, कैसे तजिये गहिये ॥ ११॥ जिन वचमें शंका न धार वृष, भवसुख वांछा भानै। मुनितन मलिन न देख घिनावै, तत्वकुतत्व पिछानै ॥ निजगुण अरु पर औगुण ढाँके, वा निजधर्म बढ़ावैं। कामादिक कर वृषतें चिगते, निज परको सु दिढ़ावै ॥ १२ ॥ धर्मीसो गऊ बच्छ प्रीति सम, कर जिन धर्म दिपावैं। इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खपावै ॥ पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै। मद न रूपको मद न ज्ञानको, धनबलको मद भानै ॥ १३ ॥ तपको मद न मद जु प्रभुताको; करै न सो निज जानै। मद धारै तो यही दोष वसु; समकितको मल ठानै ॥ कुगुरु कुदेव कुवृष सेवककी; नहिं प्रशंस उचरै है। जिन मुनि जिन श्रुति विन कुगुरादिक, तिन्हैं न नमन करै है ॥ दोष रहित गुणसहित सुधी जे; सम्यक्दर्श सजै हैं; चरित मोहवश लेश न संजम; पै सुरनाथ जजै हैं ॥ गेही पै गृहमें न रचै ज्यों; जलमें भिन्न कमल है। नगरनारिको प्यार यथा कादेमें हेम अमल है ॥ १५ ॥ प्रथम नरक विन षटभू ज्योतिष; वान भवन सब नारी। थावर विकलत्रय पशुमें नहिं; उपजत सम्यक्धारी ॥ तीनलोक तिहुंकाल माहिं नहिं; दर्शन सो सुखकारी। सकल धरमको मूल यही इस; बिन करनी दुखकारी ॥ १६ ॥ मोक्षमहलकी परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा। सम्यकता न लहैं सो दर्शन; धारो भव्य पवित्रा ॥ दौल समझ सुन चेत

सयाने; काल वृथा मत खोवै। यह नरभव फिर मिलन कठिन है जो सम्यक् नहिं होवै ॥१७॥

चतुर्थ ढाल।

दोहा – सम्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यकज्ञान।
स्वपर अर्थ बहु धर्मयुत, जो प्रगटावन भान॥

रोलाछन्द २५ मात्रा।

सम्यक साथै ज्ञान, होय पै भिन्न अराधो। लक्षण श्रद्धा जान दुहूमें भेद अबाधो॥ सम्यक कारण जान, ज्ञान कारज है सोई। युगपत होतेहू, प्रकाश दीपकतैं होई॥ १॥ तास भेद दो है, परोक्ष परतक्ष तिन माहीं। मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मनतैं उपजाहीं॥ अवधि ज्ञान मन पर्य्यय, दो है देश प्रत्यक्षा। द्रव्यक्षेत्र परिमाण, लिये जानै, जिय स्वच्छा ॥२॥ सकल द्रव्यके गुण, अनन्त पर्याय अनन्ता। जानैं ऐके काल, प्रगट केवलि भगवन्ता॥ ज्ञान समान न आन, जगतमें सुखको कारण। इहि परमामृत जन्म,जरामृत रोग-निवारन ॥३॥ कोटिजन्म तप तपै, ज्ञान बिन कर्म भरैं जो। ज्ञानी के छिनमांहि त्रि-गुप्तितैं सहज टरैं ते॥ मुनिव्रत धार अनन्त, बार ग्रीवक उपजायो। पै निज आतम ज्ञान बिना सुखलेश न पायो॥ तातें जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजे। संशय विभ्रम मोह, त्याग आपो लख लीजै॥ यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनबो जिन-बानी। इह विधि गये न मिलैं, सुमनि ज्यों उदधि समानी ॥५॥ धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवैं। ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावें॥ तास ज्ञानको कारण स्वपर बिवेक बखानो। कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आनो ॥६॥ जो पूरब

शिव गए, जाहिं अब आगे जे हैं। सो सब महिमा ज्ञान-तणी मुनिनाथ कहे हैं॥ विषय चाह दबदाह, जगत जन अरनि दझावे। तास उपाय न आन, ज्ञानघन-घान बुझावे॥७॥ पुण्य पाप फल माहि, हरख विलखो मत भाई। यह पुद्गल पर्याय, उपजि विनशै थिर थाई॥ लाख बातकी बात, यही निश्चय उर लावो। तोरि सकल जगदन्द—फन्द निज आतम ध्यावो॥८॥ सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि दृढ़ चारित लीजै। एकदेश अरु सकल देश, तसु भेद कहीजै। त्रसहिंसाको त्याग, वृथा थावर न संघारे। परवधकार कठोर निन्द्य, नहिं बयन उचारै॥९॥ जलमृतिका बिन और, नाहिं कछु गहै अदत्ता। निज बनिता बिन सकल, नारिसौं रहै विरत्ता॥ अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखे। दस दिश गमन प्रमाण ठान, तसु सीम न नाखे॥ ताहूमें फिर ग्राम, गली ग्रह बाग बजारा। गमनागमन प्रमाण ठान, अन सकल निवारा। काहूके धनहानि, किसी जय हार न चिंतै। देय न सो उपदेश, होय अघ वनज कृषीतैं॥११॥ कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै। असि धनु हल हिंसोप—करन नहिं, दे जश लाधै॥ राग द्वेष करतार, कथा कबहूं न सुनीजै। औरहु अनरथ दण्ड, हेतु अघ तिन्हें न कीजै॥१२॥ धर उर समता भाव, सदा सामायक करिये। परव चतुष्टय माहि, पाप तज प्रोषध धरिये॥ भोग और उपभोग, नियमकर ममत निवारै। मुनिको भोजन देय, फेर निज करहि अहारै॥१३॥ बारह व्रतके अतीचार, पाय पन पन न लगावै। मरण समय सन्यास, धार तसु दोष नशावै॥ यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावे। तहंते चय नर जन्म, पाय मुनि ह्वै शिव जावे।

पञ्चम ढाल।

मनोहर छन्द १४ मात्रा।

मुनि सकल व्रती बड़ भागी। भवभोगनतैं वैरागी॥ वैराग्य उपावन माई। चिंतै अनुप्रेक्षा भाई॥१॥ इन चिन्तत समरस जागै, जिम ज्वलन पवनके लागै॥ जबही जिय आतम जानै। तबही जिय शिवसुख ठानै॥२॥ जोवन गृह गो धन नारी। हय गय जन आज्ञाकारी॥ इन्द्रीय भोग छिन थाई। सुरधनु चपला चपलाई॥३॥ सुर असुर खगाधिप जेते। मृग ज्यों हरि काल दले ते॥ मणिमंत्रतंत्र बहु होई। मरते न बचावे कोई॥४॥चहुंगति दुख जीव भरै हैं। परिवर्तन पञ्च करै हैं॥ सब विधि संसार असारा। तामें सुख नाहिं लगारा॥५॥ शुभ अशुभ करम फल जेते। भोगें जिय एकहिं तेते॥ सुत दारा होय न सीरी। सब स्वारथके हैं भीरी॥६॥ जलपय ज्यों जियतन मेला। पै भिन्न २ नहिं भेला॥ जो प्रगट जुदे धन धामा। क्यों ह्वै इक मिल सुत रामा॥७॥ पल रुधिर राध मल थैली। कीकस वसादितैं मैली॥ नव द्वार बहैं घिनकारी अस देह करै किम यारी॥८॥ जो योगनकी चपलाई। तातें ह्वै आश्रव भाई॥ आश्रय दुखकार घनेरे। बुद्धिवंत तिन्हें निरवेरे॥९॥ जिन पुण्य पाप नहिं कीना। आतम अनुभव चित दीना॥ तिनहीं विधि आवत रोके। संवर लहि सुख अवलोके॥१०॥ निज काल पाय विधि झरना। तासों निजकाज न सरना॥ तप करि जो कर्म खपावै। सोई शिवसुख दरसावै॥११॥ किनहूं न करो न धरै को। षट् द्रव्यमयी न हरै को॥ सो लोकमाहिं बिन समता। दुख सहै जीव नित भ्रमता॥१२॥ अंतिम ग्रीवकलोंकी हद। पायो अनन्त

विरियों पद। पर सम्यक्ज्ञान न लाधौ। दुर्लभ निजमें मुन साधौ ॥१३॥ जे भाव मोहतैं न्यारे। दृगज्ञान वृतादिक सारे॥ सो धर्म जबैं जिय धारै। तबहीं सुख अचल निहारै॥ १४॥ सो धर्म मुनिनकरि धरिये। तिनकी करतूति उचरिये॥ ताकूं सुनिये भवि प्राणी। अपनो अनुभूति पिछानी॥ १६॥

अथ षष्टम ढाल—हरिगीता छंद २८ मात्रा।

षटकाय जीवन हननतैं सब, विध दरब हिंसा टरी। रागादि भाव निवारतैं, हिंसा न भावित अवतरी॥ जिनके न लेश मृषा न जल तृण, हूं बिना दीयौं गहैं। अठदश सहस विधि शीलधर चिद्ब्रह्ममें नित रमि रहैं॥१॥ अन्तर चतुर्दश भेद बाहर, संग दशधातैं टलैं। परमाद तजि चऊ करम ही लखि, समिति ईर्यातैं चलैं॥ जग सुहितकर सब अहित हर, श्रुति सुखद सब संशय हरै। भ्रम रोग हर जिनके वचन मुख, चन्द्रतैं अमृत झरै॥२॥ छ्यालीस दोष बिना सुकुल; श्रावक तणे घर अशनको। लैं तप बढ़ावन हेत नहिं तन; पोषते तजि रसनको॥ शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखि, कै गहैं लखिकै करैं। निर्जंतु थान विलोक तन मल, मूत्र श्लेषम परिहरैं॥३॥ सम्यकप्रकार निरोध मन वच, काय आतम ध्यावते। तिन सुथिर मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते॥ रस रूप, गंध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने। तिनमें न राग विरोध पंचेंद्रिय जयन पद पावने॥४॥ समता सम्हारैं थुति उचारैं; बन्दना जिन देवको। नित करैं श्रुति रति करैं प्रतिक्रम तजें तन अहमेवको॥ जिनके न न्हौन न दंतधोवन, लेश अंबर आवरण। भूमाहिं पिछली रयनिमें कछु शयन एकासन करण॥५॥

इकबार लेत अहार दिनमें खड़े अलप निज पानमें। कचलोंच करत न डरत परिग्रह, सों लगे निज ध्यानमें ॥ अरि मित्र महल मसान कंचन, कांच, निन्दन थुतिकरण। अर्घावतारण असि प्रहारण-में सदा समता धरण ॥६॥ तप तपैं द्वादश धरें वृष दश, रत्नत्रय सेवैं सदा। मुनि साथमें वा एक विचरैं, चहैं नहिं भवसुख कदा॥ यों हैं सकल संयम चरित सुनिये स्वरूपाचरण अब। जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै परकी प्रवृति सब ॥७॥ जिन परम पैनी सुबुधि छैनी डार अन्तर भेदिया। वरणादि अरु रागादितै, निज भावको न्यारा किया ॥ निजमाहिं निजके हेत निजकर, आपको आपै गह्यो। गुणगणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मंझार कछु भेदन रह्यो॥ जहं ध्यान ध्याता ध्येयको न, विकल्प बच भेद न जहां। चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहां ॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुद्ध, उपयोगकी निश्चल दशा। प्रगटी जहां दृगज्ञानव्रत ये, तीनधा एकै लशा ॥ ८ ॥ परमाण नय निक्षेपको न उद्योत, अनुभवमें दिखे। दृग—ज्ञान—सुख-बल मय सदा नहिं; आन भाव जो मो विखै ॥ मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनितैं॥ चितपिंड चंड अखंड, सुगुन करंड च्युत पुनि कलनितैं ॥ १० ॥ यों चिन्त्य निजमें थिर भए तिन, अकथ जो आनन्द लह्यो। सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अह-मिन्द्र कै नाहीं कह्यो ॥ तबही शुकल ध्यानाग्नि करि चउ, घात विधि कानन दह्यो। सब लख्यो केवलज्ञान करि भवि,लोकको शिवमग कह्यो ॥११॥ पुनि घाति शेष अघात बिधि, छिनमाहिं अष्टम भू बसं। बसु कर्म विनसै सुगुण बसु, सम्यक्त आदिक सब लसै ॥ संसार खार अपार पारावार,तरि

तीरहिं गये। अविकार अचल अरूप शुद्ध, चिद्रूप अविनाशी भये ॥ १२ ॥ निजमाहिं लोक अलोक गुण, पर्याय प्रतिबिम्बित थये। रहि हैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परणये ॥ धनि धन्य है जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया। तिनही अनादी भ्रमण पञ्च, प्रकार तजि वर सुख लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यों वड़, भागि रत्न त्रय धरैं। अरु धरेंगे ते शिव लहैं तिन,सुजशजल-जगमल हरैं॥ इम जानि आलस हानि साहस, ठानि यह सिख आदरों। जबलों न रोग जरा गहै तब लों जगत निजहित करों ॥ १४॥ यह राग आग दहै सदा ताते समामृत पीजिये॥ चिर भजे विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद लीजिये॥ कहा रच्यो पर पदमें न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहे। अब दौल होउ सुखी स्वपद रचि, दाव मत चूको यहै ॥ ५ ॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी, तीज सुकुल बैशाख। करचो तत्व उपदेश यह, लखि बुधजनकी भाख ॥ १ ॥ लघु धी तथा प्रमादतें, शब्द अर्थकी भूल। सुधी सुधार पढ़ो सदा; जो पावो भव कूल ॥ २ ॥

३३ समायिक पाठ भाषा।

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म।

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें सहियो दुख भारी। जन्ममरण नित किये पापको है अधिकारी॥ कोटि भवांतरमाहिं मिलन दुर्लभ

सामायक धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुख दायक ॥ १ ॥ हे सर्वज्ञ जिनेश किये जे पाप जु मैं अब। ते सब मनवचकाय योगकी गुप्ति बिना लभ ॥ आप समीप हजूरमाहिं मैं खड़ो खड़ो अब। दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुख देहिं जब ॥ २ ॥ क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्रानी। दुःख-सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥ बिना प्रयोजन एकेंद्रिय बिति चउ पंचेंद्रिय। आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ॥ ३ ॥ आपसमें इक ठोर थापि करि जे दुख दीने। पेलि दिये पगतलें दाबकरि प्राण हरीने ॥ आप जगतके जीव जिते तिन सबके नायक। अरज करौं मैं सुनो दोष मेटो सुखदायक ॥ ४ ॥ अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय। तिनके जे अपराध भये ते क्षिमा क्षिमा किय ॥ मेरे जे अब दोष भये ते क्षमों दयानिधि। यह पड़िकोणो कियो आदि षट कर्ममांहि विधि ॥५॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यानकर्म।

जा प्रमादवश होय विराधे जीव घनेरे। तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥ सो सब झूठो होउ जगतपतिके परसादै। जा प्रसादतैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ॥६॥ मैं पापी निर्लज्ज दया-करि हीन महाशठ। किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ ॥ निंदूं हूं मैं बारबार निज जियको गरहूं। सबविध धर्म उपाय पाय फिर पापहिं करहूं ॥७॥ दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावककुल भारी। सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धाधारी ॥ जिनवचनामृतधार समावर्तैं जिनवानी। तौहू जीव संहारे धिक धिक धिक हम जानी ॥८ इन्द्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब। अज्ञानी जिम करे

तिसो विधि हिंसक ह्वै अब ॥ गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले। ते सब दोष किये निन्दू अब मनबच तोले ॥९॥ आलोचन-विध थकी दोष लागे जु घनेरे। ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे ॥ बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता। ईर्षादि-कतैं भये निन्दिये जे भयभीता ॥१०।

तृतीय सामायिक कर्म।

सब जीवनमैं मेरे समताभाव जग्यो है। सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है ॥ आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांड़ि करिहूं सामायक ॥ संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ॥ ११ ॥ पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति। पांचहि थावर-माहिं तथा त्रस जीव बसें जित ॥ बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेंद्रिय-मांहि जीव सब। तिनमें क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब ॥१२॥ इस अवसर मैं मेरे सब सम कञ्चन अरु त्रण। महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहि सम गण ॥ जामन मरन समान जानि हम समता कीनो। सामयिकका काल जितै यह भाव नवीनो ॥ १३ ॥ मेरो है इक आतम तामें ममत जु कीनो ॥ और सबै मम भिन्न जानि समतारस भीनो ॥ मात पिता सुत बंधु मित्र त्रिय आदि सबै यह। मोतें न्यारे जानि जथारथरूप कर्यो गह ॥ १४ ॥ मैं अनादि :जगजालमाहिं फंस रूप न जान्यो। एकेंद्रिय दे आदि जन्तुको प्राण हराण्यो ॥ ते अब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ॥१५॥

अथ चतुर्थ स्तवनकर्म।

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्मको। संभव भव-

दुखहरण करण अभिनन्द शर्मको ॥ सुमति सुमति दातार तार भवसिंधु पारकर । पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥१६॥ श्रीसुपार्श्व कृत पास नाश भव जास शुद्ध कर। श्रीचन्द्रप्रभ चन्द्र-कान्तिसम देहकान्ति धर। पुष्पदन्त दमि दोषकोश भवि पोष रोषहर। शीतल शीतल करन हरन भवताप दोषहर ॥ १७ ॥ श्रेय रूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्यजन। वासुपूज्य शतपूज्य वास-वादिक भवभय हन ॥ विमल विमल मतिदेन अन्तगत हैं अनन्त जिन। धर्म शर्म शिवकरण शांति जिन शान्तिविधायिन ॥ १८ ॥ कुन्थ कुन्थ मुख जीवपाल अरनाथ जाल हर। मल्लि मल्लसम माह-मल्ल मारण प्रचार धर ॥ मुनिसुव्रत व्रत करण नमत सुरसंघहि नमि जिन। नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ मांहि ज्ञान धन ॥१९॥ पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम मोक्षरमापति। वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ याविध मैं जिनसंघरूप चउवीस संख्यधर। स्तऊं नमूं हूं बार बार वंदौं शिवसुखकर ॥२०॥

पञ्चम वन्दनाकर्म।

वन्दू मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति वर्द्धमान अतिवीर बन्दहों मनवचतनकृत ॥ त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति बंदू। बन्दू नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकन्दू ॥२१॥ सिद्धारथ नृपनन्द द्वंद्व दुखदोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलितज्वाल जगजीव उ-धारन ॥ कुण्डलपुर करि जन्म जगतजिय आनन्दकारन। वर्ष ब-हत्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन ॥२२॥ सप्त हस्त तनु तुङ्ग भङ्ग कृत जन्म मरण भय। बालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय ॥ दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन। आप बसे शिवमाहिं

नाहि बन्दौ मनवचतन ॥ २३ ॥ जाके बन्दनथकी दोष दुख दूरहि जावै। जाके बन्दनथकी मुक्ति तिय सम्मुख आवै ॥ जाके बन्दनथकी बंद्य होवैं सुरगनके। ऐसे वीर जिनेश बन्दिहूं क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक षटकर्ममाहिं बंदन यह पञ्चम वन्दे वीरजिनेन्द्र इन्द्रशतबन्द्य वन्द्य मम ॥ जन्म मरण भय हरो करो अघ शांतशांत मय। मैं अघ कोष सुपोष दोषको दोष विनाशय ॥२५॥

छट्ठा कायोत्सर्गकर्म।

कायोत्सर्गविधान करूं अन्तिम सुखदाई। कायत्यजन मय होय काय सबको दुखदाई ॥ पूरव दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं। जिनगृह वंदन करूं हरूं भवपापतिमिर मैं ॥२६॥ शिरोनतीमैं करूं नमूं मस्तक कर धरिकैं। आवर्त्तादिक क्रिया करूं मनबच मद हरिकै ॥ तीन लोक जिन भवनमांहिं जिन हैं जु अकृत्रिम। कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वीपमाहीं वंदौं जिम ॥२७॥ आठ कोडिपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं। चारि शतकपरि असी एक जिनमंदिर जाणूं ॥ व्यंतर ज्योतिषमांहिं संख्यरहिते जिनमन्दिर। जिनगृह वन्दन करूं हरहु मम पाप सघकर ॥ २८ ॥ सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक। सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्री-दायक ॥ श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक। यह आ-वश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे भवि आतम काज करण उद्यमके धारी। ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ॥ राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब। बुध महाचन्द्र वि-लाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥३०॥ इति ॥

३४ सामायिक पाठ (संस्कृत)

सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं; क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्। माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ; सदा ममात्मा विदधातु देव ॥ १ ॥ शरीरतः कर्त्तुमनन्तशक्तिं; विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम् । जिनेन्द्र कोषादिव खड्गयष्टिं; तव प्रसादेन; ममास्तु शक्तिः ॥ २ ॥ दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे; योगे वियोगे भवने वने वा । निराकृताशेष ममत्वबुद्धेः समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥ ३ ॥ मुनीश ! लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निपाताविव बिम्बिताविव । पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ॥ ४ ॥ एकेन्द्रियाद्या यदि देव देहिनः; प्रमादतः संचरता इतस्ततः । क्षता विभिन्ना मिलिता निपीड़िताः तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥५॥ विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्त्तिना;मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया । चारित्र शुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥ ६ ॥ विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं;मनोवचः काय कषायनिर्मितम् । निहन्मि पापं भवदुःखकारणं; भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम् ॥७॥ अतिक्रमं यं विमतेर्व्यतिक्रमं; जिनातिचारं सुचरित्रकर्म्मणः । व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥८॥ क्षतिं मनः शुद्धिविधेरतिक्रमं; व्यतिक्रमं शीलव्रतैर्विलंघनम् । प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्त्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिशक्तिताम् ॥ ९ ॥ यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् । तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोधलब्धिः ॥ १० ॥ बोधिः समाधिः परिणाम शुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः । चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने,

त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवि ॥ ११ ॥ यः स्मर्य्यते सर्व्वमुनीन्द्र-वृन्दैः, यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः । यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः, सदेवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१२॥ यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः, समस्तसंसारविकारबाह्यः । समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१३॥ निषूदते यो भवदुःखजालम्, निरीक्षते यो जगदन्तरालम् । योऽन्तर्गतो योगिनिरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १४ ॥ विमुक्तिमार्गप्रतिपादको यो,यो जन्ममृत्युव्यसनाद्यतीतः । त्रिलोकलोकी विकलोऽकलङ्कः, स देवदेवो हृदये ममास्तमा ॥१५॥ क्रोड़ीकृताशेषशरीरिवर्गाः, रागादयो यस्य न संति दोषाः । निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१६॥ यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धुनकर्मबन्धः ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१७॥ न स्पृश्यते कर्मकलङ्कदोषैः, यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः । निरञ्जनं नित्यमनेकमेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १८ ॥ विभाषते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासो । स्वात्मस्थितं बोधमय प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १९ ॥ विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् । शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥२०॥ येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा,विषादनिद्राभयशोकचिन्ता । क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपञ्च,स्तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥२१॥ न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी विधानतो नो फलको विनिर्मितः । यतो निरस्ताक्षकषायविद्विषः, सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥२२॥ न संस्तरो भद्रसमाधिसाधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम् । यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं,

विमुच्य सर्व्वामपि बाह्यवासनाम् ॥२३॥ न सन्ति बाह्या मम केच-
नार्थाः, भवामि तेषां न कदाचनाहम्। इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य
बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै ॥२४॥ आत्मानमात्मन्य-
वलोक्यमानस्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः। एकाग्रचित्तः खलु यत्र-
तत्र, स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् ॥२५॥ एकः सदा शाश्वतिको
ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः। बहिर्भवाः सन्त्यपरे सम-
स्ताः, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥ २६ ॥ यस्यास्ति नैक्यं
वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः। पृथक्कृते चर्मणि
रोमकूपाः। कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये ॥ २७ ॥ संयोगतो दुःख-
मनेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्म वने शरीरी। ततस्त्रिधासौ परिवर्ज-
नीयो यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ॥२८॥ सर्वं निराकृत्य विक-
ल्पजालं,संसारकान्तारनिपातहेतुम्। विविक्तमात्मा नमवेक्ष्यमाणो
निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ॥२९॥ स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा,
फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्। परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं
कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥ ३० ॥ निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न
कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन। विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो
ददातीति विमुच्य शेमुषीम् ॥ ३१ ॥ यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः
सर्वविविक्तो भृशमनवद्यः। शश्वदधीते मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं
विभव वरं ते ॥३२॥

इति द्वात्रिंशता वृत्तैः परमात्मानमीक्षते।
योऽनन्य गत चेतस्को, यात्यसौ पदमव्ययम् ॥३३॥

३५ आरती संग्रह

प्रथम आरती।

यह विधि मंगल आरती कीजै। पञ्च परम पद भजि सुख लीजै ॥ टेक ॥ प्रथम आरती श्रीजिनराजा। भव दधि पार उतार जिहाजा ॥ १ ॥ दूजी आरती सिद्धन केरी। सुमरण करत मिटै भव फेरी ॥ २ ॥ तीजी आरती सूर मुनिन्दा। जन्म मरण दुख दूर करिन्दा ॥ ३ ॥ चौथी आरती श्री उवज्झाया। दर्शन देखत पाप पलाया ॥४॥ पांचवो आरती साधु तुम्हारी। कुमति विनाशन शिव अधिकारी ॥ ५ ॥ छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी। श्रावक वन्दों आनन्द कारी ॥ ६ ॥ सातवीं आरती श्रीजिनवाणी। द्यानत स्वर्ग मुक्ति सुखदानी ॥ ७ ॥

द्वितीय आरती।

आरती श्रीजिनराज तुम्हारी। कर्म दलन सन्तन हितकारी ॥टेक॥ सुर नर असुर करत तव सेवा। तुमहीं सब देवनके देवा ॥१॥ पञ्च महाव्रत दुद्धर धारे। राग दोष परिणाम विडारे ॥ २ ॥ भव भयभीत शरण जे आये। ते परमार्थ पन्थ लगाये ॥ ३ ॥ जो तुम नाम जपै मन माहिं। जन्म मरण भय ताको नाहिं ॥४॥ समोशरण सम्पूरण शोभा। जीते क्रोध मान मद लोभा ॥५॥ तुम गुण हम कैसे कर गावैं। गणधर कहत पार नहिं पावैं ॥६॥ करुणा सागर करुणा कीजै। द्यानत सेवकको सुख दीजै ॥७॥

तृतीय आरती।

आरती कीजै श्रीमुनिराजकी। अधम उधारन आतम काजकी ॥ टेक ॥ जा लक्ष्मीके सब अभिलाशी। सो साधन कर्दम वत

नाशी ॥१॥ सब जग जीत लियो जिन नारी। सो साधनि नागिनि वत छारी ॥२॥ विषयन सब जगको बश कीने। ते साधन विषवत तज दीने॥३॥ भुविकोराज चहत सब प्राणी ॥ जीर्ण तृणवत त्यागो ध्यानी ॥४॥ शत्रु मित्र सुख दुख सम माने। लाभ अलाभ बराबर जाने ॥५॥ छहों काथि पीड़न व्रत धारें। सबको आप समान निहारैं ॥ ६ ॥ यह आरती पढ़ै जो गावैं। द्यानत मन वांछित फल पावैं

चतुर्थ आरती।

किस विधि आरती करौं प्रभु तेरी। अगम अकथ जस बुध नहिं मेरी ॥ टेक ॥ समुद्र विजय सुत रजमति छारी। यों कहि थुति नहिं होय तुम्हारी ॥ १ ॥ कोटि स्तम्भ वेदी छवि सारी। समोशरण थुति तुमसे न्यारी ॥२॥ चारि ज्ञान युत तिनके स्वामी। सेवकके प्रभु अन्तर्यामी ॥ ३ ॥ सुनके वचन भविक शिव जाहिं। सो पुद्गलमें तुम गुण नाहिं ॥४॥ आतम ज्योति समान बताऊं। रवि शशि दीपक मूढ़ कहाऊं ॥ ५ ॥ नमत त्रिजग पति शोभा उनकी। तुम शोभा तुममें निज गुणकी ॥ ६ ॥ मानसिंह महाराजा गावे। तुम महिमा तुम ही बन आवे ॥ ७ ॥

पञ्चम आरती।

यह विधि आरती करूं प्रभु तेरी। अगम अबाधित निज गुण केरी ॥ टेक ॥ अचल अखंड अतुल अविनाशी। लोकालोक सकल परकाशी ॥ १ ॥ ज्ञान दरद सुख बल गुणधारी। परमात्मा अविकल अविकारी ॥२ ॥ क्रोध आदि रागादिक तेरे। जन्म जरा-मृत कर्म न नेरे ॥ ३ ॥ अवपु अबध करण सुखराशी। अभय अनाकुल शिवपद बासी ॥ ४ ॥ रूप न रेख न भेष न कोई। चिन्मू

रति प्रभु तुमहीं होई ॥ ५ ॥ अलख अनादि अनन्त अरोगी। सिद्ध विशुद्ध स्वआतम भोगी ॥ ६ ॥ गुण अनन्त किम वचन बतावे। दीपचन्द्र भव भावना भावे ॥ ७ ॥ इति ॥

३६ चेतन सुमतिकी होली।

अबकी मैं होरी खेलों सुमतिसे। यह मन भाय गई मेरे उटके ॥ टेक ॥ अनुभव गात्र दम सुख पिचकारी, तकि २ मारो कुमति घर हटके ॥ १ ॥ ज्ञान गुलाल थाल निज परिणति लालनलाल कुवाल पलटके ॥ २ ॥ प्रमुदित गात्र क्षमादिक सखियां शम दम साज मन्दिर में खटके ॥ ३ ॥ नयो २ फाग नयो २ अवसर खेले हजारी क्यों भव भटके ॥ ४ ॥

३७ आसाराम कृत होली।

होरी रे मन तोहि खिलाऊं चेतन राम रिझाऊं। अम्बर अंग करों अति सुन्दर भूषण भाव बनाऊं। कर्म सवे वसु केसर घोरों गर्व गुलाल उड़ाऊं ॥ भलीविधि धूम उड़ाऊं ॥ १ ॥ चोआ चित्त करों अति सियरों हियरो अति जरद जड़ाऊं। ज्ञानके सागरमें धसके तहां ते सवरी गहि ल्याऊं। भली विधि मंगल गाऊं ॥२॥ मन मृदङ्ग बजे मधुरी ध्वनि कर सम्माच बजाऊं। पञ्च सखी अपने संग लेके सुधूम धमार-गवाऊं भली विधि सों निरताऊं॥३॥ ऐसी होरी जे मुनि खेलें तिन पद शीस नवाऊं। आसाराम को बिनती प्रभु भक्ति अभैपद पाऊं। तबै निज दास कहाऊं ॥४ ॥

३८ मानिक कृत होली।

जामें आवागमन बाकी डोरी। हमारेको खेल ऐसो होरी

॥ टेक ॥ हिंसादिक नित धाय २ के बहु विधि कर पकरोरी। पाप कीच बहु भांति लपेटत विषय कुरंग छिरकोरी ॥ १ ॥ कुमति कुनारि डारि भ्रम फांसी बहुत करी बरजोरी। कर्म धूल अंग ल्यावत ध्यावत मोह अमल कटोरी ॥ २ ॥ कषाय पचीस नृत्य कारिन संग गति २ नाछत चोरी। राग द्वेष दोऊ छैल छबीले देत कुमगकी डोरी ॥ ३ ॥ यों चिरकाल खेल जिय मानिक पाये दुःख करोरी। जनधर्म परभाव भविक अब प्रीति सुपदसों जोरी॥४॥

३९ गंगा कृत होली।

खेलत फाग प्रवीना ॥ टेक ॥ दया वसन्त सखा दश लाक्षण समकित रंग जु कीना। ज्ञान गुलाल चारित्र अर्गजा शील अतरमें भीना ॥ १ ॥ ध्यानानल आस्रव होरी दाबन्ध त्रपत कर खीना। निर्जर नेह मुकत धन फगुआ निज परणतिको दीना ॥ २ ॥ गंगा मन आनन्द भयो है सब विकलप तज दीना। निज सर्वज्ञनाथ प्रभु आगे नाम निरन्तर लीना ॥ ३ ॥

४० मेवाराम कृत होली।

अरे मन खेल खिलारी फाग रचो संसारी ॥टेक॥ काम क्रोध दोऊ छेल छबीले कुमति हाथ पिचकारी। पाप कीचं बहु भांति भरी है देत बदनपर डारी ॥१॥ मोह मृदङ्ग मजीरा मान मद लोभ तमूरा धारी। आशा तृष्णा निरत करत हैं लेत तान गति न्यारी ॥ २ ॥ पांच पचीसी कामिनी घटमें गावत मनसों गारी। झगड़२ मिलि फगुआ मांगत भाव बतावत भारी ॥ ३ ॥ खेलत खेल युग बहु बीते अब जिय भयो दुखारी। मेवाराम जैन हित होरी अबकी बर हमारी ॥ ४ ॥

४१ मानिक कृत होली

कहा वानि परी पिय तोरी-कुमति संग खेलत है नित होरी ॥टेक॥ कुमति कूर कुबिजा रंग राची लाज शरम सब छोरी। राग द्वेष भय धूलि लगावे नाचे ज्यों चकडोरी। अक्ष विषय रंग भरि पिचकारी कुमति कुत्रिय सरबोरी। जा प्रसंग चिर दुखी भये फिर प्रीति करत बरजोरी॥ २॥ निज घरकी पिय सुधि बिसारके परत पराई पोरी। तीन लोकके ठाकुर कहियत सो विधि सबरी बोरी ॥ ३॥ बरजि रही बरजों नहिं मानत ठानत हठ बरजोरी। हठ तजि सुमति सीख भजि मानिक तो बिलसो शिव गोरी ॥४॥

४२ दौलत कृत होली।

छाड़ि दे तूं यह बुधि भोरी-वृथा पर सों रत जोरी॥ टेक॥ जे पर हैं न रहैं थिर पोषत जे कल मलकी झोरी। इन सों करि ममता अनादिसे बंधे कर्मकी डोरी। सहे भव जलधि हिलोरी॥१॥ वे जड़ हैं तूं चेतन ज्योंही आप बतावत जोरी। सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण तप इन सत्संग रचोरी॥ सदा विलसौ शिव गोरी॥ २॥ सुखिया भये सदा जे नर जासों ममता टोरी। "दौल" हिये अब लीजे पीजे ज्ञान पियूष कटोरी॥ मिटै भव व्याधि कठोरी॥ ३॥

४३ इंग्लिश शिक्षा पर होली

छैल मिडिल कैसी होरी मचाई॥ टेक॥ देशी रीति लिवास छांड़िके कोट लिये सिलवाई। खुले अगाड़ी कटे पिछाड़ी टोपी गोल जमाई। घड़ी आगे लटकाई॥ छैल मिडिल कैसी०॥ १॥ बूटदेवको पहिन पांवमें तनियां खूब कसाई। बैठन नहिं पतलूनदेत

है ठाड़े करन मुताई। धन्य अङ्गरेजी आई छैल० ॥ २ ॥ टेढ़ा डंडा हाथ साथमें बंडा श्वान सुहाई। गले गुलूबन्द कालर डटके मुखमें चुरट दबाई। धुआं फक फक उड़ाई ॥ छैल० ॥ ३ ॥ घरमें जा अंगरेजी बोलें समझत नाहिं लुगाई। मांगें बाटर देती है रोटी बोल उठे झुंझलाई। डेम यू क्या ले आई ॥ छैल० ॥ ४ ॥ कौन बनावे रंग वसन्ती कौन गुलाल उड़ाई। स्याहीकी डबिया हाथ बुरुस है करते हैं बूट सफाई। छोड़के सलेमसाई ॥ छैल० ॥ ५ ॥ सातों जाति मिडिलकर बैठे दूर भई पण्डिताई। गिट पिट मिस्टर होटल जावें मदिरा मटन उड़ाई। लेडीसे आंख लड़ाई ॥ छैल० ॥

४४ तीर्थंकरोंकी स्तुति प्रभाती

वंदों जिन देव सदा चरण कमल तेरे। जा प्रसाद सकल कर्म छूटत अघ मेरे ॥ टेक ॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन केरे। सुमति पद्म श्री सुपार्श्व चन्द्रा प्रभु मेरे ॥ १ ॥ पुष्प दन्त शीतल श्रेयांस गुण घनेरे। बासपूज्य विमल अनन्त धर्म जग उजेरे ॥२॥ शांति कुन्थु अरह मल्लु मुनि सुव्रत केरे। नमि नेमि पार्श्वनाथ महावीर मेरे ॥ ३ ॥ लेत नाम अष्टयाम छूटत भव फेरे। जन्म पाय जादोराय चरननके चेरे ॥ ४ ॥

४५ जवाहर कृत प्रभाती

उठि प्रभात सुमिरन कर श्री जिनेन्द्र देवा ॥ टेक ॥ सिंहासन झिलमिलात तीन छत्र शिर सुहात चमर फहरात सदा भविजन भजेवा ॥ १ ॥ भटे श्री पार्श्व जिनेन्द्र कर्मके कटे जु फन्द अस्वसेनके जु नन्द बामा सुखदेवा ॥ २ ॥ बानी तिहूंकाल खिरे

पशुवन पर दृष्टि परै नमत सुरनर मुनी-न्द्रादिक चरन सीस नेवा ॥ ३ ॥ प्रभुके चरणारविन्द जपत हैं जवाहरचन्द्र कर जोरें ध्यान धरें चाहत नित सेवा ॥ ४ ॥

४६ दौलतकृत प्रभाती

पारस जिन चरण निरखि हरष ज्यों लहायो। चितवत चन्द्रा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुनि घनघोर सोर मोरके मन हरष ओर रंक निधि समाज राज पाय मुदित थायो ॥१॥ ज्यों जन चिर क्षुधित कोय भोजन लहि सुखित होय भेषज मद हरन पाय आतुर हरषायो ॥ २ ॥ वासर धनि आज दुरित दुरे फिर सुकृत आज शान्ताकन देखि महामोह तम बिलायो ॥३॥ जाके गुन जानन शोभानन भव कानन इमि जान दौल सरन आय शिव सुख ललचायो ॥ ४ ॥

४७ दौलतकृत प्रभाती

निरखत जिन चन्द्र वदन सुपद सुरुचि आई ॥ टेक ॥ प्रगटी निज आनकी पिछान ज्ञान भानकी कला उद्योत होत काम यामि-नी पलाई ॥१॥ सास्वत आनन्द स्वाद पायो बिनसो बिषाद मानन अनिष्ट इष्ट कल्पना नसाई ॥ २ ॥ साधी निज साधकी समाधि मोह व्याधिकी उपाधि कविराधिके अराधना सुहाई ॥३॥ धन दिन छिन आज सुगुन चिंते जिनराई। सुधरो सब काज दौल अचल रिद्धि पाई ॥ ४ ॥

४८ णमोकार महिमा प्रभाती

प्रातकाल मंत्र जपो णमोकार भाई। अक्षर पैंतीस शुद्ध हृदयमें धराई ॥ टेक ॥ नर भव तेरो सुफल होत पातक टर जाई। विघन

जासु दूर होत संकटमें सहाई ॥ १ ॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्ताम-णि जाई । ऋद्धि सिद्धि पारस तेरे प्रगटाई ॥ २ ॥ मंत्र जन्त्र तन्त्र सब जाही बनाई। सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि आई ॥३॥ तीन लोक माहिं सार वेदनमें गाई । जगमें प्रसिद्ध धन्य मंगलीक भाई ॥ ४ ॥

४९ भागचन्दकृत प्रभाती

परणति सब जीवनकी तीन भांति वरणी। एक पुण्य एक पाप एक राग हरणी ॥ टेक ॥ जामें शुभ अशुभ बन्द वीतराग परणति भव समुद्र तरणी ॥ १ ॥ छांड़ि अशुभ क्रिया कलाप मत करो कदाचि पाप शुभमें न मगन होय अशुद्धता विसरणी ॥ २ ॥ यावत ही शुभोपयोग तावत ही मन उद्योग तावत ही करण योग कही पुण्य करणी ॥३॥ भागचन्द्र जा प्रकार जीव लहे सुख अपार याको निरधार स्याद्वादकी उचरणी ॥४॥

५० जैनदासकृत प्रभाती

उठि प्रभात पूजिये श्री आदिनाथ देवा। आलसको त्याग जागि पूजा विधि मेवा ॥ टेक ॥ जल चन्दन अक्षत प्रीति सम लेवा। पुष्पते सुवास होय काम जरि जेवा ॥ १ ॥ नैवेद्य उज्ज्व-ल करि दीप रतन लेवा। धूपते सुगन्ध होय अष्ट कर्म खेवा ॥ २ ॥ श्रीफल बादाम लोंग डोंड़ा शुभ मेवा। उज्वल करि अर्घ पूजि श्रीजिनेन्द्र देवा ॥३॥ जिनजी तुम अर्ज सुनो भवदधि उत-रेवा। जैनदास जन्म सुफल भगति प्रभू एवा ॥ ४ ॥

५१ भवानीकृत प्रभाती

ताण्डव सुरपतिने जहां हर्ष भाव धारी। ॥ टेक ॥ रुनु रुनु

रुनु नूपुर ध्वनि ठुमकि २ पेंजन पग झुन झुन झुन किन छवि लगति अति प्यारी ॥ १ ॥ अ न न न न न संसार दानि स न न न न न किन्नरान अ घ घ घ गंधर्व सर्व देत जहां तारी ॥२॥ पं पं पं पग झपटि फं फं फ फ न न न न न वं व मृदङ्ग बाजे बीना धुन सारी ॥ ३ ॥ अ द द द द द विद्याधर दि दि दि दि दि दि देव सकल दास भमानी ज्यो कहें जिन चरनन बलिहारी ॥ ४ ॥

५२ मानिककृत भजन

नहीं रुचे औरु छवि नैननमें, तेरो शान्ति छवी मन बस गई रे ॥टेक॥ निर्विकार निर्ग्रंथ दिगम्बर देखत कुमति विनसि गई रे ॥ १ ॥ चिर मिथ्यातम दूर करनको चन्द्र कला सो दरश रही रे ॥२॥ मानिक मन मयूर हरषनकों मेघ घटा सो दरश रही रे ॥३॥

५३ नवलकविकृत खम्माच

आज कोई अद्भुत रचनारचो ॥ टेक ॥ समोशरण शोभा देखनको होड़ा होड़ी मची ॥ १ ॥ स्वर्ग विमान तले छवि जाके देखत मनन खिची ॥ २ ॥ जिन गुण स्वादत रसिया परनकी रीझन जात मचो ॥ ३ ॥ नवल कहे ऐसो मन आवे हृष धार कर नची ॥ ४ ॥

५४—मोहनलालकृत झंझोटी ।

देखि सखी छवि आज भलो रथ चढ़ि यदुनन्दन आवत हैं ॥ टेक ॥ तोन छत्र माथे पर सोहैं त्रिभुवननाथ कहावत हैं ॥ १ ॥ मोर मुकट केसरिया जामा चोसठ चमर ढुरावत हैं ॥ २ ॥ ताल मृदङ्ग साज सब बाजत आनन्द मङ्गल गावत हैं ॥ ३ ॥ मोहनलाल जास चरननकी झुकि झुकि शीस नवावत हैं ॥४॥

५५ बिहारीकृत—राग देश।

आज जिनराज दरशनसे भयो आनन्द भारी है ॥ टेक ॥ लखे ज्यों मोर घन गर्जे सुनिधि पाये भिखारी है। तथा मो मोहकी वार्ता नहीं आती उच्चारी है ॥१॥ जगतके देव सब देखे क्रोध भय लोभ भारी है ॥ तुम्हीं दोषावरण बिन हो कहा उपमा तिहारी है ॥२॥ तुम्हारे दर्श बिन स्वामी भई चहुंगतिमें ख्वारी है। तुम्हीं पद कंज नमते ही मोहनी धूल भारी है ॥३॥ तुम्हारी भक्तिसे भवजन भये सब सिन्धु पारी हैं। भक्ति मोहि दीजिये अविचल सदा याचक बिहारी है ॥४॥

५६ मानिककृत—सोरठा।

ज्ञानी पिया क्यों बिसरे निज देश। कुमति कुरमिनी सोत संग राचे छाय रहे परदेश ॥ टेक ॥ अनन्तकाल परदेशनि छाये पाये बहुत कलेश। देश तुम्हारो सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश ॥१॥ भ्रम मद पाय छकाय रहो घन ज्ञान रहो नहिं लेश। दुखी भये बिललात फिरत हो गति २ धरि दुरिभेश ॥२॥ यह संसार जानि लख सुख नहीं रंचक लेश। मानिक काल लब्धि पावस लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

पिल्लू।

स्वामी मुजरा हमारा लीजे ॥ टेक ॥ तुम तो बीतराग आनंद घन हमको भी अब कीजे ॥ १ ॥ जगके देव सब रागी द्वेषी यासे निज गुण दीजे ॥२॥ आदि देव तुम समानको वेग अचल पद दीजे ॥

५७ हीरालाल कृत रेखता

भगवान आदिनाथ जिन सों मन मेरा लगा। आराम मुझे

होत दुःख दूरसे भगा ॥ टेक ॥ मरु देवी नन्द धर्म कन्द कुलमें सुर उगा । नृप नाभिराजके कुमार नमत सुर खगा ॥१॥ गुनका निधार धर्मको संसारको तगा । वसु कर्मको जराय शिव पन्थमें लगा ॥२॥ अब तो करो शिताव मिहरवान दिल लगा । कहैं दास हीरालाल दीजे मुक्तिका मगा ॥३॥

५८ हजारी कृत—गजल ।

ख्याल कर दिल मझार चेतन अजब करमने झकाई गतियां ॥टेक॥ निगोद बस कर सुबोध खोया त्रिजग व नारक बनस्पतियां । कभी मनुष वा कभी सुरग था अनादि ते दिन बिताई रतियां ॥२॥ यह दुःख भर २ यतीम हूवा न गोरकी कहुं सुनाई बतियां । पड़ा हूं अब तो उसीके दर पर लगें हजारी न यम की पतियां ॥३॥

५६ हजारीकृत—लावनी ।

प्रभू भवसागर पार करो, मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥ टेक॥ तुम्हीं हो नित्य निरञ्जनदेव । कर इन्द्रादिक थारी सेव ॥ नामसे पाप टरें स्वयमेव । अरज चित दीजे हमारी एव ॥ दोहा ॥ तुम सुमरनसे नाथजी, सीजे हमरो काज ॥ तुम देवनके देव हो, लोक शिखिर महाराज ॥ जगतमें तारन बिरद धरो । मेरे रागादिक० ॥१॥ जन्म मरणादि अनल भारी । चरण श्रुति झरत सलिल झारी ॥ तासु मिट जात तापकारी । होत सुख अविकल अविकारी ॥ दोहा ॥ ऐसे तुम गुण अचिन्त वर, तासम कीजे मोय । मोहादिक अरि अति प्रबल तिनका दीजे खोय ॥ आज तुम देखत काज सरो । मेरे० ॥२॥ कर्म वसु अगणित दुखदाई । तासु बश

हे गति २ पाई ॥ नरक औ निगोद भटकाई ॥ गर्भ दुख कह्यो नहीं जाई ॥ दोहा॥ बीते काल अनन्त चिर, लखो न तुम दृग सोय। अब मो लब्धि भई करन, तुम दरशन पायो जोय ॥ शरण लखि निर्बल मोह परो। मेरे० ॥३॥ तुम्हीं अति दीन अधम तारे। किये बहुतनके निस्तारे ॥ आज धन धन्य भाग म्हारे। बैन तुम गुण मुख उच्चारे ॥ दोहा ॥ तुम भ्राता तुम ही हितू ; तुम माता तुम तात। दुःख रूप भव कूप ते काढ़ि लेहु गहि हाथ ॥ हजारी शरण लयो तुम्हारो। मेरे रागादिक शत्रु हरो। प्रभू० ॥४॥

६० भजन संग्रह

ठुमरी—तारन तरण तरण तारण प्रभु तुम तारण हम जानी ठुमरी-॥टेक॥ तुम समान अब देव न दूजा भूरय माधुरी वानी ॥१॥ लख चौरासी योनिमें भटको तब मैं आनि पिछानी ॥२॥ कामधेनु पारस चिन्तामणि मन वांछित फल दानी ॥३॥ चन्द्रस्वरूप ध्यान धरि प्रभुको दीजे मुक्ति निसानी ॥४॥

दादरा—निरखत छवि नाथ नैना छकित रस व्हे गये ॥टेक॥ रवि कोट छिति लज जात है नख दीप अपार ॥१॥ इकतो परम वैरागी दूजे शान्ति सरूप ॥२॥ उपमा हजारीसे ना बने अनुपम जग चन्द्र निरखत छवि नाथ नैना छकित रस व्हे गये ॥३॥

दादरा—नाभि घर नाचत हरि नटवा ॥ टेक ॥ अद्भुत ताल वृक्ष आकृत धर चवट राग पटवा ॥ १ ॥ मणिमय नूपरादि भूषण युत चुर सुरंग पटवा ॥ २ ॥ किन्नर कर धर बीन बजावत लावत लय झटवा ॥ ३ ॥ दौलत ताहि लखें दृग तृगने सूझत शिव वटवा।

कहरवा—लीजे खबर हमारी दयानिधि ॥ टेक ॥ तुम तो दीन दयाल जगतके सब जीवन हितकारी ॥ १ ॥ मो मत हीन दीन तुम समरथ चूक माफ कर म्हारी ॥ २ ॥ भूधरदास आस चरननकी भव २ शरण तिहारी ॥३॥

भैरवी—जगमें प्रभु पूजा सुखदाई ॥टेक॥ दादुर कमल पाखुरी लेकर प्रभु पूजाको जाई। श्रेणिक नृप गजके पगसे दवि प्राण तजे सुर जाई ॥ १ ॥ द्विज पुत्रीने गिर कैलाश पूजा आन रचाई लिंग छेद देव पति लीनो अन्त मोक्ष पद पाई ॥ २ ॥ समोशरण विपुलाचल ऊपर आये त्रिभुवन राई। श्रेणिक बहु विधि पूजा कीनो तीर्थंकर गोत्र बंधाई ॥ ३ ॥ द्यानत नरभव सफल जगतमें जिन पूजा रुचि आई। देवलोक ताके घर आगन अनुक्रम शिव-पुर जाई ॥ ४ ॥

रसिया—तोसे लागी रे लगन चेतन रसिया ॥ टेक ॥ कुमित सोत सङ्ग तुम राचे नाना भेष गति २ धरिया ॥ १ ॥ नरक माहिं बिललात फिरत ते वे दुःख बिसरि गये रसिया ॥ २ ॥ नीठ नीठ नरकनसे कढ़ कर मानुस भव दुर्लभ बसिया ॥ ३ ॥ नर भव पाय वृथा मत खोवो ऐसा अवसर नहिं मिलिया ॥ ४ ॥ कहत हजारी सुमति सङ्ग राचे कुमति छोड़ तुम हो सुखिया ॥ ५ ॥

भजन कव्वाली।

कहां गये जैन जातिके वीर नैया पार लगाने वाले ॥ टेक ॥ कहां गये उमास्वामी महाराज, तत्वारथ मय रचा जहाज, क्यों नहीं रखते लज्जा आज, जैनी लज्जा रखनेवाले ॥ कहां० ॥ १ ॥ स्वामी रक्षक श्री अकलङ्क, नाशा जैन जाति आतंक, काटा बौद्ध

धर्मका टङ्क, जैनी ध्वजा उड़ाने वाले ॥ कहां० ॥ २ ॥ देवत पात्र केसरी सिंह, वादी गज भाजें कर चिङ्घ। आते अब तुम क्यों न ढिंग, भव्योंका भय हरनेवाले ॥ कहां० ३ ॥ उन संतति हम विद्या हीन, बाल व्याह कर धन बल छीन, फूटसे हो गये तेरा तीन, सत्यानास मिटानेवाले ॥ कहां० ४ ॥ गटपट खाय विदेशी खांड़, रण्डी और नचावें भांड़, सारी लोक लाजको छांड़, बद्रश्मोंके चलानेवाले ॥ कहां० ५ ॥ संभालो अब ना हो स्वच्छन्द राखो रही जो तज कर द्वंद, शुभमति दायक भज जिन चन्द्र, जाति उन्नती कराने वाले ॥ कहां गये० ६ ॥

६१ परमार्थ जकड़ी

(दौलतराम कृत)

अब मन मेरा वे, सीख वचन सुन मेरा। भज जिनवर पद वे, जो बिनशै दुःख तेरा विनशै दुःख तेरा, भवबन केरा, मन वच तन जिन चरन भजो। पंच करन वश राख सुज्ञानो, मिथ्या मत मग दौर तजो ॥ मिथ्या मत मग पगि अनादि ते, तैं चहुंगति कीधा फेरा। अबहूं चेत अचेत होहु मत, सीख वचन सुन मन मेरा ॥ १ ॥ इस भव बनमें वे, तैं साता नहिं पाई। बसु विधि वश ह्वै वे, तैं निज सुधि बिसराई। तैं निज सुधि बिसराई भाई तातैं विमल न बोध लहा। पर परणतिमें मग्न भयो तू जन्म जरा मृत दाह दहा ॥ जिनमत सार सरोवर कूं अब, गहो लाज निज चितनमें। तो दुख दाह नशैं सब नातर, फेर बसैं इस भव बनमें ॥ २ ॥ इस तनमें तू वे, क्या गुन देख लुभाया। महा अपावन वे,

सतगुरु याहि बताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मल मूत्रादिकका गेहा । कृमि कुल कलित लखत घिन आवे, तासों क्या कीजे नेहा ॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परणति शिव मग साधनमें । तो दुख द्वंद नशैं सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥ ॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोग शोकके दानी । शुभगति रोकन थे, दुर्गति पथ अगवानी ॥ दुर्गति पथ अगवानी है जे, जिनकी लगन लगी इनसों । तिन नाना विधि विपति सही है, विमुख भया निज सुख तिन सों ॥ कुञ्जर झख अलि शलभ हिरन इन, एक अक्ष वश मृत्यु लही । यातें देख समझ मन माहीं, भवमें भोग भले न सही ॥ ४ ॥ काज सरे तब वे, जब निजपद आराधै । नशै भवा बलिवे निराबाध पद लाधै ॥ निराबाध पद लाधै तब तोहि केवल दर्शन ज्ञान जहां । सुख अनन्त अति इन्द्रिय मण्डित वीरज अचल अनंत तहां ॥ ऐसा पद चाहैं तो भवि जिन बार बार अबको उचरै । 'दौल' मुख्य उपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥ ५ ॥

६२ परमार्थ जकड़ी ।

(रामकृष्ण कृत)

अरहन्त चरण चित लाऊं । पुनः सिद्ध शिवंकर ध्याऊं ॥ बन्दों जिन मुद्रा धारी । निर्ग्रंथ यती अविकारी । अविकार करुणा वन्त बन्दो सकल लोक शिरोमणी । सर्वज्ञ भाषित धर्म प्रणमूं देय सुख सम्पति धनी । ये परम मंगल चार जगमें चार लोकोत्तम यही । भव भ्रमत इस असहाय जियको और रक्षकको नहीं ॥१॥ मिथ्यात्व महारिपु दंडो । चिरकाल चतुर्गति हंडो ॥ उपयोग न-

यन गुण खोयो । भर नींद निगोदे सोयो ॥ सोयो अनादि निगो-
दमें जिय निकस फिर स्थावर भयो । भू तेज तोय समीर तरवर
थूल सूक्ष्म तन लियो । कृमि कुन्थु अलिसेनी असैनी व्योम जल
थल संचरो । पशु योनि बासठ लाख इस विधि भुगति मर २
अवतरो ॥ २ ॥ अति पाप उदय जब आयो । महा निंद्य नरकपद
पायो थिन सागरो बन्द जहां है । नाना विधि कष्ट तहां है ॥
है त्रास अति आताप वेदन शीत बहु युत है सहो । जहां मार मार
सदैव सुनिये एक क्षण साता नहीं ॥ नारकि परस्पर युद्ध ठाने
असुरगण क्रीड़ा करें । इस विधि भयानक नरक थानक सहैं जी
परवश परें ॥ ३ ॥ मानुष गतिके दुःख भूलो । वस उदर अधोमुख
झूलो । जन्मत जो संकट सेयो । अविवेक उदय नहिं वोयो ॥ वोयो
न कछु लघुवाल वयमें वंश तरु कोंपल लगी । दल रूप यौबन वय
सो आयो काम दो तब उर जगी ॥ जब तन बुढायो घटो पौरुष
पान पकि पीरा भयो । झड़ परो कालबयार बाजत वादि नर भव
यों गयो ॥४॥ अमरापुरके सुख कीने । मनो वांछित भोग नवीने ।
उर माल जवे मुरझानी बिलपो आसन्न मृत्यु जानी ॥ मृत्यु
जानो हाहाकार कीनो शरण अब काको गहूं । यह स्वर्ग संपति
छोड़ अब मैं गर्भ वेदन् क्यों सहूं ॥ तब देव मिल समझाइयो पर
कुछ विवेक न उर वसो । सुर लोक गिरिसे गिर अज्ञानो कुमति
कांदो फिर फंसो ॥ ५ ॥ इस विधि इस मोही जीने । परिवर्तन पूरे
कीने ॥ तिनकी बहु कष्ट कहानी । सो जानत केवल ज्ञानी । ज्ञानी
बिना दुःख कौन जाने जगत बनमें जो लहा । जरा जन्म मरण स्व-
रूप तीक्ष्ण त्रिविध दावानल दहा । जिनमत सरोवर शीतपर अव-

न बैठ तपत बुझाय-हूं। जय मोक्षपुरकी बाट बूझो अब न देर लगाय हूं ॥ ६ ॥ यह नर भव पाय सुज्ञानी। कर २ निज कारज प्राणी। तिर्यंच योनि जब पावे। तब कौन तुझे समझावे ॥ समझाय गुरु उपदेश दीनो जो न तेरे उर रहैं। तो जान जीव अभाग्य अपना दोष कहूंको न हैं। सूरज परकाशे तिमिर नाशै सकल जनका भ्रम हरे। गिरि गुफागर्भ उद्योत होत न ताहि भानु कहा करै ॥ ७ ॥ जग माहि विषय बन फूलौं। मन मधुकर तिस विच भूलो। रस लीन तहां लिपटानो। रस लेत न रंच अघानो ॥ न अघाय क्यों ही रमौ निशि दिन एक क्षण भी ना चुके। नहीं रहे बरजो बरज देखो बार बार तहां झुके ॥ जिनमत सरोज सिद्धांत सुन्दर मध्य याहि लगाय हूं। अब रामकृष्ण इलाज याको किये ही सुख पाय हूं ॥ ८ ॥ इति ॥

६३ परमार्थ जकड़ी।

(दौलतरामजी कृत)

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं। शारद अम्बा चित लाऊं॥ दो विधि परिग्रह परिहारो। गुरु नमो स्वपर हितकारी ॥ हितकार तारकदेव श्रु त गुरु परखि निज उर लाइये। दुःखदाय कुपथ विहाय शिव सुखदाय जिन वृष ध्याइये। विरसे कुमग पगि मोह ठगकर ठगो भव कानन परो। चौरासी लख नित योंनिमें जरामरण जन्मन दौ जरो ॥ १ ॥ मोह रिपुने दई है घुमारया। तिस वश निगोदमें परिया। तहां स्वांस एकके माहीं। अष्टादश मरण लहाहीं लहि मरण एक मुहूर्तमें छासठ सहस्र शत तीन हीं। शत तीन

काल अनन्त यों दुःख सहे उपमा ही नहीं ॥ कबहूं लहा वर आयु क्षिति जल पवन पावक तरु तनो। बसु भेद किंचित कहूं सो मुनि कह्यो जो गौतम गणी ॥ २ ॥ पृथिवी दो भेद बखान। मृदु माटी कठिन पाषाण। मृदु द्वादश सहस्र वरसकी। पाहन बाईस सहस की। पुनः सहस्र सात कही उदक त्रय सहस्र सही है समीरकी। दिन तीन पावक दश सहस्र तरु प्रमिति ना तसु पीरकी। बिन घात सूक्ष्म देहधारी घातयुत गुरुतन लहो। तहां खनन तापन ज्वलन विंजन छेद भेदन दुःख सहो ॥३॥ संखादि दो इन्द्री प्रानी। तिथि द्वादश वर्ष बखानी। कूआदि ते इन्द्रिय हैं ते। वासर ऊनचास जियेंते। जीवे वर्ष दल अलि प्रमुख ब्यालीस सहस उरगतनी। खगकी बहत्तर सहस्र नव पूर्वांग सरीसृपकी भनी। नर मत्स्य पूर्व कोड़ि की थिति कर्म भूमि बखानिये। जलचर बिकल बिन भोग भू नर पशु त्रिपल्य प्रमाणिये ॥४॥ अघवंश कर नरक बसेरा। भुगता तहां कष्ट घनेरा। छेदें तिल पिल तन सारा। झेपें द्रह पूति मझारा। मझार बज्रानल पचावें शूली ऊपरें। सींच देह जलक्षारसे खल कहें ब्रह्मनोके करें। वैतरणी सरिता समल जल अति दुःखद तरु सेमल तने। अति भीमवम असि कोंत समदल लगत दुःख देने घने ॥५॥ तिस भूमें हिर गरमाई। मेरु सम लोह गलाई। तहां की तिथि सिंधु तनो है। यों दुःख नरक अवनो है। अवनी तहांकीसे निकल कबहूं जन्म पायो नरो। सर्वांग संकुचित अति अपावन जठर जननीके परो। तहां अधोमुख जननी रसांश थकी जियो नव मांस लो। तिस पीरमें कोई सोर नाहीं सहे आप निकास लो ॥६॥ जन्मत जो संकट पायो रसनासे जात न गायो।

लहे बालपने दुःख भारी । तरुणापो लियो दुःखकारी । दुःखकार इष्ट वियोग अशुभ संयोग शोक सरोगता । पर सेवा ग्रीषम शील पावस सहे दुःख अति भोगता । काहूकी त्रिय काहूको बांधव काहू सुता दुराचारिणो । काहूं व्यसन रत पुत्र दुष्ट कलत्रके ऊपर ऋणी ॥ ७ ॥ वृद्धापनके दुःख जेते । लखिये सब नैनों तेते । मुख लार बहे तन हाले । बिना शक्ति न बसन सम्हाले । न सम्हाल जाको देह की तो कहो क्या वृषकी कथा । तब ही अचानक यम ग्रसे यों मनुज जन्म गयो वृथा ॥ काहू जन्म शुभ ठान किंचित लियो पद चउ देवको । अभियोग किल्विष नाम पायो सहो अति ही दुःख को ॥८॥ तहां देख महत्सुर ऋद्धी । भूरोकर विषयों गृद्धी । कबहूं परिवार नशानो । शोकाकुल हो बिलखानो । बिलखाय अति जब मरण निकटो सहो संकट मानसी । सुर विभव दुःखद लगो तवें जब लखी माळ मलानसी । तब अमर बहु उपदेश दें समुझाइयो समझो न क्यों । मिथ्यात्व युत, डिग कुगति पाई लहै फिर सो सुपद क्यों ॥ ६ ॥ यों चिरभव अटवी गाही । किंचित् साता न लहाई ॥ जिन कथित धर्म नहीं जानो । पर मैं आपापन मानो ॥ मानो न सम्यक्त्वत्रय आतम अनात्ममें फंसो । मिथ्या चरण दृग् ज्ञान रंजो जाय नव ग्रीवक बसो ॥ पर लहो ना जिन कथित शिव मग वृथा भ्रम भूलों जिया । चिद्भावके दर्शाव बिन सब गये पहले तप किया ॥ १० ॥ अब अद्भुत पुण्य कमायो । कुल जाति विमल तू पायो ॥ यामें सुन सीख सयाने । विषयोंसे रति मति ठाने । ठाने कहा रति विषयसे ये विषय विषधरसे लखो । ये देय मरण अनन्त इनको त्याग आतम रस चखो ॥ या रस रसिक

जन बसे शिव अब बसत फिर बसि हैं सही। दौलत स्वरचि पर विरचि सद्गुरु सीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥ इति ॥

चौथा अध्याय

६४ फूलमाल पच्चीसी।

दोहा—जैन धरम त्रेपन किया, दया धरम संयुक्त।
यादों वंश विषैं जये, तोन ज्ञान करि युक्त ॥१॥

भयो महोत्सव नेमिको, जूनागढ़ गिरनार। जाति चुरासिय जैनमत जुरे क्षोहनी चार ॥ २ ॥

माल भई जिनराजकी, गूंथी इन्द्रन आय ॥
देशदेशके भव्य जन; जुरे लेनको धाय ॥ ३ ॥

छप्पय—देश गौड़ गुजरात चौड़ सोरठि वीजापुर। करनाटक कशमीर मालवो अरु अमेरधुर ॥ पानीपत हींसार और बैराट महा लघु। काशी अरु मरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन सिंधु ॥ तहं वंग चंग बंदर सहित; उदधि पार लौ जुरिय सब। आए जु चीन महं चीन लग, माल भई गिरनारि जब ॥४॥

नाराच छन्द।

सुगन्ध पुष्प वेलि कुंदि केतकी मगायकें। चमेली चंप सेवती जुही गुही जु लायकें ॥ गुलाब कंज लायची सबै सुगन्ध जातिके। सुमालती महा प्रमोद लै अनेक भांतिके ॥ ५ ॥ सुवर्ण तारपोई बीच मोति लाल लाइया। सु हीर पन्न नील पीत पद्म

जोति छाइया ॥ शची रची विचित्र भाँति चित्त देवनांइ है। सुइ-न्द्रने उछाहसों जिनेन्द्रको चढ़ाई है ॥ ६ ॥ सुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि बानियें। जु री तहां चुरासि जाति रावराज जानिये ॥ अनेक और भूपलोग संठसाहुको गनें। कहालु नाम वर्णियें सुदे-खते सभा बनें ॥७॥ खण्डेलवाल जैसवाल अग्रवाल आइया। व घेरवाल पोरवाल देशवाल छाइया ॥ सहेलवाल दिल्लिवाल सेत-वाल जातिके। बढ़ेलवाल पुष्पभाल श्री श्रीमाल पांतिके ॥८॥ सु ओसवाल पल्लिवाल न्रूरवाल चौसखा। पद्मावतीय पोरवाल ढूं-ढरा अठेसखा। गगेरवाल बंधुराल तोर्णवाल सोहिला। करिंद्-वाल पल्लिवाल मेडवाल खोहिला ॥९॥ लमेंचु और माछुर माहेसुरी उदार हैं सुगोलवार गोलपूर्व गोलहू सिंघार हैं ॥ बंधनौर मागधी विहारवाल गूजरा। सुखण्ड राग होय और जानराज बूमरा ॥१०॥ भुराल और सोरठी मुराल और चितौरिया। कपोल सोमराठ वर्ग हूमड़ा नागौरिया ॥ सीरीगहोड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया। मिवाड़ मालवान और जोधड़ा समोधिया ॥११॥ सुभट्टनेर रायवल्ल नागरा रुधाकरा। सुकंथ रारु जालुरारु वालमीक भाकरा। ॥ परवार लाड़ चोड़ कोड़ गोड़ मोड़ संभरा। सु खंडिआत श्री खंडा चतुर्थ पञ्चमं भरा ॥१२॥ सु रत्नाकार भोजकार नारसिंघ हैं पुरी। सु जम्बूवाल और क्षेत्रब्रह्म वैश्य लौ जुरी ॥ सु आइ हैं चुरासि जाति जैनधर्मकी घनी। सबै विराजी गोटियों जु इन्द्रकी सभा बनी ॥१३॥ सुमाल लेनको अनेक भूपलोग आवहीं। सु एक एकतें सुमाग मालको बड़ा वहीं ॥ कहैं जु हाथ जोरि जोरि नाथ माल दीजिये। मंगाय देउं हेमरत्न सो भण्डार कीजिये ॥ १४ ॥

बघेलवाल बाकड़ा हजार बीस देत हैं। हजार दे पचास परवार फेरि लेत हैं। सु जैसवाल लाख देत माल लेत चोंपसों। जु दिल्लिवाल, दोय लाख देत हैं अगोपसों ॥ १५ ॥ सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोह दीजिये। दिनार देहुं एक लक्ष सो गिनाय लीजिये खंडेलवाल बोलिया जु दोय लाख देउगो। सुबाँटिके तमोल मैं जिनेन्द्र माल लेउंगो ॥ १६ ॥ जु-संभरी कहैं सु मेरि खानि लेहु जायके। सुवर्ण खानि देत हैं चितौड़िया बुलायके ॥ अनेक भूर गांव देउ रायसो चंदेरिका। खजान खोली कोठरीं सु देत हैं अमेरिका ॥१७॥ सुगौड़वाल यों कहै गयन्द बीस लीजिये। मढ़ाय देव हेमदंत माल मोहि दीजिये ॥ परमारके तुरंग साजि देत हैं बिना गिने। लगाम जोन पाहुड़े जड़ाउ हेमके बने ॥१८॥ कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायके। सुहीरा मोती लाल देत ओशवाल आयके ॥ सु हूंमड़ा हंकारहीं हमें न माल देउगे। भराइये जिहाजमें कितेक दाम लेउगे ॥१९॥ कितेक लोग आयके खड़ेते हाथ जोरिकें। कितेक भूप देखिके चले जु बाग मोरिकें ॥ कितेक सूप यों कहैं जु कैसे लक्षि देत हो। लुटाय माल आपनों सु फूलमाल लेत हो ॥ २० ॥ कई प्रवीन श्राविका जिनेन्द्रको बधावहीं। कई सुकंठ रागसों खड़ी जु माल गावहीं। कईसु नृत्यकों करै लहैं अनेक भावहीं। कई मृदंग तालपै सु-अंगको फिरावहीं ॥ २१ ॥ कहैं गुरू उदार धी सु यों न माल पाइये ॥ कराइये जिनेन्द्र यज्ञ बिंब हूं भराइये ॥ चलाइये जु संघ जात संघही कहाइये। तबै अनेक पुण्यसों अमोल माल पाइये ॥ २२ ॥ संबोधि सर्व गोटिसो गुरू उतारकें लई। बुलायकें

जिनेन्द्रमाल संघ रायको दई। अनेक हर्षसों करें जिनेंद्र तिलक पाइये। सुमाल श्रीजिनेंद्रकी बिनोदीलाल गाइये ॥ २३ ॥

दोहा—माल भई भगवन्तको, पाई संग नरिन्द। लालविनोदी उच्चरें सबको जयति जिनंद ॥ २४ ॥ माला श्री जिनराजकी, पावे पुण्य संयोग। यश प्रगटे कीरति बढ़े, धन्य कहैं सब लोग ॥२५॥ इति

६५ पुकार पच्चीसी।

दोहा—जै यह भव संसारमें, भुगतें दुःख अपार।
सो पुकार पच्चीसिका, करें कविन इक ठार ॥

तेईसा छन्द।

श्री जिनराज गरीब निवाज सुधारन काज सबे सुखदाई। दीनदयाल बड़े प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिर नाई॥ दुर्गति टारन पापनिवारन हो भवतारन को भव ताई। बारही बार पुकारतु हों जनकी विनती सुनिये जिनराई ॥ १ ॥ जन्म जरा मरणो त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल अनाई। तासु नसावनको तुम नाम सुनो हम वैद्य महा सुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारनको तुम्हरे पद सेवतु हों चित ल्याई। बारही० ॥ २ ॥ जो इक है भवको दुख होय तो राख रहों मनको समझाई। यह चिरकाल कुहाल भयो अब लों कहुं अन्त परो न दिखाई ॥ मो पर या जग मांहि कलेश परे दुख घोर सहे नहिं जाई। बारही० ॥ ३ ॥ देख दुखी पर होत दयाल सुहै इक ग्रामपती शिर नाई। हो तुम नाथ त्रिलोकपती तुमसे हम अर्ज करो शिर नाई ॥ मो दुख दूर करो भवके बहु कर्मन ते प्रभु लेउ छुड़ाई। बारही० ॥ ५ ॥ कर्म बड़े

रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन दशा कर पाई। दुःख अनन्त दिये हमको हर भाँतिन भांतिन खाद लगाई॥ मैं इन वैरिनके वश ह्वै करिके भटको सु कहो नहिं जाई। बारही० ॥ ५ ॥ मैं इस ही भव काननमें भटको चिरकाल सुहाल गमाई। किञ्चित् ही तिलसे सुखको बहु भांति उपाय करे ललचाई॥ चार गतें चिर मैं भटको जहां मेरु समान महा दुखदाई। बारही० ॥ ६ ॥ नित्य निगोद अनादि रहो त्रसके तनकी जहां दुर्लभताई। ज्यों क्रम सो निकसो वह ते त्यों इतर निगोद रहो चिरछाई॥ सूक्षम बादर नाम भयो जब हीं यह भांति धरी पर्यायी। बारही० ॥ ७ ॥ जबहीं पृथ्वी जल तेज भयो पुनि मारुत होय बनस्पति काई। देह अघात धरी जब सूक्षम घातत बादर दीरघताई॥ एक उदै प्रत्येक भयो सह धारण एक निगोंद बसाई। बारही० ॥ ८ ॥ इन्द्रिय एक रही चिरमें कब लब्धि उदै स्वयं उपशमताई। वे त्रय चार धरी जब इन्द्रिय देह उदै विकलत्रय आई॥ पंचन आदि किधौं पर्यन्त धर इन इन्द्रियके त्रस काई। बारही० ॥ ९ ॥ काय धरी पशुकी बहु वार भई जल जन्तुनकी पर्याई। जो थल मांहि अकाश रहो चिर होय पखेरू पङ्ख लगाई॥ मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके वरणे कहुं पार न पाई। बारहो० ॥ १० ॥ नरक मझार लियो अवतार परो दुख भार न कोई सहाई। जो तिलसे सुख काज किये अघते सब नरकनमें सुधि आई॥ ता तियके तनकी पुतली हमरे हियरा करि लाल भिराई॥ बारही० ॥ ११ ॥ लाल प्रभा सु महीं वह है अरु शकर रेत उन्हार बताई। पङ्क प्रभा जु धुआंवत है तमसी सु प्रमासु महातम ताई॥ जोजन लाख जु षोड़स पिण्ड तहां इकही

छिनमें गल जाई ॥ बारही० ॥ १२ ॥ जे अघ घात महा-दुखदायक मैं विषया रसके फल पाई। काटत हैं जबहीं निरदय तबहीं सरिता मांहिं देत बहाई ॥ देव अदेव कुमार जहां बिच पूरब वेर बतावत जाई ॥ बारही० ॥ १३ ॥ ज्यों नर देह मिलो क्रम सों करि गर्भ कुवास महा दुखदाई। जे नव मास कलेश सबे मलमूत्र अहार महाजय ताई ॥ जे दुख देखि जबैं निकसो पुनि रोवत बालपने दुखदाई। बारही० ॥ १४ ॥ योवनमें तन रोग भयो कबहूं विरहा-नल व्याकुलताई। मान विषें रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख मानत ताही। आय गयो क्षणमें विरधापन यह नर भव यह भांति गमाई। बारही० ॥ १५ ॥ देव भयो सुर लोक विषें तब मोहि रहो परया उर लाई। पाय विभूति बढ़े सुरकी पर सम्पति देखते झूरत जाई ॥ माल जबें मुरझाय रहो थित पूरण जानि तबें बिल-लाई ॥ बारही० ॥ १६ ॥ जे दुख मैं भुगते भवके तिनके वरणे कहुं पार न पाई। काल अनादिन आदि भयो तहं मैं दुख भाजन हो अघ माहीं ॥ सो दुख जानत हो तुमहीं जबहीं यह भांति धरी पर्यायी। बारहीं० ॥ १७ ॥ कर्म अकाज करै हमरे हमको चिरकाल भये दुखदाई। मैं न बिगाड़ करो इनको बिन कारण पाय भये अरि आई ॥ मात पिता तुम हो जगके तुम छांड़ि फिरादि करों कहं जाई ॥ बारही० ॥१८॥ सो तुम सों सब दुःख कहों प्रभु जानत हो तुम पीर पराई। मैं इनको सत्संग कियो दिनहूं दिन आवत मोहि बुराई ॥ ज्ञान महानिधि लूट लियो इन रङ्क कियो यह भांति हराई ॥ बारही० ॥ १६ ॥ मैं प्रभु एक सरूप सहो सब यह इन दुष्टनकी कुटिलाई। पाप सु पुण्य दुहूं निज मारगमें हमको यह

फांसि लगाई ॥ बारही० ॥ २० ॥ यह विनती सुन सेवककी निज मारगमें प्रभु लेव लगाई ॥ मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो शरणागति आई ॥ मैं कर दास उदास भयो तुमरी गुणमाल सदा उर लाई । बारही० ॥ २१ ॥ देर करो मत श्री करुणानिधि जू पति राखन हार निकाई । योग जुरे क्रमसो प्रभुजी यह न्याय हजूर भयो तुम आई ॥ आन रहो शरणागति हों तुम्हरो सुनिवे तिहुंलोक बड़ाई । बारहिंवार० ॥ २२ ॥ मैं प्रभुजी तुम्हरी समको इन अन्तर पाय करो दुसराई । न्याय न अन्त कटे हमरो न मिले हमको तुम सी ठकुराई ॥ सन्तन राख करो अपने ढिग दुष्टनि देहु निकास वहाई । बारही० ॥ २३ ॥ दुष्टनकी सत्संगतिमें हमको कछु ज्ञान परो न निकाई । सेवक साहबकी दुविधा न रहे प्रभुजी करिये सु भलाई ॥ फेर नमों सु करों अरजी जसु जाहर जानि परे जगताई । बारही० ॥२४॥ यह बिनती प्रभुके शरणागति जे नर चित्त लगाय करेंगे । जे जगमें अपराध करे अघ ते क्षणमात्र भरेमें हरेंगे । जे गति नीच निवास सदा अवतार सुधी स्वरलोक धरेंगे । देवीदास कहैं क्रम सों पुनि ते भवसागर पार तरेंगे ॥ २५ ॥ इति ॥

६६ अथ कृपण पचीसी ।

सवैया इकतीसा ।

एक समय देहुरामें पञ्च सब बैठे हुते, संघाने बात जात जावेकी चलाई है । भली हैं जो चलो गिरनार परसन जहां जन्म सुफल और कीर्ति बड़ाई है ॥ वहां बैठो हुती एक कृपण पुरुष नारि तिन यह सुनी बात घरमें चलाई है । सुनोजी पियारे पीव

आवै जो तुम्हारे जीव हम तुम दोनों चलें भली बन आई है ॥१॥

पुरुष वाक्य—बावरी भई है नारि काहूको लगी बयार बुद्धि गई मारी तोहि कहा दिस आई है। मोसों तू कहत अविचारी ओंधी सोधी बात मेरे कुल . . कौनने चलाई है॥ कहा तोहि भूत लगा ज्ञान सब दूर भगा समझ ना परे तुझे कोन बहकाई है। मोसे तू कहत धन खरचन जात जानत है गोरी हम क्योंकर कमाई है॥ २॥

स्त्री वाक्य—जानत हों नाथ माया तुम्हींसे ऊपजी है फेरके कमाय लीजो कहा याकूं गही है। चले है भलो जु साथ नेम-नाथ पूजवेको फेर ऐसो साथ कहीं पायवेको नहीं है॥ ताते पिया कीजै जगमें सुयश लीजै भगवत पूजा कीजै यही सार सही है। लक्ष्मी अनेक वार आयके विलाय गई मुझे तो बताओ यह काके थिर रही है॥ ३॥

पुरुष वाक्य—बावरी न जाने यात कौन काज इतरात जगमें सुयश कहा पोट बांध लीजिये। तोड़िये वे हाथ जिन हाथन खरच डारो अपनी कमाई धन आये नहिं दीजिये॥ कहा तू सयानी भई मोहि समझायवे को गोदमेंसे पूत डार पेट आस कीजिये। जानत न तिया बौरी, अन्त तोहि मत थोरी कहत चलन जात वातैं धन छीजिये॥ ४॥

स्त्री वाक्य—धन तो बढ़ैगा दिन दिन सुन मेरी पीय धर्मके किये ते धन अति अधिकायगा। धर्मके कियेसे यश कीरति प्रकट होत धर्मके कियेसे नर भली गति जायगा॥ लक्ष्मी है चञ्चल फिरत चक्रके समान थिरता नहीं है धन क्षणमें पलायगा। तातें

पिया धरम कीजै, जगमें सुयश लीजै, चार विधि दान दीजै महा सुख पायेगा ॥ ५ ॥

पुरुष वाक्य—कहत कहा है राड़, घरमें भई है सांड़, मुझे किया चाहे भांड़ धन खरचायके। मोहि ना रहन देत दिन रात जिय लेत ताते हूं रहोंगो अब ओर ठौर जायके ॥ घर मैं निकसि गयो जाय कहीं बैठ गयो तहां एक मित्र मिलो प्रकृति बनायके। कहा मेरे मित्र आज देख्यो दलगीर तोहैं कारण सो कौन मुझे कहो समुझायके ॥ ६ ॥

मित्र वाक्य--क्या तो मेरे मित्र तेरे घर कुछ चोरी हुई क्या हमारे मित्र द्वार मांगत फकीर है। क्या हमारे मित्र कुछ राज-दण्ड देनो पड़ो किधों मित्र प्यारे तेरे तन कुछ पीर है॥ क्या हमारे मित्र तेरे कोई मिहमान आयो या हमारे मित्र तेरा मेरा हितू वीर हैं। सांची बात कहो मोसे ताहीको इलाज करूं मेरे मन सोच भयो भारी दलगीर है ॥ ७ ॥

कृपण वाक्य—ना तो मेरे मित्र कुछ चोरी भई मेरे घर नहीं मेरे मित्र कुछ राजा दण्ड लिया है। न तो कोई मरा न तो कोई मिहमान आया ना तो भीड़ पड़ो नहीं खोटा काम किया है ॥ रात्रि दिन मेरे मित्र घरमें सतावे नारी वहो बात कहै जासो फाटा जात हिया है। हमने ये लक्ष्मी कमाई बड़े कष्टोंसे उसने उपाय धन खोयबेको किया है ॥ ८ ॥ कहा कहूं मेरे मित्र कहो पड़ती न कछु सोई बात कहे जासों होत उत्पात है। गिरनार सङ्घ चले मोसे कहे तू भी चाल एतो सुन मित्र मेरो हियो फाट्यो जात है ॥ जायके चढ़ाये एक बार फल फूल पान देवता न खाय सब माली

ले जात है। बड़ो दुःख कहो कैसे सहूं मेरे मित्र गिरनार गये घरबार भी नशात है ॥ ६ ॥ मेरो कहो मान मित्र भले दलगीर भयो पापिनी तियाको वेग पीहर पठाइये। जात्री चले जांय जब पचास साठ कोस फेर आदमीके हाथ दे संदेश बुलवाइये ॥ और भांति जीवन न पावो सुनो प्यारे मित्र तुझे मैं सिखाऊं वही घर पर सुनाइये। तेरे बाप भाईके बधाई बटी वेग दे बुलाई तिया देर न लगाइये ॥ १० ॥

तेरे बिना मित्र मुझेको सिखावे ऐसो मेरे प्राण रखे भाई जीवदान दियो है। पर उपकारी तैं विचारी भली बात यह गयो हुयो घर मेरो तैंने राख लियो है ॥ ऐसो मन्त्र कौनको फुरत ऐसो अवसरमें उत्तम उपाय तै बताया यश लियो है। तेरी मैं बड़ाई करूं कहां तांई मेरे मित्र रामकी दुहाई डूबतेकूं थाम लियो है ॥११॥

झूठा एक कागज बनायके सुनाया जाय सुन त्रिया चिट्ठी तेरे पीहरसे आई है क्षेम हैं। कुशल तेरे भाईके पुत्र हुआ लिखो है जरूर तेरे भाईने बुलाई है॥ वेग चली जायने बिलम्ब नहीं ठीक त्रिया दिन चारहीमें बजत बधाई है ॥ घणें दिन बीते पीछे गई न गई समान औसरके बीते कहा आदर बड़ाई है ॥१२॥

आदर बड़ाई मैंने छोड़ी सब स्वामी नाथ रहूं घर बैठी कहीं जाऊंगी न आऊंगी। मेरी देह नीकी नाहिं ज्वर सो भयो है मेरे तातें कछु औषधि महीना एक खाऊंगी ॥ अब तो पड़ी है जीकी देखों कब होऊं नीकी हुई तौ भी मास दो एक न्हाऊंगी। सुणत वचन ये कृपण मन राजी भयो सुन्दर सलोनी तैंने बात कही सा-ऊंगी ॥१३॥

इतनेमें संघ गिरनार कीउ सङ्ग चलो भट्टारक बोल तब दुन्दु भी बजाई हैं। जात चौरासी सब श्रावकोंमें चिट्ठी गई चतुर्विधि सङ्ग लिये गोट सब आई है॥ बाजत नक्कारे अति भारी २ लोग आये नाचत अखाड़े इन्द्र कैसी छवि छाई है। आगो लेत सङ्घई करत मनुहार बिनोधन धन कहै सब तेराये कमाई है॥१४॥

नाचत तुरंग चले शोभित सुरङ्ग सबै झूलत गयंद मानो घटा जुर आई हैं। रथनपै नाना भांति ध्वजा फहरात जात पालकी अनेक भांति लोगोंने बनाई है॥ वहुअरुआसे छड़ी आशण अनूप बने प्यादे सवार ले निशान चमकाई हैं। ऐसी भांति गावत बजावत चलत सब बोलत हैं जै जै शब्द बाजत बधाई है॥१५॥

जहां २ जात खरचत खात भली भांति ठौर २ होत जेवनार पकवानकी। बांटत तम्बोल गांव २ प्रति भली भांति कहां लों बड़ाई कीजे संघईके दानकी॥ हंसी राजी खुशी सेती संघ गिरनार गयो देखत समाज सबसे सुधि आनकी। संघ ही साथी मन गमन आनन्द भरे बार २ करत बड़ाई सन्मानको॥१६॥

गढ़ गिरनारको तलहटीमें डेरो किये एकते सुरङ्ग एक मानो बनवाये हैं। बाजत नगारखाना गरजत घन जैसी बिजली चमकसे निशान चमकाये हैं। बरषत मेघसे सरस लोक दान देत सुण २ कीरति अधिक लोक धाये हैं॥ भिक्षुक अनेक देश देशनके भेले भये सुणी गिरनारजीपै जैनी लोग आये हैं॥१७॥ चढे गिरनारजी तै तीन प्रदक्षिणा दे जय जयकार बोल २ मन हर्षाये हैं। अष्ट द्रव्य हाथ लिये पूजनेका ठाठ किये कञ्चनके थार बीच मोती भरवाये हैं॥ रतनोंके दीपक दशांग धूप खासी खरीं आरती उतारी तब

फूले ना समाये हैं ॥१८॥ पूजे नेमिनाथ जिननाथ तीन लोकनाथ इन्द्र चन्द्रनाथ पूजा कीनी जादोंपतिकी। पृथिवीके नाथ सुरनाथ मृत्यु लोकनाथ विद्याधरनाथ चक्रवर्ती पतिरतिकी॥ व्यन्तरके नाथ हरिनाथ प्रति हरिनाथ नारद सहित मुनिगण सब जातिकी। इत्यादिक पूजन हरष युत किये पीछे सब हीने फेर पूजा कीनी राजमतिकी ॥१६॥

करो है प्रतिष्ठा विंव हेमके वनाय नये चतुर्विध संघ सन्मान अति कीनो है। यथायोग्य सब पहरायके तम्बोल दीने गुरुने तिलक संघ पदवीको दीनो है॥ मास एक पूजन बिधान कियो भली भांति उलटे पलट फेर निज घर चिन्हों है। सुनके नगर लोग आदर सूं लेने आये कृपण सुणत मन नवीनो है ॥२०॥ हाय हाय हम हूं न गये ऐसे संघ बीच देखो माली ल्याओ सब लक्ष्मी बटोरके। जो कि हम जाते नित खाते तो पराय सिर चढ़ती सो में ही लेनो मांगके बटोरके॥ फूल माल में ही देनो नेवज समेट लेतो पैसा टका लेनी सबहीके हाथ जोरके। मैं तो मन्द भागी मुझे कुमतिने घेर लियो छाती सिर पीट पीट रोवे सिर फोरके ॥२१॥

घर आय खाट परे लक्ष्मीका शोक करे कालज्वर चढ़ो आन अंग ताप तपो है। वायु पित्त कफ बढ़े कंठ घरड़ान लगो हाथ पांव तोरि मोरे बावरो सो भयो है॥ सन्निपात व्याधि भई सुधि बुधि भूल गई हाय हाय करे देखो माली धन लियो है। आरितरुद्र परिणामन शरीर तजो मरके कृपण नर्क तीसरेमें गयो है॥२२॥

कृपणकी नारी भली क्रिया करी बालमकी बारमें दिवस सर्व पञ्चनको जिमायो है।देख सब लक्ष्मी विचार कियों मन बीच यह

तो चञ्चल अनित्य भाव भायो है ॥ लगी खरचन धन जिनको भवन कीनो करी है प्रतिष्ठा धन खूब ही लगायो है ॥ आप लई दिक्षा न इच्छा थी भोगनकी मनको वैराग्य भाव प्रगट दिखायो है॥२३॥

द्वादशानुप्रेक्षाय मनमें वैराग्य लाय केशका कराय लोंच अर्जका सो भई है। तप करे द्वादश परीषह सहैं दोष बीस तीजे चौथे दिन उठ उदण्ड ब्रत लई है ॥ तिहुं काल सामायक दस विधि धर्म पाले तीनों रतन हिय धार सूधी परनई है। ऐसे काल पूरो कीनो अन्त संन्यास लीनो शुभ ध्यान देह त्याग तीजे स्वर्ग गई है ॥२४॥

छप्पै—कृपण गयो मर नरक स्वर्ग सुख वनिता पायो। धिक धिक वाकी हुई, नार जश जगने गायो ॥ द्रव्य गया नहिं संग युगलमेंको जननीके। जश अपजश रह जात बुद्धि नहिं हो सबहीके ॥ कहें लाल विनोदी जन सुनो द्रव्य पाय यश लीजियो। कर जानि प्रतिष्ठा यज्ञ शुभ दान सबनको दीजियो ॥२५॥ इति ॥

(६७) उपदेश पच्चीसी प्रारम्भः।

दोहा—वीतरागके चरण जुग, वन्दों शोस नवाय।
कहूं उपदेश पचीसिका, श्रीगुरुकेसे पसाय ॥

चौपाई—वसत निगोद काल बहु गयो। चेतन सावधान ना भयो॥ दिन दश निकस बहुर फिर परना। एते पर एता क्या करना ॥२॥ अनन्त जीवकी एक ही काय। जन्म मरण एकत्र कराय ॥ स्वांसमें बार अठारह मरना। एते पर एता क्या करना ॥ ३ ॥ अक्षर भाग अनन्तम कहो। चेतन ज्ञान यहां तक रहो ॥ कौन शक्तिसे तहां कि करना। एतेपर एता क्या करना ॥४ पृथ्वी तेज नोर

अरुवाह। वनस्वतीमें बसे शुभाय ॥ ऐसी गतिमें बहु दुख भरना। एतेपर एता क्या करना ॥ ५ ॥ केतिक काल यहां ही गयो। तहंसे कड़ विकलत्रय भयो ॥ ताको दुख कुछ जाय न वरना। एतेपर एता क्या करना ॥ ६ ॥ पशु पक्षीकी काया पाई चेतन तहां रहो लपटाई ॥ बिन विवेक कहो क्यों तरना। एते पर एता क्या करना ॥ ७ ॥ इम तिर्यंच महा दुख सहे। सो काहू ते जाय न कहे ॥ पाप कर्मसे इस गति परना। एते पर एता क्या करना ॥ ८ ॥ बहुरो पड़ो नर्कके माहीं। सो दुख कैसे वरणें जाहीं ॥ भू दुर्गन्ध नाक जहां सरना। एतेपर एता क्या करना॥६॥ अग्नि समान तप्त भू कहीं। कितहू शीत महा बन रही ॥ शूली सेज क्षणक ना डरना। । एते पर एता क्या करना ॥ १० ॥ परम अधर्मी असुर कुमार। छेदन भेदन करे अपार ॥ तिनके वशसे नाहिं उबरना। एतेपर एता क्या करना ॥ ११ ॥ रंचक सुख जहं जियको नाहीं। बसते यहां नर्क गति माहीं ॥ देखत दुष्ट महा भय भरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १२ ॥ पुण्य योग भयो सुर अवतार। फिरत २ इस जगति मझार ॥ आवत काल देख थर हरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १३ ॥ सुर मन्दिर अरु सुख संयोग। निशि दिन मन वांछित वर भोग ॥ क्षण इक माहिं तहांसे टरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १४ ॥ बहुत जन्म तक पुण्य कमाय। तब कहुं लही मनुज पर्याय ॥ तामें लयो जरा-दिक मरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १५ ॥ धन योवन सब ही ठकुराई। कर्म योगसे नव निधि पाई ॥ सो स्वप्नान्तर कैसा झरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १६ ॥ इन विषयनके तो दुख

दीनों। तबहूं तू तिनहीं रस भीनो॥ तनक विवेक हृदय ना धरना। एतेपर एता क्या करना॥ १७॥ पर संगति कितना दुख पावे। तब भी तोकों लाज न आवे॥ वासन संग नीर ज्यों जरना। एतेपर एता क्या करना॥ १८॥ देव धर्म गुरु शास्त्र न जाने। स्वपर विवेक न उरमें आने॥ क्यों होसी भवसागर तरना। एतेपर एता क्या करना॥ १९॥ पांचों इन्द्रिय अति बटमारे। परम धर्म धन मूसत हारे॥ लांय पिवहिं एता दुख भरना। एतेपर एता क्या करना॥ २०॥ सिद्ध समान न जाने आप। यासे तोहि लगत है पाप॥ चोल देख घट पटहि बखरना। एतेपर एता क्या करना॥२१॥ श्रीजिन वचन अमिय रस वानी। पीवे नाहिं मूढ़ अज्ञानी॥ जासे होय जन्म मृत्यु हरना। एते पर एता क्या करना॥२२॥ जो चेते तो है यह दाव। नातर बैठा मङ्गल गाव। फिर यह नर भव वृक्ष न फरना। एते पर एता क्या करना॥२३॥ भैया बिनवे बारम्बार। चेतन चेत भलो अवतार। हो दूलह शिव रानी वरना। एते पर एता क्या करना॥२४॥

दोहा—ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय। सो परमातम ध्याइये यही मोक्ष सुखदाय॥ २५॥ सत्रह सौ इकतालीसके मार्ग शीर्ष निरपक्ष। तिथि शङ्कर गण लीजिये श्रोरविवार प्रत्यक्ष॥२६॥

६८ धर्म पचीसी।

दोहा—भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्म धुरन्धर धीर।
नमत सुरेन्द्र जग तम हरण; नमो त्रिविध गुरवीर॥

चौपाई—मिथ्या विषयनमें रति जीव। ताते जगमें भ्रमें

सदीव ॥ विविध प्रकार गहैं परयाय । श्रीजिनधर्म न नेक सुहाय ॥२॥ धर्म बिना बहुगतिमें परे । चौरासीलख फिर फिर धरे ॥ दुख दावानल माहिं तपन्त । कर्म करे फल भोग लहन्त ॥३॥ अति दुर्लभ मानुष पर्य्याय । उत्तम कुल धन रोग न काय ॥ इस अवसरमें धर्म न करे । फिर यह अवसर कबहुं न सरे ॥ ४ ॥ नरकी देह पाय रे जीव । धर्म बिना पशु जान सदीव ॥ अर्थ काममें धर्म प्रधान । ता बिन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत । शुभसङ्गत आवै कर प्रीति ॥ विघ्न हरे सब कारज करे । धन सों चारों कूने भरे ॥६॥ जन्म जरा मृत्यु बश होय । तिहूंकाल डोले जग सोय ॥ श्रीजिन धर्म रसायन पान । कबहुं न रुचे उपजे अज्ञान ॥७॥ ज्यों कोई मूरख नर होय । हलाहल गहे अमृत खोय ॥ त्यों शठ धर्म पदारथ त्याग । विषयन सों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥ मिथ्याग्रह गहिया जो जीव । छांड़ धर्म विषयन चित दीव ॥ ज्यों पशु कल्पवृक्षको तोड़ । वृक्ष धतूरेकी भू जोड़ ॥९॥ नर देही जानों परधान । विसर विषय कर धर्म सुजान ॥ त्रिभुवन इन्द्रतने सुख भोग । पूजनीक हो इन्द्रन जोग ॥ १० ॥ चन्द्र बिना निश गज बिन दन्त । जैसे तरुण नारि बिन कन्त ॥ धर्म बिना त्यों मानुष देह । तातें करिये धर्म सुनेह ॥ ११ ॥ हय गय रथ पायक बहु लोग । सुभट बहुत दल चार मनोग । ध्वजा आदि राजा बिन जान । धर्म बिना त्यों नरभव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध बिना है फूल । नीर बिहीन सरोवर धूल ॥ ज्यों बिन धन शोभित नहीं भोन । धर्म बिना त्यों नर चिन्तोन ॥१३॥ अरचे सदा देव अरहन्त । चर्चे गुरुपद करुणावन्त । खरचे दाम धरम सों प्रेम । रुचो विषय सुफल

नर पम ॥ १४ ॥ कमला चपल रहे थिर नाहिं । योवन रूप जरा लिपटाहिं ॥ सुत मित नारी नाव संयोग । यह संसार स्वप्नको भोग ॥ १५ ॥ यह लख चित धर शुद्ध स्वभाव । कीजै श्रीजिन धर्म उपाव ॥ यथा भाव तैसो गति गहै । जैसी गति तैसो सुख लहै ॥१६॥ जो मूर्ख है धर्म कर हीन । विषय ग्रन्थ रत्रिव्रत नहिं कीन । श्रीजिन भाषित धर्म न गहै । सो निगोदको मारग लहै ॥ १७ ॥ आलस मन्द बुद्धि है जास । कपटी विषय मग्न शठ तास ॥ कायरता मद परगुण ढकै । सो तिर्यञ्चयोनि लह सकै ॥ १८ ॥ आरत रुद्र ध्यान नित करै । क्रोध आदि मतसरता धरै ॥ हिंसक बैरभाव अनुसरै । सो पापिष्ट नरक गति परै ॥ १९ ॥ कपट हीन करुणा चित माहिं । है उपाधि ये भूले नाहिं ॥ भक्तिवन्त गुणवन्त जो कोय । सरलस्वभाव जो मानुष होय ॥ २० ॥ श्रीजिन वचन मग्न तप दान । जिन पूजे दे पात्रहि दान ॥ रहै निरन्तर विषय उदास । सोई लहै स्वर्ग आवास ॥ २१ ॥ मानुष योनि अन्तके पाय । सुन जिन वचन विषय विसराय ॥ गहे महाव्रत दुर्द्धर वीर । शुक्लध्यान धर लहैं शिव धीर ॥२२॥ धर्म करत सुख होत अपार । पाप करत दुख विविध प्रकार ॥ बाल गुपाल कहै सब नार । इष्ट होय सोई अवधार ॥२३॥ श्रीजिनधर्म मुक्ति दातार । हिंसा धर्म परत संसार ॥ यह उपदेश जान बड़ भाग । एक धर्म सो कर अनुराग ॥ २४ ॥ व्रत संयम जिम पद थुति सार । निर्मल सम्यक भाव निवार ॥ अन्त कषाय विषय कृषि करो । जो तुम भक्ति कामिनो वरो ॥ २५ ॥

दोहा—बुध कुमदनि शशि सुख करन, भो दुख नाशन जान ।

कह्यौ ब्रह्म जिन दास यह, ग्रन्थ धर्मकी खान ॥२६॥ द्यानत जे बांचें सुनें, मनमें करें उछाय। ते पावैं सुख शान्ति भी, मन वांछित फल दाय ॥ ॥ इति ॥

६६ अध्यात्म पञ्चासिका।

दोहा—आठ कर्मके बंधमें, बन्धजीव भव वास। कर्म हरे सब गुण भरे, नमों सिद्धि सुखरास ॥१॥ जगत मांहिं चहुं गति विषै, जन्म मरण वश जीव। मुक्ति माहिं तिहुंकालमें, चेतन अमर सदीव ॥ २ ॥ मोक्ष माहिं सेती कभी, जगमें आवे नाहिं। जगके जीव सदीव ही, कर्म काट शिव जाहिं ॥ ३ ॥ पूर्व कर्म उद्योगतै जोव करैं परिणाम। जैसे मदिरा पानते, करै गहल नर काम ॥४॥ तातैं बाधैं कर्मको, आठ भेद दुखदाय। जैसे चिकने गातमें, धूलि-पुञ्ज जम जाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मनके उदय, करै जीव बहु भाय। फिरके बांधे कर्मको, ये ससार सुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावन ते पुण्य है, अशुभ भाव तें पाप। दुहू आच्छादित जीवसो, जान सके नहीं आप ॥ ७ ॥ चेतन कर्म अनादिके, पावक काठ बखान। क्षीर नीर तिल तेल ज्यों, खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल बन्ध्यों गठड़ी विषै; भानु छिपो घन मांहिं। सिंह पीञ्जरे मैं दियो, जोर चले कछु नाहिं ॥६॥ नीर बुझावे आगको, जले टोकनी माहिं, देह माहि चेतन दुखी, निज सुख पावे नाहिं ॥१०॥ तदपि देहसों छुटत है, अन्तर तन है संग। सो न ध्यान अग्नी दहै; तब शिव होय अभंग ॥ ११ ॥ राग दोष तैं आप हीं, पड़े जगतके माहिं। ज्ञान भाव ते शिव लहै, दूजा संगी नाहिं ॥ १२ ॥ जैसे काहू पुरुषके द्रव्य

गड़ो घर माहिं। उदर भरे कर भीखसे, त्यों जाने नाहिं॥ १३॥ ता नरसे कीन्हीं कहा, तू क्यों मांगे भीख। तेरे घरमें निधि गड़ी, दीनी उत्तम सीख॥१४॥ ता के वचन प्रतीत सो, वह कीयो मन माहिं। खोद निकाले धन बिना, हाथ परे कुछ नाहिं॥ १५॥ त्यों अनादिकी जीवके, परजै बुद्धि बखान। मैं सुर नर पशु नारकी, मैं मूरख मतिमान॥ १६॥ तासों सतगुरु कहत हैं, तुम चतन अभिराम। निश्चय मुक्ति सरूप हो, ये तेरे नहिं काम॥१७॥ काल लब्ध परतीत सो, लखत आपमें आप। पूरण ज्ञान भये विना, मिटे न पुण्य अरु पाप॥ १८॥ पाप कहत हैं पुण्यको, जीव सकल संसार। पाप कहत हैं पुण्यको, ते बिरले मति धार॥ १६॥ बन्दीखानेमें परे, जाते छूटे नाहिं। बिन उपाय उद्यम किये, त्यों ज्ञानी जग माहिं॥ २०॥साबुन ज्ञान बिराग जल, कोरा कपड़ा जीव। रजक दक्ष धोवे नहीं, विमल न लहै सदीव॥ २१॥ ज्ञान पवन तप अगन बिन, दहे मूस जिय हेम। कोड़ वर्ष लों राखिये, शुद्ध होय मन केम॥ २२॥ दरव कर्म दों कर्म तें, भाव कर्मते भिन्न। विकलप नहीं सुबुद्धिके शुद्ध चेतना चिन्ह॥ २३॥ चारों नाहिं सिद्धके, तू चारोंके माहिं। चार बिनासे मोक्ष है, और बात कछु नाहिं॥ २४॥ ज्ञाता जीवन मुक्ति हैं, एक देश यह बात। ध्यान अग्नि बिन कर्म वन, जले न शिव किम जात॥ २५॥ दर्पण काई अथिर जल, मुख दीसे नहिं कोय। मन निर्मल थिर बिन भये, आप दरश क्यों होय॥ २६॥ आदिनाथ केवल लह्यो, सहस वर्ष तप ठान। सोई पायो भरतजी, एक महूरत ज्ञान॥ २७॥ राग दोष संकल्प है, नयके भेद विकल्प। दोष भाव मिट जाय

जब, तब सुख होय अनन्त ॥ २८ ॥ राग विराग दुभेद सो, दोय रूप परणाम । रागी भूमि या जगतके, वैरागी शिव धाम ॥ २६ ॥ एक भाव है हिरणके; भूख लगे तृण खाय । एक भाव मंजारके; जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥ विविध भावके जीव बहु; दीसत है जग माहिं । एक कछू चाहे नहीं; एक गजे कछु नाहिं ॥ ३१ ॥ जगत अनादि अनात है; मुक्ति अनादि अनन्त । जीव अनादि अनन्त है; कर्म दुविधि सुन संत ॥ ३२ ॥ सबके कर्म अनादिके कर्म भव्यको अन्त । कर्म अनन्त अभव्यके; तीन काल भटकंत ॥ ३३ ॥ फरश वरन रस गन्ध सुर; पांचो जाने कोय । बोले डोले कौन है; जो पूछे है सोय ॥ ३४ ॥ जो जाने सो जीव है; जो माने सो जीव । जो देखे सो जीव है, जीवे जीव सदीव ॥ ३५ ॥ जात पना दो विधि लसे; विषै निर विषय भेद । निर विषयो सम्बर लसे; विषयो आश्रव वेद ॥ ३६ ॥ प्रथम जीव श्रद्धान सो; कर वैराग्य उपाय ॥ ज्ञान किया सो मोक्ष है; यही बात सुखदाय पुद्गलसे चेतन बंध्यो; यही कथन है वेय जीव बंध्यो निज भाव सो, यही कथन आदेय ॥३८॥ बन्ध लखे निज ओरसे, उद्यम करै न कोय । आप बन्ध्यो निज सों समझ, त्याग करै शिव होय ॥ ३६ ॥ यथा भूपको देखके, ठौर रीतिको जान । तब धन अभिलाषी पुरुष, सेवा करै प्रधान ॥ ४० ॥ तथा जीव सरधान कर, जाने गुण परयाय । सेवे शिव धन आश धर, समता सो मिल जाय ॥ ४१ ॥ तीन भेद व्यवहार सों, सर्व जीव सब ठाम । श्रीअरहन्त परमात्मा, निश्चय चेतनराम ॥ ४२ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म रति, अहं बुद्धि सब ठौर । हित अनहित सरधै नहीं, मूढनमें शिर-

मौर ॥ ४३ ॥ ताप आप पर पर लखै, हेय उपादे ज्ञान। अव्रती देश व्रती महा, व्रती सबै मतिमान ॥ ४४ ॥ जा पदमें सब पद लसे, दर्पन ज्यों अविकार। सकल निकल परमात्म, नित्य निरञ्जन सार ॥ ४५ ॥ बहिरात्मके भाव तज, अन्तर आत्म होय। परमात्म ध्यावै सदा, परमात्म सो होय ॥ ४६ ॥ बूंद उदधि मिल होत दधि, बीती फरश प्रकाश। त्यों परमात्म होत है, परमात्म अभ्यास ॥ ४७ ॥ सब आगमको सार ज्यों, सब साधनको धेव। जाको पूजे इन्द्र सां, सो हम पायो देव ॥ ४८ ॥ सोहं सोहं नित्य जपै, पूजा आगम सार। सत संगतिमें बैठना, यही करे व्यवहार ॥ ४६ ॥ अध्यात्म पञ्चाशिका, माहिं कह्यो जो सार। द्यानत ताहि लगे रहो, सब संसार असार ॥५०॥ ॥इति॥

७० श्रीजिनगिरा स्तवन।

शिखरणी छन्द।

शरण आया माता, जिनेश्वर वाणी दुख हरो। विरद अनुपम तेरा, प्रगट जगत्राता सुख करो॥ भ्रमो जग बहुतेरा, सहा दुःख जन्मन मरणका। टरे नाहीं टारा, यत्न बहु कीना हरणका ॥ १ ॥ भजे बहुते देवा, करी बहु सेवा शरणको। फंसे भव दुख सोहीं, न पाई आशा शरणकी॥ अष्ट विधि खल भारी, हमारी कीनी दुर्दशा। इन्हींके वश माता, भवोदधि दुखमें मैं फंसा ॥२॥ सतत चारों गतिमें, भ्रमावें मोकों ये बली। ज्ञान धनको हरिके, भुलाई मोकों शिवगली॥ नरक पशु नर देवा, चतुर्गतिमें जो दुख लहो। कहा जाता नाहीं तुम्हीं सब जानो जो सहो ॥ ३ ॥ निबल मोको

पाके, सताते ये खल अति घने। शरण राखो माता, बचावो इनसे निज जने॥ सुमति अब दे माता विनाशों आठों खलनमें। लहों शिवपुर पंथा, दहों ना फिर त्रय ज्वलनमें ॥ ४ ॥ अल्प मति मैं माता, सुमति निज दीजे दासको। यही विनती मेरी, पुराओ अम्बे आशको ॥ युगल पदकी सेवा, करत नर देवा ध्यायके। लहत शिव सुख मेवा, शरण मां तेरी पायके ॥ ५ ॥

दोहा—तुम पदाब्ज मो उर बसो, नशो तिमिर अज्ञान।
सेवक नाथूरामको, दीजे मां बरदान ॥६॥ ॥इति॥

७१ जिन दर्शन।

दोहा—दर्शन श्रीजिनदेवका नाशक है सब पाप। दर्शन सुर-गतिदाय हैं, साधन शिव सुख आप ॥ १ ॥ जिन दर्शन गुरु बन्दना इनसे अघ क्षय होय। यथा छिद्रयुत कर विषें चिर तिष्टेना तोय ॥ २ ॥ वीतराग मुख दर्शियो पद्म प्रभा समलाल। जन्म जन्म कृत पापसों, दर्शन नाशे हाल ॥ ३ ॥ जिन दर्शन रवि सारखा, होय जगत तम नाश। विगसित चित्त सरोज लख, करता अर्थ प्रकाश ॥ ४ ॥ धर्मामृतकी वृष्टिको इन्दु दरश जिनराय। जन्म ज्वलन नाशे बढ़े सुख सागर अधिकाय ॥ ५ ॥ सप्त तत्व दरशें ग्रहे वसु गुण सम्यक सार। शान्ति दिगम्बर रूप जिन दर्शि नमों बहु वार ॥ ६ ॥ चेतन रूप जिनेश किय आतम तत्व प्रकाश। ऐसे श्री सिद्धान्तको नित्य नमों सुख आश ॥ ७ ॥ अन्य शरण वांछों नहीं तुम्हीं शरण स्वयमेव। यासे करुणाभाव धर रखो शरण जिन देव ॥ ८ ॥ त्रिजगतमें इस जीवको तारणहार न कोय। वीतराग

वरदेव बिन भया न आगे होय ॥ ९ ॥ श्रीजिन भक्ति सदा मिलो प्रतिदिन भव २ माहिं । जब तक जग वासी रहों अन्तर वांछों नाहिं ॥१०॥ बिन जिन वृष शिव हो नहीं चाहे हो चक्रीश । धनी दरिद्री होत सब जिन वृषसे शिव ईश ॥११॥ जन्म जन्म कृत पाप भव कोटि उपार्जा होंय । जन्म जरादिक मूलसे जिन वन्दन क्षय होय ॥ १२ ॥ यह अनूप महिमा लखी जिन दर्शनकी व्यक्त । यासे पद शरणा लिया नाथूराम जिन भक्त ॥ १३ ॥ जिन दर्शन लखि संस्कृत भाषा किया बनाय । भव्य जीव नित उर धरो यह भव भव सुखदाय ॥१४॥ ॥ इति ॥

७२ श्रीजिनवर पच्चीसी ।

छप्पै छन्द—ऋषभ आदि चौबीस तीर्थ पति तिन गुण गाऊं । दिवपुर कुल पितु मात वर्ण लक्षण बतलाऊं ॥ काय आयु शिव आसन अरु शिव थान मनोहर । कहूं सर्व दरशाय जांय पातक भव भय हर ॥ प्रातःकाल प्रतिदिन पढ़ें स्वर्ग मुक्ति सुख सो लहै । क्रमशः ऊंचे पाय पद नाथूराम सेवक कहै ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धिसे ऋषभोजन वसे अयोध्या । वंशैक्ष्वाकु प्रधान नाभि पितु अनुपम योद्धा ॥ मरुदेवा जिनमात वर्ण कञ्चन तनु सोहै । वृष लक्षण शत पांच चाप तनु लख जग मोहै ॥ थिति चौरासी पूर्व लख पद्मासन कैलास गिरि । मुक्ति थान जिनराज नमो जन्म ना होय फिर ॥ २ ॥ तज सर्वार्थसिद्धि अयोद्धा वसे अजित जिन । श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु पिता जित शत्रु कहे तिन ॥ विजयासेना मात तनु गज लक्षण वर । चौच शतेक धनु तनु थिति पूर्व लाख बहत्तर ॥

कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेदचल। नमों त्रियोग सम्हालके त्रिजगनाथ तुमको स्वथल ॥ ३ ॥ सम्भव ग्रीवक त्याग जन्म श्रावस्ती लीना। वंश कहो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख दीना। मात सुसेना हेमवर्ण घोटक शुभ लक्षण। शतक चार धनु देह साठ लख पूर्व आयु गण ॥ खड्गासनसे शिव गये मुक्तिनाथ सम्मेद गिरि। नमो त्रिलोकीनाथको जन्म मरण ना होय फिर ॥ ४ ॥ अभिनन्दन तज विजय अयोध्या पितु संवर घर। सिद्धार्था जिन मात वंश इक्ष्वाकु जन्म वर ॥ कनक वर्ण कपि चिन्ह हुंठ शत चांप काय जिन। पूर्व लाख पञ्चास आयु खड्गासन है तिन ॥ श्रीसम्मेदाचल विमल मुक्तिनाथ जिनराजका। त्रिकाल वंदों भावसे धन्य जन्म है आजका ॥ ५ ॥ वैजयंत तज सुमति अयोध्यानगरी आये। पिता मेघ प्रभु मात मङ्गला अति मन भाये ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु हेम तनु चकवा लक्षण। धनुष तीन शत देह तुंग त्रिभुवनके रक्षण ॥ आयु पूर्व चालीस लख खड्गासन राजे अटल। सम्मेद शिखरसे शिव गये नमों २ तुमको स्वथल ॥ ६ ॥ पद्म प्रभु ग्रीवक सु त्याग कोशाम्बी आये। धारण नृप पितुमात सुसीमा आनन्द पाये ॥ वंश कहो इक्ष्वाकु कमल सम लाल वर्ण तन। कमल चिन्ह तन तुंग चांप ढाई सौ भगवन ॥ आयु तीस लख पूर्वका खड्गासनसे शिव गये। सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र जिन नमों आज आनन्द लये ॥ ७ ॥ नाथ सुपार्श्व ग्रीवकसे काशी उपजाये। सुप्रतिष्ठितपितु माता पृथिवीके मन भाये। विमल वंश इक्ष्वाकु हरित तन स्वस्तिक लक्षण। धनुष दोयसौ काय बीस लख पूर्व आयु भण ॥ खड्गासन सम्मेदगिर सिद्ध-

क्षेत्रसे शिव गये। त्रिजग ताप हर्त्तारिको हाथ जोड़ हम हत नये ॥ ८ ॥ वैजयंत तज चन्द्रपुरी चन्द्रप्रभु स्वामी। महासेनु पितु मात लक्ष्मणाके भये नामी ॥ श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि लक्षण वर। धनुष डेढ़ सौ देह लाख दश पूर्व आयु सर। खड्-गासनसे मुक्त हो अजर अमर अव्यय भये। शिव थान शिखर सम्मेद जिन तिन पदको हम नित नये ॥ ६ ॥ पुष्पदन्त आरण दिय तज काकन्दी राजे। पिता नृपति सुग्रीव मात रामा सुख साजे ॥ वंश लहो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मगरा लक्षण। सौधनु तुंग शरीर आयु दोलाख पूर्व गण ॥ खड्गासनसे शिव गये सम्मेदा-चल मुक्ति थल। नमों त्रिलोकीनाथ मैं तुम पद पंकज युग विम-ल ॥ १० ॥ शीतल अच्युत त्याग वास मद्दल पुर लीना। दृढ़ रथ तात सुमात सुनन्दाको सुख दीना ॥ निर्मल कुल इक्ष्वाकु हेम तन श्रीतरु लक्षण। नव्वे धनुष शरीर आयु लख पूर्व विच-क्षण ॥ खड्गासन दृढ़ धारके सम्मेदाचल ध्यान धर। मुक्ति भये तिनको नवें शीश नाय हम जोड़कर ॥ ११ ॥ श्रेयान्स पुष्पोत्तर-से चय बसे सिंहपुर। विष्णुपिता विष्णु श्रीमाता उभय धर्मधुर ॥ वंशेक्ष्वाकु पुनीत हेम तन गेंडा लक्षण। असीचाप तनु लाख असीचउ वर्ष आयु भण ॥ खड्गासान दृढ़ शिव समय मुक्ति थान सम्मेदगिर। नमों त्रियोग लगायके अशुभ कर्म खलु जांय खिर ॥१२॥ वासपूज्य कापिष्ट स्वर्गासे चय चम्पापुर। लिया जन्म वसुपूज्य पिता माता विजया उर ॥ ख्यात वंश इक्ष्वाकु अरुण तनु महिषा लक्षण ॥ सत्तर धनुष शरीर उच्च जग जनके रक्षण ॥ लाख बहत्तर वर्षका आयु पद्म आसन अटल। सिद्ध क्षेत्र चम्पा-

पुरी वन्दों सुखदाता अचल ॥ १३ ॥ विमल शुक्र दिव त्याग कम्पिला जन्म लिया वर। कृत वर्म्मा जिन तात सुरम्या मात गुणाकार ॥ विमुल वंश इक्ष्वाक कनक तन वराह लक्षण। साठ चांप तनु तुङ्ग साठ लख वर्ष आयु गण ॥ खड्गासन सम्मेद-गिर मुक्ति थान बन्दन करों। त्रिभुवननाथ प्रमादसे अब न भवोदधि मैं परों ॥ १४ ॥ सहस्रार दिवसे अनन्त जिन जन्म अयोध्या। सिंहसेन पितु ग्रेह लिया भविजन प्रति बोधा ॥ सर्व यशा जितमान वंश इक्ष्वाकु बखानो। हेमवर्ण सेई लक्षण जिनवरके जानो ॥ काय धनुष पंचासका आयु तीसलख पूर्व जिन। खड्गासन सम्मेदशिव नवो चरण कर जोड़ तिन ॥ १५ ॥ पुष्पोत्तरसे धर्मनाथ चय बसे रत्नपुर। भानु पिता सुव्रता मात इक्ष्वाकु वंश धुर ॥ हेमवर्ण लक्षण सु वज्र तनु धनु पैंतालिस। आयु लाख दश वर्ष स्वंग आसन विधि जालिस ॥ सम्मेदाचल मुक्ति थल धर्मपोत धर भव्य जन। पार किये भव उदधिसे करुणाकर करुणायतन ॥१६ शांतिनाथ पुष्पोत्तरसे चय गजपुर आये। विश्वसेन एरा माता गृह बजे बधाये ॥ कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण मृग सोहै। काय धनुष चालीस आयु लख वर्ष लयो है। खड्गासनसे शिव गये मुक्तिनाथ सम्मेदगिरि। युग चरण कमल मस्तक धरों बंधे कर्म खलु जांय खिरि ॥१७॥ कुंथुनाथ पुष्पोत्तरसे चय जन्मे गजपुर। सूर्य पिता श्रीदेवी माता उभय धर्मधुर ॥ कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण अज जानो। काय धनुष तैंतीस काम सुरकी पहिचानो ॥ आयु सहस्र पंचानवे वर्ष मांड आसन कहो। सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र शुभ जिन वन्दत हम सुख लहो ॥ १८ ॥ अरहनाथ सर्वार्थ

सिद्धसे गजपुर आये। पिता सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये॥ शुभ कुरुवंश महान हेम तनु मच्छ चिन्हवर। तीस चांप तन तुंग त्रिजन मनमोहन सुन्दर॥ सहस्र चउरासी वर्षका आयु खड्ग आसन अटल। शिवथान शिखर सम्मेद जिन बन्दों तिनके पद कमल॥ १६॥ मल्लिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना। कुम्भ पिता रक्षिता माताको बहु सुख दीना॥ वंश कहो इक्ष्वाकु हेम तनु घट लक्षण वर। काय धनुष पच्चीस तुंग महैं लख सुर नर॥ आयु वर्ष पचपन सहस्र खड्गासन सोहै अचल। शिवथान शिखर सम्मेदवर तीर्थराज विसरै न पल॥ २०॥ मुनिसुव्रत अपराजितसे कुशाग्रपुर राजे। पितु सुमित्र पद्मावत माताको सुख साजे॥ हरिवंशी तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोहै। बीस धनुषका काय तुंग देखत मन मोहै॥ तीस सहस्र सु वर्षका आयु खंग आसन सुभग। सम्मेद शिखर शिवथान प्रभु तीर्थराज भवि मुक्ति मग॥ २२॥ प्राणत तज नमिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना। विजय पिता वप्रामाताको अति सुख दीना॥ विमल वंश इक्ष्वाकु वर्ण तनु हेम सुहावन। पद्म पाखुरी अङ्क पञ्चदश चांप सुभग तन॥ आयु वर्ष दश सहस्रका पद्मासनसे शिव गये। सिद्धक्षेत्र सम्मेदगिरि वन्दित हों मंगल नये॥ २२॥ वैजयन्तसे नेमनाथ सूरीपुर प्रगटे। सिद्ध विजय शिवदेवीके देखत दुख विघटे॥ लहो श्रेष्ठ हरिवंश श्याम तनु शंख अङ्कवर। काय धनुष दश सहस्र वर्षका आयु पूर्णधर॥ खड्गासन गिरिनारिसे राजमती पति शिव गये। पशुबंदि छुड़ाई दयाकर तिन पदपंकज हम नये॥२३॥ प रस प्रभु आनत दिव तज काशीमें राजे। अश्वसेन बामा माता

गृह दुन्दुभि बाजे ॥ उग्र वंश तनु नील चिह्न अहिराज विराजे। नव कर काय उतंग आयु शत वर्ष सुछाजे ॥ खड्गासन सम्मेदगिर मुक्ति थान मद कमठ हर। मन वच तन बन्दन करों ते वीसम जिनराज वर ॥२४॥ वर्धमान पुष्पोत्तरसे कुण्डलपुर आये। सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये॥ नाथ वंश तनु हेमवर्ण हरि चिन्ह मनोहर। सात हाथ तनु आयु बहत्तर अब्द लयोबर ॥ खड्गासन पावापुरी मुक्ति थान जगताप हर। नवे सु नाथूराम नित हाथ जोड़ युग शीश धर ॥ २५ ॥ इति ॥

७३ सूतक निर्णय

सूतकमें देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादि तथा मंदिरजीका वस्त्राभूषणादिक स्पर्शनकी मनाई है तथा पात्रदान भी वर्जित है। सूतक पूर्ण होनेके बाद प्रथम दिन पूजन प्रक्षाल तथा पात्रदान करके पवित्र होवे। सूतक विवरण इस प्रकार है। १, जन्मका दश दिन माना जाता है। २, स्त्रीका गर्भ जितने माहका पतन हुआ हो उतने दिनका सूतक मानना चाहिये, विशेषतः यह है कि यदि तीन माहसे कमका हो तो तीन दिनका सूतक मानना चाहिये। ३ प्रसूती स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है। इसके पश्चात् वह स्नान दर्शन करके पवित्र होवे॥ कहीं २ चालीस दिनका भी माना जाता है। ४, प्रसूति स्थान एक माहतक अशुद्ध है। ५, रजस्वला स्त्री पांचवें दिन शुद्ध होती है। ६, व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता है, कभी भी शुद्ध नहीं होती। ७, मृत्युका सूतक १२ दिनका माना जाता है। तीन पीढ़ीतक १२ दिन, चौथी पीढ़ीमें ६

दिनका, छठी पीढ़ीमें ४ दिन, सातवीं पीढ़ीमें ३ दिन, आठवीं पीढ़ीमें एक दिन रात, नवमीं पीढ़ीमें स्नान मात्रसे शुद्धता कही है। ८, जन्म तथा मृत्युका सूतक गोत्रके मनुष्यको ५ दिनका होता है। ६, आठ वर्षतककी बालकके मृत्युका ३ दिनका और तीन दिनके बालकका सूतक १ दिनका जानो। १०, अपने कुलका कोई गृहत्यागी उसका संन्यासमरण अथवा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय, तो १ दिनका सूतक होता है। यदि अपने कुलका देशांतरमें मरण करे और १२ दिन पूरे होनेके पहले मालूम हो तो शेष दिनोंका सूतक मानना चाहिये। यदि दिन पूरे हो गये होवें तो स्नानमात्र सूतक जानो। ११, घोड़ी, भैंस, गौ आदि पशु तथा दासी अपने गृहमें जने तो १ दिनका सूतक होता है। गृह बाहर जने तो सूतक नहीं होता। १२, दासी, दास तथा पुत्रीके प्रसूत होय या मरे, तो ३ दिनका सूतक होता है। यदि गृह बाहर हो तो सूतक नहीं। यहांपर मृत्युकी मुख्यतासे ३ दिनका कहा है। प्रसूतका १ ही दिन जानो। १३, अपनेको अग्निमें जलाकर (सती होकर) मरे तिसका छह माहका तथा और और हत्याओंका यथायोग्य पाप जानना। १४, जने पीछे भैंसका दूध १५ दिनतक, गायका दूध १० दिनतक और बकरीका दूध ८ दिनतक अशुद्ध है पश्चात् खाने योग्य है। प्रगट रहे कि कहीं देश-भेदसे सूतक विधानमें भी भेद होता है इसलिये देशपद्धति तथा शास्त्रपद्धतिका मिलानकर पालन करना चाहिये।

(श्रावकधर्मसंग्रहसे उद्धृत)

७४ जिनगुण मुक्तावली

दोहा—श्रीजिनेश यतीशको, सुमिर हिये उपकार।
जिनवर गुण मुक्तावली, लिखूं स्वपर सुखकार ॥१॥

चौपाई।

तीर्थंकर पदके गुण घणे। घन धारावत जाहि न गिणें ॥ यथाशक्ति करिये चिन्तौन। जाते होय पाप विष वौन ॥ २ ॥ सतयुगमें प्रगटे परवीन। मानुष देह दोषकर हीन ॥ आर्य्यखण्ड आय अवतरे। युगल सृष्टिमें जन्म न धरे ॥ ३ ॥ क्षत्री वंश बिना नहिं और। जाके गर्भ जन्मको ठौर ॥ माताके रज दोष न होय। एक पूत जन्मै शुभ सोय ॥ ४ ॥ मात पिताके देह मझार। मल अरु मूत्र नहीं निर्धार ॥ गर्भ शोध देवी आदरै। स्वर्ग सुगन्धि लाय शुचि करै ॥५॥ जाके औदारिक तन माहिं। सात कुधातु मल ते नाहिं। यातै परमोदारिक कहो। आदि पुराण देख सर दहो ॥ ६ ॥ केवल ज्ञान समय तन सोय। सहज निगोद बिना तब होय ॥ नारि नपुंसकके सम्बन्ध तीर्थंकर पद उदय न बन्ध ॥७॥ जाके संयम समय नहीं। आलोचन विधि वरणी नहीं ॥ मस्तक भाग विराजें केश। श्याम सचिक्कन सुभग सुवेश॥८॥ अधिक हीन जिस अंग न होय। आधिव्याधि व्यापै नहिं कोय ॥ विष शस्त्रादिक कारण पाय। आयु कर्म थित छेद न ताय ॥९॥

दोहा—इत्यादिक महिमा घणो, तीर्थङ्कर परमेश।
दश बिधि जाके जन्म तें, अतिशय और विशेष ॥१०॥

चौपाई।

प्रभुके अङ्ग न होय पसेव। नहीं निहार क्रिया स्वयमेव ॥

नाशा नेत्र कर्ण मल नहीं। जीभ दन्त मल मूत्र न कहीं ॥ ११ ॥ क्षीर बराबर रुधिर अनूप। शंख वर्ण शुचि मान सरूप ॥ समचतुरस्र सुभग संठान। तुंग देह दश ताल प्रमान ॥१२॥

दोहा—अपने कर अंगुष्ठ सो, मध्यमिका परयंत।
बारह अंगुल ताल यह, अब धारो मतिवन्त ॥१३॥
याही अपने ताल सों, दशगुण ऊंच शरीर।
सम चतुरस्र संठानको, यह प्रमाण है वीर ॥१४॥

चौपाई–प्रथम सार संहनन अविद्ध। वज्रवृषभ नाराच प्रसिद्ध। रूप सम्पदा अचरजकार। सुर नर नाग नयन मनहार ॥१५॥ सहस अठोतर लक्षण लसैं। चक्रीके तन चौसठ बसैं ॥ लक्षण पाय सुलक्षण भिन्न। सो प्रतिमाके आसन चिह्न ॥ १६ ॥ सहज सुगन्धि बसै वपुमाहिं। सब सुगन्धि जासो द्रवजाहिं ॥ लोक उठावन शक्ति निवास। अतुल अनन्त देह बल जास ॥ १७ ॥ प्रिय हित वचन अमृत उनहार। सब जगजन्तु श्रवण सुखकार ॥ जन्म जात अतिशय दश येह। अब दश केवलके सुन लेह ॥ १८ ॥ दोसौ योजन परिमित लोय। चहुंदिषमें दुर्भिक्ष न होय ॥ व्योम विहार भूमिघत जास। वपुसों होय न प्राण निवास ॥ १९ ॥ सब उपसर्ग रहित जग भूप। निराहार अति तृप्त स्वरूप ॥ एक दिशा सन्मुख मुख जोय। चतुरानन देखे सम कोय ॥ २० ॥ सब विद्या हैं अति गंभीर। छाया वरजित विमल शरीर ॥ पलक पात लोचन नहिं गहैं। नख अरु केश एकसे रहैं ॥ २१ ॥

सोरठा—नई रसादिक धात, होय न अशन अभावतैं।
तिस कारण तें भ्रात, नख अरु केश बढ़ै नहीं ॥२२॥

दोहा—ये दश अतिशय ज्ञानके, लिये ग्रन्थ परमान ।
चौदह सुरकृत होत हैं, ते अब सुनो सुजान ॥२३॥

चौपाई ।

भाषा अर्धमागधी नाम । सकल जीव समझे तिहि ठाम ॥ मागध नाम देव परिभाव । यह गुण प्रगटैं सहज सुभाव ॥ २४ ॥ सबकी होय एकसी टेव । उर मैत्री वरतें स्वयमेव ॥ सब ऋतुके फल फूल समेत । बनस्पती अति शोभा देत ॥२५॥ रत्नभूमि दर्पण उनहार । गति अनुकूल पवन संचार ॥ सकल सभा आनन्द रस लेह । मरुत कुमार बुहारी देह ॥२६॥ योजन मिति निर्मल भू ठवै । मेघकुमार गंधि जल चवै ॥ छप्पन २ चहुंदिश मांहि । कञ्चन कमल गगन पथ जाहिं ॥२७॥ एक सरोज मध्य सुर करै । तातें अधर पेंड प्रभु धरै ॥ निमल दिशा निर्मल नभ होय । जन आह्वान करैं सुरलोय ॥२८॥ धर्म चक्र आगे तन भिन्न । चलै धर्म चक्रीपति चिन्ह ॥ झारी दर्पण प्रमुख मनोज्ञ । मङ्गल द्रव्य आठ विधि योग्य ॥२९॥ दोहा—आठ प्रतिहार्यव विभव, तीरथ प्रभुके होय । नाम ठाम तिनके सुगम सुनिये सज्जन लोय ॥ ३० ॥ समोसरणमें मणिखचित, मध्य त्रिमेखलपीठ । गन्धकुटी तापर बनी, चतुरा-मुख मन ईठ ॥३१॥ बीच सिंहासन जगमगै, मणिमाणकमय रूप । अन्तरीक्ष राजै तहां, पद्मासन जग भूप ॥३२॥

सोरठा—समोरणमें मीत, प्रभु पद्मासन ही रहैं ॥
यह अनादिकी रीति, और भांति मत जानिये ॥३३॥

दोहा—तीन छत्र सिर सोहिये, चन्द विंब उनहार । भामण्डल

चहुंदिश दिपै, रवि छवि छिपै निहार ॥ ३४ ॥ यक्ष अमर चौसठ चमर, ढारत खरे सुहाहिं । बरषैं सुमन सुहावने, सुर दुन्दुभि गरजाहिं॥३५॥ जातरु-नीचे नाथको उपजो केवल ज्ञान । लोक शोकके हरणतें, सो अशोक अभिरान ॥३६॥ तीन काल वाणी खिरे, छह छह घड़ी प्रमाण । श्रोताजनके श्रवणलों, सो निरक्षरी जान ॥३७॥ इह विधि जिनवर गुण कथा, कहत लहतको पार । बाहिय गुण निज प्रगट सो, लिखे ग्रन्थ अनुसार ॥३८॥ अन्तरङ्ग महिमा अतुल कापै वरणी जाय । सुरगुरुसे नहिं कह सकै,थकै स्थविर मुनिराय ॥३९॥ तीर्थङ्कर गुण चिन्तवन, परम पुण्यको हेत । सम्यक रत्न अंकूर हैं, उपजै भवि उर खेत ॥४०॥ जिनवर गुण मुक्तावली, छन्द सूतमें पोय । गुणमाला भूधर गुहो करत कंठ सुख होय ॥४१॥

७५ सूवाबतीसी

दोहा—नमस्कार जिन देवको, करों दुहूं करजोर। सुवाबतीसी सुरस मैं, कहुं अरिन दल मोर ॥ १ ॥ आतम सुआ सुगुरु वचन, पढ़त रहै दिन रैन ॥ करत काज कवरीतिके, यह अचरज लखि नैन ॥२॥ सुगुरु पढ़ावे प्रेमसों, यहो पढ़त मनलाय ॥ घटके पट जो ना खुले, सबही अकारथ जाय ॥३॥

चौपाई।

सुवा पढ़ायो सुगुरु बनाय। करम बनहि जिन जइयो भाय। भूले चूके कबहु न जाहु। लोभ नलिनि पैं दगा न खाहु ॥ ४ ॥ दुर्जन मोह दगाके काज। बांधी नलनी तर धर नाज ॥ तुम जिन बैठहु सुवा सुजान। नाज विषय सुख लहि तिहं थान ॥ ५ ॥ जो

बैठहु तो पकरि न रहियो। जो पकरो तो दृढ़ जिन गहियौ॥ जो दृढ़ गहो तो उलटि न जइयो। जो उलटो तो तजि भजि धइयो॥६॥ इह विधि सूआ पढ़ायो नित्त। सुवटा पढ़िके भयो विचित्त। पढ़त रहे निशदिन ये बैन। सुनत लहै भय प्रानी चैन॥ ७॥ इक दिन सुवटै आई मनै। गुरु संगत तज भज गये बनै॥ बनमें लोभ नलिन अति बनो दुर्जन मोह दगाको तनी॥ ८॥ ता तरु विषय सुखनके काज। बैठ नलिनपैं विलसै राज॥९॥ बैठो लोभ नलिन पैं जबै। विषय स्वाद रस लटके तबै॥ लटकत तरें उलटि गये भाव। नर मुण्डी ऊपर भये पांव॥ १०॥ नलिनी दृढ़ पकरे पुनि रहे। मुखतैं बचन दीनता कहे॥ कोउ न बनमें छुड़ावनहार। नलनी पकरहि करहि पुकार॥ ११॥ पढ़त रहै गुरुके सब बैन। जे जे हितकर सिखये ऐन॥ सुवटा वनमें उड़ निज जाहु। जाहु तो भूल खता निज खाहु॥ १२॥ नलनीके जिन जाइयो तीर। जाहु तो तहां न बैठहु वीर॥ जो बैठो तो दृढ़ ना गहो। जो दृढ़ गहो तो पकरि न रहो॥१३॥ जो पकरो तो चुगा न खइयो। जो तुम खावो तो उलट न जइयो। जो उलटो तो तज भज धइयो। इतनी सीख हृदयमें लहियो॥ १४॥ ऐसे बचन पढ़त पुन रहे। लोभ नलनि तज भज्यो न चहै॥ आयो दुर्जन दुर्गत रूप। पकड़े सुवटा सुन्दर भूप॥ १५॥ डारे दुखके जाल मझार। सो दुख कहत न आवै पार॥ भूख,प्यास बहु संकट सहै। परवस परे महा दुख लहै॥ १६॥ सुवटाकी सुधि बुधि सब गई। यह तौ बात और कछु भई॥ आय परे दुख सागर माहिं। अब इततैं कितको भज जाहिं॥ १७॥ केतो काल गयो इह ठौर। सुवटै

जियमें ठानी और ॥ यह दुख जाल कटै किहं भांति। ऐसी मनमें उपजी खांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु सुमरन करै। पाप जाल काटन चित धरै ॥ क्रम क्रम कर काट्यो अघ जाल। सुमरन फल भयो दीनदयाल ॥ १९ ॥ अब इततैं जो भजके जाऊं। तौ नलनीपर बैठ न खांऊं ॥ पायो दाव भज्यो ततकाल। तज दुर्जन दुर्गति जञ्जाल ॥ २० ॥ आये उड़त बहुर वनमाहिं ॥ बैठे नरभव द्रुमक छाहिं ॥ तित इक साधु महा मुनिराय ॥ धर्म देशना देत सुभाय ॥२१॥ यह संसार कर्मवन रूप। तामहि चेतन हुआ अनूप ॥ पढ़त रहै गुरु बचन विशाल। तौ हूं न अपनी करै संभाल ॥२२॥ लोभ नलिनतैं बैठे जाय। विषय स्वाद रस लटके आय। पकरहि दुर्जन दुर्गति परै। तामें दुःख बहुत जिय भरे ॥ २३ ॥ सो दुख कहत न आवे पार। जानत जिनवर ज्ञानमझार ॥ सुनतैं सुवटा चौंक्यो आप। यह तो मोहि परयो सब पाप ॥ २४ ॥ ये दुख तौ सब मैं ही सहे। जो मुनिवरने मुखतैं कहें ॥ सुवटा सोचौ हिये मझार। ये गुरु सांचे तारनहार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिरियो करम वन माहिं। ऐसे गुरु कहुं पाये नाहिं ॥ अब मोहि पुण्य उदय कछु भयो। सांच गुरुको दर्शन लयो ॥२६॥ गुरुकी गुणस्तुति वारम्बार। सुमिरै सुवटा हिये मझार ॥ सुमरत आप पाप भज गयो। घटके पट खुल सम्यक थयो ॥२७॥ समकित होत लखी सब बात। यह मैं यह परद्रव्य विख्यात ॥ चेतनके गुण निजमहि धरे। पुद्गल रागादिक परिहरे ॥२८॥ आप मगन अपने गुण माहिं। जन्म मरण भय जियको नाहिं ॥ सिद्ध समान निहारत हिये। कर्म कलंक सबहिं तज दिये ॥२९॥ ध्यावत आप माहिं जगदीश। दुहुंपद एक विरा-

जत ईश ॥ इहविधि सुवटा ध्यावत ध्यान। दिन दिन प्रति प्रगटत कल्यान ॥३०॥ अनुक्रम शिवपद जियका भया। सुख अनन्त विल सत नित नया॥ सतसंगति सबको सुख देय। जो कुछ हियमें ज्ञान धरेय ॥३१॥ केवलिपद आतम अनुभूत। घट घट राजत ज्ञान मंजूत॥ सुख अनंत बिलसै जिय सोय। जाके निजपद परगट होय ॥३२॥ सुवा बत्तीसी सुनहु सुजान। निजपद प्रगटत परम निधान॥ सुख अनंत विलसहु ध्रुव नित्त। 'भैयाकी' बिनती धर वित्त ॥ ३३ ॥ संवत सत्रह त्रैपन माहिं। आश्विन पहिले पक्ष कहाहिं॥ दशमीं दशों दिशा परकास। गुरु संगति तैं शिव सुखभास ॥३४॥

७६ नामावली स्तोत्र

छन्द १६ मात्रा।

जय जिनंद सुख कंद नमस्ते। जय जिनंद जिन फंद नमस्ते॥ जय जिनंद वरबोध नमस्ते। जय जिनंद जित क्रोध नमस्ते ॥ १ ॥ पाप ताप हर इन्दु नमस्ते। अर्हं वरन जुत विन्दु नमस्ते॥ शिष्टा-चार विशिष्ट नमस्ते। इष्ट मिष्ट उतकृष्ट नमस्ते ॥ २ ॥ पर्म धर्म वर शर्म नमस्ते। मर्म भर्म घन घर्म नमस्ते॥ दृगविशाल वर भाल नमस्ते। हृद दयाल गुनमाल नमस्ते ॥३॥ शुद्धबुद्ध अविरुद्ध नम-स्ते। रिद्धिसिद्धि वर वृद्ध नमस्ते॥ वीतराग विज्ञान नमस्ते। चिद्विलास धृत ध्यान नमस्ते ॥४॥ स्वच्छ गुणांबुधि रत्न नमस्ते। सत्व हितंकर यत्न नमस्ते॥ कुनयकरी मृगराज नमस्ते। मिथ्या खग वर बाज नमस्ते ॥५॥ भव्य भवोदधि पार नमस्ते। शर्मामृत

सित सार नमस्ते ॥ दरश ज्ञान सुखवीर्य नमस्ते । चतुरानन धर धीर्य नमस्ते ॥ ६ ॥ हरिहर ब्रह्मा विष्णु नमस्ते । मोह मर्द मनु विष्णु नमस्ते ॥ महादान महभोग नमस्ते । महा ज्ञान मह जोग नमस्ते ॥ ७ ॥ महा उग्र तप सूर नमस्ते । महा मौन गुण भूरि नमस्ते । धरम चक्रि वृष केतु नमस्ते । भवसमुद्र शत सेतु नमस्ते ॥ ८ ॥ विद्याईश मुनीश नमस्ते । इन्द्रादिक नुत शीस नमस्ते ॥ जय रत्नत्रय राह नमस्ते । सकल जीव सुखदाय नमस्ते ॥९॥ अशरण शरण सहाय नमस्ते । भव्य सुपन्थ लगाय नमस्ते ॥ निराकार आकार नमस्ते । एकानेक अधार नमस्ते ॥ १० ॥ लोकालोक विलोक नमस्ते । त्रिधा सर्व गुण थोक नमस्ते ॥ सल्ल दल्ल दल मल्ल नमस्ते । कल्ल मल्ल जित लल्ल नमस्ते ॥ ११ ॥ भुक्ति मुक्ति दातार नमस्ते । उक्ति सुक्ति श्रृंगार नमस्ते ॥ गुण अनन्त भगवन्त नमस्ते । जै जै जै जयवन्त नमस्ते ॥ १२ ॥

इति पठित्वा जिनवरणाग्रे परि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

७७ हुक्कानिषेध पच्चीसी ।

दोहा—वंदो वीर जिनेश पद,कह्यो धर्म जगसार । वरते पंचम कालमें, जगत् जीव हितकार ॥ १ ॥ ताहि न त्यागे धूम सो, जारे उर निज जान । देखो चतुर विचारके, तिनसम कौन अयान ॥२॥

चौपाई छन्द—हैं जगमें पुरुषारथ चार, तिनमें धर्म पदारथ सार । जाके सधें होय सब सिद्ध, या विन प्रगटै एक न रिद्ध ॥३॥ सो पुनि दया रूप जिन कहो, करुणाविन कहुं धर्म न लहो । यामें छहों कायकी घात; लहिये कहां दयाकी बात ॥४॥ सो अब

सुनों सबै बिरतंत, सुनिके त्याग करो मतिवन्त। हरित कायकी उत्पत्ति येह, अग्नि संयोग भूमि गनिलेह ॥५॥ अग्नि नीर है याको साज, इन बिन सरै नहीं यह काज। काढत धूम वदन तें जान, होय समीर कायको हान ॥६॥ इह विधि थावर दया न होई, त्रसको त्रास होय सुनि सोई। कुथू आदि जीव या माहिं, खैंचत स्वांस सबै मरजाहिं ॥७॥ उपजें जीव गुड़ाखू बीच। हुई है तहां त्रसनकी मीच। हिंसा होय महा अघ संच, ऐसे दया पले नहिं रंच ॥ ८ ॥ यही बात जाने सब कोय; जहां हिंसा तहां धर्म न होय। बहुरि धर्म नाश भयो जहां, सकल पदारथ विनसे तहां ॥९॥ तातें निंद्य जानि यह कर्म, पापमूल खोवें धन धर्म। यामें कोई न दीसे स्वाद, प्रात होत ही आवे याद ॥ १० ॥ भव्य जीव सामायक करें, सब जीवन सों समता धरें। यह जोरे सब याको साज, और सकल विसरे घर काज ॥११॥ सेवें याहिं पुरुष उर अन्ध, यातें मुख आवे दुर्गन्ध। उत्तम जीवनको नहि काम। सिलगे हलक होय उर श्याम ॥१२॥ जाको कोई ना आदरे। सो कुवस्तु सब यामें परे। यातें सब पवित्रता जाई। परकी जूंठ गहै मन लाई ॥१३॥ यासों कछु पेट नहिं भरे, हाथ जरें मुख कडुवो परे। गिने न याकर रैनी सवार; बुरो व्यसन है देख विचार ॥ १४ ॥

दोहा—स्वाद नहीं स्वारथ नहीं, परमारथ नहीं होय।
क्यों झपटे जग जूठको, यही अचम्भो मोय ॥१५॥

चौपाई छन्द।

साधरमी जन बैठे जहां, सोहे नहीं पुरुष वह तहां। जिमि हंसनकी गोट मझार, काग न शोभा लहे लगार ॥१६॥ यामें नफा

नहां तिल मान, प्रकट हानि है शैल समान। यह विवेक बुध हिरदय धरो, ऐसो मानि भूल मत करो॥ १७॥ इतनो विनतो पै हठ गहे, मोह उदय त्याग नहिं कहे। तासों मेरी कछु न बसाय, लाठी लेय न मारो जाय॥ १८॥

दोहा—सरल चित्त सुनि भेद यह तजे आपसों आप। हठग्राम। हठगहि रहे, जिनके पोते पाप॥ १६॥ हठी पुरुष प्रति हित वचन, सबे अकारथ जाहिं। ज्यों कपूरको मेलिये, कूकरके मुंख मांहि॥ 'भूधरदास' मनसों कही, यही यथारथ बात। सुहित जान हिरदे धरो, कोप करो मत भ्रात॥ २१॥ सबहीको हित सोख है, जान भेद नहिं कोय। अमृतपान जोई करें, ताहीको गुण होय॥२२॥

कवित्त तमाखूके विषयमें॥

जहरकी सासु दुष्ट दुलही हलाहलकी वोछोकी बहिन पर तंबरूप साजी है। नाती करियारोकी धतूरेको ममानी पितियानी वच्छनागकी जहानमें विराजी है। कहैं गंगादत्त वह पचावे धन्य प्राणी औ अफीमकी जिठानी विषखोपरेकी आजी है। माहुरकी मौसी महतारी सिंघियाकी यह तमाखू दईमारीको किन्ने उपराजी है॥ २३॥ चित्तको भ्रमाय देत मनको लुभाय लेत गुणको न देखें कछु खायें क्या भलाई है। दशन विनाश करे मुखमें दुर्गन्धि लहे उष्णताकी बाधाने रकता सुखाई है। गर्दभके मूत्रवत जामन लगाय कर कृषीकार वोय पुनि समूह करि तपाई है। धन्य है खवय्यनको खायं जो तमाखूको सभामांझ दूर होय थुकथुकी लगाई है॥२४॥

लावनी—धर्म भूल आचरण बिगाड़ा इसका हेतु नहीं रहा

ज़ुलम। विवेक जाता रहा हियेसे सबकी जूंठी पियें चिलम ॥टेक॥ प्रथम तमाखू महा अशुचि है, म्लेच्छ इसको बनाते हैं। छूने योग्य नहीं बिलकुलके अपना तोय लगाते हैं। डंडी चिलममें धूम योगतें जीव असंख्य बताते हैं। पीते ही मर जांय सभी यह यह जिन श्रुतिमें गाते हैं॥ होती इसमें अपार हिंसा जरा दया नहीं आती गिलम। विवेक जाता०॥ कौमरिजालोंके साथ पीते गई आबरू ये क्या बनी है। हया दूर कर धर्म लजाते उन्हींमें जा उनकी मत सनी है॥ व चरस गांजा पियें पिलावेंउन्होंने बुद्धि तेरी ये हनी है। स्वास प्रगट कर बदन जलाता प्राण हरणको ये हरफनी है॥ लगाना दमका बहुत बुरा है पीते तनमें पड़े खिलम। विवेक०॥ थावर त्रसकर सहित भरा जल कुवास है ए निशान हुक्का। सुतोय परसे सुजीव मरते है पापका ए निधान हुक्का॥ रोग भिन्न हो जाय कहें मर पीते हैं हम यह जान हुक्का। शुद्ध औषधि करो ग्रहण तुम अशुचि दूर करिये जान हुक्का। सीख सुगुरुकी यही रूपचन्द त्यागो जल्द मत करो चिलम। विवेक०॥

७८ नेमि ब्याह।

(विनोदीलाल कृत सवैया।)

मौर धरो शिर दूलहके कर कंकण बांध दई कस डोरी। कुंडल काननमें झलकें अति भालमें लाल विराजत रोरी॥ मोतीनकी लड़ शोभित है छवि देखि लजें वनिता सब गोरी। लाल विनोदीके साहिबको मुख देखनको दुनियां उठ दौरी॥ १॥ छत्र फिरे शिर दूलहके तब बारत रत्न शिवादेवी मैया। कृष्ण हुते बल-

भद्र उते कर ढोरत चमर चले दोऊ भैया ॥ भूप* समुद्र विजय सब संग चले वसुदेव उछाह करैया । लाल विनोदके साहिबकी वनिता सब ही मिलि लेत बलैया ॥ २ ॥ गौंड़े गये जब नेम प्रभू पशु पक्षिन खेंच पुकार करी है । नाथसे नाथनके प्रतिपाल दयाल सुनो विनती हमरी है ॥ बन्दि पड़े बिललायं सबै बिन कारण विपदा आनि परी है । पूछत लाल विनोदीके साहिब सारथी क्यां इन बन्दि भरी है ॥ ३ ॥ सारथीने कर जोड़ कह्यो सुन नाथ इन्हें जु बिदारेंगे अब । यादव संग जुरे सबरे तिन कारण ये सब मारेंगे अब ॥ इनके बच्चा बनमें बिलपें इनको वे आज संघारेंगे अब । ताते तुमसे फर्याद करें हमरो गति नाथ सुधारेंगे अब ॥ ४ ॥ बात सुनी उतरे रथसे पशु पक्षिनकी सब बन्दि छुड़ाई । जावो सबै अपने थलको हमरो अपराध क्षमा करो भाई॥ धृक् है ऐसो जीनो जगमें तबही प्रभु द्वादश भावना भाई । देव लोकान्तिक आय गये जिन धन्य कहैं सब यादव राई ॥ ५ ॥ प्रभु तो बिन ऐसी कौन करे औ को जगमें यह बात विचारे । कौन तजे सुत बन्धु वधू अरु को जगमें ममता निर्वारे ॥ को वसु कर्मनि जीत सके अरु आप तरे अरु औरन तारे । लाल विनोदके साहबने यश जीत लयो जग जीतन हारे ॥ ६ ॥ नेम उदास भये जबसे कर जोड़के सिद्धका नाम लयो है । अम्बर भूषण डार दिये शिर मौर उतारके डार दयो है । रूप धरों मुनिका जब ही तब ही चढ़िके गिरिनारि गयो है । लाल विनोदीके साहिबने तहां पंच महाव्रत योग लयो है ॥ ७ ॥ नेमकुमारने योग लयो जब होनेको सिद्ध करी मन इच्छा । या भवके सुख जान अनित्य सो आदर

एक उद्दण्डकी भिक्षा ॥ स्नेह तजो घरबार तजो नहीं भोग विला-
सनको मन शिक्षा। लाल विनोदीके साहिबके संग भूप सहस्र
लई तब दिक्षा ॥ ८ ॥ काहूने जाय कही सुनो राजुल तेरो पिया
गिरिनारि चढ़ो है। इतनी सुन भूमि पछार लई मानो तन सेती
जीव कढ़ो है ॥ सो उग्रसेनसे जाय कही सुन तात विधाता अनर्थ
गढ़ो है। लाज सबै सुध भूल गई पिय देखनको जु उछाह बढ़ो
है ॥ ९ ॥ लाड़ली क्यों गिरनारि चढ़े उस ही पति तुल्य सुधी वर
लाऊं। प्रोहितको पठावाऊं अभी बहु भूपरके सब देश ढुंढ़ाऊं ॥
व्याह रचों फिरिके तुम्हरो महि मण्डलके सब भूप बुलाऊं। लाल
विनोदीके नाथ बिना द्युतिवंतको कंत तुझे परणाऊं ॥ १० ॥
काहे न बात सम्हाल कहो तुम जानत हो यह बात भली है।
गालियां काढ़त हो हमको सुनो तात भली तुम जीभ चली है।
मैं सबको तुम तुल्य गिनों तुम जानत ना यह बात रली है। या
भवमें पति नेमि प्रभू वह लाल विनोदीको नाथ बली है ॥ ११ ॥
मेरा पिया गिरनारि चढ़ो सुन तात मैं भी गिरिनारि चढ़ोंगी।
संग रहों पियके वनमें तिन ही पियको मुख नाम पढ़ोंगी ॥ और
न बात सुहाय कछू पियकी गुणमाल हियेमें पढ़ोंगी। कंत हमारे
रचें शिवसे शिव थानको मैं भी सिवान चढोंगी ॥ १२ ॥ इति ॥

७६ लावनी।

धन्य दिवस धनि घड़ी आजकी जिन छवि नजर पड़ी। स्वपर
भेद बुधि प्रगट भई उर भर्म बुद्धि बिसरी ॥ टेक—नासिकाग्र है
दृष्टि मनोहर वर विराग सुथरी। आतम शुद्ध सुराजत मानो अनु-

भव सुरस भरी ॥ १ ॥ शांत्याकृति निरखत ही परकी आरति सर्व गरी । चिर मिथ्या तम नाश करनको मानो अमृत झरी ॥ २ ॥ वीतराग ताका सुहेतु सुनि मोह भुजग विसरी । पट भूषण विनवै सुन्दरता नाहीं रंक हरी ॥३॥ जाकी द्युति शत कोट चन्द्रने अद्भुत जग विस्तरी । तारक रूप निहारि देव छवि मानिक नमन करी ॥४॥

८० वेश्या कुटलाई

मन करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ टेक ॥ औषधि अनेक हैं सर्प डसेकी भाई । पर इसके काटे की नहिं कोई दवाई ॥ गर लगे बान तो जीवित हू रहि जाई । पर इसके नैनके बानसे होय सफाई ॥ है रोम रोम विष भरी करो ना यारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ १ ॥ यह तन मन धन हर लेय मधुर बोलीमें । बहुतोंका करै शिकार उमर भोलीमें ॥ कर दिये हजारों लोटपोट होलीमें । लाखोंका दिल कर लिया कैद चोलीमें ॥ गई इसी कर्ममें लाखों ही जमीदारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ २ ॥ हो गये हजारोंके बल वीर्य छारा । लाखोंका इसने वंश नाश कर डारा ॥ गठिया प्रमेह आतिशने देश बिगारा । भारत गारत हो गया इसीका मारा ॥ कर दिये हजारों इसने चोर और ज्वारी । है यही सकल दुर्गुणकी खानि हत्यारी ॥ ३ ॥ इसही ठगनीने मद्य मांस सिखलाया । सब धर्म कर्मको इसने धूर मिलाया ॥ और दया क्षमा लज्जाको मार भगाया । ईश्वर भक्तीका मूल नाश करवाया । हों इसके उपासक रौरवके अधिकारी । है यही० ॥ ४ ॥ वह नव-

युवकोंको नैन सैनसे खावे। और धनवानोंको चट्ट गट्ट कर जावे ॥ धन हरण करे फिर पीछे राह बतावे। करै तीन पांच तो जूते भी लगवावे ॥ पिटवा कर पीछे ल्यावै पुलिस पुकारी। है यही० ॥ ५ ॥ फिर किया पुलिसने खूब अतिथि सत्कारा। हो गई सजा मिला मजा इश्कका सारा ॥ जो झूठ होय तो सज्जन करो विचारा। दो त्याग झूठ करो सत्य वचन स्वीकारा ॥ अब तजो कर्म यह अति निन्दित दुखकारी। है यही सकल रोगोंकी खानि हत्यारी ॥६॥

८१ प्रतिमा चालीसी

दोहा—दुःख हरण सब सुखकरण श्रीजिन मुद्रासार। नित-प्रति वंदें भव्य जन नागा करें गंवार ॥१॥ प्रतिमा आगे विघ्नक्षय मङ्गल होय हजूर। जैसे आँधी मेटके घन वर्षें भरपूर ॥ २ ॥ दर्शन चिन्ता कोटि फल करते कोटा कोर। कोटा कोटी कोट पथ फल अनंत प्रभु ओर ॥३॥

चौपाई।

अब जो ढूंढ़िया करत है आन। प्रतिमा निन्दाचार विधान ॥
प्रथम अचेतन कृत्रिम दोय। एकेंद्री अरु आरम्भ होय ॥ ४ ॥

(उत्तर दोहा)—तासों जैनी कहत है उत्तर चार विचार।
सांच होय तो पूजियो तज झूंठा हंकार ॥ ५ ॥

(अचेतनका उत्तर) चौपाई।

वाणी श्रीजिनवरकी होय। पुद्गलमई अचेतन सोय ॥ तिनके सुनते प्रगटे ज्ञान। यूं प्रतिमा लख उपजे ध्यान ॥६॥ जिनवर अमर भये

शिव पाय। रहों अचेतन जड़मय काय ॥ सो पूजो वंदो सुर राय। बहुविधि नाचे गाय बजाय ॥७॥

(कृत्रिमका उत्तर) चौपाई।

उत्तम स्तवन अनेक प्रकार। ढाल वीनती आदिक सार॥
पढ़ते सुनते पुण्य बढ़ाय। ज्यों प्रतिमा तें निर्मल भाय ॥८॥

(एकेन्द्रका उत्तर—दोहा)

बनस्पती कागद कलम, स्याही अग्नि सुभाय।
एकेन्द्री पुस्तक प्रगट, क्यों मानो शिर नाय ॥९॥

(प्रश्नोत्तर दोहा)

पोथी पञ्चेन्द्री लिखे, ताते कही मनोज्ञ। प्रतिमा पञ्चेन्द्री घड़े सो क्यूं नांही योग्य ॥ १० ॥ पोथी ज्ञानी पढ़त है, ताते उपजे बोध। पूजा चरचो करत है, आरत रौद्र निरोध ॥११॥

(आरम्भका उत्तर) गीता छन्द।

जिन गर्भ होत नगर बनायो न्हवन जन्म कल्याणमें। तपमें करो वर्षा पहुपकी बाग सरवर ज्ञानमें। निर्वाण होत शरीर दाहा इन्द्र हरष सुरमें गया। यह पञ्चकल्याणक भक्ति कर एक अवतारी भया ॥ १२ ॥

(व्रतीको आरम्भका फल-चौपाई)

भरत समकिती गृह व्रत धार। सेना सहित नाग असवार॥
पूज्यो आदीश्वर जिनराय। अवधि ज्ञान पायो सुखदाय ॥ १३ ॥
भरत जाय कैलाश पहार। परे बहत्तर जिनग्रह सार॥ तामें धरे बहत्तर बिम्ब। मुक्त भये तजके जगडिम्ब ॥१४। श्रेणिक हो हाथी

असवार। महावीर पूजो जिनसार॥ बांध्यो शुभ तीर्थंकर गोत। आरम्भको फल प्रगट उद्योत ॥१५॥

दोहा—साधु बन्दने जात हो, जूती पहिन हमेश। राह पाप तुमको लगे, किधों साधुको लेश ॥ १६ ॥ जो पातक तुमको चढ़ै, क्यों जावो हो वीर। जो मुनिवरको लगत है, मने करे किन धीर ॥१७॥ पूजामें हिंसा सहल पुण्य अनन्त अपार। विष कनिका नहिं कर सके, सागर दोष लगार ॥ १८ ॥ पैसेका टोटा जहां, बढ़ता लाख किरोर। सो व्यापार करै नहीं, सोच कह्यो तज थोर ॥१६॥ चित्र लिखी नारी लखे मन गदला बहु हात। मूर्ति शांति जिनेशकी, देखे ज्ञान उद्योत ॥ २० ॥ यह बातें प्रगट सुनी, ज्वाब दियो नहिं जाय। हार मानके यूं कह्यो, हम नहिं माने भाय ॥२१॥

चोपाई—नाम थापना द्रव्यरु भाव। निक्षेपे हैं चार सुभाव ॥ तीनों मानत हो महाराज। थापन नहिं मानो किह काज ॥ २२ ॥ पैंतालीसों आगम माहिं। प्रतिमा पूजा है सब थाहिं ॥ सो तुम साधु सुनी सब लोय। नरभव सफल करो भ्रम खोय ॥२३॥ जीवा अभिगम ग्रन्थ मझार। सुरविज इन्द्र नामनेसार ॥ अकितम प्रतिमाकी बहु करी। पूजा भक्ति विनय बहु धरी ॥२४॥ उववाईमें कथन निहार। अंवड़ संन्यासी व्रत धार ॥ जिन पूजा बंदना सो करी। है कि नहीं तुम भाखो खरी ॥२५॥ ज्ञातृ कथामें देखो वीर। सती द्रौपदीने धर धीर ॥ कृत्रिम प्रतिमा पूजा करी। महा सतीमें सो गुण भरी ॥ २६ ॥ नाम उपाशक दशा प्रधान। दशश्रावकने क्रिया प्रधान ॥ परतीर्थी परदेवक रमे। निज तीरथ निजदेव सो रमें ॥२७॥ सूत्रकृतांग माहिं विस्तार। प्रतिमा भेजी अक्षयकुमार।

आर्द्रकुमार मीतको जान । तिसतें पायो सम्यक् ज्ञान ॥२८॥ सूत्र भगौती माहिं विचार । जंघा चारण विद्या चार ॥ अकितम प्रतिमा पूजा करी । महामुनीने थुतिरस भरी ॥

दोहा—इन्हैं आदि बहु शाखा हैं, तुम आगममें वीर ।
सांचीके झूठी कहो पक्षपात तज धीर ॥ ३० ॥

(प्रतिमा मानी तिसका वचन) दोहा ।

प्रतिमा दर्शन योग्य है, दीप चढ़ावन वीर ।
दीप धूप फल फूल वरु चन्दन अक्षत धीर ॥ ३१ ॥

(उत्तर) दोहा—आठो आरम्भके किये, गरा स्वर्ग जे जाहिं ।
तिनकी कथा प्रसिद्ध है, जिन-आगमके माहिं ॥ ३२ ॥

(पूजा फल) कवित्त ।

नीरके चढ़ाये भवनीर तीर पावे जीव चंदन चढ़ाये चंदसेवे दिन रात है । अक्षत सों पूजते न पूजे अक्षदुख जाको फूलन सो पूजे फूल जातमें न जात है ॥ दीजे नैवेद्य ताते लीजे निर्वेदपद दीपक चढ़ाये ज्ञान दीपक विकसात है । धूपके खेयते भ्रमदौर धूप जाय जैसे फल सेती मोक्ष फल अर्घ अघघात है ॥ ३३ ॥

सवैया—साधुहुंकी पूजातें हजार गुणा फल जिन जिनते हजार गुणा फल पूजा सिद्ध को ॥ सिद्ध तें हजार गुण फल पूजा प्रतिमाकी तिहुंकाल दाता आठो नवो निधिसिद्धिको ॥ शांत मुद्रा देख साधु अरहन्त सिद्ध भये प्रतिमा ही कर्ता है पांचो पद वृद्धिकी । करे न बखान सिद्ध होनको है यही ध्यान मोक्षफल देय कौन बात स्वर्ग ऋद्धिकी ॥ ३४ ॥

(कुण्डली) छन्द— चूल्हा चक्की ऊखली नीर बुहारी पञ्च ।

छट्टा द्रव्य उपावना छहों कार्य अघसंच ॥ हरण इन्होंके पाप अर्थ षटकर्म बखानूं। जिन पूजा गुरु सेव पढ़त समय तप दान ॥ सबमें पहिले प्रात उठत पूजा सुख मूला । कर पूजा जिनराज काज तज चक्की चूल्हा ॥ ३५ ॥

सवैया—धन्य जिन भवन करे हैं सोभी धन्य बिम्ब धरे दोनों निस्तरें वह संघई कहावई । कोऊ पूजा करे जाय कोऊ न्हौन देखे आय गन्धोदक पाय लाय आनन्द बढ़ावई ॥ कोई द्रव्य लावे कोई पढ़े कोई नमे ध्यावे कोई छत्र चामर सिंहासन चढ़ावई । कोई नाचे गावे वा बजावे भक्तिको बढ़ावे पुण्य तीन लोकमें न पूजा सम पावई ॥ ३६ ॥

दोहा—तीन लोक तिहुंकालमें, पूजा सम नहिं पुन्य ।
ग्रहवासीको प्रात हो बिन पूजा घर सुन्य ॥ ३७ ॥

अड़िल्ल—ढूंढक मतके शास्त्र उक्त बातें कही । निज मत पोषा नाहीं न परनिंदा गही ॥ समझे सज्जन सत असाय न मूढसों । ज्ञान हियेमें नाहिं लगे हैं रूढ़ सों ॥ ३८ ॥

दोहा—थोरासा यह कथन है । लेहु बहुत कर मान ।
नित प्रति पूजा कीजिये, यह परभव सुखदान ॥ ३६ ॥

चौपाई—दिल्ली तख्त वरुन परकाश । सत्रहसै इक्यासी मास ॥
जेठ शुक्ल कुरचन्द उदोत द्यानत प्रगट्यो प्रतिमा जोत ॥ ४० ॥

मूढ़ दशा सवैया ।

ज्ञानके लखन हारे विरले जगत् माहीं ज्ञानके लिखनहारे जगत्में अनेक हैं । भाषे निरपक्ष बैन सज्जन पुरुष कोई दीसत बहुत जिन्हें वचनकी टेक हैं । चूक परे रिस खात ऐसे जीव बहु

भ्रात और अचूक थोरे धरे जो विवेक हैं। ज्ञाता जन थोरे मूढ़-मति बहुतेरे नर जाने नहिं ज्ञान सर कूप कैसे भेक हैं।

पांचवां अध्याय।

८२ समुच्चय चतुर्विंशति जिनपूजा

छंद कवित्त—वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपास जिनराय। चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासपूज्य पूजित सुरराय॥ विमल अनंत धरम जस उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय। मुनिसुव्रत नमि नेमि पास प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय॥१॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र अवतर, अवतर, संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्॥

अष्टक—मुनि मनसम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंधभरा। भरि कनक कटोरी धीर, दीनों धार धरा॥ चौबीसों श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही। पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही॥१॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय॥ जलं०॥ गोशीर कपूर मिलाय, केशररंग भरी। जिन चरनन देत चढ़ाय, भव आताप हरी॥ चौबीसों०॥ २॥ ओं ह्रीं वृषभादि वीरान्तेभ्यो भवताप विनाशनाय॥ चंदनं०॥ तंदुल सित सोमसमान, सुन्दर अनियारे। मुकता फलको उनमान, पुञ्ज धरों प्यारे॥ चौ०॥३॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् ॥ वर कंज कदंब करंड, सुमन सुगंध भरे। जिन अग्र धरौं गुनमंड, काम कलंक हरे ॥ चौ० ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ मनमोहन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने। रस पूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने ॥ चौ० ॥ ५ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय ॥ नैवेद्यं ॥ तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगे। सब तिमिरमोह छै जाय, ज्ञानकला जागे ॥ चौ० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय ॥ दीपं ॥ दश गंध हुताशनमाहिं, हे प्रभु खेवत हो। मिस धूम करम जरि जांहि, तुम पद सेवत हों ॥ चौ० ॥७॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय ॥ धूपं ॥ शुचि पक्व सरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायौ। देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौ० ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये ॥ फलं नि० ॥ जलफल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करौं। तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ॥ चौ० ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादि चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं ॥

जयमाला।

दोहा—श्रीमत तीरथनाथ पद, माथ नाय हितहेत।
गावों गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत ॥ १ ॥

छंद—जय भवतम भंजन जन मन कंजन; रंजन दिन मनि स्वच्छ करा। शिवमग परकाशक अरिगन नाशक, चौबीसों जिनराज वरा ॥ २ ॥

छंद पद्धरी—जय रिषभदेव रिषिगन नमंत। जय अजित

जीत वसु अरि तुरंत । जय संभव संभय करत चूर । जय अभिनंदन आनंद पूर ॥ ३ ॥ जय सुमति २ दायक दयाल । जय पद्म पद्मद्युति तन रसाल ॥ जय जय सुपास भव पाशनाश । जय चंद्र चंद्र तन दुति प्रकाश ॥ ४ ॥ जय पुष्पदन्त दुति दंत सेत । जय शीतल शीतल गुणनिकेत ॥ जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज । जय वासव पूजित वासुपुज्ज ॥ ५ ॥ जय विमल विमल पद देनहार । जय जय अनंत गुणगन अपार ॥ जय धर्म धर्म शिवशर्म देत । जय शांति शांति पुष्टी करेत ॥ ६ ॥ जय कुंथ कुंथवादिक रखेय । जय अर जिन वसुअरि छय करेय ॥ जय मल्लि मल्ल हत मोह मल्ल । जय मुनिसुव्रत व्रत सल्ल दल्ल ॥ ७ ॥ जय नमि नित वासव नुत सपेम । जय नेमनाथ वृष चक्रनेम ॥ जय पारसनाथ अनाथ नाथ । जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ॥ ८ ॥

घत्ता छंद—चौबीस जिनंदा आनंद कन्दा पापनिकंदा सुखकारी ।
तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा, वासववंदा हितधारी ॥ ९ ॥

ओंह्रीं श्रीवृषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सोरठा—भुक्तिमुक्ति दातार, चौबीसौं जिनराज वर ।
तिनपद मन वचधार, जो पूजैं सो शिव लहैं ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

८३ श्रीचंद्रप्रभजिनपूजा ।

चारुचरन आचरन, चरन चितहरन चिहनचर । चंदचंद्रतन चरित, चंदथल चहत चतुर नर ॥ चतुक चन्ड चकचूरि, चारि चिद चक्र गुनाकर । चञ्चल चलित सुरेश, चूल नुत चक्र धनु-

रहर ॥ चर अचरहितू तारनतरन, सुनत चहकि चिरनन्द शुचि। जिनचंदचरन चरच्यो चहत, चित चकोर नचि रचि रुचि ॥ १ ॥

दोहा—धनुष डेढ़ सौ तुंग तन, महासेन नृपनंद।
मातुलछमनाउर जये, थापों चंदजिनंद ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेंद्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट् ॥

अष्टक—गङ्गाहदनिरमलनीर, हाटकभृङ्गभरा। तुम चरन जजों वरवीर, मेटो जनमजरा ॥ श्रीचंदनाथदुति चंद, चरनन चंद लगै मनवच तन जजत अमन्द, आतमजोति जगै ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं। श्रीखण्डकपूर सुचङ्ग, केशररङ्ग भरी। घसि प्रासुकजलके सङ्ग, भव आताप हरी ॥ श्री० ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामि। तन्दुलि सित सोम समान, सोले अनियारे। दिय पुञ्ज मनोहर आन, तुम पद तर प्यारे ॥ श्री० ॥ ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान। सुरद्रुमके सुमन सुरङ्ग, गन्धित अलि आवै। तासों पद पूजत चङ्ग, कामबिथा जावै श्री० ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनेंद्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं। नेवज नानापरकार, इंद्रियबलकारी। सो लै पद पूजों सार, आकुलता हारी ॥ श्रीचंद्रप्रभजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं। तम भञ्जन दीप संवार, तुम ढिग धारतु हों। मम तिमिरमोह निरवार, यह गुन धारतु हों ॥ श्री० ॥ ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेंद्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं। दशगन्धहुताशनमाहि, हे प्रभु खेवतु हों। मम दुष्ट करम जरि जांहि, यातैं सेवतु हों। श्री० ॐ ह्रीं श्रीचन्द्र-

प्रभजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं। अति उत्तमफल सु मंगाय, तुम गुन गावतु हों। पूजों तनमन हरषाय, विघन नशावतु हों। श्री० ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं। सजि आठो दरव पुनीत, आठों अङ्ग नमों। पूजों अष्टमजिन मीत, अष्टम अवनि गमों श्री०। ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेंद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं॥

पञ्चकल्याणक।

छन्द तोटक—कलि पञ्चमचैत सुहात अली। गरभागम मङ्गल मोद भली। हरि हर्षित पूजन मातु पिता। हम ध्यावत पावत शर्मसिता॥ १॥ ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय अर्घं। कलि पौष इकादशि जन्म लयो। सब लोक विषै सुखथोक भयो सुर ईश जजे गिरशीश तबै। हम पूजत हैं नुत शीश अबै॥२॥ ॐ ह्रीं पौष कृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय अर्घं। तप दुद्धर श्रीधर आप धरा। कलि पौष इग्यारसि पर्व वरा॥ निज ध्यानविषै लवलीन भये। धनि सो दिन पूजत विघ्न गये॥ ३॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय अर्घं। वर केवलभानु उद्योत कियो। तिहुं लोक तणों भ्रम मेट दियो॥ कलिफाल्गुण सप्तमि इंद्र जजे॥ हम पूजहिं सर्व कलङ्क भजे॥ ४॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्ण सप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घं। सित फाल्गुण सप्तमी मुक्ति गये॥ गुणवन्त अनन्त अबाध भये॥ हरि आय जजे तित मोद-धरे॥ हम पूजत ही सब पाप हरे॥५॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घं।

जयमाला।

दोहा—हे मृगांकअंकितचरण, तुम गुण अगम अपार।

गणधरसे नहिं पार लहिं तौ को वरनत सार ॥१॥
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरे अति उमगाय।
तातैं गाऊं सुगुण तुम तुमही होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धरि (१६ मात्रा)

जय चन्द्र जिनेन्द्र दयानिधान। भवकानन हानन दवप्रमान ॥ जय गरभजनम मङ्गल दिनंद। भवि जीवविकाशन शर्मकंद ॥ ३ ॥ दशलक्षपूर्वकी आयु पाय। मनवांछित सुख भोगे जिनाय ॥ लखि कारण ह्वै जगतैं उदास। चिन्त्यों अनुप्रेक्षा सुखनिवास ॥ ४ ॥ तित लौकांतिक बोध्यो नियोग। हरि शिविका सजि धरियो अभोग ॥ तापै तुम चढ़ि जिनचन्द्रराय। ताछिनकी शोभाको कहाय ॥ ५ ॥ जिन अङ्ग सेत सित चमर ढार। सित छत्र शीस गलगुलकहार ॥ सित रतनजड़ित भूषण विचित्र। सित चन्द्रचरण चरचैं पवित्र ॥ ६ ॥ सित तन द्युति नाकाधीश आप। सित शिविका कांधे धरि सुचाप ॥ सित सुजस सुरेश नरेश सर्व। सित चितमें चिन्तत जात पर्व ॥ ७ ॥ सित चन्दनगरतें निकसि नाथ। सित वनमें पहुंचों सकलसाथ ॥ सितशिलाशिरोमणि स्वच्छछांह। सित तप तित धार्यो तुम जिनाह ॥ सित पयको पारण परमसार। सित चन्द्रदत्त दीनों उदार ॥ सित करमें सो पयधार देत। मानों बांधत भवसिंधुसेत ॥६॥ मानों सुपुण्यधारा प्रतच्छ। तित अचरज पन सुर किय ततच्छ ॥ फिर जाय गहन सित तपकरंत। सित केवल ज्योति जग्यो अनन्त ॥ लहि समवसरण रचना महान। जाके देखत सब पापहान ॥ जहं तरु अशोक शोभै उतंग। सब शोकतनो चूरै प्रसंग ॥११॥ सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहात। मनु मन्मथ तज

हथियार जात ॥ बानी जिन मुखसों खिरत सार । मनुतत्वप्रकाशन मुकुर धार ॥१२॥ जहं चोसठ चमर अमर दुरन्त । मनु सुजस मेघ झरि लगिय तंत । सिंहासन है जहं कमल जुक्त मनु शिवसरवरको कमलशुक्त ॥१३॥ दुंदुंभि जितबाजत मधुर सार । मनु करमजीतको है नगार ॥ शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण मनु रतन तीन त्रयताप हर्ण ॥१४॥ तनप्रभातनो मण्डल सुहात । भवि देखत निजभव सात सात ॥ मनु दर्पणद्युति यह जगमगाय । भविजन भव मुख देखत सुआय ॥१५॥ इत्यादि विभूति अनेक जान । बाहिज धीसत महिमा महान ॥ ताको वरणत नहिं लहत पार । तौ अंतरङ्गको कहै सार ॥१६॥ अनअंत गुणनिजुत करि विहार । धरमोंपदेश दे भव्य तार ॥ फिर जोगनिरोध अघाति हान । सम्मेद थकी लिय मुकतिथान ॥१७॥ वृन्दावन बन्दत शीश नाय । तुम जानत हो मम उर जु भाय ॥ तातैंका कहौं सु बार बार । मनवांछित कारज सार सार ॥१८॥

छन्द घत्तानन्द ।

जय चन्द्रजिनन्दा आनंदकंदा, भवभयभञ्जन राजै हैं ॥ रागादिकद्वंदा हरि सब फंदा, मुकतिमांहि थिति साजै हैं ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद चौबोला—आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचन्द जजैं ॥ ताके भवभवके अघ भाजैं, मुक्तसार सुख ताहि सजैं ॥२०॥ जमके त्रास मिटैं सब ताके, सकल अमंगल दूर भजैं । वृन्दावन ऐसो लखि पूजत, जातैं शिवपुरि राज रजैं ॥ २१ ॥

[इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

८४ शांतिनाथ जिनपूजा ।

या भवकाननमें चतुरानन, पापपनानन घेरि हमेरी। आतम-जान न मान न ठान न, बान न होन दई सठ मेरी ॥ तामद भानन आपहि हो, यह छान न आन न आननटेरी। आन गही शरना-गतको अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ॥

हिमगिरिगतगंगा-धार अभंगा, प्रासुक संगा भरि भृंगा। जरमरनमृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥ श्रीशांति-जिनेशंनुत शक्रेशं वृष चक्रेशं चक्रेशं चक्रेशं। हनि अरि चक्रेशं हे गुनधेशं: दयामृतेशं मक्रेशं ॥ १ ॥ वर बावनचंदन, कदलीनंदन, घन आनंदन सहित घसों। भवताप निकन्दन, एरा नन्दन, वंदि अमंदन, चरनवसों ॥ श्रीं० ॥ २ ॥ ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिने-न्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं ॥ हिमकरकरि लज्जत, मलयसु-सज्जत, अच्छतजज्जत, भरिथारी। दुखदारिद गज्जत, सदपदसज्जत, भवभय भज्जन, अतिभारी ॥ श्रीं० ॥ ३ ॥ ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ-जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ मंदार सरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं, मलयभरं भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदन-विदारी, धीरधरं ॥ श्रीं० ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ पकवान नवीने, पावन कीने, षटर-समीने, सुखदाई। मनमोदनहारे, छुधा विदारे, आगे धारे गुन-गाई ॥ श्रीं० ॥ ५ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं ॥ तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेयविकाशे

सुखरासे। दीपक उजियारा यातैं धारा, मोहनिवारा, निज भासे॥ श्री० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥ चन्दन करपूरं, करि वरचूरं, पावक भूरं माहि जुरं, तसु धूम उड़ावैं; नांचत जावै, अलि गुंजावै, मधुरसुरं ॥ श्री० ॥ ॥ ७ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति ॥ बादाम खजूरं दाड़िम पूरं, निंबुक भूरं, लै आयो। तासों पद जज्जों, शिवफल सज्जों, निजरसरज्जों, उमगायो ॥ श्री० ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं। वसु द्रव्य संवारी तुम ढिग धारी, आनंदकारी, दृगप्यारी। तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी शरनारी ॥ श्री० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं ॥

पञ्चकल्याणक।

अलित सातय भादवं जानिये। गरभमंगल तादिन मानिये ॥ सचि कियो जननी पद चर्चनं हम करैं इत ये पद अर्चनं ॥ १ ॥ ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमण्डिताय अर्घं नि० ॥ जनम जेठ चतुर्दशि श्याम हैं। सकलइन्द्र सुआगत धाम है॥ गजपुरे गज साजि जबै तबै। गिरि जजे इत मैं जजि हों अबै ॥ २ ॥ ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्म मंगलप्राप्ताय अर्घं ॥ २ ॥ भव शरीर सुभोग असार हैं। इमि विचार तबै तप धार हैं ॥ भ्रमर चौदश जेठ सुहावनी। धरमहेत जजों गुन पावनी ॥२॥ ओं ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दश्यां निः क्रमहोत्सवमण्डिताय अर्घं ॥ ३ ॥ शुकलपौष दशैं सुखराश है। परम केवल ज्ञान प्रकाश है ॥ भवसमुद्रउधारन देवकी। हम करैं नित मंगल सेवकी ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं पौषशुक्ल-

दशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय अर्घं ॥ ४ ॥ असित चौदस जेठ हने अरी। गिरि समेद थकी शिव-तिय वरी सकल इन्द्र जजैं तित आइकें। हम जजैं इत मस्तक नाइकें ॥ ५ ॥ ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्ण-चतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय अर्घं ॥ ५ ॥

छन्द—शान्ति शान्तिगुनमंडिते सदा। जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा ॥ मैं तिन्हें भगत मंडिते सदा पूजि हों कलुषहंडिते सदा ॥१॥ मोच्छहेत तुमही दयाल हो। हे जिनेश गुनरत्नमाल हो। मैं अबे सुगुनदाम ही धरों। ध्यावते तुरित मुक्ति-ती वरों ॥ २ ॥

छंद पद्धरि (१६ मात्रा)

जय शांतिनाथ चिद्रूपराज। भवसागरमें अद्भुत जहाज ॥ तुम तजि सरवारथसिद्ध थान। सरवारथजुत गजपुर महान ॥१॥ तित जनम लियौ आनंद धार। हरि ततछिन आयो राजद्वार ॥ इन्द्रानी जाय प्रसूतथान। तुमको करमें ले हरष मान ॥ २ ॥ हरि गोद देय सो मोदधार। सिर चमर अमर ढारत अपार ॥ ॥ गिरि-राज जाय तित शिलापांडु। तापै थाप्यौ अभिषेक मांड ॥ २ ॥ तित पंचम उदधितनों सु वार। सुर कर कर करि ल्याये उदार ॥ तब इन्द्र सहसकर करि अनंद। तुम सिर धारा ढार्‌यौ सुनंद ॥ ४ ॥ अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर। भभ भभ भभ घघ घघ कलश शोर ॥ द्रुमद्रुम द्रुमद्रुम बाजत मृदंग। झन नन नन नन नन नूपुरङ्ग ॥ ५ ॥ तन नन नन नन नन तनन तान। घन नन नन घंटा करत ध्वान ॥ ताथेई थेई थेई थेई थेई सुचाल। जुत नाचत नावत तुमहि भाल ॥ ६ ॥ चट चट चट अटपट नटत नाट। झट झट झट हट नट शट विराट ॥ इमि नाचत राचत

भगत रंग। सुर लेत जहां आनंद संग ॥७॥ इत्यादि अतुल मंगल सुठाट। तित बन्यौ जहां सुरगिरि विराट पुनि करि नियोग पितु सदन आय। हरि सौंप्यौ तुम तित वृद्धि थाय ॥ पुनि राजमाहिं लहि चक्ररत्न। भोग्यौ छ खंड करि धरम जत्न ॥ पुनि तप धरि केवलरिद्धि पाय ॥ भवि जीवनकों शिव मग बताय ॥ शिवपुर पहुंचे तुम हे जिनेश। गुनमंडित अतुल अनन्त भेष ॥ मैं ध्यावतु हौं नित शीश नाय। हमरी भवबाधा हरि जिनाय ॥ १० ॥ सेवक अपनों निज जान जान। करुना करि भौभय भान भान ॥ यह विघन मूल तरु खंड खंड। चितचिन्तित आनंद मंड मंड ॥ ११ ॥

घत्तानंद छंद (मात्रा ३१)।

श्रीशान्ति महंता, शिवतियकंता, सुगुन अनंता, भगवन्ता। भवभ्रमन हनंता सौख्य अनंता, दातारं तारनवन्ता ॥ १ ॥ ओं ह्रीं शांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

छंद रूपक सवैया (मात्रा ३१)।

शांतिनाथजिनके पदपंकज, जो भवि पूजै मनवचकाय। जनम जनमके पातक ताके, ततछिन तजिकैं जाय पलाय ॥ मनवांछित सुख पावै सो नर, बाँचै भगति भाव अति लाय। तातैं वृन्दाबन नित वंदै, जातै शिवपुरराज कराय ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत।

८५ श्रीपार्श्वनाथपूजा

वर सुरग आनतको विहाय सुमातवामा सुत भये। विस्वसेनके पारस जिनेसुर चरन तिनके सुर नये ॥ नव हाथ उन्नत

नन बिराज उरग लच्छन अतिलशं। थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठहु करम मेरे सब नशे ॥१॥ ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्र! अत्र अवतर संवौषट। ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट।

छन्द नाराच।

क्षीर सोमके समान अंबुसार लाइये हेमपात्र धारकेसु आपको चढ़ाइये॥ पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा। दीजिये निवास मोक्ष, भूलिये नहीं कदा॥१॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

चन्दनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये। आप चर्न चर्च मोह तापको हनीजिये॥ पार्श्वनाथदेव सेव आपकी करूं सदा दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा॥२॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥

फेन चन्दके समान अक्षते मगाइकें। पादके समीप सार पूजको रचाइकें। पार्श्वनाथ०॥३॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा॥

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइये। धारचर्नके समीप कामको नसाइये। पार्श्वनाथ०॥४॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पंनिर्वपामीति स्वाहा॥

घेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सने। आप चर्नचर्चते क्षुधादि रोगको हने। पार्श्वनाथ०॥५॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

लाय रत्न दीपको सनेह पूरके भरू। वातिका कपूरवारि मोह

ध्वांतको हरूं । पार्श्वनाथ० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ धूप गंध लेयके सुअग्नि संग जारिये । तास धूपके सुसंग अष्टकर्म वारिये ॥ पार्श्व-नाथ० ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति० ॥ खारिकादि चिभेटादि रत्नथालमें भरूं । हर्ष-धारके जजूं सुमोक्ष सुक्खकूं वरूं ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति० ॥ नीर गंध अक्षतं सुपुष्प चारु लीजिये । दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तैं जजीजिये ॥ पार्श्व० ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामी० ॥

पंच कल्याणक—चाल छन्द ।

शुभआनत स्वर्ग विहाये । वामा माता उर आये । वैशाखतनी दुति कारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं वैशाखकृष्ण-द्वितीयायां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा-मीति स्वाहा ॥ १ ॥ जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता । श्यामातन अद्भुत राजै । रवि कोटिक तेजसु लाजै ॥ ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्व-नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावना भाई । अपने कर लोंच सुकीना । हम पूजें चर्न जजीना ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याण-मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥ कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ॥ तब वृष उपदेश जु कीना; भवि जीवनको सुख दीना ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-

चतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ सित श्रावन सातैं आई; शिवनारि वरी जिनराई। सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोच्छ कल्याना ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तमीदिने मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

कवित्त—पारसनाथ जिनेंद्रतने वच पौनभखी जरते सुनपाये। कियो सरधान लियो पद आन भये पद्मावती शेष कहाये। नामप्रताप टरे संताप सुभव्यनको शिव शर्म दिखाये। हो विश्वसेनके नंद भले गुन गावतु हैं तुमरे हरखाये ॥ १ ॥

दोहा—केकीकंठ समान छवि; वपु उतंग नव हाथ।
लच्छन उरग निहार पग, बंदूं पारसनाथ ॥ २ ॥

छन्द मोतीदाम।

रची नगरी षट मास अगार। बने चहुं गोपुर शोभ अपार ॥ सुकोट तनी रचना छवि देत। कंगूरनपै लहके बहुकेत ॥ ३ ॥ बनारसकी रचना छवि सार। करी बहु भांति धनेश तयार ॥ तहां विश्वसेन नरेन्द्र उदार। करैं सुख वाम सुदे पटनार ॥ ४ ॥ तज्यो तुम आनत नाम विमान। भये तिनके वर नंदन आन ॥ तबै पुर इन्द्र नियोग जु आय। गिरिंद करी विधि न्होन सु जाय ॥ ५ ॥ पिता घर सौंपि गये निज धाम। कुबेर करै वसु जाम सुकाम ॥ बढ़ै जिन दौज मयङ्क समान। रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥ ६ ॥ भये जब अष्टम वर्ष कुमार। धरे अणुव्रत्त महा सुखकार ॥ पिता जब आन करी अरदास। करौ तुम व्याह वरौ मम आश ॥ ७ ॥

करू' तब नाहिं कहे जगवन्द। किये तुम काम कषाय जु मंद॥
चढ़े गजराज कुमारन संग। सुदेखत गंगतनी सु तपङ्ग॥ ८॥
लख्यो इक रंग करे तप घोर। चहुं दिशि अग्नि बले अति जोर॥
कही जिननाथ अरे सुन भ्रात। करे बहु जीव तनी मत घात॥९॥
भयो तब कोपि कहै कित जीव। जले तब नाग दिखाय सजीव॥
लख्यो इह कारन भावन भाय। नये दिव ब्रह्म ऋषीश्वर आय॥१०॥
तबै सुर चार प्रकार नियोगि। धरी शिविका निज कंध मनोगि॥
कियो वन माहि निवास जिनन्द। धरे व्रत चारित आनंदकंद॥१२॥
गहे तहं अष्टमके उपवास। गये धनदत्त तने जु अवास॥ दियो पयदान महासुख सार। भई पण वृष्टि तहां तिहं बार॥१२॥ गये तब कानन माहि दयाल। धर्यो तुम योग सबै अघ टाल॥ तबै वह धूम सुकेत अज्ञान। जयो कमठाचरको सुर आन॥१३॥ करै नभगौन लखे तुम धीर। सुपूरव बैर विचार गहीर॥ कियो उपसर्ग भयानक घोर। चली बहु तीक्षण पौन झकोर॥ १४॥ रह्यो दशहुं दिशिमें तप छाय। लगो बहु अग्नि लखी नहिं जाय॥ सु रुंडनके विन मुण्ड दिखांय। परै जल मूसलधार अथाय॥ १५॥
तबै पदमावतिकंथ धनिंद। गहे जुग आय तहां जिनचन्द॥ भग्यो तब रंक सुदेखत हाल। लह्यो तब केवल ज्ञान विशाल॥ १६॥
दियो उपदेश महा हितकार। सुभव्यनि बोधि समेद पधार॥ सुवर्णहभद्र सुकूट प्रसिद्ध। वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध॥ १७॥
जजूं तुम चर्न दुहू कर जोर। प्रभु लखिये अब हो मम ओर॥
कहै 'बखतावर रत्न' बनाय। जिनेश हमें भव पार लगाय॥१८॥

घत्ता—जै पारस देवं सुरकृतसेवं बंदत चर्न सु नागपती।

कल्याके धारी पर उपगारी शिवसुखकारी कर्म हर्ता ॥ १६ ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छन्द—जो पूजे मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही। ताके दुःख सब जाय भीति व्यापे नहिं कितही॥ सुख संपति अधिकाय पुत्रमित्रादिक सारे। अनुक्रमते शिव लहै 'रत्न' इमि कहैं पुकारे॥२

इत्याशीर्वादः।

८६ महावीर स्वामी

(पं० रामचरितजी उपाध्याय)

जय महावीर जिनेन्द्र जय, भगवन! जगत्रक्षा करो।
निज सेवकोंके भव-जनित सन्तापको कृपया हरो॥
हैं तेजके रवि आप, हम अज्ञान तममें लीन हैं।
हैं दयासागर आप हम, अति दीन हैं बलहीन हैं॥१॥
दानी न होगा आप सा, हम सा न अज्ञानी कहीं।
अवलम्ब केवल हैं हमारे, आप हो दूजा नहीं॥
भवसिन्धुके भव भ्रमरमें हम डूबते हैं हे प्रभो।
झटपट सहारा दीजिये, हम ऊबते हैं हे प्रभो॥ २ ॥
गिरिको अंगूठेसे हिलाया आपने तो क्या किया॥
यदि इन्द्रके मदको मिटाया आपने तो क्या किया॥
यदि कमलको गजने हिलाया तो प्रशंसा क्या हुई।
यदि सिंहने गीदड़ भगाया तो प्रशंसा क्या हुई॥ २ ॥
अपकारियोंके साथ भी उपकार करते आप थे।
मनमें न प्रत्युपकारकी कुछ चाह रखते आप थे॥

बड़वाग्नि वारिधिके हृदयको है जराता नित्य ही।
पर जलधि अपनाये उसे है क्रोध कुछ करता नहीं ॥४॥
शुभ स्वावलम्बनका सुपथ सबको दिखाया आपने।
दृढ़ आत्मबलका मर्म भी सबको सिखाया आपने ॥
समता सभीके साथ सब दिन आपकी रहती रही।
इस हेतु सेवा आपकी निश्छल महो करती रही ॥ ५ ॥
यद्यपि अहिंसा क्रम सभीने श्रेष्ठ मत माना सही।
पर वास्तविक उसके विधानोंको कभी जाना नहीं ॥
किस भांति करना चाहिये जगमें अहिंसा धर्मको।
अतिशय सरल करके दिखाया आपने इस मर्मको ॥६॥
करके कृपा यदि अवतरित होते न भू पर आप तो।
मिटता नहीं संसारका त्रयकालमें त्रय ताप तो ॥
जितकाम हो निष्काम हो अरु शांतिके सुखधाम हो।
योगीश भोगोंसे रहित गुणहीन हो गुणग्राम हो ॥ ७ ॥
जय जय महावीर प्रभो! जगको जगाकर आपने।
संसारके हिंसा-जनित भयको भगाकर आपने ॥
इस लोकको सुरलोकसे भी परम पावन कर दिया।
अज्ञान-आकर विश्वको प्रज्ञानका सागर किया ॥८॥*

८७ मेरी भावना।

(बाबू जुगलकिशोरजी कृत)

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते, सब जग जान लिया,
सब जीवोंको मोक्षमार्गका निस्पृह हो उपदेश दिया।

* सरस्वतीसे उद्धृत।

बुद्धि, वीर जिन, हरि, हर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति-भावसे प्रेरित हो यह चित्त उसीमें लीन रहो ॥१॥
विषयोंकी आशा नहीं जिनके, साम्य-भाव धन रखतेहैं,
निज-परके हित साधनमें जो निशदिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुखसमूहको हरते हैं ॥ २ ॥
रहे सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहे।
नहीं सताऊं किसी जीवको, झूठ कभी नहिं कहा करूं,
परधन-बनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं ॥ ३ ॥
अहंकारका भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं,
देख दूसरोंकी बढ़तीको कभी न ईर्षा भाव धरूं।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूं,
बने जहांतक इस जीवनमें औरोंका उपकार करूं ॥ ४ ॥
मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जीवोंसे नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणास्रोत बहे।
दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणत हो जावे ॥५॥
गुणीजनोंको देख हृदयमें मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बने जहांतक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे।
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषोंपर जावे ॥६॥

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षों तक जीऊं या मृत्यु आज ही आजावे।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे,
तो भी न्याय मार्गसे मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥७॥
होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे,
पर्वत-नदी-श्मशान-भयानक अटवीसे नहिं भय खावे।
रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन, दृढ़तर बन जावे,
इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें सहनशीलता दिखलावे ॥८॥
सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न घबरावे,
बैर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे।
घरघर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्मफल सब पावें ॥९॥
ईति-भीति व्यापे नहिं जगमें वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजाका किया करे।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांतिसे जिया करे,
परम अहिंसा-धर्म जगतमें, फैल सर्वहित किया करे ॥१०॥
फैले प्रेम परस्पर जगमें मोह दूरपर रहा करे,
अप्रिय कटुक-कठोर शब्द नहिं कोई मुखसे कहा करे।
बनकर सब 'युग-वीर' हृदयसे देशोन्नति रत रहा करें,
वस्तुरूप विचार खुशीसे सब दुख-संकट सहा करें ॥११॥

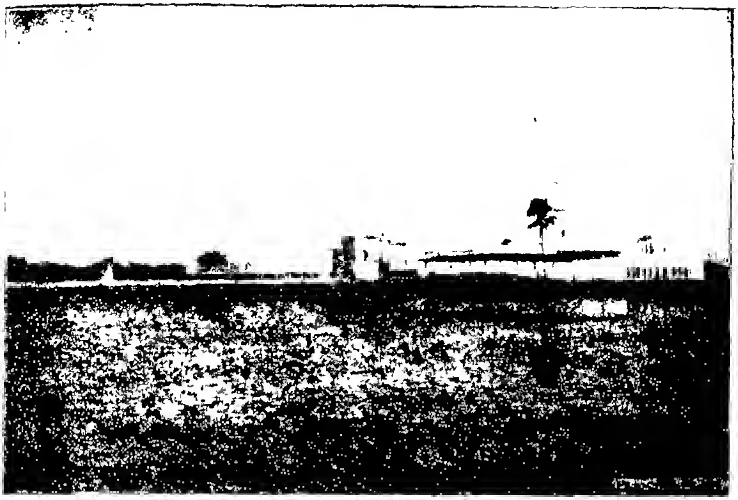

श्रीपावापुरजी

श्रीगिरनारजी

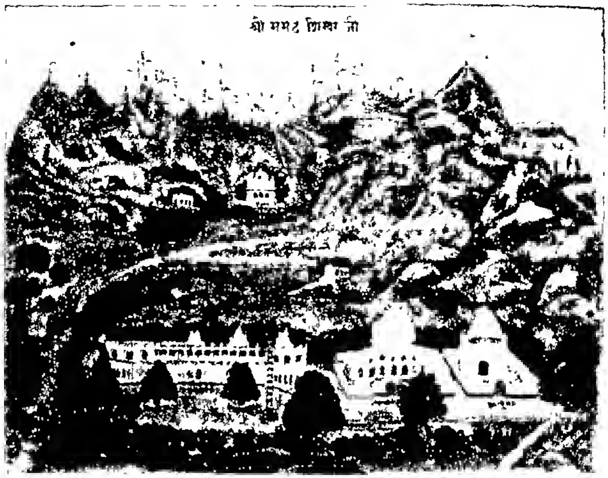

श्रीसम्मेद् शिखरजी सिद्धक्षेत्र ।

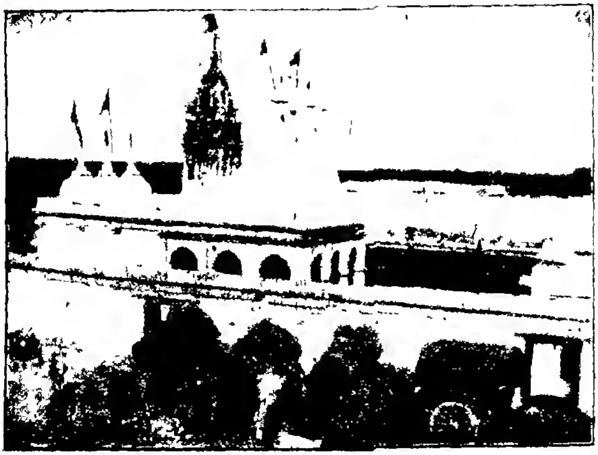

श्रीभातकुलीजी अतिशय क्षेत्र ।

काशीनिवासी कविवर वृन्दावनविरचित

८८ अरहंतपासाकेवली।

दोहा—श्रीमत वीरजिनेशपद, वंदों शीस नवाय। गुरु गौतमके चरन नमि, नमों शारदा माय ॥ १ ॥ श्रेणिक नृपके पुण्यतें, भाषी गणधरदेव। जगतहेत अरहंत यह, नाम 'केवली' सेव ॥ २ ॥ चंदनके पासाविषै, चारों ओर सुजान। एक एक अक्षर लिखौ, श्री 'अरहंत' विधान ॥ ३ ॥ तीन वार डारो तबै, करि वर मंत्र उचार। जो अक्षर पांसा कहै, ताको करौ विचार ॥ ४ ॥ तीन मंत्र हैं तासुके, सात सात हो वार। थिर ह्वै पांसा ढारियो, करिकै शुद्ध उच्चार ॥ ५ ॥ जानि शुभाशुभ तासुतें, फल निज उदय-नियोग। मन प्रसन्न ह्वै सुमरियो, प्रभुपद सेवहु जोग ॥ ६ ॥

प्रथममंत्र—ओं ह्रीं श्रीं बाहुबलि लंबबाहु ओं क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षै क्षों क्षः ऊर्द्ध भुजा कुरु कुरु शुभाशुभं कथय कथय भूतभविष्यति-वर्तमानं दर्शय दर्शय सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि स्वाहा।

(प्रथम मंत्र सात वार जपना)

दूसरा मंत्र—ओं ह: ओं स: ओं क्ष: सत्यं वद सत्यं वद स्वाहा।

(सात वार जपना *)

तीसरा मंत्र ओं ह्रीं श्रीं विश्वमालिनि विश्वप्रकाशिनि अमोघ-वादिनि सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि राह्यहि राह्यहि विश्वमालिनि स्वाहा।

* मन एकत्र करि विनयसहित अपना अभिप्राय बिचारकरि श्री अर्हन्त भगवान के नामाक्षरका पांसा तीन बेर डालना। जो जो वरन पड़ैं तिसो वरनका भेद पाके फलका निश्चय करना। जिन मार्गमें यह बड़ा निमित्त है। इसे हमने लिखा है कि अपना वा पराया उपकार होय। (वृन्दावन)

(यह मंत्र भी सात वार जपना)

अथ अकरादि प्रथम प्रकरण ।

अअअ । जो परे तीन अकार । तो जानि सुखविस्तार । कल्याणमंगल होय । सम्मान बाढ़ै सोय ॥ १ ॥ लक्ष्मी वसै नित धाम । व्यापारमें बहु दाम । परदेशमें धनलाभ । संग्राममें जय-लाभ ॥ २ ॥ नृपद्वारमें सम्मान । संकष्ट कटै प्रमान । सब रोग अरु दुर्भागि । ततकाल जावे भागि ॥ ३ ॥ प्रगटै सकल कल्यान यामें न संशय जान । यह महा उत्तम अंक । फल अटल जासु निसंक ॥ ४ ॥

चौपाई छंद ।

अअर । दोअकारपर परै रकार । मध्यम फल है सुनो विचार । जो कारज चिंतो मनमाहिं । सो तौ शीघ्र होनको नाहिं॥५॥ पूरब पाप उदय है जानि । सोई करत काजकी हानि । तातें इष्टदेव आराधि । कुलदेवीको पूजि सुसाधि ॥ ६ ॥ तासु जजन आराधन किये । किंचित् होय काज सुनि हिये । मध्यम प्रश्न पर्यौ है येह । मति मानो यामें संदेह ॥ ७ ॥

पद्धड़ी छंद ।

अअहं । जहँ दो अकारके अंत माहिं । हंकार परै सो शुभ कहाहिं । धन धान्य समागम लाभ होय । परदेश गयो जो वहै सोय ॥८॥ नो मनवांछितकी सिद्धि जान । अरु मित्र बंधुसों प्रीति मान । तत्काल शत्रुको होय नास । सब विघ्न मिटैं अनयास तास ॥ ९ ॥ घरमें प्रगटै मंगलविभूति । तब पुण्यप्रभाव प्रबल अकूत । यह उत्तम प्रश्न सुनो पुमान । यों कहत केवली गुननिधान ॥ १०॥

अअत । जहं दुइ अकार पर है तकार । तहं शुभ फल जानो है उदार । बहु मित्र मिलें भू वस्त्र ताहि । अरु पुत्र पौत्र है सदनमाहिं ॥११॥ रोगीको रोग विनाश होय क्रूरग्रहको निग्रह भि होय । जो मित्र बंधु परदेश होय, घर आवै अति मन मुदित सोय ॥ १२ ॥ कुलवृद्धि तथा सज्जन महान । तिनसों नित प्रीति बढ़ै सयान । दिन दिन अति लाभ मिलै पुनीत । यह प्रश्न केवली कहत प्रीति ॥ १३ ॥

अरअ । दुइ अकारके मध्य रकार । पांसा परै तासु सुविचार। उत्तम फलकारी यह होत । नित नव मंगल होत उदोत ॥१४॥ पूरब जो धन गयो नसाय । सो सब तोहि मिलैगो आय । राजा करहिं बहुत सनमान । बसन भूमि हय देवहिं दान ॥१५॥ भ्राता मित्र समागम होहि । सब विधि सदनमहोच्छव तोहि । सकल पापको होय विनाश । धर्मवृद्धि नित करै प्रकाश ॥ १६ ॥

अरर । जो अरर प्रगटै वरन । तो सकल मंगल करन । धन लाभ सूचत येह । दशदिश विमल जस तेह॥१७॥जहं जाय वह मतिवंत । तहं लहै पूजा संत । है इष्टबंधुमिलाप । उद्यमविषै श्री आप ॥ १८ ॥ जल चोर पावक मरी । ये सकहिं नहिं कछु करी । सब शत्रु कांजे हान । प्रगटै सकल कल्यान ॥ १९ ॥ जिनधरमके परभाव । यह जान है सद्भाव । उत्तम कहत फल अंक । उत्तम गहो निःशंक ॥ २० ॥

अरहं । अरहं परे जो वरन । सौभाग्यसंपतिकरन । तो जो मनोरथ होइ । अनयास पूजै सोय ॥२१॥ कछु क्लेश है कममाहिं

तसु रंच ही भय नाहिं। निज इष्ट पूजहु जाय। सब विघन जांय नसाय ॥ २२ ॥ मन सोच तजि थिर होहि। आनन्द मङ्गल तोहि। सब सिद्धि ह्वै है काज। अरहं कहत महाराज ॥ २३ ॥

अरत । जब अरत पांसा ढरै। तब सकल सुख विस्तरै। तोहि तिया प्रापति होय। सुत होय पौत्रपि होय ॥२४॥ कुलगोत सब सोभंत। तब भाल तिलक लसंत। जहँ जाहुगे तुम मीत। तहँ लहहु पूजा नीत ॥२५॥ जनमध्य हो तुम केम। ताराविषै शशि जेम। यह रुचिर प्रश्न सुजान। मनमें धरो प्रभुध्यान ॥२६॥

अहंअ । जो अहंअ छबि देय। तो सुनहु पूछक भेय। पहिले कछुक दुख होइ। फिर नाश ह्वै है सोय॥२७॥धनलाभ दिन दिन बढ़ै। अरु सुजनसंगम चढ़ै। जो काम चिंतहु वृद्ध। सो सकल ह्वै है सिद्ध ॥ २८ ॥

अहंर । जब अहंर सु दरसाय। तब अरथलाभ कराय। जसलाभ पृथिवीलाभ। यह देख परत सुलाभ (?) ॥२६॥ राजादि बंधूवर्ग। सब करहिं आदर सर्ग। भ्रातादि इष्टमिलाप। धन-धान्य आगम व्याप ॥३०॥ व्यवहार अरु परदेस। सब ओर उत्तम तेस। सब सोच संशय हरहु। शुभ तुमहिं धीरज धरहु ॥३१॥

अहंहं ।जो अहंहं है अंक। सो कहत है फल बंक। दीखै न कारज सिद्ध। यह काज तोर सुबुद्ध॥३२॥धन नाश ह्वै हैं तोहि। तन क्लेस पीड़ा होहि। व्यापारमें धनहान। परदेश सिद्धि न जान ॥३३॥ तिहिहेत कर भविजीव। जिन जजन भजन सदीव। जप दान होम समाज। तब होइ कछु इक काज ॥३४॥

अहंत । अक्षर अहंत परै । तब सकल शुभ विस्तरै । कल्याणमंगल धाम । सुन भ्रात मिलहि मुदाम॥३५॥ उद्यमविषै धनधान्य । संपतिसमागम मान्य । रनकेविषै सब जीत । तोहि लाभ निश्चय मीत ॥ ३६ ॥ अरु होय बंदीमोच्छ । निरबाध है यह पच्छ । तुव ह्वै मनोरथ सिद्ध । मति मान संशय वृद्ध ॥ ३७ ॥

अतअ । यह अतअ भाषत वरन । कल्याणमंगलकरन । उद्यममें श्रीविस्तरन । सब विघ्नग्रहभयहरन ॥ ३८ ॥ सुतपौत्रलाभ निहार । वांछित मिलै मनिहार । दिन आठयें कछु तोहि । कछु श्रेष्ठ भावो होइ ॥ ३९ ॥

अतर । जो अतर अक्षर ढरै । तो सकल मंगल करै । वाजित्र सदन सुनाय । घरमाहिं अनंद बधाय ॥ ४० ॥ प्रियबंधुचिंता होहि । तसु मोद मंगल होहि । धनधान्यसंजुत होय । घर शीघ्र आवे सोय ॥ ४१ ॥ गजवाजि रथआरूढ़ । भूपन वसनजुत प्रूढ़ । संजुत अमित कल्यान । निरभै मिलै भयभान ॥४२॥

अहंत । अतह ढरै जो अंक । सो अशुभ कहत निशंक । नहिं लाभ दीखत भाय । धन हाथहूको जाय ॥ ४३ ॥ ह्वै इष्टबंधुवियोग । तियतनयसंपतियोग । राजादि चोररु मरो । ह्वै शत्रु सबही घरो ॥ ४४ ॥ तिहि विघननाशन हेत । कर देवजजन सुचेत । तिहि पुण्यके परभाव । घर होइ मंगलचाव ॥४५॥

अतत । जइं अतत आवै वरन । धनलाभ तहं बुधि वरन । संपदा सुखविस्तरन । सब सिद्धि वांछित करन ॥ ४६ ॥ प्रिय इष्ट बंधू मिलन । सब लाभ दिन प्रति दिनन । उद्यम तथा रनथान

तुव ध्रुव विजय बुधिवान ॥ ४७ ॥ वादानुवादमंभार । तुव जीत होय उदार । यामें न संशय करहु । शुभ जानि धीरज धरहु ॥४८॥

अथ रकारादि द्वितीय प्रकरण ।

रअअ । आदिरकार अकार दुइ, जब ये प्रगटें वर्न । तब धनसंपतिलाभ बहु, सुजनसमागम कर्न ॥ ४९ ॥ सोना रूपा ताम्र बहु, वसनाभरन सुरत्न । प्राप्त होय निश्चय सकल, चिंतित चित जु तजत्न ॥ ५० ॥ अन्तरैन दीखै सुपन, माला सुमन सुजान । हयगजरथ आरूढ़ अरु, देवागमन विमान ॥ ५१ ॥

रअर । आदि रकार अकार पुनि, तापर परै रकार । सुनि पूछक तैं तासु फल, है अभिमतदातार ॥ ५२ ॥ देश प्रजाको लाभ है, खेती वर व्यापार । धन पावै परदेशमें, घरमें सब सुखसार ॥५३॥ संगर संकट घोरमें, कुलदेवी सुखदाय । करै सहाय प्रसाद तसु, सब विधि सिद्धि लहाय ॥ ५४ ॥

रअहं । आदि रकार अकार पर, हं प्रगटै जब आय । भयकारी धनहानि यह, क्लेश अशेष कराय ॥५५॥ यह कारज कर्तव्य नहिं, लाभ नाहिं या माहिं । बांधवमित्र वियोगता, अस यह सगुन कहाहिं ॥ ५६ ॥ जहं कहुं जाहु विदेश तहं सिद्ध न होवे काज । तातैं थिर ह्वै कछुक दिन, सुमिरहु श्रीजिनराज ॥ ५७ ॥

रअत । रअत परै पाँसा कहै, मग धन लूटहिं चोर । द्रव्यहानि होवहि बहुत, अशुभ फलहि चहुं ओर ॥ ५८ ॥ नाव बुभै पावक लगै, रोगरु कष्ट कुजोग । कियो काज विनशै सकल, अशुध करमके भोग ॥५९॥ तातैं शोक न कीजिये, भावीगति बलवान । थिर ह्वै निशदिन सुमिरिये, कृपासिंधुभगवान ॥ ६० ॥

ररअ । ररअ अंक आवे जहां तब ऐसो फल जान । तव चित चंचल चपल अति, सुनि प्रेच्छक मतिमान ॥ ६१ ॥ तैं चाहत अर्थागमन,मूलनाश तसु होइ । राजदण्ड चौराग्निभय,तनदुख तोहि बहोइ ॥६२॥ तनय तिया बांधवनिसों ह्वै है तोहि वियोग । अबतैं निसरे वरसमहं, कटहिं सकलदुखभोग ॥ ६३ ॥

ररर । तिहुं रकारको फल सुनो, मनवांछित फलदाय । धरा धान्य धनलाभ तोहि,मिलहि वस्तु सब आय॥६४॥तिया तनय सुत वधू धन, इष्टबंधुसंजोग । कृत उत्तम कल्याण तोहि, मिलैं सकल संभोग ॥ ६५ ॥ महालाभ उद्यमविषैं, सदन तथा परदेश । सुफल काज तुव होय नित, यामें भ्रम नहिं लेश ॥६६॥

ररहं । दुइ रकारपर हं परै,तब मनवांछित होय । शोभनीक सुखसंपदा,सहज मिलावै सोय॥६७॥मंगल दुंदुभि होइ धुनि, अरथलाभ बहु तोहि । मिलि है वसुधा देश पुर, यह प्रतिभासत मोहि ॥६८॥ जौन काज तुम चित धरउ, तुरित होइ है तौन भूपति अति आनन्द करै, तिन प्रति मंगलभौन ॥६९॥

ररत । ररत वरन यह कहत हैं, सुन पूछक चित लाय । परतियकी अभिलाषतैं; किये अनर्थ उपाय ॥ ७० ॥ अरथनाश तातैं भयो, अरु विग्रह घरमाहिं । राजदंड तैंने सहे, यामें संशय नाहिं ॥ ७१ ॥ तातैं परतिय परिहरहु, शुभमारग पग देहु । ब्रह्मचरजजुत प्रभु भजो, नरभवको फल लेहु ॥ ७२ ॥

रहंअ । रहंअकार आवै जहां, तहं उत्तम फल जान । वनितापुत्रधनागमन, बंधुसमागम मान ॥७३॥ अरथलाभ जसलाभ

पुनि, धर्मलाभ है तोहि। रन विदेश व्यापारमें, विजय तुरंतहि होहि ॥ ७४ ॥

रहंर । रहंर आवै जबहिं तब, विषम काज जिय जान। उद्यम सुफल न होय कछु, घर बाहर हैरान ॥७५॥ शत्रु बहुत सुख कतहुं नहिं; तातैं तजि यह काज। जग सुख निष्फल जानि जिय, भजो सदा जिनराज ॥ ७६ ॥

रहंहं । हंजुग आदिरकार कह, सुनिये पूछनहार। अशुभ उदय फल अशुभ है,जानहु निज उर धार॥७७॥ मित विश्वास करो हिये, मित्र बंधु जिय जानि। शत्रु होय ये परिनवहिं करहिं वित्तकी हानि ॥ ७८ ॥ धनचिन्ता नित करत हो, सो सुपनेहु नहिं होइ। धरम चिन्ति कुल देव जजि, तातै कछु सुख जोइ ॥ ७९ ॥

रहंत । रहं तासुपर प्रगट त;सुनि फल पूछनहार। याको फल मैं कहा कहों: सब सुखको दातार ॥ ८० ॥ विद्या लाभ कवित्तता; सुफल लाभ व्यवहार। वनिता सुतको लाभ है, द्रव्यलाभ व्यापार ॥ ८१ ॥ मित्रबंधु वसनाभरण, सहित समागम होइ। वहहु सुखित परिवार सों, कुलदेवीकृत जोइ ॥८२॥

रतअ । रत अ वरन पांसा कहत, तुव सम्मुख सौभाग। अरथागम कल्याणकर, असन सुखद अनुराग ॥ ८३ ॥ मंत्रजंत्र औषधविधै, सकल सिद्ध ध्रुव होइ। चित चिन्तित पुत्रादि सुख, निश्चय पैहैं सोइ ॥ ८४ ॥

रतर । रतर वरन पासा कहत, सुनि पूछक गहि मौन; उद्यममें लक्ष्मी वसै, ज्यों पंखेमें पौन॥८५॥ तातैं उद्यम करहु तुम,

अरथलाभ तहं होइ। तनय धरनि धरनो मिले, नृप सनमाने सोय ॥ ८६ ॥ वसन मिले घोड़ा मिले, अनायास है काज। शुभ-मंगल तोहि सर्वदा, सेयें श्रीजिनराज॥ ८७ ॥

रतहं। रतहं कहत प्रचारिकै, सुनि पूछक दे कान। पहिले कष्ट बहुत सहे, सो अब गये सुजान॥८८॥धनकी चिंता रहत-चित, सो सब पूरन होहि। वनिता सुत बसनाभरन निश्चल मिलिहैं तोहि॥८६॥ आधिव्याधि दुख नसहिं सब, चिंता करहु न कोय। देवधर्म परसादसों, काज सफल सब होय॥६०॥

रतत। रतत वरन सुनि पूछक,सकल सुफल तुव काम। मनवांछित धनसंपदा, पै हो अति अभिराम॥६१॥ जो कारज चितवत रहो, अनायास सो होय। मनमें मति संशय करो, धर्मबृद्धि फल जोय॥६२॥ शिवहित चाहत तप धरन, तामहं है है सिद्धि। गहो जिनेश्वर कथित तप ज्यों होवै सुखवृद्ध॥६३॥

अथ हंकारादि तृतीय प्रकरण।

हं अअ। हं अअ वर्न परै जहँ आई। तासु सुनो फल है दुचिताई। सूचत कष्टरु चित्त विनाशं। लोकविषैं निरआदरभासं॥६४॥ संगरमें नहिं जीत दिखावे। उद्यममें नहिं लाभ लहावे। जाहु जहां कछु कारज हेनी। सिद्ध न होय तहां तुम सेती॥६५॥ त्याग करो यह कारज यातें। सेवहु श्र जिनधर्मसुधा तें। धर्म विना सुखको नहिं लेखा। श्रीभगवान कहैं जिन देखा॥६६॥ रोग निवार अरोग शरीरं। पुष्ट महा बलपौरुष धीरं। चाहत हो परदेश सिधारो। होय मिलाप तहां शुभ सारो॥६७॥

हंअर । हंअर भाषत है सुख सारा । होय मनोरथ सिद्ध तुमारा । अर्थ तिया सुखमंगलताई । आनंदसंजुत बांधव भाई । ॥९८॥ उद्यममें धन प्रापति जानो । देशविदेश जहां मनमानो । रोगीको रुज जाय नसाई । बांधवमित्र मिलै सब आई ॥९९॥ देव अराधहु भाव लगाई । सो मनवांछित सिद्ध कराई । ज्यों बिनमूल पादपै जानो । त्यों बिनधर्म न आनंद पानो ॥१००॥

हंअर्हं । हं अरुहंमत्रि जत्र अकारं । तो सुनि पूछनहार विचारं । कोमल चित्त तुमार दिखाई । शत्रु सुमित्र गिनो सबनाई ॥ १०१ ॥ तासहितैं धन आप गंवायो । कालसुभाव नहीं लख पायो । है कलिकालकराल विचारे । तें अति साधु सुभाव सुधारे ॥१०२॥ जो कछु पूर्व भयौ धन हान । सो सब तोहि मिलै सुखदान है तुमको नित प्रापति आगे । निश्चय जान अर्थ अनुरागे ॥१०३॥

हं अत । हं अत आय जनावत तातैं । मंगल मंजु समाजसुयातैं । पुत्र सुमित्र समागम होई । देशारावन लाभ बहोई ॥१०४॥ धनकी चिन्ता करत हो, शीघ्रहि पैहो सोय । इष्ट पुत्र वनिता वसन, सफल प्रापती होय ॥ १०५ ॥ कुशव्याधि अब मिट गई, देव धरम परसाद । सुफल काज नित जानि जिय, भजहु जिनेसुरपाद ॥ १०६ ॥

हरअ । हंरअ आय दिखावत ऐसो । चिंतित काज सरै तुव तैसो ॥धान्यधनादिक लाभ दिखाई । कोरन देश दिशांतर जाई । ॥ १०७ ॥ भूप करै सन्मान तुम्हारा । देश धरा धन देइ उदारा ॥ प्रीति करै तुमसों सब कोई । यामहं संशय रंच न होई ॥ १०८ ॥

हंरर । हंरर अक्षर भाषत सांचा। तो मनमें उद्वेग उमाचा । वित्त कछू अब छीजइ भाई । पीछे होय सुखी अधिकाई ॥१०६॥ संपत संतत मित्र पियारे । होहि सदा तोहि मंगलकारे ॥ अर्थ बढ़ै घरमें सुखदाई । कीरति देशदिशंतर जाई ॥११०॥ श्री-जिन धर्मप्रभाव विचारो । है सब कारज सिद्ध तुमारो ॥ यामें संशय रंच न मानो । सेवहु श्रीजिनराज सयानो ॥ १११ ॥

हंरहं । मध्यरकार जहां छवि देई । हं जुग आदिरु अन्त परेई ॥ उत्तम लाभ लसै फल ताको । पुत्र विवाह भविष्यति जाको ॥ ११२ ॥ नारि मिलै घर संपत आवै । बैर मिटै हित प्रीति जनावै ॥ संगर बाद विवादमंझारी । होय विजय तुव आनंदकारी ॥ ११३ ॥ दीखत है शुभभाग तिहारो । यामें संशय रञ्च न धारो ॥ श्री जिनचन्दपदाम्बुज ध्यावो । ताकरि पूरण पुन्य कमावो ॥११४॥

हंरत । हंरत वर्न वखानत ऐसे । कारज सिद्ध लसै सब जैसे । उद्यममें लछमी चिरलाभं जुद्धरुजूत विजै तुम साजं ॥११५॥ लाभ लसैं सब ठौर तुमारे । हानि हमें नहिं दीखत प्यारे । किंचित सोच वसै मनमाहीं । तासु हमें कछु संशय नाहीं ॥११६॥ शीघ्र मिटै वह शोच तुमारा । ह्वै घर मङ्गल मंजुल सारा । श्रीजिनधर्म अराधहु जाई । संजम दान करो सुखदाई ॥११७॥

हंहंअ । हं जुग अन्त अकार उचारो । कारज सिद्ध समस्त तुमारो ॥ धामविषैं धन है अधिकाई । पुत्र सुपौत्र बढ़ैं सुखदाई ॥११८॥ बांधवमित्रसमागम सूचै । जो परदेश विषैं अविमूचौ (?) । संयत एकमंझार पियारे । है लछिलाभ तुमें अधिकारे ॥११॥ इष्ट

पदांबुज सेवहु जाई । सर्व मनोरथ सिद्ध कराई ॥ मङ्गल प्रश्न हिये रखि लीजे । श्रीजिनवैनसुधारस पीजे ॥ १२० ॥

हंहंर । हं जुग अन्त रकार पुकारे । मंगल मोद समस्त तुह्मारे ॥ पुत्रविवाह अवश्यक होऊ । जश विधान बनै कछु सोऊ ॥ १२१ ॥ तासु प्रसाद सु संपति भूरी । है धन धान्य वस्त्र परचूरी ॥ मङ्गलधाम बढ़ै अधिकाई । जाहु जहां तहं लाभ लहाई ॥ १२२ ॥ देव जजौ जपि दान करीजे । संजम होम सबै विधि कीजे ॥ पुन्य किये सुख संपति नाना । बालगुपाल सबै यह जाना ॥ १२३ ॥

हंहंहं । हं तिहुं आय परै जब पासा । है तहं मङ्गलमन्दिर खासा ॥ सर्व मनोरथ सिद्धि प्रकासै । अर्थ सुलाभ प्रजाजुत भासै ॥ १२४ ॥ भूमि मिलै रनमें जय पावै । उद्यममें बहु लच्छि कमावै ॥ बांधव मित्रनसों अति नेहं । रोपत है वरधर्म सुगेहं ॥ १२५ ॥ आनन्द सर्व भविष्यति तोही । यों प्रतिभासत है सुनि मोही ॥ कारज सिद्धि समस्त तुमारा । सेवहु धर्म लहो भव पारा ॥ १२६ ॥

हंहंत । हं जुग अन्ततकार दिखाई । उत्तम लाभ सबै तसु भाई ॥ चाहत हौ परदेश पधारे । है तहं सिद्धि मनोरथ प्यारे ॥ १२७ ॥ खेती वानिजमें सब ठाई । सर्व फलै मनवांछित भाई ॥ श्रीधनधान्य सुकंचन आदी । जे सुख सपति अर्थ अनादी ॥१२८॥ ते सब तोहि मिलैं मनमाने । देव गुरूपदभक्ति विधाने ॥ यों सुनि चित्तविषै थिर होई । श्रीजिनराज भजो भ्रम खोई ॥ १२९ ॥

हंतअ । हंतअ वरन परै जब पासा । तो सुनि अर्थ प्रतच्छ प्रकासा ॥ तें चितमें परसंपति चाहे । लोभ बढ़्यो ताहि देखत का है ॥१३०॥ तोष कियैं धन प्रापति होई, वेद पुरान पुकारत योंई ॥ लोभ निवारि करो सब चिंतं । भावि जु होय सो होवहि मिंतं ॥ ॥ १३१ ॥ जाय वितीतै जब कछु काला । अर्थ सुलाभ तबै तुव भाला ॥ यामैं संशय रंच न आनो । भाषत श्रीअरहंत प्रमानो ॥

हंतर । हंतर यों दरशावत आई । तो मनमें परवित्त बसाई ॥ चिंतत है सोइ प्रापति होई । ताकरि संपति आनि मिलोई ॥१३३॥ अर्थ समागम कीर्ति अनिद्या । प्रापति ह्वै तोहि सुन्दर विद्या ॥ जो कछु पूरब द्रव्य गंवायौ । सो सब आनि मिलै मन भायौ ॥ ॥ १३४ ॥ जो तुम कारज चेतहु प्यारे । सो सब होई सिद्धि तुमारे ॥ यों जिय जानि तजो दुचिताई । सेवहु श्रीपरमातम जाई ॥ १३५ ॥

हंतहं । हं जुगके मधि होइ तकारं । तासु सुनो फल पूछन हारं ॥ तो मनमें विपरीत लसो है । चोरि जूथकी ताप वसी है ॥ ॥ १३६ ॥ ता करिके दुःख पाप सहै हो । लोकविषैं अपकीर्ति लहै हो ॥ नास भयो जसरास तुमारो । यों लघु सीख सुनो उर धारो ॥ १३७ ॥ अन्य कछू करतव्य विचारो । तामहं वांछित सिद्ध तुमारो ॥ अर्थ बढ़ै धन धर्म बढ़ाई । यों दरसावत श्रीगुरु भाई ॥ १३८ ॥

हंतत । हंतत भाषत उत्तम तोही । जो मन वांछहु होवहि सोही ॥ मंगल धाम मिलै धन धान्यं । जाहु विदेश तहां बहु

मान्यं ॥ १३९ ॥ मंत्र सु जंत्ररु भेष जताई । सैन्य सुथंभन मोहन भाई ॥ और जिती जगमें वर विद्या । तोहि मिलैं भ्रम त्याग निषिद्या ॥ १४० ॥

अथ तकारादि चतुर्थ प्रकरण ।

तअअ । जहं तअअ वरन पासा ढरंत । तहं सुनि पूछक जो फल कहंत ॥ जो करहु देव पूजा पुनीत । तो पैहो अभिमत फल विनीत ॥ १४१ ॥ सुत पोत्र सुबद धन धान्य लाहु । यह मिलैं तोहि वांछित उछाहु ॥ व्यापारमाहिं बहु मिले दर्व । अरु जून विजय तैं लहै सर्व ॥ १४२ ॥ यामें मति चिन्ता मानु मित्त । निज इष्ट देव पद भजहु नित्त ॥ विन पुन्य नहीं सुख जगत माहिं । जिमि बीज बिना नहिं तरु लगाहिं ॥ १४३ ॥

तअर । जब तअर प्रगट होवे सुजान । तब मध्यम फल जानो निदान ॥ चित चाहहु वनिता पुरुष आदि । सो आस तजहु सुनि भेदवादि ॥ १४४ ॥ निजभावीवश ये मिलहि सर्व । परिवार कुटुंबादिक सुदर्व ॥ पहिले जो कछु धन भयो हान । सोऊ न मिले अब ही सयान ॥ १४५ ॥ कछु काल व्यतीत भये समस्त । है अथ लाभ तुमको प्रशस्त ॥ यह जान हिये निरधारवीर । भजि श्रीपति पद सब टरै पीर ॥ १४६ ॥

तअहं । तत्ता अकार हंकार आय । हे पूछक तोसों इमि कहाय ॥ दिनरात तोहि धनहेत चाह । मनमें यह वर्तत है कि नाह ॥१४७॥ सो पुन्य बिना कहु केम होय । हैं दिन तेरे अति नष्ट जोय ॥ कछु दिवस बितीत भये प्रमान । धनलाभ होय तोको निदान ॥१४८॥

तातैं जो सुख चाहहु विनीत। तो पुन्यहेत कर जतन मीत॥ जिनराजपदाम्बुजभृंग होय। अनअन्य शरण ह्वै सेव सोय॥

तअत—यह तअत कहत फल प्रगट आय। सुनि पूछक तैं मन मुदित काय॥ मन वांछित ह्वौ सो होय सिद्ध। परदेशतीर्थ-यात्रा प्रसिद्ध ॥१५०॥ इक मास व्यतीत भये प्रमान। तोहि अर्थ परापत ह्वै सुजान। अरु तन निरोगजुत पुष्ट होय। आनंद लहै संशय न कोय॥ १५१॥

तरअ—यह तरअ कहत डंका बजाय। धनचिन्ता तेरे मन बसाय। तैं कौन चहत परदेश गौन। यह जातहि कारज सिद्ध तौन॥ १५२॥ बहु वस्त्र आभरन अर्थ आद। तिय तनय लाभ ह्वै है अवाद॥ पितु मातु बंधुसौं मिलन होय। यह गुरुसेवा फल जान सोय॥ १५३॥ तातैं नित प्रति हे चतुर जीव। सुखकारन सेवो प्रभु सदीव। कल्यानखान भगवान एक। तिनको सुमिरो तजि कुमति टेक॥ १५४॥

तरर—यह तरर प्रकाशत प्रगट मित्त। सुनि पूछक तुव चित दुखित नित्त॥ तुव घर दरिद्र अति ही दिखाय। तातें नित चाहत धन उपाय॥ १५५॥ निशिवासर चिन्ता यही तोहि। किहि भांति होहि धनलाभ मोहि। वह तीन वरप जब बीत जाय। तब सब सुन्दरफल तोहि मिलाय ॥१५६॥ जो और काज मद धरहु तौन। है लाभ तासुमहं सुजसभौन। तातैं जो सुखकी धरहु चाह। तो नाहिं जिनेसुर सो निवाह॥ १५७॥

तरहं—तरहं अक्षर भाषत प्रतच्छ। कल्याणसंपदा स्वच्छ

लच्छ ॥ सब विघ्न निघ्न पलमाहिं होय। जिन धर्म प्रभाव सुजान सोय ॥ १५८ ॥ अरथागम अरु वर पुत्र होय। रनमहं तोहि जीति सकै न कोय। बांधवसह प्रीति बढ़ै अपार। घरमें नहिं कछु विग्रह लगार ॥ १५६ ॥ सब पापताप तेरो विलाय। नित धर्म बढ़ै आनंददाय। तातैं सुखहित है चतुरजीव। भगवान चरन सेवो सदीव ॥ १६० ॥

तरत—यह तरत कहत फल सुन विनीत। तुव मन धनकारन दुखित मीत। बहु दिनतैं सोच रहत शरीर। मन समाधान अब करहु वीर ॥१६१॥ मङ्गलमुदजुत धनलाभ होय। प्रियबंधुसमागम सहज सोय। परदेशगमन जो करहु तत्र। धनलाभ होहि सुखदाय जत्र ॥१६२॥ वादानुवादमें विजय जान। है सभ्यशिर-मणिशशि समान। यह मङ्गलीक शुभ सगुनराज। तैं जपि नित श्रीजिनमहाराज ॥१६३॥

तहंअ—त वरनपर ह' तापर अकार। जब प्रगटै तब सुनिये विचार। सब विघ्नमूल सङ्कट नशाय। जहं जाहु तहां वांछित मिलाय ॥१६४॥ धन धान्य वसन गो महिषि घोट। सब मिलहि तोहि हितहेत जोट। जात्रा तीरथ परदेश सार। रनरङ्ग शैल अरु उदधिपार ॥१६५॥ जहं जाहु तहां सब सुफलकाज। मनमें संदेह न करहु आज। यह पुन्यकल्पतरु-फल सुआन। भजि चरणकमल करुनानिधान ॥१६६॥

तहंर—त वरनपर ह' तापर रकार। ताको फल कटुक सुनो विचार। है दुःखक्लेश पुनि अर्थहानि। भयरोगव्याधि उपजै

निदान ॥१६७॥ सुत मित्र वियोग अशुभनियोग । पुनि जैहो कहुं तहं विपतभोग । तुव सदनमाहिं बरतत कलेश । कलिहारी नारी कुटिलभेश ॥१६८॥ यह पाप तोहि दुख देत आय । अब तोप गहो मनवचनकाय । अरहन्तदेवसों करहु प्रीति । जिमि मिले सकल सुख सहजरीति ॥१६९॥

तहंहं—तत्तापरहं हं ढरै आय । तब सुनि पूछक फल चित्त लाय । रनजूतविवादविषैं कदाप । मति जाहु केवली कहत आप ॥ १७० ॥ तहं गये हानि हूं विजय नाहिं । है कलेशकठिन निहचै कहाहिं । यह दैवीदोष लखै सुजान । धर्मार्थवस्तुको करत दान ॥ १७१ ॥ उद्वेग कलह तुव सदनमाहिं । सुत बंधु मित्र अरि सम लखाहिं । सब पाप उदय यह जानि लेहु । दुख हेत धरमसों करहु नेहु ॥१७२॥

तहंत—तत मध्य परै हंकार पास । तब मध्यम प्रश्न करै प्रकाश । जो मनमें वांछा करहु मित्त । नहिं सिद्ध होइ सो कुदिन कित्त ॥ १७३ ॥ मति खेद करो अघउदय जान । भावीगत अमिट प्रबल प्रमान । मति मरन चेत जड़बुद्धि त्याग । सुख चहसि तु करि प्रभुसों सुराग ॥१७४॥

ततअ—जब ततअ बरन प्रगटै अकोप । तब शुभफल कहत निशान रोप । तोहि महा सौख्यको लाभ होय । धनधान्यसमागम मिलै सोय ॥१७५॥ राजा दे वसनाभरन घोट । व्यापारमाहिं धन लाभ पोट । दुहिता विवाह सुतजनम संग । मङ्गल सब तोकहं है अभङ्ग ॥१७६॥

ततर— यह ततर वरन पासा भनंत। आनन्द सदा ध्रुव तोहि सन्त। सुत बंधु धरा धनधान्यलाह। परदेश जाहु तहं अति उछाह ॥१७७॥ बहु मित्रबन्धुसों होय प्रीति। भय शत्रुजनित सब ह्वै वितीत। गो महिष अश्व द्वारे बन्धाय। यामें न मोहि संशय दिखाय ॥१७८॥

ततहं। ततहं अक्षर तोहि कहत एहु। भो पूछक तू उद्यम करेहु। तहं होहि लाभ तोको प्रसिद्धि। चितचिन्तित सब विधि होय वृद्धि ॥ १७९ ॥ तीरथ हिण्डन पूजन विधान। सब ह्वै है तेरे मनसमान। रोगीको रोग विनाश होय। भोगीको भोग मिलै सु जोय ॥१८०॥ मनमें मति खेद करो पुमान। तोहि होय सकल कल्याणखान। नित देवधर्म गुरु ग्रन्थ सेव। मनवांछित सुखसंपदा लेव ॥१८१॥

ततत। तीनों तकार जब उदय होय। तब अकल सकल फल कहत सोय। मनवांछित कारज सिद्ध जानि। कल्याणकारनी प्रश्न मानि॥१८२॥घर पुत्र पौत्रको जनम होय। धन आगम सुखद विवाह सोय। पहिले जो अरथ गयो विनास। सो आन मिलै अनयास पास ॥ १८३ ॥ बैरीको वैर मिटै समस्त। तोहि मिलहिं मित्र बांधव प्रशस्त। नित धर्मवृद्धि ह्वै है सयान। सर्वथा जान संशय न आन ॥१८४॥

कविनामकुलनामादि।

दोहा—**लालविनोदीने** रची, संस्कृतवानीमाह।
वृन्दावन भाषा लिखी, कछु इक ताकी छाहँ ॥१८५॥

भूल चूक उर छिमा करि, लीजो पण्डित शोध ।
बालबुद्धि मोहि जानिकै, मति कीजो उर क्रोध ॥१८६॥
श्रीमतवीरजिनेशपद, बंदों बारम्बार ।
बिघ्नहरन मंगलकरन, अशरन शरन उदार ॥१८७॥
धरमचंद के नन्दको, **बृन्दावन** है नाम ।
अग्रवाल गोती जगत, गोइल है सरनाम ॥१८८॥
काशीवासी तासुने, भाषा भाषी एह ।
जिनमतके अनुसार करि, श्रीजिनवरपदनेह ॥१८९॥
सम्बतसर विक्रमविगत, चन्द रन्ध्र दिग चन्द ।
माघकृष्ण आठें गुरू, पूरन जयतिजिनंद ॥१९०॥ ॥ इति ॥

८६ श्रीसम्मेदशिखरमाहात्म्य

दोहा ।

स्वयंसिद्ध परमातमा, सहजसिद्ध हैं सार ।
तिनको बंदों भावसों, निश्चय करि निरधार ॥१॥
वैरभाव सब छोड़करि, निजस्व-भावमें लीन ।
होय होय मुकती गये, समझ देख परवीन ॥२॥
सब तीर्थनमें सार है, श्रीसमेदगिरिराज ।
बोस जिनेश्वर और बहु, मोक्ष गये मुनिराज ॥३॥
ताकी कथनी वारता, जिन आगम अनुसार ।
कहता हूं कुछ वचनसों, सुनहु भविकजन सार ॥

इस मध्यलोकमें एक लाख योजनका जम्बूद्वीप है, उसके बीचमें एक सुदर्शन मेरु है, उसकी दक्षिण दिशामें एक भरतनामक क्षेत्र है, उसमें छह खंड हैं उनमें यह आर्यखण्ड अधिक प्रसिद्ध है, मगधदेशकी राजगृह नगरीमें एक श्रेणिक नामका राजा अपनी रानी चेलना सहित राज्य करता था।

राजगृही नगरीके पास विपुलाचल, उदयगिरि, सोनागिरि, रत्नागिरि और विहारगिरि नामके पांच पर्वत हैं, विपुलाचल पर्वतपर श्री १००८ महावीर भगवानका समवसरण आया, वनमालीने राजाके समीप जाकर निवेदन किया कि, महाराज! विपुलाचलपर त्रिलोकीनाथ वर्द्धमान भगवानका समवसरण आया है, सुनकर राजा इतना प्रसन्न हुआ कि उसने अपने शरीरपरके सर्व आभूषण उतारकर मालीको दे दिये, और सिंहासनसे उतरकर सात पैंड़ (कदम) परवतकी ओर चलकर साष्टांग नमस्कार किया और शहरमें घोषणा करा दी कि, महावीर भगवानका समवसरण आया है इसलिये सब लोग दर्शन पूजनके लिये चलो और आप स्वयं भी हाथीपर आरूढ होकर वन्दनाके निमित्त चला, दूरहीसे समवसरण देख हाथीसे उतर पड़ा पश्चात समीप जाकर भावपूर्वक वन्दना की मनुष्योंके कोठेमें बैठकर भगवान्‌की दिव्यध्वनि द्वारा धर्मामृतका पान किया, तत्पश्चात् अवसर पाकर हाथ जोड़ खड़ा होकर पूछा, भगवन्! श्रीऋषभदेव, अजितनाथ आदि तीर्थङ्कर किस क्षेत्रसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं और आपका निर्वाण कहांसे होगा? इसके सिवाय पूर्वकालमें जो अनन्तानन्त चौबीसी मोक्ष गई हैं, सो किन २ क्षेत्रोंसे गई हैं, भविष्यमें अनन्तानन्त

तीर्थङ्कर मोक्ष जावेंगे, सो किस क्षेत्रसे जावेंगे ? सो उन तीर्थङ्करोंके मध्यवर्ती समयमें कौन २ मुक्ति गये हैं, चौबीस तीर्थङ्कर जिस क्षेत्रसे मोक्ष जाते है, उस क्षेत्रके दर्शनसे क्या फल होता है और आगे ऐसी यात्रा किस २ ने की है, तथा उन्हें क्या २ फल मिले हैं, इन सब प्रश्नोंके उत्तर आप कृपा करके विस्तार पूर्वक कहिये। यह सुनकर भगवान्‌की दिव्यध्वनि हुई कि, राजा श्रेणिक! तुमने बहुत अच्छे प्रश्न किये अब तुम उनका उत्तर चित्तको समाधान करके सुनो।

पूर्वकालमें अनन्तानन्त चौबीस तीर्थङ्कर श्रीसम्मेदशिखरपर्वतपरसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं और आगे (भविष्यमें) भी जो अनन्तानन्त चौबीस तीर्थङ्कर होंगे, वे श्रीसम्मेदशिखरसे ही मोक्ष जावेंगे। इसी प्रकार चौबीसों तीर्थङ्करोंका जन्म भी श्रीअयोध्यानगरीमें होता है, और होवेगा परन्तु वर्तमानकालमें केवल २० ही तीर्थङ्कर इस सम्मेदशिखरसे मोक्ष गये हैं, क्योंकि श्रीऋषभदेव कैलास पर्वतसे, वासुपूज्य चम्पापुरसे तथा नेमिनाथ गिरनारसे मोक्ष जा चुके हैं, और हम पावापुरीसे मोक्ष जावेंगे, शेष बीस तीर्थङ्कर सम्मेदशिखरजीसे निर्वाण प्राप्त हुए हैं इसी प्रकारसे वर्तमानकालमें अयोध्यानगरीमें केवल ५ तीर्थङ्करोंका जन्म हुआ है शेष १६ का अन्यान्य नगरियोंमें हुआ है।

यह सुनकर राजा श्रेणिकने पूछा भगवन्! ऐसा होनेका क्या कारण है एक ही स्थानमें जन्म और एक ही स्थानमें मोक्ष होनेका जो नियम है, उसका भङ्ग क्यों हुआ ?

भगवान्‌ने उत्तर दिया, कि—राजन् ! यह एक कालका दोष है अनन्तानन्त कोड़ाकोड़ी उत्सर्पिणीकाल व्यतीत होनेपर कोई एक ऐसा ही काल आ जाता है, जिसमें इस नियमका उल्लंघन हो जाता है अर्थात् उसके प्रभावसे अनेक तीर्थङ्करोंका जन्म और निर्वाण अन्य २ स्थानोंसे हो जाता है। ऐसे कालको हुंडावसर्पिणी कहते हैं, इस विषयमें तुम कुछ सन्देह मत करो यथार्थमें चौवीसों तीर्थङ्करोंकी जन्मभूमि अयोध्या है और निर्वाणभूमि श्रीसम्मेदशिखरजी ही है।

राजा श्रेणिक—भगवन्! आपने जिस प्रकार कहा, वही सत्यार्थ है,अब कृपा करके यह बतलाईये कि, श्रीऋषभदेवसे लगाकर आप तकके निर्वाण क्षेत्रोंकी वन्दनाका फल क्या है, और शिखरजीकी यात्रा करके आगे किस २ को क्या २ फल मिले तथा आगे क्या २ मिलेंगे ?

वीरभगवान्—हे राजन्! कैलास पर्वतसे दस हजार मुनि मोक्षको प्राप्त हुए हैं, और श्रीसम्मेदशिखरजीपर बीस टोंकें हैं उनमेंसे **सिद्धवरकूटसे** श्रीअजितनाथ तीर्थंकर एकअरब अस्सीकरोड़ चोवनलाख एक हजार मुनियोंसहित मोक्ष गये हैं, इस टोंककी वन्दनाका फल बत्तीस करोड़ उपवासके बराबर है, दूसरे **धवलदत्त** कूटसे संभवनाथ तीर्थंकर नौ कोड़ाकोड़ी बहत्तरलाख ब्यालीस हजार पांचसौ मुनियोंकेसहित मोक्ष पधारे हैं, इसकूटके दर्शन करनेका फल ब्यालीस लाख उपवास करनेके बराबर है, तीसरे **आनन्द कूटसे** श्रीअभिनन्दन तीर्थंकर

तीस कोड़ाकोड़ी सत्तर करोड़ सत्तर लाख बियालीस हजार सात सौ मुनियोंकेसहित निर्वाण प्राप्त हुए हैं. इस कूटके दर्शन करनेका फल एक लाख उपवासके फलके तुल्य है। चौथे **अविचलकूटसे** सुमतिनाथ तीर्थंकर एक कोड़ाकोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तरलाख इक्यासी हजार सात सौ मुनियोंसहित मोक्ष पधारे हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके समान है। पांचवें **मोहनकूटसे** पद्मप्रभ तीर्थंकर निन्यानवै कोड़ाकोड़ी सत्तानवै करोड़ सत्तासी लाख बियालीस हजार सातसौ मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इस कूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके तुल्य है। छटे **प्रभास** कूटसे सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर चौरासी कोड़ाकोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तर लाख सात हजार सात सौ ब्यालीस मुनिसहित मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल बत्तीस कोड़ाकोड़ी उपवासके बराबर है। सातवें **ललितकूटसे** चन्द्रप्रभ तीर्थंकर हजार मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इनके सिवाय वहांसे चौरासी अरब बहत्तर करोड़ अस्सीलाख चौरासी हजार पांच सौ पचपन मुनि और भी मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल सोलहलाख उपवासके तुल्य है। आठवें **सुप्रभ** कूटसे श्रीपुष्पदन्त तीर्थंकर हजार मुनिसहित मुक्ति पधारे हैं तथा निन्यानवें करोड़ नव्वेलाख सात हजार चार सौ अस्सी मुनि और भी वहांसे मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवासके बराबर है। नवमें

विद्युतवर कूटसे शीतलनाथ तीर्थंकर एक हजार मुनिसहित मोक्ष गये है औरभी वहांसे अठारह कोड़ाकड़ी बियालीस करोड़ बत्तीस लाख बियालीस हजार नौसे पांच मुनियोंने मुक्ति पाई है। इस कूटके दर्शनका फल भी एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। दशवें **संकुल** कूटसे श्रेयांसनाथ तीर्थंकर एक हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं और तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी छयानवें करोड़ छयानवें लाख नवहजार पांचसौ बियालीस मुनियोंने और भी वहांसे मुक्ति पाई है। इसकूटके दर्शन करनेका फल भी एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

चंपापुरसे वासुपूज्य तीर्थंकर हजार मुनिसहित मोक्ष पधारे हैं। सम्मेदशिखरके ग्यारहवे **वरिसंवल** कूटसे विमलनाथतीर्थंकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं। और छह हजार छहसौ तथा सत्तर कोड़ाकोड़ो साठ लाख छह हजार सात सौ बियालीस मुनि औरभी मुक्ति गये हैं। इसकूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। बारहवें **स्वयंभू** कूटसे अनंतनाथ तीर्थंकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं। इनके सिवाय पचहत्तर हजार, सातसौ तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी सत्तर लाख सत्तरहजार सात सौ मुनि और भी मोक्ष गये हैं। इस कूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके तुल्य है। तेरहवें **सुदत्तवर** कूटसे धर्मनाथ तीर्थंकर आठसौ एक मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। तथा इसी कूटसे उन्नीस कोड़ाकोड़ी उन्नीस करोड़ नौ लाख नौ हजार सात सौ पंचानवे मुनि और भी मुक्त

हुए हैं, दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है, चौदहवें **शान्तिप्रभ** कूटसे श्रीशांतिनाथ तीर्थंकर नौ सौ मुनिसहित मुक्तिधामको गये हैं, तथा इसी कूटसे नौ सौ कोड़ाकोड़ी छयानवे करोड़ बत्तीस लाख छयानवें हजार सात सौ बियालीस मुनियोंने और भी पंचमगति पाई है। इसके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। पन्द्रहवें **ज्ञानधर** कूटसे कुंथुनाथ तीर्थंकर हजार मुनिसहित मोक्ष पधारे हैं। तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी छयानवे करोड़ बत्तीसलाख छयानवे हजार सात सौ ब्यालीस मुनि और भी मोक्षधामको गये हैं। दर्शनकरनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर हैं। सोलहवें **नाटक** कूटसे अरनाथ तीर्थंकर हजार मुनि-सहित मोक्ष गये हैं. तथा निन्यानवे करोड़ निन्यानवे लाख निन्यानवे हजार मुनियोंने और भी मुक्ति लक्ष्मी प्राप्त की है। इस कूटके दर्शन करनेका फल छयानवे करोड़ उपवास करने-के बराबर है। सत्रहवें **संवलकूटसे** श्रीमल्लिनाथ तीर्थंकर पांच सौ मुनियोंके सहित मुक्ति गये हैं। तथा छयानवे करोड़ मुनि औरभी वहांसे परमपदको प्राप्त हुए हैं। इसका दर्शन करना एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है. अठारहवें **निर्जर** कूटसे मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकर हजार मुनि सहित मुक्त हुए हैं तथा निन्यानवे कोड़ाकोड़ी, सत्तानवे करोड़ नो लाख नौ सौ निन्यावे मुनि औरभी वहांसे मुक्त धामको गये हैं। इस टोंकके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके समान है। उन्नीसवें

मित्रधर कूटसे नमिनाथ तीर्थंकर हजार मुनिसहित निर्वाण प्राप्त हुए हैं, तथा नौ सौ कोड़ाकोडी पैंतालिस लाख सात हजार नौ सौ बियालीस मुनि औरभी कर्मोंसे छूटे हैं। इस टोंकके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

गिरनार पर्वतसे श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर पांच सौ छत्तीस मुनि सहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। तथा बहत्तर करोड़ सात सौ मुनि और भी गिरनार पर्वतसे मुक्त हुए हैं।

सम्मेदशिखरके बीसवें सुवर्ण भद्रकूटसे श्रीपार्श्वनाथ तीर्थकर पांच सौ छत्तीस मुनिसहित परमधामको सिधारे हैं। तथा चौरासी लाख मुनि और भी वहांसे मुक्त गयेहैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

इसके पश्चात् श्रीगौतमगणधर बोले, हे राजन्! ये महावीर भगवान् पावापुरीके पद्मसरोवरमेंसे छत्तीस मुनियोंके सहित मोक्ष जावेंगे। तथा शिखरजीकी जिन्होंने पूर्वकालमें यात्रा की है, उनमेंसे थोड़ेसे नाम मैं कहता हूं। सगर, सागर, मघवा, सनत्कुमार, आनन्द, प्रभसेन, ललितदंत, कुंदसेन, सेनादत्त, वरदत्त, सोमप्रभ, चारुसेन, आदि इनके सिवाय और भी हजारों राजाओंने यात्राकी है, परन्तु उनमेंसे दर्शन केवल उन्हींको हुए हैं, जो भव्य थे, अभव्योंको दर्शन नहीं मिलते।

श्रेणिक—हे भगवन्! शिखरजीकी यात्रा करनेका फल जो कुछ आपने कहा, सो तो यथार्थ है परन्तु उससे अधिक तथा सम्पूर्ण फल और क्या है, वह कृपा करके कहो।

गौतमस्वामी—हे राजन्! शिखरजीकी यात्रा करनेवाला फिर संसारमें अधिक नहीं भटकता। उनचास भव लेकर वह जीव पचासवें भव अवश्य ही सिद्धस्थानमें जाकर अजर अमर अखंड सदा जागती जोत होकर अचल रहता है, यह नियम है। इसके सिवाय यात्रा करनेवाला नरक तिर्यंच गतिमें तथा स्त्रीपर्यायमें भी जन्म नहीं लेता।

श्रेणिक—यदि ऐसा है, तो भगवन् रावणने शिखरजीकी यात्रा की थी, फिर उसे नरकगति क्यों प्राप्त हुई?

गौतम०—रावण शिखरजीकी यात्रा करनेके लिये नहीं किन्तु त्रैलोक्यमंडल हाथीको पकड़नेके लिये मधुवन गया था। इसलिये वह यात्राके फलका भागी न हो सका।

श्रेणिक—भगवन्! यदि कोई बिना भावसे शिखरजीकी यात्रा करे, तो उसकी नरक तिर्यंच गति छूटे कि नहीं?

गौतम०—राजन्! जिस प्रकारसे बिना भावसे खाई हुई मिश्री मीठी लगती है, और दवाई रोगको शांत करती है, उसी प्रकारसे बिना भावसे की हुई यात्रा भी ऐसा नहीं है कि, फलवती न हो।

श्रेणिक—भगवन्! आपने कहा कि, भव्यको यात्रा होती है, परन्तु अभव्यको नहीं होती, सो यह बतलाइये कि, खास शिखरजीमें भीलादिक तथा पृथ्वी जल वनस्पति एकेन्द्रियादिक जीव राशि हैं, वे सब भव्य हैं अथवा अभव्य?

गौतम०-सम्मेदशिखरपर जितने जीवराशि हैं, वे सब भव्यराशि हैं।

श्रेणिक-भव्य किसे कहते हैं?

गौतम०-जिस जीवको जिनेन्द्रके वचनोंमें भ्रम उत्पन्न न हो, उसे भव्य कहते हैं।

इस प्रकार राजा श्रेणिक श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रका माहात्म्य सुनकर बहुत आनन्दित हुआ और अपनी रानी चेलना सहित यात्राके लिये चला परन्तु ज्यों ही पर्वतके निकट पहुंचा। त्यों ही वहांके निवासी दशलाख व्यन्तर देवोंने चारों और घोर अन्धकार कर दिया। धूलवृष्टि, मेघ गर्जन, पाषाणवृष्टि आदि अनेक प्रकारके और भी विघ्न किये तब रानी चेलणाने समझाया नाथ! आपको यात्रा नहीं होवेगी क्योंकि जिस समय आपने दिगम्बरमुनिराजके गलेमें मरा हुआ सर्प डाला था, उसी समय आपको नरक गतिका बंध पड़ चुका है। इसलिये इस पर्यायमें तीर्थराजके दर्शन होना असम्भव है। यह सुनकर राजा अपने कर्मोंकी गति जानकर अपने नगरको लौट गया।

दोहा—सिद्ध क्षेत्र सुप्रसिद्ध है, जिन आगममें सार।
धर्मदास क्षुल्लक कहै, श्रीसमेदगिरि पार॥ १॥
ताकी कथनी वारता, कह गये श्रीमुनिराज।
अब ताहीकी वचनिका, यह कीनी निज काज॥ २॥

६० मोहरस स्वरूप।

भव वन भटकत पथिकजन, हाथी काल कराल। पीछे लागो

हा दुःखित, पड़ो कूप विकराल ॥ पकड़ शाख वट वृक्षको, लटको मुंह फैलाय ॥ ऊपर मधु छत्ता लगा, पड़ो बूंद मुंह आय ॥ निश दिन दो चूहे लगे, काटत आयू डाल ॥ नीचे अजगर फाड़मुख है निगोद भव जाल ॥ चार सर्प चारों गती, चारों ओर निहार ॥ है कुटुम्ब माखी अधिक, चाटत तन हर बार ॥ श्री गुरु विद्याधर मिले, देख दुःखी भव जीव ॥ हो दयाल टेरत उसे, मत सह दुःख अतीव ॥ बून्द मधू है विषय सुख, ताके लालच काज । मानत नहिं उपदेशको, कर रह्यो आतम अकाज ॥ आयु डाल कुछ कालमें कट जावेगी हाय । नीचे पा बहु काल लों, भुगते फल दुःख दाय ॥

६१ लेश्या स्वरुप

माया क्रोधरु लोभ मद है कषाय दुःखदाय, तिनसे रंजित भाव जो, लेश्या नाम कहाय ॥ षट लेश्या जिनवर कही, कृष्णनील कापोत ॥ तेज पद्म छट्टी शुकल, परिणामहिं ते होत । कठियारे षट भाव धर लेन काष्टको भार । वन चाले भूखे हुए, जामन वृक्ष निहार ॥ कृष्ण वृक्ष काटन चहे, नील जु काटन डाल, लघु डाली कापोत उर, पीत सबै फल डाल ।प द्म चहे फल पक्वको, तोड़ं खाऊं सार शुक्ल चहे धरती गिरे, लूं पक्के निरधार ॥ जैसी जिसकी लेश्या, तैसा बांधे कर्म, श्रीसद्‌गुरु संगति मिले, मनका जावे भर्म ॥

६२ कुदेवादिकी भक्तिका फल

अन्तर बाहर ग्रन्थ नहिं, ज्ञान ध्यान तप लीन । सुगुरू बिन कुगुरू नर्मे पड़े नर्क हो दीन ॥ दोष रहित सर्वज्ञ प्रभु, हित उपदेशी नाथ । श्री अरहन्त सुदेव हैं, तिनको नमिये माथ ॥ राग दोष

मल कर दुःखी, हैं कुदेव जग रूप, तिनकी वन्दन जो करें, पड़े नर्क भव कूप ॥ आत्म ज्ञान वैराग्य सुख, दया क्षमा सत शील। भाव नित्य उज्ज्वल करै, है सुशास्त्र भव कील ॥ राग द्वेष इन्द्री विषय, प्रेरक सर्व कुशास्त्र, तिनको जो वन्दन करें। लहै नर्क विट गात्र ॥

९३ भोजनोंकी प्रार्थनायें

(प्रातःकालके समय)

परमेष्ठी सुमरण कर हम सब बालक गण नित उठा करें, स्वस्थ होय फिर देव धर्म गुरु, की स्तुति सब किया करें। करना हमें आज क्या क्या है। यह विचार निज काज करें। कायिक शुद्धि क्रिया करके फिर जिन दर्शन स्वाध्याय करें। मौन धार कर तोषित मनसे क्षुधा वेदना उपशम हित, विघ्न कर्मके क्षयोपशमसे, भोजन प्राप्त करें परिमित। हे जिन हो हित कर यह भोजन तन मन हमरे स्वस्थ रहें। आलस तज कर दीप उमंगसे निज पर हित में मगन रहें ॥

(सन्ध्या समय)

जय श्री महावीर प्रभुको कह, अरु निज कर्त्तव पूरण कर, सन्ध्या प्रथम मौन धारण कर भोजन करें शांत मन कर। परमित भोजन करें ताकि नहिं आलश अरु दुःस्वप्न दिखें ॥ दीप समय पर प्रभु सुमरण कर सोवें जगें स्व कार्य लखें ॥

९४ शिक्षित माताका पुत्रीको उपदेश

आज हुई मेरी बेटी पराई, सास ससुर घर जाना होगा। टेक।

सास ससुर परिजनकी सेवा, पति पूजा चित लाना होगा। आज हुई० ॥ १ ॥ धर्म करमका साधन निशदिन, नारी धर्म निभाना होगा। आज हुई० ॥ २ ॥ पहिले उठना, पीछे सोना, दिन भर हाथ हिलाना होगा। आज हुई ॥ ३ ॥ भोजनकी विधि सोच समझ कर, पानी छान वरतना होगा। आज हुई० ॥ ४ ॥ लोभ, मान अरु माया; ममता क्रोधकी आग बुझाना होगा। आज हुई० ॥५॥ कुछ मर्य्यादा नहिं विसरना, लाज शरम मन भाना होगा। आज हुई० ॥ ६ ॥ धन दौलतका गर्व गमाकर, अन धन दान दिलाना होगा। आज हुई० ॥ ७ ॥ वस्त्र-भूषण गहना गांठा, इनका हठ नहीं करना होगा। आज हुई० ॥ ८ ॥ आमदसे खर्च उठाकर, दुःख निवारण करना होगा। आज हुई० ॥ ९ ॥ शील रतनको घटमें धरकर पंचाणुव्रत धरना होगा। आज हुई० ॥१०॥ क्रोधित होय पती जो कदाचित्, भाव विनीत बताना होगा। आज हुई० ॥ ११ ॥ विद्या पढ़कर निज हित करना, देव धर्म गुरु लखना होगा। आज हुई० ॥ १२ ॥ धर्म नारिका ग्रन्थनमें, जो ताही धर शिव पाना होगा। आज हुई० ॥ १३ ॥ बालक की शिक्षा मन धर कर, घर घर मंगल गाना होगा। आज हुई मेरी बेटी पराई सास ससुर घर जाना होगा ॥ १४ ॥

९५ किसका जन्म सफल है ?

चाल गजल (न छेड़ो हमें हम सताये......)

जो जिनराजसे प्रीति लाये हुये हैं। वो फल जिन्दगीका उठाये हुये हैं ॥ टेर ॥ निरखते जो मूरत परम वीतरागी। वो

वैराग्यता दिलमें लाये हुये है ॥ १ ॥ समझते हैं संसारको झूंठा सपना । जो जिनदेवसे लो लगाये हुये हैं ॥ २ ॥ न यां पर खतर है न आगे का डर है । जो निज रूपमें रूप लाये हुये हैं ॥ ३ ॥ जिनेश्वरकी भक्ती हो जिस दिलमें हरदम । वह मुक्तीकी डिगरी लिखाये हुये हैं ॥ ४ ॥ मनुष्य जन्म "बालक" सफल है उन्हींका । जिनागमकी श्रद्धा जो लाये हुये हैं ॥ ५ ॥

१६ जीव प्रति उपदेश ।

चाल—(लीजो लीजो खबरिया......)

जिया भक्ती तू कर ले जिनवरकी तेरी करनी सफल हो भव भव की ॥ टेर ॥ करनेसे घोर पाप आय नरकमें पड़े । शीत उष्ण भूख प्यास रोगसे सड़े ॥ जिया भक्ती० ॥ १ ॥ प्रपञ्चके रचे तिर्यंच योनिको धरे । नाक कानको छिदा बन्धनमें पड़ मरे ॥ जिया भक्ती० ॥ २ ॥ शुभ कर्मके प्रसाद, स्वर्ग मांहि सुर हुवा । परके विभवको देख आप झूरना मुवा ॥ जिया भक्ती० ॥ ३ ॥ अति-पुण्यके प्रभावसे, नरभव रतन लहा । विषयोंके मांहि मन गवाँ तू मानले कहा ॥ जिया भक्ती० ॥ ४ ॥ निज रूपको विचारके नरभव-सफल करो । "बालक" प्रभूकी सीखधार मुक्तिको वरो ॥ ५ ॥ जिया भक्ती तू करले जिनवरकी तेरी करनी सफल हो भव भव की ॥

॥ प्रथम खण्ड समाप्त ॥

दूसरा खण्ड

पाँचवाँ अध्याय

(१) दुःख हरण विनती ।

श्रीपति जिनवर करुणा इतनी दुख हरण तुम्हारा वाना है। मत मेरी वार अवार करो मोहि देहु विमल कल्याणा है॥ टेक ॥ त्रैकाल्यक वस्तु प्रत्यक्ष लखो तुम सों कछु वात न छाना है। उर आरत मेरे जो वरते निश्चय सो तुम सब जाना है॥ अब लोपो व्यथा मत मौन गहौ नहीं मेरा कहीं ठिकाना है। हो राज विलोचन सोच विमोचन मैं तुम सों हित ठाना है। १। सब ग्रन्थनमें निर्ग्रन्थनमें निर्धार यही गणधार कही। जिननायकजी सब लायक हो सुखदायक क्षायक दान मई॥ यह बात हमारे कान पड़ी जब आन तुम्हारी शरण गही। मत मेरी वार अवार करो जिननाथ सुनो यह बात सही। २। काहू को भोगमनोग करो काहूको स्वग विमाना है। काहूको नाग नरेशपती काहूको ऋद्ध निधाना है॥ अब मो पर क्यों न कृपा करते यह क्या अंधेर जमाना है॥ इन्साफ करो मत देर करो सुखवृन्द भजो भगवाना है।३। दुख कर्म मुझे हैरान किया जब तुम सों आनि पुकारा है। समरत्थ सची विधि सो तुम हो तुम ही लग दौर हमारा है॥ खल घायल पालक बालक क्या नृप नीति यही जगसारा है॥ तुम नीति निपुण त्रैलोकपती

तुम्हरी शरणागत धारा है ॥ ४ ॥ जबसे तुम से पहिचान भई तब से तुम ही को जाना है । तुम्हरे ही शासन का स्वामी हमको शरणा सरधाना है। जिन को तुम्हरो शरणागत है तिनको यमराज डराना है । यह सुयश तुम्हारे सांचे का यश गावत वेद पुराना है ॥५॥ जिसने तुमसे दिल दर्द कहा तिस का दुःख तुम ने हाना है। अघ छोटा मोटा नाश तुरत सुख दिया तिन्ह मन माना है । पावक से शीतल नीर किया अरु चीर किया अस्माना है। भोजन था जिसके पास नहीं सो किया कुवेर समाना है ।६। चिंतामणि पारस कल्पतरु सुखदायक यह परधाना है ॥ तुम दरसन के सब दास य ही हमरे मन में ठहराना है । तुम भक्तन को सुर इन्द्रपती फिर फिर चक्रवती पद पाना है। क्या बात कहों विस्तार बढ़े वे पावें मुक्ति ठिकाना है । ७ । गति चार चौरासी लाख विषें चिन्मूरति मेरा भटका है। हो दीनबन्धु करुणानिधान अबलों न मिटी यह खटका है ॥ जब योग मिलो शिव साधन को तब विघन कर्मने हटका है। अब विघ्न हमारा दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है । ८ । गज ग्राह ग्रसित उद्धार लिया अरु अंजन तस्कर तारा है । ज्यों सागर गोपद रूप किया मैना का संकट टारा है ॥ ज्यों शूलीसे सिंहासन और बेड़ी को काटि बिडारा है । त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोंको आश तुम्हारा है । ९ । ज्यों फाटक टेकत पांव खुला अरु सर्प सुमन कर डाला है। ज्यों खड्ग कुसुम का माल किया बालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ बिपति चक चूर पूर अरु लक्ष्मी सुख विस्तारा है। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोको आश तुम्हारा है। १० । यद्यपि तुम्हरे रागादि नहीं

और सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति आप अनन्त गुणी नित शुद्धि दिशा शिव थाना है॥ तद् भक्तनको भयभीत हरो सुख देत तिन्हें जु सुहाना है। वह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारेको क्या पावे पार सयाना है।११। दुख खण्डन श्रीसुख मण्डनको तुम्हरा यश परम प्रमाना है। वरदान दिया यश कीरतको तिहुंलोक ध्वजा फहराना है॥ कमलाकरजी कमलाधरजी करिये कमला अमलाना है। अब मेरी व्यथा अबलोपो रमापति रंच न वार लगाना है।१२। हो दीनानाथ अनाथ! हितू जिन दीनानाथ पुकारी है। उदयागत कर्म विपाक हलाहल मोह व्यथा निरवारी है। तो और आप भव जीवनको तत्काल व्यथा निरवारी है। वृन्दावन अब ये अर्ज करे प्रभु आज हमारी बारी है।१३।

दोहा—प्रभु तुम दीनानाथ हो, मैं अनादि दुखकंद।
सुनि सेवककी वीनती, हरो जगत दुख फंद॥

(२) जिनेन्द्र स्तुति।

गीता छन्द।

मंगल सरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेशजी। तुम अधम तारण अधम मम लखि मेट जन्म कलेश जी। टेक। तुम मोह जीत अजीत इच्छातीत शर्मामृत भरे। रजनाश तुम वरभास दृग नभ ज्ञेय सब इक उड़चरे॥ रटरास क्षति अति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो। सब रहित दूषण त्रिजग भूषण अज अमल चिद्रूप हो।१। इच्छा विना भवभाग्य तें तुम ध्वनि सुहोय निरक्षरी। षट द्रव्य गुण पर्यय अखिल युत एक क्षणमें उच्चरी॥ एकान्त वादी कुमति पक्ष विलिप्त इम ध्वनि मद हरी संशय तिमिर

हर रविकला भव शस्य कों अमृत झरो ॥ २ ॥ वस्त्राभरण विन शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरे । नाशाग्र दृष्टि विकार वर्जित निरखि छवि संकट टरे ॥ तुम चरण पंकज नख प्रभा नभ कोटि सूर्य प्रभा धरे । देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुटमणि द्युति विस्तरे ॥ ३ ॥ अंतर बहिर इत्यादि लक्ष्मी तुम असाधारण लसे । तुम जाप पाप कलापनासे ध्यावते शिव थल बसे मैं सेय कुदृग कुबोध अव्रत चिरभ्रमो भववन सवै ॥ दुख सहे सर्व प्रकार गिर समसुख न सर्षप सम कवे ॥ ४ ॥ पर चाह दाह दहो सदा कबहूं न साम्य सुधा चखो । अनुभव अपूरव स्वादु विन नित विषय रस चारो भखो ॥ अब बसो मो उर में सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहों । वर भक्ति अतिदृढ़ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चहों ॥ ५ ॥ एके-न्द्रियादिक अन्तग्रिवक तक तथा अन्तर घनी । पाये पर्याय अनन्त-वार अपूर्व सो नहिं शिव धनी ॥ ससृत भ्रमण ते थकित लखि निज दासकी सुन लीजिये । सम्यक दरश वर ज्ञान चारित पथ विहारी कीजिये ॥ ६ ॥

(३) विनती भूधर कृत ।

गीता छन्द

पुलकंत नयन चकोर पक्षी हंसत उर इन्दीवरो । दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुड़ी निवड़ मिथ्या तम हरो ॥ आनंद अम्बुज उमग उछरो अखिल आतम निरदले । जिम वदन पूरण चन्द्र निर-खत सकल मन वांछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न नशाइयो । संसार सागर तीर निवटो अखिल

तत्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठये। दुख जरो दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भयो ॥ २ ॥ मनहरण मूरति हेर प्रभुकी कौन उपमा ल्याइये। मम सकल तनके रोम हुलसे हर्ष और न पाइये। कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभुको लखें जो सुर नर घने। तिस समयकी आनन्द महिमा कहत क्यों मुखसे बने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको और बांछा ना रही। मम सब मनोरथ भये पूरण रङ्क मानो निधि लही। अब होहु भवभव भक्ति तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये। कर जोर भूधरदास विनवे यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥ इति ॥

(४) विनती भूधरदास कृत।

अहो जगत गुरु देव सुनिये अर्ज हमारी। तुम प्रभु दीन दयालु मैं दुखिया संसारी ॥१॥ इस भव वनके माहिं काल अनादि गमायो। भ्रमत चतुर्गति मांहि सुख नहिं दुख बहु पायो ॥२॥ कर्म महा रिपु जोर ये कलकान करें जी। मन माने दुख देह काहूसे नाहिं डरें जी ॥ ३ ॥ कबहूं इतर निगोद कबहूं कि नर्क दिखावे। सुर नर पशुगति मांहि बहु विधि नाच नचावें ॥४॥ प्रभु इनको परसंग भव भव मांहि बुरो जी। जो दुख देखे देव तुमसे नाहिं दुरो जी ॥५॥ एक जन्मकी बात कहि न सको सब स्वामी। तुम अनन्त पर्याय जानत अन्तर यामी ॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे किये बहुत बेहाल सुनिये साहब मेरे ॥ ७ ॥ ज्ञान महानिधि लूट रङ्क निबल कर डारो। इनही मो तुम मांहि हे प्रभु अन्तर पारो ॥८॥ पाप पुण्य मिल दोय पायन बेरी डारी। तन कारागृह मांहि मूंद दियो दुख भारी ॥९॥ इनको नेक बिगार मैं कुछ नाहिं करोजी

बिन कारण जगबन्धु बहुविधि बैर धरो जी ॥१०॥ अब आयो तुम पास सुन कर सुयश तुम्हारो। नीति निपुण महाराज कीजे न्याय हमारो ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकास साधुनको रख लीजे ॥ बिनवे भूधरदास हे प्रभु ढील न कीजे ॥ १२ ॥

(५) विनती नाथूराम जी कृत ।

दोहा—चौबीसो जिन पद कमल, बन्दन करों त्रिकाल ।
करो भवोदधि पार अब, काटो बहु विधि जाल ॥ १ ॥

छन्द ।

ऋषभनाथ ऋषि ईश तुम ऋषि धर्म चलायो। अजित अजित अरि जीत बसु विधि शिवपद पायो ॥ संभव संभ्रम नाशि बहु भवि बोधित कीने। अभिनन्दन भगवान अभिरुचि कर व्रत दीने ॥ ३ ॥ सुमति सुमति वरदान दीजे तुम गुण गाऊं। पद्म- प्रभु पदपद्म उर धर शीश नवाऊं ॥ ४ ॥ नाथ सुपारस पास राखो शरण गहोंजी। चन्द्रप्रभू मुखचन्द्र देखत बोध लहोंजी ॥ ५ ॥ पुष्पदन्त महाराज विकसत दन्त तुम्हारे॥ शीतलशीतल बैन जग दुःखहरण उचारे ॥ श्रेयान्सनाथ भगवान् श्रेय जगतको कर्त्ता। बासपूज्य पद वास दीजे त्रिभुवन भर्त्ता ॥ ७ ॥ विमल विमल पद पाय विमल किये बहु प्राणी। श्रीअनन्त जिनराज गुण अनन्त के दानी ॥ ८ ॥ धर्मनाथ तुम धर्मतारण तरण जिनेश। शान्तिनाथ अघ ताप शान्ति करो परमेश॥ कुंथुनाथ जिनराज कुंथु आदि जिय पाले। अरह प्रभू अरि नाश बहु भव के अघ टाले ॥१०॥ मल्लिनाथ क्षण मांहि मोह मल्ल क्षय कीना। मुनिसुव्रत वृतसार मुनि गण

को प्रभु दीना ॥ ११ ॥ नमि प्रभुके पद पद्म नवत नशें अघ भारी। नेमि प्रभू तज राज जाय वरी शिव नारी ॥ १२ ॥ पारसवर्ण सरूप कहु भविक्षण में कीने। वीर वीर विधि नाश ज्ञानादिक गुण लीने ॥ १३ ॥ चार बीस जिनदेव गुण अनन्त के धारी। करों विविध पद सेव मैटो व्यथा हमारी ॥ १४ ॥ तुम सम जगमें कौन नाका शरण गहीजे। यासे मांगो नाथ निज पद सेवा दीजे ॥१५॥

दोहा—नाथूराम जिन भक्त का, दूर करो भव वास।
जब तक शिव अवसर नहीं, करो चरण का दास ॥

(६) विनती भूदरदास कृत।

वे गुरु मेरे उर बसो तारण तरण जहाज। वे गुरु मेरे उरबसो॥ आप तरें पर तार ही ऐसे ऋषिराज। वे गुरु मेरे उर बसो ॥टेक॥

मोह महा रिपु जीत के, छोड़ो है घरबार। भये दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार ॥ १ ॥ रोग मदन तन ध्यावही, भोग भुजङ्ग समान। कदली तरु संसार है, इम छोड़े सब जान ॥ २ ॥ रत्नत्रय निज उर धरें, बर निरग्रन्थ त्रिकाल। मारो काम खबीस को, स्वामी परम दयाल ॥ ३ ॥ धर्म धरें दशलक्षणी भावन भाव सार। सहें परीषह बीस दो, चारित्र रत्न भण्डार ॥ ४ ॥ ग्रीषम ऋतु रवि तेज से सूखे सरवर नीर। शैल शिखर मुनि तप तपें, ठाड़े अचल शरीर ॥ ५ ॥ पावस रैनि भयावनी बरसे जलधर धार। तरु तल निवसें साहसी चाले झंझा बयार ॥ ६ ॥ शीत पड़े रवि मद गले दहे दाहे सब बनराय। ताल तरङ्गिणी तट विषे, ठाड़े ध्यान लगाय ॥ ७ ॥ इस विधि दुर्द्धर तप तपें, तीनो काल मंझार। लागे सहज स्वरूप में, तन से ममता टार ॥ ८ ॥

रङ्ग महल में सोवते, कोमल सेज बिछाय। सो अब पश्चिम रैनि में पोढे सम्वर काय ॥ ९ ॥ गज चढ़ चलते गर्व से सेना सज चतुरङ्ग। निरख निरख भूपद धरे। पालें करुणा अङ्ग ॥ १० ॥ पूर्व भोग न चिन्तवें, आगे वांछा नाहि। चहुं गति के दुख से डरे सुरति लगी शिव मांहि ॥ ११ ॥ ते गुरु चरण जहां धरे तहं, तहं तीरथ होय। सो रज मम मस्तक चढ़ी भूधर मांगे सोय ॥ १२ ॥

(७) कारें भाषा

दोहा—श्रीजिनवर चौबीसवर कुनयध्वांत हर भान।

अमित वीर्य्य दृग बोध सुख युत तिष्ठो इह थान। १।

। परि पुष्पांजलि क्षिपेत) इति स्थापनम्।

त्रिभङ्गी छन्द

गिरीश शीश पाण्डु पै सचीश ईश थापियो। महोत्सवो आनन्द कन्द को सबै तहां किया ॥ हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्तदेखि हेतु आपना। यहां करें जिनेन्द्र चन्द्रकी सु बिम्ब थापना। २।

सुन्दरी छन्द।

कनक मणिमय कुम्भ सुहावने। हरि सुक्षीर भरे अति पावने ॥ हम सुवासित नीर यहां भरे। जगत् पावन पांव तरें धरे ॥ ३ ॥ ॥ इति कलश स्थापना ॥

गीताका छन्द।

शुद्धोपयोग समान भ्रम हर परम सौरभ पावनो। आकृष्ट भङ्ग समूह गङ्ग समुद्भवो अति पावनो ॥ मणि कनक कुम्भ निशुम्भ किल्विष विमल शीतल भरि धरो। श्रम स्वेद मल निरवार जिन-त्रय धार दे पायन परों ॥ ४ ॥ ॥ इति जल धारा ॥

अति मधुर जिन ध्वनि सम सुप्रीणित प्राणि वर्ग स्वभावसों। बुध चित्त समहर पित्त नित्त सुमिष्ट इष्ट उछाव सों। तत्काल इक्षु समुत्थ प्राशुक रत्न कुम्भ विषें भरों॥ यम त्रास तात निवार जिन त्रय धार दे पांयन परों॥५॥ इति इक्षु रस धारा॥

निष्टप्त क्षिप्त सुवर्ण मद दमनोय ज्यों विधि जैनकी। आयु प्रदा बल बुद्धिदा रक्षा सु यों जिय सैनकी॥ तत्काल मंथित क्षीर उत्थित प्राज्य मणि झारी भरों। दीजे अतुल बल मोहि जिन त्रय धार दे पांयन परों॥ इति घृत धारा॥

शरदाभ्र शुभ्र सुहाटक द्युति सुरभि पावन सोहनो। क्लैब्यक्त हर बल धरन पूरन पय सकल मन मोहनो॥ कद उष्ण गोधन तें समाहृत घट जटित मणि में भरों। दुर्बल दशा मो मेट जिन त्रय धार दे पायन परों॥ ७॥ इति दुग्ध धारा॥

वर विशद जैनाचार्य ज्यों मधुराम्ल कर्कशिता धरै। शुचि कर रसिक मथन विमथित नेह दोनों अनुसरै॥ गो दधि सुमणि भृङ्गार पूरन ल्याय करि आगे धरों। दुख दोष कोप निवार जिन त्रय धार दे पायन परों॥ ८॥ इति दधि धारा॥

दोहा—सर्वौषधी मिलाय के, भरि कञ्चन भृङ्गार।

यजों चरण त्रय धार दे, तारि तार भवतार॥ ९॥

॥ इति सर्वौषधी धारा॥

(८) प्रातःकालकी स्तुति।

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजनकी अब पूरो आस॥

ज्ञानभानुका उदय करो मम मिथ्यातमका हो अब नाश॥१॥

जीवोंकी हम करुणा पालें झूठ वचन नहीं कहें कदा॥

परधन कबहुं न हरहूं स्वामी ब्रह्मचर्य व्रत रहे सदा ॥२॥
तृष्णा लोभ बढ़ न हमारा तोष सुधा निधि पिया करें ॥
श्री जिन धर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥३॥
दूर भगावें बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार ॥
मेल मिलाप बढावें हमसब धर्मोन्नतिका करें प्रचार ॥ ४ ॥
सुखदुखमें हम समता धारें रहें अचल जिमि सदा अटल ॥
न्याय मार्गको लेश न त्यागें वृद्धि करें निज आतमबल ॥५॥
अष्टकर्म जो दुःख हेतु हैं तिनके छयका करें उपाय ॥
नाम आपका जपें निरंतर विघ्नशोक सब ही टल जाय ॥६॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहीं चढ़े कदा ॥
विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा ॥ ७ ॥
हाथ जोड कर शीष नवावें तुमको भविजन खड़े खड़े ॥
यह सब पूरो आस हमारी चरण शरणमें आन पड़े ॥ ८ ॥

(९) सायंकालकी स्तुति

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिमय गुणमणि बालक जनपर करहु दया
कुमति निशा अंधयारीकारी सत्य ज्ञानरवि छिपा दिया ॥१॥
क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरे चहुं ओर ॥
लूट रहे जग जीवनको यह देख अविद्या तमका जोर ॥ २ ॥
मारग हमको सूझे नांही ज्ञान विना सब अन्ध भये।
घटमें आप विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े नये ॥ ३ ॥
सतपथ दर्शक जनमन हर्षक घट घट अंतरयामी हो ॥
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥

घोर विपतमें आन पड़ा हूं मेरा बेरा पार करो ॥
शिक्षाका हो घर घर आदर शिल्पकला संचार करो ॥ ५ ॥
मेलमिलाप बढ़ावें हम सब द्वेष भावकी घटा घटी ॥
नहीं सतावें किसी जीवको प्रती क्षीरकी गटागटी ॥ ६ ॥
मातपिता अरु गुरुजनकी हम सेवा निशदिन किया करें ॥
स्वारथ तजकर सुखदें परको आशिश सबकी लिया करें ॥७॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा ॥
विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हूं बढ़े सदा ॥८॥
दोऊ कर जोरे बालक ठाढ़े करें प्रार्थना सुनिये दास ॥
सुखसे बीते रैन हमारी जिनमतका हो शीघ्र प्रकाश ॥ ९ ॥
मातपिताकी आज्ञा पालें गुरुकी भक्ति धरें उरमें ॥
रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज २ पुरमें ॥१०॥

(१०) सङ्कटहरण विनती

हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी । अब मेरी व्यथा क्यों ना हरो वार क्या लगी ॥ टेक ॥ मालिक हो दो जहानके जिनराज आप ही । ऐबो हुनूर हमारा कुछ तुम से छिपा नहीं ॥ बेजान में गुनाह जो मुझ से बन गया सही । ककरी के चोर को कटार मारिये नहीं ॥ हो दीन० १ ॥ दुख दर्द दिलका आप से जिस ने कहा सही । मुशकल कहर वहर से लई है भुजा गही ॥ सब वेद और पुराणमें परमाण है यही । आनन्द कन्द श्रीजिनन्द देव है तुही ॥ हो दीन० २ ॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती । गंगामें गिराहने गही गज राज की गती ॥ उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हें सती । भयटारके उभार लिया हो कृपा पती ॥ हो

दीन०३ ॥ पावक प्रचण्ड कुण्डमें उमण्ड जब रहा। सीतासे सत्य लेनेको जब रामने कहा॥ तुम ध्यान धरके जानकी पग धारती तहां। तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा॥ हो० ॥ जब चीर द्रौपदीका दुशासनने था गहा सबरे सभा के लोग कहते थे हा हा हा॥ उस वक्त भीर पीरमें तुमने किया सहा। पड़दा ढका सती का सुयश जगत में रहा॥ हो०॥ सम्यक्त शुद्ध शीलवन्ति चन्दनासती। जिस के नजीक लगती थी जाहर रती रती। बेड़ीमें पड़ी थी तुमें जब ध्यावती हुती॥ तब बीरधीर ने हरी दुःख द्वन्द की गती॥ हो० ६ ॥ श्रीपालको सागर विखे जब सेठ गिराया। उसकी रमासे रमने को आया था बेहया॥ उस वक्त के संकट सती तुमको जो ध्याया। दुःख द्वन्दफन्द मेटके आनन्द बढ़ाया॥ हो०। हरषेण की माता को जब शोक सताया। रथ जैनका तेरा चले पीछे से बताया॥ उस वक्त के अनशन में सती तुमको जो ध्याया। चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया।। हो० ८॥ जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजाला। तब सासु ने कलंक लगा घरसे निकाला॥ बन वर्गके उपसर्गमें सती तुमको चितारा। प्रभु भक्तियुत जानके भय देव निवारा॥ हो०९॥ सोमा से कहा जो तू सती शील विशाला। तो कुम्भमें से काढ़ भला नाग ही काला॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ जो डाला। तत्काल ही वो नाग हुआ फूलकी माला॥ हो० १० ॥ जब राज-रोग था हुवा श्रीपाल राजको। मैना सती तब आपकी पूजा इलाज को॥ तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को। वह राज भोग२ गया मुक्तिराजको ॥ हो० ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष

लगाया। रानीके कहे भूपने शूली पै चढ़ाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान में ध्याया। शूली से उतार उसको सिंहासन पै बिठाया ॥ हो० १२ ॥ जब सेठ सुन्नाजी को वापी में गिराया। ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपने में ध्याया। तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया ॥ हो० १२ ॥ एक सेठके घरमें किया दारिद्र ने डेरा। भोजन का ठिकाना भी था नहीं सांझ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान में घेरा। घर उसके तबकर दिया लक्ष्मी का बसेरा ॥ हो० १४ ॥ वलि वादमें मुनिराज सों जब पार न पाया। तब रातको तलवार ले शठ मारने आया। मुनिराज ने निज ध्यानमें मन लीन लगाया। उस वक्त हो परतक्ष तहां देव बचाया ॥ हो० १५ ॥ जब रामने हनुमन्त को गढ़लङ्क पठाया। सीता की खबर लेनेको विफौर सिधाया ॥ मग बीच दो मुनिराज की लख आगमें काया। झटवार मूसलधारसे उपसर्ग बुझाया ॥ हो० २६ ॥ जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा। घेरेमें पढ़ा था वह कुम्भकरण विचारा ॥ उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें उचारा। रघुवीरने सब पीर तहां तुरत निवारा ॥ हो० १७ ॥ रणपाल कुंवर के पड़ी थी पांवमें वेरी। उस वक्त तुम्हें ध्यानमें धाया था सवेरी। तत्काल ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी बेरी। तुम राजकुंवरको सभी दुख द्वन्द निवेरी ॥ हो० १८ ॥ जब सेठके नन्दन को डसा नाग जु कारा। उस वक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा ॥ तत्काल ही उस बालका विषभूरि उतारा। वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा ॥ हो० १८ ॥ मुनि मानतुङ्गको दई जब भूपने पीरा। तालेमें किया

बन्द भरी लोहे जंजीरा । मुनीशने आदीशको थुत की है गम्भीरा । चक्रेश्वरी तब आनके झट दूर की पीरा ॥ हो०२० ॥ शिव कोटने हठता किया समन्तभद्र सो । शिवपिण्डकी बन्दन करो संको अभद्र सो ॥ इस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो । जिन चन्द्रकी प्रतिमा तहां प्रगटो सुभद्र सो ॥ हो० २१ ॥ सूवेने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया । मेंडक ले चला फूल भरा भक्त का भाया ॥ तुम दोनोंको अभिराम स्वर्गधाम बसाया । हम आपसे दातारको लख आज ही पाया ॥ २२ ॥ कपि स्वान सिंह नवल अज बैल विचारे। तिर्यञ्च जिन्हें रञ्च न था बोध चितारे इत्यादिको सुरधाम दे शिवधाममें धारे । हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे ॥ हो० २३ ॥ तुमहीं अनन्त जन्तु कार भय भीड़ निवारा । वेदो पुराणमें गुरु गणधरने उचारा । हम आपकी शरणागतिमें आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष कल्प वृक्ष इक्षु अहारा हो० २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्तके दानी । आनन्द कन्द वृन्दको हो मुक्तिके दानी । मोहि दान ज्ञान दीनबन्धु पातक भानी संसार विषय तार तार अन्तर यामी ॥हो० २५॥ करुणा निधान बानको अब क्यों न निहारो । दानी अनन्त दानके दाता हो संभारो वृष चन्द नन्द वृन्दका उपसर्ग निवारो। संसार विषमक्षारसे प्रभु पार उतारो ॥ हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी । अब मेरी व्यथा क्यों न हरो वार क्या लगी ॥ २६ ॥

(११) स्तोत्र भूदरदास कृत

दोहा—कर जिन पूजा अष्ट विधि, भाव भक्ति बहु भाय ।
अब सुरेश परमेश थुति, करत शीश निज नाय ॥१॥

चौपाई ।

प्रभु इस जग समर्थ ना कोय । जासे तुम यश वर्णन होय । चार ज्ञान धारी मुनि थकें । हमसे मन्द कहाकर सकें ॥ २ ॥ यह उर जानत निश्चय कीन । जिन महिमा वर्णन हम कीन ॥ पर तुम भक्ति थके वाचाल । तिस बल होय गहूं गुण माल ॥३॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवन धनी । जय चन्द्रोपम चूड़ामणी ॥ जय जय परम धाम दातार । कर्म कुलाचल चूरण-हार ॥ ४ ॥ जय शिव कामिन कन्त महन्त । अतुल अनन्त चतुष्टय वन्त ॥ जय २ आश भरण बड़ भाग । तप लक्ष्मीके सुभग सुभाग ॥ जय २ धर्मध्वजा धर धीर । स्वर्ग मोक्षदाता वरवीर ॥ जय रत्नत्रय रत्न करण्ड । जय जिन तारण तरण तरण्ड ॥ ६ ॥ जय २ समोशरण शृङ्गार । जय संशय बन दहन तुषार ॥ जय २ निर्विकार निर्दोष । जय अनन्त गुण माणिक कोष ॥ ७ ॥ जय जय ब्रह्मचर्य्य दल साज । काम सुभट विजयी भटराज ॥ जय जय मोह महा तरु करी । जयजय मद कुंजर केहरी ॥ ८ ॥ क्रोध महानल मेघ प्रचण्ड । मान मोह-धर दामिन दण्ड ॥ माया वेल धनंजय दाह । लोभ सलिल शोषण दिन नाह ॥ ८ ॥ तुम गुण सागर अगम अपार । ज्ञान जहाज न पहुंचे पार ॥ तट ही तट पर डोले सोय । कार्य्य सिद्धि तहां ही होय । १० । तुम्हारी कीर्त्ति बल बहु बढ़ी । यत्न बिना जग मण्डप चढ़ी । और कुदेव सुयश निज चहैं । प्रभु अपने थल ही यश लहैं ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमें बिन ज्ञान । कीना मोह महा विष पान ॥ तुम सेवा विष नाशक जड़ी । तह मुनि जन मिल निश्चय करी ॥ १२ ॥ जन्म जरा मिथ्या मत मूल । जन्म मरण

लागे तहां फूल ॥ सो कषद्रु बिन भक्ति कुठार। कटै नहीं दुख फल दातार ॥ १३ ॥ कल्प सरोवर चित्रा बेलि। काम पोरवा नव निधि मेल॥ चिन्तामणि पारस पाषाण। पुण्य पदारथ और महान ॥१४ ॥ ये सब एक जन्म संयोग। किञ्चित सुख दातार नियोग। त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव। जन्म २ सुखदायक देव ॥ १५ ॥ तुम जग बांधव तुम जग तात। अशरण शरण विरद विख्यात॥ तुम सब जीवन रक्षापाल। तुम दाता तुम परम दयाल ॥ १६ ॥ तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान। तुम सम दर्शी तुम सब जान। जयमुनि यज्ञ पुरुष परमेश ॥ तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥ १७ ॥ तुम जग भर्त्ता तुम जग जान। स्वामि स्वयम्भू तुम अमलान ॥ तुम बिन तीन काल तिहुं खोय। नाहीं शरण जीवको होय॥ १८ ॥ इससे अब करुणानिधि नाथ। तुम सन्मुख हम जोड़ें हाथ॥ जबलों निकट होय निर्वाण। जग निवास छूटै दुख दान ॥१९॥ तब लों तुम चरणाम्बुज बास। हम उर होय यही अरदास॥ और न कछु बांछा भगवान। हो दयालु दीजे वरदान ॥ २० ॥

दोहा—इस विधि इन्द्रादिक अमर, कर बहु भक्ति विधान।
निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सन्मुख सुख मान ॥२१॥
जीति कर्म रिपु ये भये, केवल लब्धि निवास।
सो श्रीपार्श्व प्रभू सदा, करो विघ्न घन नाश॥

(१२) अरिहन्त परमेष्ठी मंगल।

वन्दों श्रीअरिहन्त सिद्ध आचार्यजी। उपाध्याय नमि साधु भवधर आर्यजी। पंच परमपद श्रेष्ठ जगति में ये कहे। इन ही के सुप्रसाद भव्यजन सुख लहे॥ लहे लेत लेंयगे सुख मुक्ति

रमनीके सही ॥ अहमेन्द्र इन्द्र नरेन्द्र सुखकी तास उपमा है नहीं ॥ यासे तिन्होंके एक सौ तिरकाल गुण नित ध्याइये। उर नेम धरके पंच पदके पंच मंगल गाइये ॥ १ ॥ सम चतुर संस्थान सुगन्धित तन लसे। एक सहस्र गणि आठ सुलक्षण शुभ बसे ॥ मल मूत्र नहीं होय पसेव न होइये। क्षीर वर्ण वर रुधिर अतुल बल जोइये ॥ जोइये हितमित बचन सुन्दर रूपका ना पार जी। लख वज्र वृषभ नाराच्य सहनन जन्म दश गुण धारजी ॥ सुरभिक्ष योजन एक शतलों चार दिश जानिये। छाया विवर्जित चार आनन गगण गमन बखानिये ॥ २ ॥ नहीं बढ़े नख केश सकल विद्याधनी। प्राणी वाधा रहित सहिजा अतिशय बनी ॥ नहिं होय उपसर्गाहार कवला नहीं। नेत्र नहीं टमकार ज्ञान गुण दश सही ॥ सही सब ही जीव केरे भाव मैत्री तहां बसें। सकलार्थ मागधी होय भाषा सुनत सब संशय नशें ॥ सब लोक में आनन्द बर्ते भूमि दर्पण सम छजे। आकाश निर्मल धान्य सब ही एकठे हो नीपजे ॥ ३ ॥ छः ऋतु के फल फूल फलें इकबार ही। भू तृण कंटक आदि रहित सुखकार हो ॥ मन्द सुगन्धि चले पवन सकल जन मन हरें। गंधोदक की वृष्टि गगणसे सुर करें ॥ करें जाय जाय कार मुख से शब्द सुर आकाश में। सुर हेम कमल विहार करते धरत पद तल जास में। अष्ट मङ्गल द्रव्य राजाय धर्म चक्र चले तहां। ये देव कृत गुण जात चौदह जोड़ सब चौंतिस यहां। सोहे वृक्ष अशोक शोक हर लेत है। दिव्य ध्वनि सुन जीव मिथ्या तजा देत हैं ॥ सुरकृत पुष्प सु वृष्टि चमर चौसट ढुरें। भामण्डल सुर गगण माद दुंदुभी करें ॥ करें अपने हेतु को ये क्षत्रत्रय

शिर सोहना ॥ मणि जटित सिंहासन कनकमय लोकत्रय मन मोहना ॥ ये प्रातिहार्य मिलाय आठों जोड़ गुण ब्यालीस जी। ये ही जानावत प्रगट तुम को तीन जग के ईशजी ॥ दर्शन ज्ञान अनन्त विषें षट द्रव्य से । गुण पर्याय अनन्त लखे द्रष्टि सर्वके ॥ राजत सुक्ख अनन्तानन्त केवल धनी । अनन्त चतुष्टय जोड़ सकल छालिस गुणी । गणिये सुछालिस गुण विराजित देव अरिहंत सो लखो । गुण और कबलों कहों कैसे बुद्धि थोरी मैं रखों ॥ इन्द्र गणधर आदि जिन गुण गणत पार न पाइयो । गणि दोष अष्टादश जिनेश्वर मूल से जु नशाइयो । क्षुधा तृषा मद मोह जरा चिन्ता टरी । आरति विस्मय रोग शोक निद्रा हरी ॥ स्वेद खेद भय रोग हनो पुन द्वेषजी । जन्म मरण का दुख नहीं लव-लेश जी ॥ लवलेश इनका नाहिं यासे मोहि तारण तरणजी । भव दुख निवारण सुक्ख कारण मोहि अशरण शरणजी ॥ यासे सदा ही प्रात उठ छालीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद पञ्च में अरिहन्त मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥

(१३) श्रीसिद्ध परमेष्टी मंगल।

तिहुं जग शिरतन बात बलय में जानियो । प्रारम्भ नभ क्षेत्र तहां उर आनियो ॥ मनुज क्षेत्र सम क्षेत्र महा अद्भुत सही । हाटक मणिमय मुक्ति शिला तासम कही ॥ कही तिहुं जग शीर्ष ऊपर क्षत्रके आकार जी । मध्य भाग योजन आठ मोटी अन्त अनुक्रम ढारजी । तापर विराजत सिद्ध शिव थल काय बिन बिन रूपजी । लख पूर्व तन से ऊन किंचित आत्मरूप अनूप जी ॥१॥

एक सिद्धके माँहि अनन्ते सिद्ध हैं। राजत गुण समुदाय लिये निज ऋद्धि हैं॥ किंचित कायोत्सर्ग और पद्मासनं। सकल सिद्ध सम शीर्ष विराजत भासनं॥ भासना आकार काजै लखो इक दृष्टान्त जी। सांचो करो इक मोम को फिर गारा लेप धरन्त जी॥ सुकबाय ताको अग्नि देकर मोम काढ़न ठानिये। पोलारवा में रहै जैसी सिद्ध आकृति जानिये॥ २॥ पौने सोलह सौ धनु महा गिनाय जी। बात वलय तन की सुलखो मोटाय जी। पन्द्रह सौ का भाग देव ताको सही। सवा पांच सौ धनुष होंय संशय नहीं॥ संशय नहीं अवगाहना उत्कृष्ट सिद्धन की लखो। तन बातकी मोटाई पुन: भाग नव लख का रखो॥ अवगाहनादि जघन्य गिनले हाथ साढ़े तीन जी। पुनः मध्य भेद अनेक हैं अवगाहनाके बीत जी॥ ३॥ मोहनी नामाकर्म महा बलवन्त जी। कीन्हीं बातिल बुद्धि सकल जग जन्तु जी॥ ताहि मूल से नाश शुद्ध सम्पति लही। प्रगटी गुण सम्यक्त्व प्रथम अद्भुत सही॥ सहीगुण यह जगतिके दुख नाशने को मूल है। या बिना सब ही अकारथ बासना बिन फूल है॥ बिन नीव मन्दिर मूल बिन तरु नीर बिन सागर यथा। सम्यक्त्व गुण बिन सकल करणी सफल नाहीं सर्वथा॥४॥ ज्ञानावरणी कर्म दयो सब टार जी। हस्त रेख सम-लोक अलोक निहार जी॥ दूजे गुण तब ज्ञान शुद्ध सुप्रगट लहो। यासम और न कोइ जगति में गुण कहो॥ कहो तीजो कर्म नामो दर्शना वरणी लखो। दीखे नहीं जाके उदय जिमि वस्त्र पर ढाकन रखो॥ इस कर्मको विध्वंस करके लहो केवल दर्शना। गुण होय मिटे तब ही वस्तु देखन तर्सना॥ ५॥ अन्तराय बलवान महा

दुःख देत है। जग जीवोंकी शक्ति सभी हर लेत है॥ याको हति निज वीर्य अनन्त लहाय जी। सो चौथा गुण वीर्य लखो मन ल्याय जी॥ मन ल्याय तिहुंजग माँहिं जानो नाम कर्म महान हैं। इस कर्म वश जग जीव चहुंगति भटकते हैरान हैं॥ याको हनो तब ही अमूर्त्ति भयो आतमराम है। सो मस्त गुण तब होत जगमें बहुर नाहीं काम है॥ ६॥ आयु कर्म से जीव चहूं गतिमें बसे। बंदीखाने मांह यथा कैदी फंसे॥ याहि हरत गुण प्रगट होत अवगाहना। एक सिद्ध में सिद्ध अनन्त सम्भावना॥ सम्भावना जग जीव सब ही गोत्र विधि के वश परें। पद ऊंच नीच लहैं सुबहु विधि दुःख दावानल जरें॥ इस गोत्र कर्म बिनाशने से भाव सम प्रगटे सदा। सो गुण अगुण लघु होय तब हीं ऊंच नीच न रहें कदा॥ ७॥ वेदनी कर्म वशाय जगति के जीव जी। भोगे दुःख अपार अचिंत सदीव जी॥ अव्याबाध गुण होइ हरे जब याहिजी। सुख दुःख दोनों रहित नहीं कछु चाह जी॥ चाह तिहुं जगकाल तिहुंके सुख इकट्ठे कीजिये। तिनसे अनन्तः सुख है इक समय मांहि लहोजिये॥ यासे तिन्हों के आठ गुण को प्रात उठ नित ध्याइये। उर नेम धर के पंचपद में सिद्ध मंगल गाइये॥ ८॥

(१४) श्री आचार्यपरमेष्ठी मंगल।

दर्शन मोह विनाश आप दर्शन लहो। सोही दर्शनाचार भिन्न परसे कहो॥ स्वपर भेद लख ज्ञान थकी निज लीन जी। सो ही ज्ञानाचार लखो सु प्रवीणजी॥ प्रवीण निज पद माहिं थिर हो यही चरित्र गुण सही। इच्छा अभ्यन्तर रोक अनसन बाह्य गुण

तप जानहीं ।। जब कष्ट बहु विधि आवता नहिं टरैं यह गुण वीर्य जी । आचरें पंचाचार यह गुण लहैं बहु धर धीर्य जी ॥१॥ वर्ष अयन ऋतु मास पक्ष आदिक तनी । करें सदा उपवास लहैं गुण अनसनी ॥ पूर्ण ग्रास बत्तीस अन्न जलके गुणी । लेय तामें ऊन ऊनोदर सो मुनी ॥ मुनिचर्या निमित्त वनमें व्रत अटपटे धर चलें । व्रत परि संख्या कहो यह गुण और जानसे ना पलें ॥ कोई रसको तजें कबहुँ सर्व रस तजा देत हैं । गुण जान रस परित्याग सुन्दर महा अद्भुत भजात है ॥ २ ॥ गिरि कन्दर एकान्त रहत सु मसान मे । धरें ध्यान अनागार लीन निज ज्ञान में ॥ विव्यक्त शय्यासन सो कहत गुण याहि जी । साहस ऐसा धार ममत्व सो नाहिं जी ॥ नाहिं तनको तनक सो भी ममत तिनके उर बसे । पावस समय तरुके तले धरें ध्यान पातक सब नसे ॥ हेमन्त सरिता ग्रीषम गिरि शिर उग्र जो तप करें । गुण लखो काय कलेश येही सकल दुखको परिहरें ॥ ३ ॥ प्रात: धरें व्रत जेह सम्हाले सांझजीं । कोई लागो दोष लखें ता मांझ जी ॥ गुरुसे कह सब दोष दण्डको आचरें । प्रायश्चित्त गुण येह महा सुखको करें ॥ करें मन बच काय सेती देव गुरु श्रुतिका विनय । अरु पूजनीक पदार्थ तिनकी विनय गुण तप के गिनय ॥ रोगातियुत या वृद्ध मुनिवर देख वैयावृत धरें । उन्माद मद तज लखें वैयावृत्य गुण तब विस्तरें ॥ ४ ॥ पंच भेद स्वाध्याय आप नित ही करें । बोध बंधके हेतु परनको उच्चरें ॥ सो ही गुण स्वाध्याय सकलमें सारजी । नाशा दृष्टि लगाय खड़े अनगारजी ॥ अनगार दोनों कर लुभाये लीन निज आतम विषें ।

गुण यही कायोत्सर्ग कहिये ममत तनसे ना दिखें ॥ ध्यान धर्मरु शुक्ल ध्यावें आर्त रौद्र निवार जी। यह ध्यान गुण शिव कर-नहारा कर्म रिपु क्षयकार जी ॥ ५ ॥ क्रोध महारिपु जीति क्षमा गुण आदरें । मार्दव गुण अजब होय अष्ट मदको हरें ॥ कूट कपट विष नाश होय आर्यव गुणी । झूंठ बचन परित्याग सत्य गुण लें मुनी ॥ मुनी धोवें लोभ मलको शौच्य गुण तब ही धरें। मन का विकार पांच इन्द्री जीति संयम गुण करें ॥ अनसनादिक ठानके तपशील गुण कर निर्मलो । त्याग अन्तर्वाह्य परिग्रह त्याग गुण लीनो भलो ॥ ६ ॥ निज पर भिन्न लखाव यही आकिञ्चना । ब्रह्मचर्य्य त्रिय त्याग सकल विधि से भना ॥ शत्रु मित्र सम भाव धरें समता गना । देव गुरू श्रुति बन्दे यह गुण बन्दना ॥ बन्दन स्तुति देव श्रुति गुरु करें स्तवन गुण धारके । प्रतिक्रमण गुणकर निवारें लगे दोष विचारके ॥ पढ़ैं निज श्रुति पर पढ़ावें यही गुण स्वाध्याय जी । कायोत्सर्ग धराय निज पद ध्यान शुद्ध लगाय जी ॥७॥ मन बन्दरको रोक गुप्ति मनकी लहैं । बचन गुप्ति गुण काज नहीं विकथा कहैं ॥ काय गुप्ति तब होय करें तन क्षीणजी । निज आतमलवलीन करें पर हीन जी ॥ पर हीन करके आप अपनी सम्पदा परखें अक्षय । आचार्य्य सोई श्रेष्ठ जगमें तासु उपमा को रखय ॥ यासे तिन्होंके प्रात उठ छत्तीस गुण नित ध्याइये । उर नेमधर पद पञ्चमें आचार्य्य मङ्गल गाइये ॥ ८ ॥

श्रीआचार्य्य परमेष्ठी मंगल सम्पूर्णम् ।

(१५) श्रीउपाध्याय परमेष्ठी मंगल

आचाराङ्ग पद सहस अठारह जानियो। सूत्र काङ्ग छत्तीस सहस्र पद मानियो॥ स्थानाङ्ग पद जान सहस ब्यालिस सदा। समबायाङ्ग इकलाख सहस चौंसठ पदा॥ पदागिन दो लाख ऊपर धर अट्ठाइस सहस जी। ब्याख्या प्रज्ञप्ति तामें प्रश्नकी है रहस्य जी॥ पद पांच लाख हजार छप्पन जान ज्ञात्र कथाङ्गके। पद लाख ग्यारह सहस सत्तर उपासका ध्यानाङ्ग के॥१॥ अतः कृता दशाङ्ग लाख तेबीस जी। सहस्र अट्ठाइस जोड़ सकल पद दीस जी। पद गिन बाजने लाख सहस चवाल जी। अनुत्तर उत्पाद दशाङ्ग सम्हाल जी। सम्हाल लाख तिरानवे पद जोड़ सोलै हजार जी। लख लेव प्रश्न व्याकरण माहीं धर्म कथन विचार जी। एक कोड़ि ऊपर धर चौरासी लाख सब गण लीजिये। ये ही सूत्र विपाकके पदका कथन लख लीजिये। २। येही ग्यारह अङ्ग एकादश गुण कहे। इन सबके पद जोड़ सकल कितने लहे। कोड़ि चार गनि लेहु लाख पन्द्रह रखो। दो सहस्र मिलवाय सकल संख्या लखो॥ अब उत्पाद पूर्व एक कोड़ि जो पद तनी। पद लाख छानवे गिनो ताके पूर्वको अग्रायनी। पद लाख सत्तर लखो ताके पूर्व वीर्यानुवादजी॥ लखि अस्ति नास्ति प्रवादके पद साठ लाख मर्याद जी॥ ३॥ पूर्व ज्ञान प्रवाद पञ्चमा जानजी। एक कोड़ि पद माहिं एक पद हानि जी॥ षष्टम सत्य प्रवाद पूव पहिचानियो। एक कोड़ि पद पैसु अधिक षट मानियो॥ मानियो आत्म प्रवाद पूर्व कोड़ि पद छब्बीस जी। पद पूर्व कर्म प्रवाद

इकसौ असीलाख कहीसजी ॥ गिनलो चौरासी लाख पदका पूर्व प्रत्याख्यान जी । विद्यानुवादजु कोड़िइकपर लाख दश पद ठानजो ॥ ४॥ पूर्व लख कल्याण वाद कहलाय जी । पद गिन कोड़ि छब्बीस सकल दरशायजी ॥ प्राणवाद लख पूर्व कोड़ि तेरह पदा क्रिया विशाल पद जानि कोड़ि नव सवदा ॥ गिन त्रैलोक विदुसार पूर्व खास जी । पद कोड़ि द्वादश पर धरावे लाख गिनो पचास जी ॥ पद पूर्व चौदहके इकट्ठे जोड़ गिन मन ल्यायजी । साढ़े पचानवे कोड़ि ऊपर पांच पद धरवायजी ॥ ५ ॥ एकादश लख अङ्ग पूर्व चौदह गने । पद दोनोंके जोड़ सकल इतने भने ॥ कोड़ि निन्यानबे और लाख पैंसठ धरो । सहस्र दोइ पद पांच जोड़ निश्चय करो ॥ करो गिनती एक पदमें किते अक्षर हैं सही । धर अर्ब सोलह कोड़ि चौंतिस अरु तिरासी लाख ही ॥ हज्जार सातसु आठ शत पै गिन अठासी फिर रखो । एक पदके कहे सो लख सकल पद इस सम रखो । ६ । अङ्गपूर्वको सकल भयो है ज्ञानजी ये ही गुण पच्चीस मुख्य पहिचान जी ॥ सो ही तिहुं जग श्रेष्ठ लखो उपझाय जी । पर परिणितसे भिन्न आत्मलव ल्याय जी ॥ लव ल्याय निज गुण सम्पदामें मग्न निशि दिन ही रहैं । भवसिन्धु तारण तरण नवका और उपमाको कहैं । यासे तिन्होंके प्रात उठ पच्चीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद पञ्चमें उपाध्याय मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥

(१६) श्रीसाधु परमेष्टी मंगल ।

मन वच षट कायतनी करुणा धरें । यही अहिंसा व्रत सु

प्रथम गुण आचरें ॥ करें झूंठ परित्याग वचन मन काय जी। कृतकारित अनुमोद भङ्ग सब गाय जी॥ सब गाय अनृत त्याग गुण यह सर्व साधुनके लखो। इस ही सुविधिसे त्याग चोरी व्रतास्तेय सुनो रखो ॥ चेतन अचेतन नारि तजना भेद सहस्र अठार से। सो ही है व्रत ब्रह्मचर्य्य साधू धरत हर्ष अपार से ॥१॥ वाह्याभ्यन्तर त्याग परिग्रह का करें। सो ही परिग्रह त्याग महाव्रत आदरे॥ चलत पन्थ लख शुद्ध हाथ गनि चार जी। ईर्या समिति सु व्रतहि दया चित धार जी॥ चित धार करुणा वचन बोलत स्वपर हित मर्याद से। यह व्रत भाषा समिति साधू धरत उर अहलादसे॥ गिन ले छयालिस दोष वर्जित लेत शुद्ध अहार जी॥ सो जान ईषणा समिति सुन्दर व्रत महा सुखकार जी।२। वस्तु उठावत वार भूमि द्रगसे लखें। तैसे भूमि निहार वस्तु विधिसे रखें॥ आदान निक्षेपना समिति या को कहें। धारें श्रीमुनिराज महा सुखको लहें॥ लहें नाहीं जीव बाधा भूमि ऐसी देखके। प्रति स्थापन समिति यह मल मूत्र क्षेपें पेख के॥ तज स्नान विलेपनादिक नाहिं तन संस्कार जी। तन क्षीण कर स्पर्शनेन्द्री शोर्थणा सविकार जी। ३। आम्ल मिष्ट कटुकादि स्वादि रसना तनो। तजें मुनी रसनेन्द्रिय रोधन तप भनो॥ सुगन्ध अरु दुर्गन्ध विषय नाशा तजे। घ्राणेन्द्रीय निरोध नाम तप तब भजें॥ भजें इन्द्रिय रोध चक्षु दृष्टि नाशापर धरें। युत राग द्रगसे निरखवो रूपादि सब ही परिहरें। नहिं सुनें वचन विकार कर्त्ता कानसे वहिरे भये। यह करण इन्द्रिय रोध तप धर सुनें जिन वच रुचि लिये।४। तृण कञ्चन अरि मित्र सु महल मसान जी।

सुख दुःख जीवन मरण लखे जु समान जी। समतावश्यक नाम यही गुण जान जी॥ धारें सो मुनिराज महा सुख खान जी॥ सुख खान लख गुण बन्दना है देव श्रुति गुरुकी चहें। इन आदि बन्दन योग्य पदको बन्दना कर गुण लहें॥ स्तुति देव श्रुति गुरु आदि देकर पूजनीक जु पदतनी। मन वचन तनसे करें मुनिवर थुति आवश्यक सोभनी॥ ५॥ प्रायश्चित्त ले दोष लगे दूरी करें प्रतिक्रमण गुण येह सर्व साधू धरें॥ पञ्च भेद स्वाध्याय करें नित ही तहां। सो ही गुण स्वाध्याय लहें निज सम्पदा॥ निज सम्पदाके अर्थ मुनिवर करें कायोत्सर्गजी। धर दृष्टि नाशा भुजा लुवायें ममत्व हन तन वर्ग जी॥ तृण कण्टकादिक शुद्ध भूपर अल्प निद्रा लेंय जी। लख रैन पिछली नाम तप यह भूमि शयन कहेय जी॥६॥ उर उज्जवल तन मलिन तजें स्नान जी। स्नान त्याग व्रत येह कहो पहिचान जी॥ मात गर्भसे जन्म समान स्वरूप जी। सो ही गुण तन वस्त्र त्याग सो अनूप जी॥ अनूप पंच सेती मुष्टी लुंच कचका करत हैं। और करुणाधार उरकच लुंच व्रत मुनि धरत हैं॥ गुण एकवार आहार लघुलें दोष बिन बिन राग जी। सो एकदा लघु भक्त तप है धरें मुनि बड़ भाग जी॥ ७॥ खड़े लेंय आहार पात्र करका करें। चरें गाय सम वृत्य खड़ा गुण सो धरें॥ आनन मल संयुक्तसूग आने नहीं। करो दंतवन त्याग सुव्रत जानो सही॥ जानो सही गुण गिन अट्ठाइस सर्व ही साधू लहो। यह श्रेष्ठ तीनों भुवन माहीं तरण तारणपद कहो॥ यासे तिन्होंके प्रात उठकर गुण अट्ठाइस ध्याइये उरनेम धरकें पंच पदमें साधु मङ्गल गाइये॥ ८॥

छठा अध्याय

१७ बारहमासा सीताजीका ।

सती सीता बिनवे शिर नाय । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥ टेक ॥ महीना आसाढ़का आया । जनक गृह जन्म मैंने पाया । हरा सुर भ्रातन की दाया । मात-पित को दुख उपजाया ॥ दोहा ॥ रथनूपुर विजयार्द्ध पर, ता बनमें सुर जाय । रखा लखा सो भूप चन्द्र गति हितसे लिया उठाय । पुत्र कर पाला प्रेम बढ़ाय । नाथ कर कृपा करो दुख आय ॥१॥ चढ़े श्रावण मलेच्छ भारी । पिता दुख पायो अधिकारी । बुलाये दशरथ हितकारी । राम तिनकी सेना मारी ॥ दोहा ॥ तब रघुपतिको तातने करी सगाई मोर । विधिबश खगपति झगड़ा ठानो आने धनुष कठोर । चढ़ा रघुवर परणी गृह ल्याय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ २ ॥ भये भादोंमें शुश्रु वैराग । राज रघुवर को देने लाग ॥ केकई माँगो वर दुर्भाग । भरतको राज लिया तिन मांग ॥ दोहा ॥ तब पति चले विदेशको धनुषबाण ले हाथ । सङ्ग चले प्रिय लक्ष्मण देवर मैं भी चाली साथ ॥ चले दक्षिणको चरण उठाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ३ ॥ क्वार दण्डक बन पहुंचे जाय । हना शंबुक लक्ष्मण असि पाय ॥ फेरि मारा खरदूषण धाय ॥ तहां मैं हरी लंकपति आय ॥ दोहा— मार जटायू मोहि ले दशमुख पहुंचो लङ्क । मित्र भये सुग्रीव राम के हनुमत बीर निशंक ॥ लेन

सुधि पठये श्रीरघुराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ४ ॥ मिली कार्तिकमें सुधि मेरी । राम लक्ष्मण लंका घेरी ॥ घोर रण भयो बहुत बेरी । लगी बहु मृतकनकी ढेरी ॥ दोहा ॥ तहां लङ्कपतिको हनो दियो विभीषण राज । मोहि साथ ले गृहको आये लिया राज रघुराज ॥ भरत तप धरा भये शिव राय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ५ ॥ कियो अगहनमें गर्भाधान । तबे बंटवायो किमिच्छा दान ॥ कर्म वश लोगों मिला ठान । लगाया दूषण मोहि निदान ॥ दोहा ॥ तब पति पठयो विपिनमें तीरथका मिसि ठान ॥ वज्रजङ्घ गृह रोवति देखी ले गयो बहिन बखान ॥ रखो पुर पुन्डरीकमें जाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ६ ॥ पूत लवणांकुश जन्मे बाल । चढ़े क्रमसे सो भये विशाल ॥ गये बन क्रीड़ा दोनों लाल । मिले नारद् बतलायो हाल ॥ दोहा ॥ तब दोनोंकी रिस बढ़ी भये पिता पर क्रुद्ध । समझाये सो एक न मानी चले करनको युद्ध ॥ चतुर्विध सेना सङ्ग सजाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ७ ॥ माघमें चले लड़न युग बीर । करे डेरा सरयूके तीर ॥ सुनत आये लड़ने रघुबीर । चलाये खेंच विविध शर धीर ॥ दोहा ॥ प्रबल युद्ध पुत्रन किया हरि बल मुहरा फेर । चक्र चलाया तब लक्ष्मणने बिकल भयो सो हेर ॥ बिचारा येही हरि बलराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ८ ॥ फागमें भामण्डल हनुमान ॥ कही ये सीता सुत बलवान् ॥ मिले तब हरिबल आनन्द ठान । अवधमें बाढ़ो हर्ष महान् ॥ दोहा ॥ तब सबने बिनती करी सीता लेहु बुलाय । सो स्वीकार करी रघुवरने सब नृप लाये धाय ॥ मिलनको चलीं

सिया हर्षाय ॥ नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ६ ॥ चैत्रमें बोले राम रिसाय । धीज बिन लिये न आवो धाय ॥ तबै बोली सीता बिलखाय । कहो सो लेहु धीज दुख दाय ॥ दोहा ॥ विष खाऊं पावक जलूं करूं जो आज्ञा होय । कही राम पावकमें पैठो सीता मानी सोय ॥ दयो तब पावक कुण्ड जलाय । नाथकर कृपा हरो दुख आय ॥ १० ॥ जपति बैसाखमें प्रभुका नाम । अग्निमें पैठी रघुवर भाम ॥ शील महिमासे देव तमाम । अग्निका कीना जल तिस ठाम ॥ दोहा ॥ कमलासन पर जानकी बैठारी सुर आय । बढ़ा नीर जल डूबन लागे करते भये विलाप ॥ करो रक्षा हम सीता माय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ११ ॥ जेठमें राम मिलन चाले । लूंचि कच सिय सन्मुख डाले ॥ लयो दिक्षा अणुव्रत पाले । किया तप दुर्द्धर अघ जाले ॥ दोहा ॥ त्रिया लिङ्ग हनि दिव भयो सोलम स्वर्ग प्रतेन्द्र । अनुक्रमसे अब शिवपुर पैहै भाषी एम जिनेन्द्र ॥ कहैं यों दयाराम गुण गाय । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥ १२ ॥

(१८) बाईस परिषह ।

क्षुधा तृषा हिम उष्ण दंशमंशक दुःखभारी । निरावरण तन अरति खेद उपजावत नारी ॥ चर्या आसन शयन दुष्टवायक बध्र बंधन । याचें नहीं अलाभ रोग तृण स्पर्श निबन्धन । मलज नित मान सन्मान वशप्रज्ञा और अज्ञानकर । दर्शन मलिन बाईस सब साधु परीषह जान नर ॥

दोहा—सूत्रपाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम ।
इनके दुख जे मुनि सहैं, तिन प्रति सदा प्रणाम ॥

१ क्षुधापरीषह—अनशन ऊनोदर तप पोषत हैं पक्ष मास दिन बीत गये हैं। जो नहीं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं॥ तब तहां दुस्सह भूखकी वेदन सहित साधु नहीं नेक नये हैं। तिनके चरण कमल प्रति प्रति दिन हाथ जोड़ हम सीस नये हैं॥

२ तृषा परीषह—पराधीन मुनिवरकी भिक्षा पर घर लेयं कहें कछु नाहीं। प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यासको त्रास तहां ही॥ ग्रीषमकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरें जब जाहीं। नीर न चहैं तीस से मुनिवर जयवन्तों वरतो जग माहीं॥

३ शीत परीषह—शीतकाल सब ही जन कम्पैं खड़े जहां वन वृक्ष दहे हैं। झंझा वायु वहे वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं॥ तहां धीर तटिनी तट चौपट ताल पालपर कर्म दहे हैं। सहैं सम्हाल शीत की बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं॥

४ उष्ण परीषह—भूख प्यास पीड़ उर अन्तर प्रज्वले आंत देह सब दागे। अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषमकी ताती वायु झालसी लागे॥ तपै पहाड़ ताप तन उपजै कोप पित्त दाहज्वर जागे। इत्यादिक गर्मीकी बाधा सहैं साधु धैर्य्य नहिं त्यागे॥

५—दंशमशक परीषह—दंश मशक माखी तनु काटें पीड़े बन पक्षी बहुतेरे। डसें व्याल विषहारे बिच्छू लगें खजूरे आन घनेरे॥ सिंघ स्याल शुण्डाल सतावें रीछ रोज दुःख देंय घनेरे। ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे।

६ नग्न परीषह—अन्तर विषय वासना वर्त्तै बाहिर लोक लाज भय भारी। तातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिं सकें दीन

संसारी। ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषह जीतें साधु शील व्रतधारी। निर्विकार बालकवत् निर्भय तिनके पायन धोक हमारी ॥

७ अरति परीषह—देश कालको कारण लहिके होत अचैन अनेक प्रकारैं। तब तहां खिन्न होयें जगवासी कलबलाय थिरतापन छारैं। ऐसी अरति परीषह उपजत तहां धीर धैर्य्य उर धारैं। ऐसे साधुनके उर अन्तर बसो निरन्तर नाम हमारे ॥

८ स्त्री परीषह—जे प्रधान केहर को पकड़ैं पन्नग पकड़ पान से चम्पत। जिनकी तनक देख भौं बांकी कोटिन सूर दीनता जम्पत ॥ ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेद पयम्पत॥ धन्य धन्य ते साधु साहसी मन सुमेरु जिनको नहिं कम्पत ॥

९ चर्य्या परीषह—चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि इत उत नहीं तानें। कोमल पांव कठिन धरती पर धरत धीर वाधा नहिं मानें। नाग तुरङ्ग पालकी चढ़ते ते स्वाद उर याद न आनें यों मुनिराज सहें चर्य्या दुःख तव दृढ़ कर्म्म कुलाचल भानैं ॥

१० आसन परीषह—गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसें जहाँ शुद्ध भू हेरें। परिमित काल रहें निश्चल तन बारबार आसन नहिं फेरें॥ मानुषदेव अचेतन पशु कृत वैठे बिपत आन जब घेरें ठौरन तजैं भजें थिरता पद ते गुरु सदा बसो उर मेरे ॥

११ शयन परीषह—जे महान् सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय सुख जोवें। ते अब अचल अङ्ग एकासन कोमल कठिन भूमिपर सोवें॥ पाहन खण्ड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर नहीं होवें। ऐसी सयन परीषह जीतत ते मुनि कर्म कालिमा धोवें ॥

१२ आक्रोश परीषह—जगत् जीवयावन्त चराचर सबके हित

सबको सुखदानी । तिन्हे देख दुर्वचन कहे शठ पाखण्डी ठग यह अभिमानी । मारो याहि पकड़ पापीको तपसी भेष चोर है छानी । ऐसे कुवचन वाणकी विरियां क्षमा ढाल ओढ़ैं मुनि ज्ञानी ॥

१३ बध बन्दन परीषह—निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट लोग मिल मारैं । कोई खैंच खम्भसे बांधे कोई पावकमें परजारैं ॥ तहां कोप नहिं करैं कदाचित पूरव कर्म विपाक विचारैं । समरथ होय सहैं बध बन्धन ते गुरु सदा सहाय हमारे ॥

१४ याचना परीषह—घोर वीर तप करत तपोधन भये क्षीण सूखी गलबांही । अस्थिचाम अवशेष रहे तनु नसा जाल झलके जिस मांही ॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जांय पर याचित नाहीं । दुर्द्धर अयाचिक व्रत धारे करहिं न मलिन धर्म परछांहीं ॥

१५ अलाभ परीषह—एकबार भोजनकी विरियां मौन साध बस्तीमें आवैं । जो नहिं बने योग भिक्षा विधि तो महन्त मन खेदन लावें । ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तब तप वृद्ध भावना भावैं । यों अलाभकी कठिन परीषह सहैं साधु सोही शिव पावैं ॥

१६ रोग परीषह—वात पित्त कफ श्रोणित चारों ये जब घटें बढ़ें तनु माहीं । रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव कायर हो जाहीं ॥ ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न चाहीं । आत्मलीन विरक्त देहसे जैन यती निज नेम निवाहीं ॥

१७ तृण स्पर्श परिषह—सूखे तृण और तीक्ष्ण कांटे कठिन कांकरी पांय विदारैं । रज उड़ आन पड़े लोचनमें तीर फांस तनु पीर विथारैं ॥ तापर पर सहाय नहीं वांछत अपने करसों काढ़

न डारें। यों तृणस्पर्श परीषह विजयी ते गुरु भव भव शरण हमारे॥

१८ मल परीषह—यावज्जीव जल न्हौन तजो तिन नग्न रूप वन थान खड़े हैं। चले पसेव धूपकी बिरियां उड़त धूल सब अङ्ग भरे हैं॥ मलिन देहको देख महा मुनि मलिन भाव उर नाहिं करे हैं। यों मल जनित परीषह जीतैं तिन्हैं पाय हम सीस धरे हैं॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह—जे महान विद्यानिधिविजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं। तिनकी विनय वचन सों अथवा उठ प्रणाम जन नाहिं करे हैं॥ तौ मुनि तहां खेद नहिं मानें उर मलीनता भाव हरे हैं। ऐसे परम साधुके अहनिशि हाथ जोड़ हम पांय परे हैं॥

२० प्रज्ञा परीषह—तर्क छन्द व्याकरण कलानिधि आगम अलङ्कार पढ़ जानें। जाकी सुमति देख परवादी विलखे होंय लाज उर आनें॥ जैसे सुनत नाद केहरिको बन गयन्द भाजत भय मानें। ऐसी महाबुद्धिके भाजन ये मुनीश मद रञ्च न ठाने॥

२१ अज्ञान परिषह—सावधान वर्तें निशि वासर संयम शूर परम वैरागी। पालत गुप्ति गये दीरघ दिन सकल सङ्ग ममतापर त्यागी॥ अवधिज्ञान अथवा मनपर्य्यय केवल ऋद्धि न आजहूं जागी! यों विकल्प नहिं करें तपोधन सो अज्ञान विजयी बड़ भागी॥

२२ अदर्शन परीषह—मैं चिरकाल घोर तप कीनो अजहुं ऋद्धि अतिशय नहिं जागे। तप बल सिद्ध होय सब सुनियत सो कछु बात झूंठसी लागे॥ यों कदापि चितमें नहिं चिन्तत समकित शुद्ध शान्तिरस पागे। सोई साधु अदर्शन विजयीताके दर्शनसे अघ भागे।

किस कर्मके उदयसे कौनसी परिषह होती है।

ज्ञानावरणीतैं दोय प्रज्ञा अज्ञान होय एक महामोह तें अदर्शन बखानिये, अन्तराय कर्म सेती उपजै अलाभ दुःख सप्त चारित्र मोहनी केवल जानिये। नग्न निषध्यानारी मान सन्मान गारि याचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये। एकादश बाकी रही वेदनी उदयसे कही बाईस परीषह उदय ऐसे उर आनिये।

अडिल छन्द—एकबार इन माहिं एक मुनिके कही। सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवें सही॥ आसन शयन विहार दोइ इन माहिकी। शीत उष्णमें एक तीन ये नाहिंकी॥

(१६) बारहमासा मुनिराजजीकी।

राग मरहटी—मैं बन्दूं साधु महन्त बड़े गुणवन्त सभी चित लाके। जिन अथिर लखा संसार बसे वन जाके॥ टेक॥

चित चैतमें व्याकुल रहे काम तन दहे न कछु बन आवे। फूली बनराई देख मोह भ्रम छावे। जब शीतल चले समीर स्वच्छ हो नीर भवन सुख भावे। किस तरह योग योगीश्वरसे बन छावे॥

(झड़)—तिस अवसर श्रीमुनि ज्ञानी, रहैं अचल ध्यानमें ध्यानी। जिन काया लखी पयानी। जग ऋद्ध खाक समजानी॥ उस समय धीर धर रहैं अमर पद लहैं ध्यान शुभ ध्याके। जिन अथिर लखा संसार बसे वन जाके॥ १॥

जब आवत है बैसाख होय तृण खाक तापसे जलके। सब करैं धाम विश्राम पवन झलझलके॥ ऋतु गर्मीमें संसार पहिन नर नार वस्त्र मलमलके। वे जलसे करते नेह जो हैं जी थलके॥

(झड़)—जिस समय मुनी महराजे, तन नग्न शिखर गिरि राजे। प्रभु अचल सिंहासन राजै, कहो क्यों न कर्म दल लाजे। जो घोर महा तप करें मोक्षपद धरैं बसे शिव जाके। जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके॥ २॥

जब पड़े ज्येष्ठमें ज्वाला होय तन काला धूपके मारे। घर बाहर पग नहिं धरे कोई घरवारे॥ पानीसे छिड़कें धाम करैं विश्राम सकल नर नारी। धर खसकी टटिया छिपैं लूहकी मारी॥

(झड़)—मुनिराज शिखिर गिर ठाड़े, दिन रैन ऋद्धि अति बाढ़े। अति तृषा रोग भय बाढ़े, तब रहैं ध्यानमें गाढ़े॥ सब सूखे सरवर नीर जलें शरीर रहैं समझाके। जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके॥ ३॥

आषाढ़ मेघका जोर बोलते मोर गरजते बादल। चमके बिजली कड़ कड़े पड़े धारा जल॥ अति उमड़ें नदियां नीर गहर गम्भीर भरे जलसे थल। भोगीको ऐसे समय पड़े कैसे कल॥

(झड़)—उस समय मुनी गुणवन्ते, तरुवट तट ध्यान धरन्ते॥ अति काटैं जीव अरु जन्ते, नहीं उनका सोच करन्ते। वे काटें कर्म जंजीर नहीं दिलगीर रहैं शिव पाके। जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके॥ ४॥

श्रावणमें हैं त्यौहार झूलती नार चढ़ी हिंडोले। वे गावें राग मल्हार पहन नये चोले॥ जग मोह तिमिर मन बसे सर्व तन कसे देत झकझोले। उस अवसर श्रीमुनिराज बनत हैं भोले॥

(झड़)—वे जीतें रिपुसे लरके, कर ज्ञान खड्ग ले करके। शुभ शुक्ल ध्यानको धरके, परफुल्लित केवल बरके॥ नहीं सहैं वो

यमकी त्रास लहैं शिव वास अघात नशाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ५ ॥

भाद्व अंधियारी रात सूझे ना हाथ घुमड़ रहे बादर । बन मोर पपीहा कोयल बोलें दादुर ॥ अति मच्छर भिन भिन करें सांप फुंकरें पुकारें थलचर । बहु सिंह बघेरा गज घूमें बन अन्दर ॥

(झड़)—मुनिराज ध्यान गुण पूरे, तब काटैं कर्म अंकूरे । तनु लिपटत कान खजूरे, मधु मक्ष ततइयें भूरे ॥ चिटियोंने बिल तनकरे आप मुनि खड़ें हाथ लटका के । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ६ ॥

आश्विनमें बर्षा गई समय नहिं रही दशहरा आया । नहीं रही वृष्टि अरु कामदेव लहराया ॥ कामी नर करें किलोल बनावें डोल करें मन भाया । है धन्य साधु जिन आतम ध्यान लगाया ॥

(झड़)—बसु याम योगमें भीने, मुनि अष्ट कर्म क्षय कीने । उपदेश सबनको दीने, भविजनको नित्य नवीने ॥ हैं धन्य धन्य मुनिराज ज्ञानके ताज नमूं शिर नाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ७ ॥

कार्तिकमें आया शीत भई विपरीत अधिक शरदाई । संसारी खेलें जुआ कर्म दुखदाई ॥ जग नर नारीका मेल मिथुन सुख केल करें मन भाई । शीतल ऋतु कामी जनको है सुखदाई ॥

(झड़)—जब कामी काम कमावें, मुनिराज ध्यान शुभ ध्यावें । सरवर तट ध्यान लगावें, सो मोक्ष भवन सुख पावें ॥ मुनि महिमा अपरम्पार न पावे पार कोई नर गाके । जिन ॥ ८ ॥

अगहनमें टपके शीत यहो जगरीत सेज मन भावे । अति

शीतल चलै समीर देह थर्रावे ॥ शृङ्गार करें कामिनी रूप रसठनी सामहने आवे । उस समय कुमति बन सबका मन ललचावे ॥

(झड़)—योगीश्वर ध्यान धरे हैं, सरिताके निकट खरे हैं कहां ओले अधिक परे हैं, मुनि कर्मका नाश करे हैं। जब पड़े बर्फ घनघोर करें नहीं शोर जयी दृढ़ताके । जिन० ॥ ८ ॥

यह पौष महीना भला शीतमें घुला काँपती काया । वे धन्य गुरू जिन इस ऋतु ध्यान लगाया ॥ घरबारी घरमें छिपें वस्त्र तन लिपें रहै जैडाया।तज वस्त्र दिगम्बर हो मुनि ध्यान लगाया॥

(झड़)—जलके तट जग सुखदाई, महिमा सागर मुनिराई। धर धीर खड़े हैं भाई निज आतमसे लवलाई ॥ है यह संसार असार वे तारणहार सकल बसुधाके जिन० ॥ १० ॥

है माघ बसन्त बसन्त नार अरु कन्थ युगल सुख पाते । वे पहिने वस्त्र बसन्त फिरें मदमाते ॥ जब चढ़ैं मयनकी शयन पड़ें नहीं चैन कुमति उपजाते। हैं बड़े धीर जन बहुधा वे डिग जाते ॥

(झड़)—तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी, जिन काया लखी पयानी। भवि डूबत बोधे प्रानी, जिन ये वसन्त जिय जानी ॥ चेतन सो खेलें होरी ज्ञान पिचकारी योग जल लाके। जिन०

जब लगे महीना फाग करें अनुराग सभी नरनारी। ले फिरे फेंटमें गुलाल कर पिचकारी॥ जब श्रीमुनिवर गुणखान अचल धर ध्यान करें तप भारी। कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी॥

(झड़)—कीर्ति कुमकुमें बनावें, कर्मोंसे फाग रचाव । जो बारहमासा गावें, सो अजर अमर पद पावें॥ यह भाखें जिया-लाल धर्म गुणमाल योग दर्शाके। जिन अथिर लखा ॥ १२ ॥

(२०) बाईस परीषह।

(रत्नचन्द् कृत सवैया इकतीसा)

क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण दंशमशकादि नग्न, अरति, व स्त्री, चर्या, निषद्या बखानिये। शय्या, आक्रोश, बधबंधन, अदलस ही याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श जानिये। मलस्पर्श सत्कार तिरस्कार प्रज्ञा कही एकबीस अज्ञान यह अनुमानिये। अदर्शन सहित ये बाईस परीषह भेद भिन्न २ कहूं अन भूप उर आनिये॥

१ क्षुधा परीषह पाखमास उपवास ठानत श्रीमुनिराई। धारें अति दृढ़ ध्यान क्षुधा सहैं अधिकाई॥ सूकें गल और बांही तन पिंजर हो जाई। तब भी चिगते नाहीं बन्द तिनके पाई॥

२ तृषा परीषह—लागे प्यास अपार ग्रीष्म ऋतुके मांही कोपै उर अति पित्त सूके कंट तहां ही॥ ध्यान सुअमृत सीच तीक्षण तृषा निवारैं। चलौ चित्त तिन नांहि तिन पद हम सिर धारैं॥

३ शीत परीषह—शीतकालके मांहि जगजन कपै सोई। तरवर कानन माहिं हिम सो सूखें जोई॥ बहेजुभका वाह सर सरिता तट टाढ़े। बाधा सहैं अपार ते मुनि ध्यानहिं माढ़े॥

४ उष्ण परीषह—ग्रीष्म ताप प्रचण्ड मारुत अग्नि समाना। सूखैं सरवर नीर दुःखको नाहि प्रमाना॥ सैल शिखर मुनि ध्यान धारैं कर्म नसावैं। सहैं परिषह उष्ण तिनके हम गुन गावैं॥

५ दंशमशक परीषह—दंशमशक अहि व्याल पीड तनु बहुतेरे। मृगपति भलुक स्याल वृश्चिका और गुहेरे॥ सहत कष्ट इमिघोर लौ निज आतमलागी। दंशमशक इहि भांति जीतत ते बड़भागी॥

६ नग्न परीषह—लोकलाज सब छाड़ विहरत नग्न महीपै। धरैं दिगम्बर रूप हिये विकार न हीप॥ शील सव्रत दृढ़ लीन ध्यावत ते शिवनारी। निर्भय बाल समान तिन प्रति धोक हमारी

७ अरति परीषह—उपजे काल जु आई जो कहुं देश मझारा तो जगवासी जीव विकलप करे अपारा॥ धीरज तजहिं न साधते परमातम ध्यावैं। विजई अरति परीष वे गुरु शिवपद पावैं॥

८ स्त्री परीषह—(छन्दहरी गीता) जे शूर पन्नगको गहैं कर पकर मृगपतिको रहैं। वक्र भौंह विलोकि जिनकी कोटि योधा भय गहैं॥ रूप सुन्दर जोषिता युत करति क्रीड़ा मन रमैं। ते साधु निश्चल कनक नग सम तिनहिके हम पद नमैं॥

९ चर्य्या परीषह—चार कर सोधत सुपथ ते दृष्टि इत उत नहिं करें। महा कोमल पाद जिनके कठिन धरती पर धरें॥ चढ़ते ते यह नाग शिवका तासु याद न लावहीं। सहैं चर्य्या दुःख वह गुरु तिनहि हम सिर नावहीं॥

१० निषद्या परीषह—शैल सीस समान कानन गुफा मध्य बसें तदा। तहां आन उपजहिं कष्ट कौनहुं कर्म योगनतें सदा। मनुष्य सुर पशु अरु अचेतन विपत आन सतावही। ठौर तज नहिं भजें ही थिर पद निषद विजयी कहाव ही॥

११ शय्या परीषह—हेम महलन चित्रसारी सेज कोमल सोवते। विकट बनमें एकले ह्वै कठिन भुव तज जोवते॥ गड़त पाहन खण्ड अति ही तासुको कायर नहीं। ऐसी परीषह सयन जीतन नमो तिनके पद तहीं।

१२ आक्रोश परीषह—जगत् जन मुनि देखिके तिन दुर बचन

मावै कुधी। पाखण्डी ठग अति है जु तस्कर मारिये यह दुरबुधी॥ बचन ऐसे सुनत जिनके क्षमा ढाल जु ओढ़ हीं। तिनहीं के हम पद सुपरसहिं मान मद जे छोड़ हीं॥

१३ बधबन्धन परीषह—गहें समता भाव सब सों दुष्ट मिल मारें जिन्हें। बांधई पुनि खम्भ सों ते अग्निमें जारें तिन्हें॥ करति कोप कदाचि नाहीं पूर्व कर्म विचार हीं। सहें बध बन्धन परीषह ते सकल अघटारहीं॥

१४ याचना परीषह—रोग कबहुं जो आनि उपजै तन सकल दुरबल भयो। नसाजाल जु रुधिर सूखे अस्थि चाम सु रहिगयो॥ सहें धीर जु कष्ट वे मुनि महा दुर्द्धर व्रत धरें॥ असन भेषज पान आदिक याचना कभु ना करें॥

१५ अलाभ परीषह—एक बार अहार बिरियां मौनले बस्ती-धसैं॥ जो मिले नहिं योग भिक्षा तौ न खेद हिये लसैं॥ भ्रमत बहु दिन बीत जांई भावना भावें खरे। सो अलाभ परीष विजयी ते सु शिवरमनी वरे॥

१६ रोग परीषह (पद्धरी छन्द) तन बात पित्त कफ रक्त आदि। बाढ़ें तन जब बहु लहि विषाद॥ ते सहें वेदना मुनि अगाध। आतम सुलीन मैं नमो साध॥

१७ तृणस्पर्श परीषह—तीक्षण कांटे कंकर अपार। सुखे तृण तिनके पद विदार॥ रज उड़ि लोचनमें परहि आय। काढ़ैं न, न चाहें पर सहाय॥

१८ मल परीषह—जल न्हौन तजो जावत सु एव। पुनि चलै अङ्गमें बहु पसेव॥ उठि के जु धूल लिपटै सुअङ्ग। तिनके सुभाव बरते अभङ्ग॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह—जो विद्या निधि बिजई महान, चिर तपसी गुनको नहिं प्रमान ॥ नहिं करहिं विनय तिनकी जु कोय। तो विकलप उर आनें न सोय ॥

२० प्रज्ञा परीषह (हरिगीता छन्द) तर्क छन्द जु व्याकरण गुन कला आगम सब पढ़े। देखि जाकी सुमतिवादी विलष लज्यों में बढ़े ॥ सुनत जेसे नाद केहर बन गयन्द जु भाजही। महा मुनि इमि प्रज्ञा भाजन रञ्च मद नहि छाजही ॥

२१ अज्ञान परीषह—करो दीरघ काल बहु तप कष्ट नानाविधि सहो। तीन गुप्ति सम्हार निश दिन चित्त इत उत नहिं बहो ॥ अबध मनपर्य्यय जु केवल ज्ञान अज हूं नहि जगे। तऊ इहि विधि साधु विकलप ते सुनिज आतम पगे ॥

२२ अदर्शन परीषह—काल बहु व्रत नेम पाले सावधान रहे सदा। होय तप सो सिद्ध शिवकी झूठ सो लागे कदा ॥ यह भाव मुनि उरमें न आने परम समता धारहीं। सो आदर्श परीष बिजई सकल कर्म निवारहीं ॥

२३ परीषह उदय—ज्ञानावर्णीके उदय प्रज्ञा व अज्ञान युग्म दर्शना वर्ण त आदर्शन बखानिये। अन्तरायके प्रकाश उपजै अलाभ जास बरनो चारित्र मोह सातों ठीक ठानिये ॥ नग्न निष द्यारति स्त्रीक्रोस याचना सत्कार तिरस्कार जु एकादश जानिये। एकादश बाकी रही वेदनी उदयसे कही बाईस परीषह सब ऐसी भांति मानिये ॥ अडिल्ल—एकबार इन मांहि एक मुनिके कही। सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवे सही। आसन सयन विहार दोह इन मांहिने। शीत उष्णमें एक तीन ये नाहिंने ॥

(२१) बारहमासा राजुल ।

राग मरहटी (झड़ी)

मैं लूंगी श्रीअरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त चारका सरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥ टेक ॥

आषाढ़ मास (झड़ी)

सखि आया आषाढ़ घन घोर मोर चहुं ओर मचा रहे शोर इन्हे समझावो। मेरे प्रीतम की तुम पवन परीक्षा लावो। हैं कहां मेरे भरतार कहां गिरनार महाव्रत धार बसे किस बनमें। क्यों बांध मोड़ दिया तोड़ क्या सोची मनमें ॥

(झर्वटें)—जा जारे पपैया जारे प्रीतमको दे समझारे। रही नौ भव संग तुम्हारे, क्यों छोड़ दई मझधारे ॥

(झड़ी)—क्यों बिना दोष भये रोष नहीं सन्तोष यही अफसोस बात नहिं बूझी। दिये जादों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझी। मोहि राखो शरण मंझार मेरे भर्तार करो उद्धार क्यों दे गये झुरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥

श्रावण मास (झड़ो)

सखि श्रावण संबर करे समन्दर भरे दिगम्बर धरे क्या करिये। मेरे जी में ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब तजूं हार शृंगार तजूं संसार क्यों भव मंझार में जी भरमाऊं। क्या पराधीन तिरियाका जन्म नहिं पाऊं ॥

(झर्वटें) सब सुन लो राज दुलारी। दुख पड़ गया हम पर भारी। तुम तज दो प्रीति हमारी कर दो संयम की त्यारी।

(झड़ो)—अब आगया पावस काल करो मत टाल भरे सब

ताल महा जल बरसे। बिन परसे श्रीभगवन्त मेरा जी तरसे। मैं तज दई तीज सलौन पलट गई पौन मेरा है कौन मुझे जग तरना। निर्मम नेम बिन हमें जगत क्या करना॥

भादों मास (झड़ी)

सखि भादों भरे तलाब मेरे चितचाव करूंगी उछाव से सोलहकारण। करूं दसलक्षण के व्रत से पाप निवारण। करूं रोट तीज उपवास पञ्चमी अकास अष्टमी खास निशल्य मनाऊं। तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म जलाऊं॥

(झर्बटे)—सखि दुद्धर रसकी धारा। तजिहार चार परकारा। करूं उग्र उग्र तप सारा। ज्यों होय मेरा निस्तारा।

(झड़ी)—मैं रत्नत्रय व्रत धरूं चतुर्दशी करूं जगत् से तिरूं करूं पखवाड़ा। मैं सब से छिमाउं दोष तजूं सब राड़ा। मैं सातों तत्व विचार कि गाऊं मल्हार तजा संसार तौ फिर क्या करना। निर्मम नेम बिन हमें जगत् क्या करना॥

आसोज मास (झड़ी)

सखि आगया मास कुवार लो भूषण तार मुझे गिरनार का दे दो आज्ञा। मेरे पाणिपात्र आहारकी है परतिज्ञा। लो तार ये चूड़ामणी रतनकी कणी सुनों सब जनी खोल दो वैनी। मुझको अवश्य परभातहि दीक्षा लैनी॥

(झर्बटे)—मेरे हेतु कमण्डल लावो। इक पीछी नई मंगावो मेरा मत ना जी भरमावो। मम सूते कर्म जगावो॥

(झड़ी)—है जगमें असाता कर्म बड़ा बेशर्म मोहके भरमसे धर्म न सूझे। इसके वश अपना हित कल्याण न बूझे। जहां मृग

तृष्णाकी धूर वहां पानी दूर भटकना भूर कहां जल झरना। निर्मम नेम बिन हमें जगत क्या करना ।

कार्तिक मास (झड़ी)

सखि कार्तिक काल अनन्त श्रीअरहन्तकी सन्त महन्तने आज्ञा पाली। धर योग यत्न भव भोगकी तृष्णा टाली । सजे चौदह गुण अस्थान स्वपर पहचान तजे रु मकान महल दिवाली । लगा उन्हें मिष्ट जिन धर्म अमावस काली ॥

(झर्वटें)—उन केवल ज्ञान उपाया । जगका अन्धेर मिटाया। जिसमें सब विश्व समाया । तन धन सब अथिर बताया ॥

(झड़ी)—है अथिर जगत सम्बन्ध अरी मतिमन्द जगत्का अन्ध है धुन्ध पसारा। मेरे प्रीतमने सत जानके जगत् बिसारा । मैं उनके चरणकी चेरी तू आज्ञा दे मा मेरी । है मुझे एक दिन मरना। निर्मम नेम० ॥

अगहन मास (झड़ी)

सखि अगहन ऐसी घड़ी उदय में पड़ी मैं रह गई खड़ी दरस नहिं पाये। मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही गँवाये ।

नहीं मिले हमारे पिया न जप तप किया न संयम लिया अटक रही जगमें । पड़ी काल अनादिसे पापकी बेड़ी पगमें ॥

(झर्वटें)—मत भरियो मांग हमारी । मेरे शीलको लागे गारी। मत डारो अञ्जन प्यारी। मैं योगन तुम संसारी ॥

(झड़ी)—हुये कन्त हमारे जती मैं उनकी सती पलट गई रती तो धर्म नहिं खण्डू । मैं अपने पिताके बंशको कैसे भंडू । मैं मण्डा शील सिङ्गार अरी नथ तार गये भर्त्तारके संग आभरना निर्मम नेम बिन० ॥

पौष मास (झड़ी)

सखि लगा महीना पोह ये माया मोह जगतसे द्रोह रु प्रीत करावै । हरे ज्ञानावरणी ज्ञान अदर्शन छावे । पर द्रव्यसे ममता हरे तो पूरी परे जु सम्बर करै तो अन्तर टूटै । अस ऊंच नीच कुल नामकी संज्ञा छूटै ॥

(झर्वटें)—क्यों ओछी उमर धरावै । क्यो सम्पतिको बिल गावे । क्यों पराधीन दुःख पावे । जो संयममें चित लावे ॥

(झड़ी)—सखि क्यों कहलावे दीन क्यों हो छवि छीन क्यों विद्याहीन मलीन कहावै । क्यों नारि नपुंसक जन्मे कर्म नचावै । वे तजैं शील श्रृङ्गार रुलै संसार जिने दरकार नरकमें पड़ना । निर्न०

माघ मास (झड़ी)

सखि आगया माह बसन्त हमारे कन्त भये अरहन्त वो केवल-ज्ञानी । उन महिमा शील कुशीलकी ऐसे बखानी । दिये सेठ सुदर्शन सूल भई मखतूल वहां बरसे फूल हुई जयवाणी वे मुक्ति गये अरु भई कलङ्कित राणी ॥

(झर्वटें)—कीचकने मन ललचाया । द्रुपदीपर भाव धराया । उसे भीमने मार गिराया । उन किया जैसा फल पाया ॥

(झड़ी)—फिर गह्या दुर्योधन चीर हुई दिलगीर जुड़ गई भीर लाज अति आवे । गये पाण्डु जुवेमें हार न पार बसावे । भये परगट शासन बीर हरी सब पीर बन्धाई धीर पकर लिये चरना । निर्नम नेम बिन० ॥

फागुन मास (झड़ी)

सखि आया फाग बड़ भाग तो होरी त्याग अठांही लाग के

मैनासुन्दर। हरा श्रीपालका कुष्ट कठोर उदम्बर। दिया धवल सेठने डार उदधिकी धार तो होगये पार वे उस ही पलमें। अरु जापरणी गुणमाल न डूबे जलमें॥

(झर्वटें)—मिली रैन मंजूषा प्यारी। जिन ध्वजा शील की धारी। परी सेठ पै मार करारी। गया नर्कमें पापाचारी॥

(झड़ी)—तुम लखो द्रोपदी सती दोष नहिं रती कहें दुर्मती पद्मके बन्धन। हुआ धातकी खण्ड जरूर शील इस खण्डन। उन फूटे घड़े मंझार दिया जल डाल तो वे आधार थमा जल झरना। निर्नेम नेम बिन० ॥

चैत्र मास (झड़ी)

सखि चैत्रमें चिन्ता करे न कारज सरे शीलसे टरे कर्मकी रेखा। मैंने शीलसे भीलको होता जगत् गुरु देखा। सखी शीलमें सुलसां तिरी सुतारा फिरी खलासी करी श्रीरघुनन्दन। अरु मिली शील परताप पवनसे अञ्जन॥

(झर्वटें)—रावणने कुमत उपाई। फिर गया विभीषण भाई। छिनमें जा लंक गमाई। कुछ भी नहिं पार-बसाई॥

(झड़ो)—सीता सती अग्निमें पड़ी तो उस ही घड़ी वह शीतल पड़ी चढ़ी जल धारा। खिल गये कमल भये गगनमें जय जल कारा। पद पूजे इन्द्र धरेन्द्र भई शीतेन्द्र श्रीजैनेन्द्रने ऐसा वरना। निर्नेम नेम बिन० ॥

बैशाख मास (झड़ी)

सखी आई बैशाखी भेष लई मैं देख ये ऊरध रेख पड़ी मेरे करमें। मेरा हुआ जन्म यु हीं उग्रसेनके घरमें। नहिं लिखा करम

में भोग पडा है जोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी। है मात पिता अरु भ्रातसे क्षमा हमारी॥

(झर्वटें)—मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे। घर भोगे भोग अपारे। जो विधिके अङ्क हमारे। नहिं टरें किसीके टारे॥

(झड़ी)—मेरी सखो सहेली बीर न हो दिलगीर धरो चित धीर मैं क्षमा कराउं। मैं कुलको तुम्हारे कबहुं न दाग लगाऊं। वह ले आज्ञा उठ खडी थी मङ्गल घड़ी बनमें जा पड़ी सुगुरुके चरना। निर्नेम नेम बिन०॥

जेठ मास (झड़ी)

अजी पड़े जेठकी धूप खड़े सब भूप वह कन्या रूप सती बड़ भागन। कर सिद्धनको प्रणाम किया जग त्यागन। अजि त्यागे सब संसार चूड़ियां तार कमण्डलु धार के लई पिछोठी। अरु पहर कै साड़ी स्वेत उपाटी चोटी॥

(झर्वटें)—उन महाउग्र तप कीना। फिर अच्युतेन्द्र पद लीना। है धन्य उन्हींका जीना। नहिं विषयनमें चित दीना॥

(झड़ी)—अजी त्रिया वेद मिट गया पाप कट गया पुण्यचढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ। करे धर्म अरथ फल भोग रचे परमारथ, वो स्वर्ग सम्पदा भुक्ति जायगी मुक्ति जैनको उक्तिमें निश्चय धरना। निर्नेम नेम०॥

जो पढ़ें इसे नर नारि बढ़ें परिवार सब संसारमें महिमा पावैं। सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावैं। नहिं रहैं सुहागिन दुखी होय सब सुखी मिटे वेरुपी करैं पति आदर। वे होंय जगत् में महा सतियोंकी चादर॥

(झवंटें)—मैं मानुष कुलमें आया । अरु जाति यती कह-लाया । है कर्म उदयकी माया । बिन संयम जन्म गवाया ॥

(झड़ी)—ग्राम संवत् कविवंश नाम—

है दिल्ली नगर सुवास वतन है खास फाल्गुन मास अठाहीं आठें । हों उनके नित कल्याण छपाकर बाटें । अजी विक्रम अब्द उनीस पे धर पैंतीस श्रीजगदीशका ले लो शरणा। कहै दास नैन-सुख दोष पे दृष्टि न धरना । मैं लूंगी श्रीअरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्तचार का सरना। निर्नेम नेम बिन० ॥ १३ ॥

(२२) बारह भावना

(भैयालाल कृत)

चौपाई—पंच परम गुरु वन्दन करूं । मन वच भाव सहित उर धरूं । बारह भावना पावन जान । भाऊं आतम गुण पहि-चान ॥१॥ थिर नहीं दीखे नयनो वस्त । देहादिक अरु रूप समस्त थिर बिन नेह कौनसे करूं । अथिर देख ममता परिहरूं ॥ २ ॥ अशरण तोहि शरण नहिं कोय । तीन लोकमें दृग धर जोय ॥ कोई न तेरो राखन हार । कर्म बसे चेतन निरधार ॥ ३ ॥ अरु संसार भावना येह । पर द्रव्यनसे कैसे नेह ॥ तू चेतन वे जड़ सर्वंग । तातें तजो परायो संग ॥४॥ जीव अकेला फिरे त्रिकाल । ऊरध मध्य भवन पाताल ॥ दूजा कोई न तेरे साथ । सदा अकेला भ्रमे अनाथ ॥ ५ ॥ भिन्न सदा पुद्गलसे रहे । मर्म बुद्धिसे जड़ता गहे ॥ वे रुपी पुद्गलके खन्ध । तू चिन्मूरति सदा अबन्ध ॥ ६ ॥ अशुचि देख देहादिक अङ्ग । कौन कुवस्तु लगी तो संग ॥ अस्ति चाम रुधिरादिक गेह । मल मूत्रनि लख

तजो स्नेह ॥७॥ आश्रव परसे कीजे प्रीत। ताते बंध पड़े विपरीत॥ पुद्गल तोहि अपन यो नाहि। तू चेतन यह जड़ सब आहि ॥८॥ सम्बर परको रोकन भाव। सुख होवेको यही उपाय ॥ आवे नहीं नये जहां कर्म। पिछले रुक प्रगटे निज धर्म ॥ ९ ॥ थिति पूर्ण ह्वे खिर खिर जाय। निर्जर भाव अधिक अधिकाय ॥ निर्मल होय चिदानंद आप। मिटे सहज परसंग मिलाप ॥१०॥ लोक मांहि तेरी कछु नाहिं। लोक अन्य तू अन्य लखाहि॥ वह सब षट द्रव्यनका धाम। तू चिन्मूरति आतमराम ॥११॥ दुर्लभ परको रोकन भाव। सो तो दुर्लभ है सुन राव। जो तेरे है ज्ञान अनन्त। सो नहिं दुर्लभ सुनो महन्त ॥ १२ ॥ धर्म स्वभाव आप ही जान। आप स्वभाव धर्म सोई मान ॥ जब वह धर्म प्रगट तोहि होइ। तब परमातम पद लख सोइ ॥ १३ ॥ ये ही बारह भावन सार। तीर्थंकर भावें निर्धार। होय विराग महाव्रत लेय। तब भव भ्रमण जलांजलि देय ॥१४॥ भैया भावो भाव अनूप। भावत होय तुरत शिव भूप। सुख अनन्त बिलसो निशि दीश। इम भावो स्वामी जगदीश ॥ १५ ॥

दोहा—प्रथम अथिर अशरण जगत्, कहेअन्य अशुचान।
आश्रव संवर निर्जरा, लोक बोध तुम मान ॥ १६ ॥

(२३) बारह भावना भूधरदास कृत।

दोहा—राजा राणा छत्रपति, हथियनके असवार। मरणा सब को एक दिन, अपनी अपनी बार ॥१॥ दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार। मरती विरियां जीव को, कोई न राखनहार ॥२॥ दाम बिना निर्धन दुःखी, तृष्णा बश धनवान। कहीं न सुख

संसारमें, सब जग देखो छान ॥ ३ ॥ आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय। यूं कबहूं इस जीवका, साथी सगा न कोय ॥ ४ ॥ जहां देह अपनी नहीं,तहां न अपना कोय । पर संपति पर प्रगटये, पर हैं परिजन लोय ॥ ५ ॥ दिपे चाम चादर मढ़ी, हाड़ पीजरा देह । भीतर या सम जगतमें, और नहीं घिन गेह ॥ ६ ॥

सोरठा—मोह मोदके जोर, जगवासी घूमें सदा । कर्म चोर चहुं ओर, सरबस लूटें सुध नहीं ॥७॥ सतगुरु देय जगाय, मोहि नींद जब उपशमै । तब कुछ बने उपाय,कर्म चोर आवत रुकें ॥८॥

दोहा—ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधैं भ्रम छोर। या विधि बिन निकसे नहीं, बैठे पूर्व चोर ॥९॥ पंचमहाव्रत संचरण, सुमति पंच परकार । प्रबल पञ्च इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार ॥ १० ॥ चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान । तामें जीव अनादिसे, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥ ११ ॥ याचे सुर तरु देय सुख, चिन्तन चिन्ता रैन । बिन याचे बिन चिन्तवे, धर्म सकल सुख देन ॥ २ ॥ धन कन कंचन राज सुख, सबै सुलभ कर जान। दुर्लभ है संसारमें एक यथारथ ज्ञान ॥ १३ ॥ सम्पूर्ण ॥

(२४) बारह भावना बुधजनदास कृत

गीता छन्द—जेती जगतमें वस्तु तेतीं अथिर पर्ययते सदा । परणमन राखन नाहिं समरथ इन्द्रचक्री मुनि कदा ॥ तन धन यौवन सुत नारी पर कर जान दामिन दमकसा । ममता न कीजे धारि समता मानि जलमें नमकसा ॥ १ ॥ चेतन अचेतन परिग्रह सब हुआ अपनी तिथि लहैं । सो रहैं आप करार माफिक अधिक

राखे ना रहे ॥ अब शरण काकी लेयगा जब इन्द्र नाही रहत हैं । शरण तो इक धर्म आतम जाहि मुनिजन गहत हैं ॥ २ ॥ सुर नर नरक पशु सकल हेरे कर्म चेरे बन रहे । सुख शाश्वता नहीं भासता सब विपतिमें अति सन रहे ॥ दुःख मानसी तो देवगतिमें नारकी दुःख ही भरे । तिर्यंच मनुज वियोग रोगी शोक संकटमें जरे ॥ ३ ॥ क्यों भूलता शठ फूलता है देख पर कर थोकको ॥ लाया कहां ले जायगा क्या फौज भूषण रोक को । जन्मन मरण तुझ एकले को काल केता होहेगा । संग अरु नाहीं लगे तेरे सीख मेरी सुन भगा ॥ ४ ॥ इन्द्रीनसे जाना न जावे तू चिदानन्द अलक्ष है । स्व सम्वेदन करत अनुभव हेत तब प्रत्यक्ष है । तन अन्य जन जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है। कर भेद ज्ञान सो ध्यान धर निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख राचा फिरे नाचा रूप सुन्दर तन लिया । मल मूत्र भाड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया ॥ क्यों सूग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे । तोहि काल गटके नाहि अटके छोड़ तुझको गिर परे ॥६॥ कोई खरा अरु कोई बुरा नाहीं वस्तु विविधि स्वभाव है । तू वृथा विकलप ठान उरमें करत राग उपाव है ॥ यूं भाव आश्रव बनत तू ही द्रव्य आश्रव सुन कथा । तुझ हेतु ते पुद्गल करम बन निमित्त हो देते व्यथा ॥ ७ ॥ तनभोग जगत् सरूप लख डर भविक गुरु शरणा लिया । सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्ष रुचि सन्मुख भया । इन्द्री अनिन्द्री दाबि लीनी त्रस स्थावर बध तजा । तब कर्म आश्रव द्वार रोके ध्यान निजमें जा सजा ॥ ८ ॥ तजा शल्य तीनो वरत लीनों बाह्य भ्यन्तर तप तपा । उपसर्ग सुरनर जड़ पशु कृत सहा निज आत्म

अपा ॥ तब कर्म रस बन होन लागे द्रव्य भावन निर्जरा । सबकां हर के मोक्ष बरके रहत चेतन ऊजरा ॥ ९ ॥ बिच लोकनन्तालोक माहीं लोक में द्रव सब भरा । सब भिन्न भिन्न अनादि रचना निमित्त कारणकी करा ॥ जिन देव भासा तिन प्रकाशा भर्म नाशा सुन गिरा । सुर मनुष तिर्यंच नारकी है ऊर्ध्व मध्य अधोधरा ॥ १० ॥ अनन्त काल निगोद अटका निकस थावर तन धरा । भूवारि तेज बयार व्है के वे इन्द्रिय त्रस अवतारा ॥ फिर हो ते- - इन्द्री वा चौ इन्द्री पंचेन्द्री मन बिना बना । मन युत मनुष गति होना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥ ११ ॥ न्हाना धोना तीर्थ जाना धर्म नाही जप जपा । नग्न रहना धर्म नाहीं धर्म नाहीं तप तपा ॥ बर धर्म्म निज आत्म स्वभावा ताहि बिन सब निष्फला । बुध जन धर्म निज धार लीना तिन ही कीना सब भला ॥ १२ ॥

दोहा । अथिर शरण संसार है, एकत्व अनित्यहि जान ।
अशुचि आश्रम संवरा, निर्जन लोग बखान ॥ १३ ॥
बोध औ दुर्लभ धर्म ये, बारह भावन जान ।
इनको ध्यावे जो सदा, क्यों न लहैं निर्वाण ॥ १४ ॥

॥ इति बारह भावना बुधजन कृत सम्पूर्णः ॥

(२५) बारहभावनाभारतचन्द्रजीकृत

सवैया ॥ ३१ ॥

भोग उपभोग जे कहे हैं संसार रूप रमाधन पुत्र ओकलत्र आदि जानिये ॥ ज्यूंही जल बुद बुद प्रत्यक्ष है लखाव तनु विद्युत् चमत्कार स्थिर न रहानिये । त्यूं ही जग अथिर विलास को असार जान थिर नहीं दीसे सो अनादि अनुमानिये ॥ यह जो

विचारे सो अनित्य अनुप्रेक्षा कह प्रथम ही भेद जिनराज जो बखानिये ॥ १ ॥ निर्जन अरण्य माहिं ग्रहे मृग सिंह धाय शरण न दीसे अशरण ताहि कहिये । हरिहरादि चक्रवर्त्ति पवत्यूं अथिर गिनो जन्म मरण सा अनादि ही ते लहिये ॥ याहीको विचारिय असार संसार जान एक अवलंब जिन धर्म ताहि गहिये । दृढ़ता हिये धार निज आत्माको कर विचार तजके विकार सब निश्चल हो रहिये ॥ २ ॥ कर्मकाण्ड दाही थकी आतम भ्रमण करे नट जैसी नाटक अनन्तकाल करे है । पिता हू ते पुत्र होय जनक होय सुत हूंते स्वामी हूते दास भृत्य स्वामी पद धरे हैं । माता हू ते त्रिया होय कामिनी ते माय होय भवबन मांहि जीव यूंही संसरे है ॥३॥ भ्रमूं जो एकाकी सदा देखिये अनन्तकाल एकाकी जन्म मृत्यु बहु दुख सहो हैं । रोगन ग्रसों है एके पाप फल भुंजे घनो एके शोकवन्तको उदुती नाहीं सहो है । स्वजन न तात मात साथी नहिं कोय यह रत्नत्रय साथी निज ताहि नहिं गहो है । एके यह आतम ध्यावे एके तपसा करावे होय शुद्ध भावे तब मुक्ति पद लहो है ॥४॥ आतम है अन्य और पुद्गल हूं अन्य लखो आतम मात तात पुत्र त्रिया सब जानरे । जैसे निशि माहिं तरहूपे खग भेलं होंय प्रात उड़ जांय ठौर ठौर तिमि आनरे ॥ तैसे बिनाशीक यह सकल पदार्थ हैं हाट मध्य जन अनेक होंय भेले आनरे । इन हूंते काज कछु सरैनेगो नाहीं भैया अनित्यानुप्रेक्षरूप यह पहचानरे ॥५॥ त्वचा पल अस्तनसाजाल मल मूत्र धाम शुक्र मल रुधिर कुधातु सप्तमई है । ऐसो तन अशुचि अनेक दुर्गन्ध भरो श्रबै नव-द्वार तामें मूढ़ मत भई है । ऐसी यह देह ताहि लखके उदास रहो

मानो जीव एक शुद्ध बुद्ध परणई है। अशुचि अनुपेक्षा यह धारे जो इसी ही भांति तज के विकार तिन मुक्ति रमालई है ॥६॥

चौपाई।

आश्रव अनुपेक्षा हिय धारं। सत्तावन आश्रवके द्वारं ॥ कर्माश्रम पैसारजु होय। ताको भेद कहूं अब सोय ॥ मिथ्या अविरत योग कषाय। यह सत्तावन भेद लखाय ॥ बंधो फिरै इनके बश जोव। भवसागरमें रुले सदीव ॥ विकल्प रहित ध्यान जब होय। शुभआश्रव की कारण सोय। कर्म शत्रु को कर संहार। तब पावै पञ्चम गति सार ॥७॥ आश्रवको निरोध जो ठान। सोई सम्बर कहै बखान ॥ सम्बर कर सुनिर्जरा होय। सो है द्रश्य परकारहि जोय ॥ इक स्वयमेव निर्जरा पेख। दूजी निर्जरा तपहि विशेष ॥८॥ पूर्व सकल अवस्था कही। संवर कर जो निर्जरा सही ॥ सोय निर्जरा दो परकार। सविपाकी अविपाकी सार ॥ सविपाकी सब जीवन होय। अविपाकी मुनिवर के जोय ॥ तपके बल कर मुनि भोगाय। सोई भाव निर्जरा आय ॥ बंधे कर्म छुटे जिह घरी। सोई द्रव्य निर्जरा खरी ॥९॥ अधो मध्य अरु ऊरध जान। लोकत्रय यह कहे बखान ॥ चौदह राजू सबे उतङ्ग। बात त्रय बेढ़े सर बङ्ग ॥ घनाकार राजू गण ईस। कहे तीन सै तैंतालीस ॥ अधोलोक चौकूटो जान। मध्य लोक झालरी समान ॥ ऊरध लोक मृदङ्गाकार। पुरुषाकार त्रिलोक निहार ॥ ऐसो निज घर लखे जु कोय। सो लोकानुप्रेक्ष यह होय ॥१०॥ दुर्लभ ज्ञान चतुर्गति माहिं। भ्रमत भ्रमत मानुष गति पाहिं ॥ जैसे जन्म दरिद्री कोय। मिलो रत्न निधि ताको सोय ॥ त्यूं मिलियो यह नर परयाय।

आर्य्यखण्ड ऊंच कुल पाय॥ आयु पूर्ण पञ्चइन्द्री भोग। मन्द कषाय धर्म संयोग॥ यह दुर्लभ है या जग मांहि। इन बिन मिले मुक्तपद नाहिं॥ ऐसो भावना भावे सार। दुर्लभ अनुप्रेक्षा सु विचार॥११॥ पाले धर्म यत्न कर जोय। शिव मन्दिर ते लहै जु सोय॥ धर्म भेद दश विधि निर्धार। उत्तम क्षमा पुन मार्दव सार आर्जव सत्य शौच पुन जान। सञ्जम तप त्यागहि पहिचान॥ आकिञ्चन ब्रह्मचर्य्य गनेव। यह दश भेद कहे जिनदेव॥ धर्महिते तीर्थंकर गती। धर्महि ते होवे सुरपती॥ धर्मही ते चक्रेश्वर जान धर्मही ते हरि प्रतिहरि मान॥ धर्मही ते मनोज अवतार॥ धर्म ही ते हो भवदधिपार॥ रत्नचन्द यह करे बखान। धर्म ही ते पावै निर्वान॥ इति॥

(२६) वैराग्य भावना।

दोहा—बीज राग फल भोगवे, ज्यों किसान जग मांहि।
त्यों चक्री सुख ह्वै मगन, धर्म विसारे नाहिं॥

योगीरासा वा नरेन्द्र छन्द।

इस विधि राज्य करै नरनायक भोगे पुण्य विशाल। सुख सागर मैं मग्न निरन्तर जात न जानो काल॥ एक दिवस शुभकर्म योगसे क्षेमंकर मुनि वंदे। देखे श्रीगुरुके पद पङ्कज लोचन अलि आनन्दे॥१॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिर नायो कर पूजा स्तुति कीनी। साधु समीप विनय कर बैठो चरणोंमें दृष्टि दीनी॥ गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागो। राज्यरमा बनतादिक जो रस सो सब नीरस लागो॥२॥ मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत भर्म बुधि भागी। भव तन भोग स्वरूप विचारो परम धर्म अनुरागी॥

या संसार महावन भीतर भ्रमत छोर न आवे। जन्मन मरन जरायों दाहे जीव महा दुःख पावे ॥३॥ कबहूं कि जाय नर्क पद भुंजे छेदन भेदन भारी। कबहूं कि पशु पर्याय धरे तहां बध बन्धन भय कारी॥ सुरगतिमें परि सम्पति देखे राग उदय दुख होई। मानुष योनि अनेक बिपति मय सर्व सुखी नहीं कोई॥ ४ ॥ कोई इष्ट वियोगी बिलखे कोई अनिष्ट संयोगी। कोई दीन दरिद्री दीखे कोई तनका रोगी॥ किस ही घर कलिहारी नारी के बैरी सम भाई। किस हीके दुख बाहर दीखे किसही उर दुचिदाई॥ ५ ॥ कोई पुत्र बिना नित भूरे होय मरे तब रोवे। खोटी सन्ततिसे दुख उपजे क्यों प्राणी सुख सोवे॥ पुण्य उदय जिनके तिनको भी नाहिं सदा सुख साता। यह जग बास यथारथ दीखे सबही हैं दुःख दाता॥६॥ जो संसार विषें सुख होते तीर्थंकर क्यों त्यागे। काहेको शिव साधन करते संयमसे अनुरागे। देह अपावन अथिर घिनावनी इसमें सार न कोई। सागरके जलसे शुचि कीजै तोभी शुद्धि न होई॥ ७ ॥ सप्त कुधातु भरी मलमूत्र चर्म लपेटी सोहै। अन्तर देखत या सम जगमें और अपावनको है॥ नव मल द्वार श्रवें निश वासर नाम लिये घिन आवे। व्याधि उपाधि अनेक जहां तहां कौन सुधी सुख पावे॥ ८ ॥ पोषत तो दुख दोष करे अति सोखत सुख उपजावे। दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख प्रीति बढ़ावे॥ राचन योग्य स्वरूप न याको बिरचन योग्य नहीं है। यह तन पाय महातप कीजै इसमें सार यही है॥ ९ ॥ भोग बुरे भवरोग बढ़ावे वैरी हैं जग जीके। वे रस होंय विपाक समय अति सेवत लागे नीके॥ बज्र अग्नि विषसे विषधरसे हैं अधिक

दुखदाई। धर्म रत्नको चोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहाई ॥१०॥ मोह उदय सह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने। ज्यों कोई जन खाय धतूरा सब सो सब कञ्चन माने॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग मनोहर मन वांछित जन पावे। तृष्णा नागिन त्यों त्यों डंके लहर लोभ विष लावे॥११॥मैं चक्री पद पाय निरन्तर भोगै भोग घनेरे॥ तो भी तनक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे। राज समाज महा अघ कारण वैर बढ़ावन हारा। वेश्या सम लक्ष्मी अति चञ्चल इसका कौन पत्यारा ॥१२॥ मोह महा रिपु बैर विचारे जग जीव सङ्कट डारे। घर कारागर बनिता बेड़ी परजन है रखवारे॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप ये जियको हितकारी। ये ही सार असार और सब यह चक्री जिय धारी॥१३॥ छोड़े चौदह रत्न नवोनिधि और छोड़े सङ्ग साथी। कोड़ी अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी॥ इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण त्रणवत त्यागी। नीति विचार नियोगी सुतको राज्य दिया बड़ भागी॥ १४॥ होइ निस्सल्य अनेक नृपति संग भूषण बसन उतारे। श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा पञ्च महाव्रत धारे॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम धन्य यह धैर्यधारी। ऐसी सम्पति छोड़ बसे बन तिन पद धोक हमारी॥१५॥

दोहा—परिग्रह पोट उतार सब, लीनो चारित्र पंथ।
निज स्वभाव में स्थिर भये, बज्रनाभि निर्ग्रन्थ॥

(२७) समाधिमरण।

(कवि द्यानतराय कृत)

गौतम स्वामी बन्दो नामी मरण समाधि भला है। मैं कब

पाऊं निसदिन ध्याऊं गाऊं बचन कला है ॥ देव धरम गुरु प्रीति महा दृढ़ सात व्यसन नहीं जाने । त्यागि बाइस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने ॥१॥ चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न बिराधे । बनिज करे पर द्रव्य हरे नहिं छहो करम इमि साधे ॥ पूजा शास्त्र गुरुनकी सेवा संयम तप चहुं दानी । पर उपकारी अल्प अहारी सामायक विधि ज्ञानी ॥ २ ॥ जाप जपे तिहुं योग धरे दृग तनकी ममता टारे । अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे ॥ आग लगे अरु नाव डुबे जब धर्म विघन जब आवे । चार प्रकार अहार त्यागिके मन्त्र सु मनमें ध्यावे ॥३॥ रोग असाध्य जहाँ बहु देखे कारण और निहारे । वात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को डारे ॥ जो न बने तो घरमें रह करि सबसों होय निराला । मात पिता सुत त्रियको सोंपै निज परिग्रह इहि काला ॥४॥ कछु चैत्यालय कछु श्रावक जन कछु दुखिया धन देई । क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मनकी शल्य हनेई ॥ शत्रुन सों मिलि निज कर जोरे मैं बहु करी है बुराई । तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥५॥ धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे संतोषे । छहो कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषे ॥ ऊंच नीच घर बैठ जगह इक कछु भोजन कछु पैले । दूधा धारी क्रम क्रम तजिके छाछ अहार पहेले ॥ ६ ॥ छाछ त्यागिके पानी राखे पानी तजि संथारा । भूमिमांहि फिर आसन माड़े साधर्मी ढिग प्यारा ॥ जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनबानी पढ़िये । यों कहि मौन लियो सन्यासी पंच परम पद गहिये ॥७॥ चौ आराधन मनमें ध्यावे बारह भावन भावे । दश लक्षण मन धर्म विचारे रत्नत्रय मन लावे ॥ पैंतिस सोलह षट पन

चौ दुइ इक बरस विचारे। काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञान मई तू सारे ॥ ८ ॥ अजर अमर निज गुण सो पूरे परमानन्द सुभावे। आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावे ॥ क्षुधा तृषादिक होइ परीषह सहै भाव सम राखे। अतीचार पांचो सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखे ॥९॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागे। अद्‌भुत पुण्य उपाय सुरगमें सेज उठे ज्यों जागे। तहं तें आवे शिवपद पावे बिलसे सुख अनन्तो। द्यानत यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥ १० ॥

(२८) अठारहनाते लिख्यते।

(श्रीयुत कुन्दनलाल कृत)

कोई किसीका सगा नहीं झूंठी सब नातेदारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही में जारी ॥ टेक ॥ मालवदेश उज्जैन शहरमें सेठ सुदत्त बसे भारी, बसन्ततलिका वेसवा जिन्होंने निज घरमें डारी। रोग सहित जब भई बेसवा सेठि अरुचि चितमें धारी, गर्भवतीको महलसे छिनमें कर दीनी उनने न्यारी ॥

शैर—निरादर हो गणिका वहां से घर अपने आई है। खड़ी दिलगीर हो सोचें पड़ी कैसी तबाही है ॥ जने लड़का और लड़की जोड़ले ऐसी भाई है। जुदे इनको करूं घरसे जभी मेरी रिहाई है ॥ सुतडारा उत्तरदिशि माहीं तनुजा दक्षिणदिशि डारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही में जारी ॥१॥ प्रयागबासी बनजारेकी लड़की पर जा नजर पड़ी। उठा गोदमें नाम कमला जा रक्खा बिसी घड़ी ॥ दूजे बनजारे सुभद्रकी लड़के पर जा दृष्टि पड़ी। उठा गोदमें नाम धनदेव रखा परवरिस करी ॥ ले लड़का अरु लड़की दोनों वे

अपने घर आए हैं। परवरिस पा बड़े हुये ब्याहने योग्य पाए हैं॥ बनी दुलहिन कमला दुलहा धनदेव भाई है। मिला संयोग जु ऐसा बहिन भाई विवाहे हैं॥ भोग भोगवें भाई बहिन मिलि विधना तेरी बलिहारी। अठारह नाते हुये हैं एक जन्मही में जारी ॥ २ ॥ समय पाय व्योपार हेत धनदेव गया उज्जैन नगर। दैव योगसे भई निज मातासे दो चार नजर॥ अनरथ ऐसा हुआ किया विभचार जु दोनोंने मिलकर। भेद न जाना भोगने भोग लगे माता सुत जु र॥ कई दिन तक वहां धनदेवको गणिका रमाया मैं। रोग संयोग जुग ऐसा वरुण इक लाल जाया है। कहीं कमलाने यह सब भेद मुनिवर सेती पाया है। पालना झूलता बालक वरुण जहँ पर बताया है। पहुंची सो उज्जैन नगर जहँ रचना देखी संसारी। अठारह नाते हुये हैं एक जन्महो मे जारी ॥ ३ ॥ हाय हाय सो करै अरे विधना तूने कीनी क्यारी। होते ही से मुझे क्यों नहिं तूने गर्दन मारी॥ क्या कहके अब झुलाऊं इस वीरनको बता विधातारी। छै नाते हैं मेरे इस बालकसे सुन महतारी॥ प्रथम तो पुत्र है मेरा जु मुझ भरतार से उपजा। तनुज धनदेव भाईका लगा जिससे भतीजा है॥ मेरी तेरी एक है माता जगा इस रीतिसे भ्राता है। मेरे मालिकका लघु भाई लगा देवरका नाता है॥ माता मेरीका तू देवर चचा इस तरह होता है। सौतके पुत्रका तू पुत्र इस नातेसे पोता है॥ छहनातेकर विरन झुलाऊं कथा करी जाहर सारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्म हो मैं जारी ॥४॥ गणिका पतिसे हुआ पिता जिसलघु भाई मुझ बाबा है। बचा पिता सो सगा धनदेव लगा मो दादा है॥ मेरा मालिक

हुआ धनदेव जिसने मुझे ब्याहा है। मेरी तेरी है मात एक जिससे लगता तु भाया है॥ वेश्या सौत है मैं हुं धनदेव पुत्र मेरा है। मैं गणिकासुत बधू गनिकापति यों लगा ससुरा है॥ कहे धनदेवसे नाते जताया भेद सारा है। सुना अहवाल घबराके शब्द हाहा पुकारा है॥ देखा जगका हाल हुए कैसे कैसे अखर अकारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही में जारी॥ ५॥ प्रथम पैदा किया मुझको इस नाते महतारी हैं। मेरे भाईकी स्त्री है जिस करके मुझ भावी है। पिता मुझ धनदेव है जिसकी माता तू दादी है॥ सौत भी है वह जु मेरे मालिककी प्रिय प्यारी हैं॥ सौत पुत्र वधू गणिका सो मेरी भी वधू जाहिर। मैं उसके पुत्रकी स्त्री लगी मेरी सासू सरासर। कहे नाते अठारह अंतमें इक सुगुरु सीख है। छुटा जगजालसे यहां कर्म शत्रुका बड़ा डर है। कुंदन ऐसे अनर्थ माया विधना जगमें विस्तारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्म ही में जारी॥ ६॥ ※ इति ※

(२६) अठारह नाते की कथा

मालवदेश उज्जयनीविषै राजा विश्वसैन तहां सुदत्त नाम श्रेष्ठी बसे सो सोलह कोटिको धनी, सो वसन्ततिलका नाम वेश्यापर आशक्त होय ताहि अपने घरमें राखी, सो गर्भवती भई, जब रोगसहित देह भई, तब घरमें से काढ़ि दई बहुरि बसन्ततिलका दुखी हो कर अपने घर आई सो उसके गर्भतें एक पुत्र और एक पुत्री साथही जुगल उत्पन्न होने के कारण खेद खिन्न हुई

तब क्रोधित हो कर तिन दोऊ बालकनको जुदे २ कम्बलमें लपेटि पुत्रीको तो दक्षिण द्वारपर डाली सो प्रयागनिवासी बनजारे ने लेकर अपनी स्त्रीको सौंपा कमलानाम धरा, अरु पुत्रको उत्तर द्वारपर डाला सो साकेतपुरेके एक सुभद्र बनजारेने अपनी स्त्री सुव्रताको दिया और धनदेव नाम धरा बहुरि पूर्वोपार्जित कर्मके वशतैं धनदेव और कमलाके साथ विवाह हुआ स्त्री भरतार हुए, पाछे धनदेव व्यापार करने वास्ते उज्जयनी नगरी गया तहां बसन्ततिलका वेश्यासों लुब्ध भया तब ताके संयोगतैं बसन्ततिलकाके पुत्र भया वरुण नाम धरा,उधर एक दिन कमला ने निमित्तज्ञानी मुनिसे इसकी कुशल वार्ता पूंछी सो मुनिने पूर्वभवसों लेकर वर्तमान तक सकल वृत्तान्त कहा।

इनका पूर्वभव वर्णन।

इसी उज्जयनी नगरीविषैं सोमशर्म्मा नाम ब्राह्मण ताके काश्यपी नाम स्त्री तिनकें अग्निभूत सोमभूत नामके दोय पुत्रसो दोनों कहीं तैं पढ़ कर आवैं थे, मार्गमें जिनदत्तमुनिको ताकी माता जो जिनमती नाम अर्जिकाकूं शरीर समाधान पूछंता देखा और जिनभद्रनामा मुनिकों सुभद्रानाम। अर्जिका पुत्रकी स्त्री थी सो शरीर समाधान पूछंती देखी तहां दोनों भाई ने हास्य करी कि तरुणकें तौ वृद्धस्त्री और वृद्धकैं तरुणी स्त्री, विधाता ने अच्छी विपरीति रचना करी सो हांस्यके पापतैं सोमशर्म्मा तौ बसन्ततिलका वेश्या हुई बहुरि अग्निभूत दोनो भाई मरिकरि बसन्ततिलकाकें पुत्र पुत्री जुगल हुये तिनने कमला अरु धनदेव नाम

पाये बहुरि काश्यपी ब्राह्मणीका जीव धनदेवके संयोग तैं वरुण नाम पुत्र भया इस प्रकार पूर्वभवका उज्जयनी नगरीविषैं सकल वृतान्त सुनने से कमला को पहिले जन्म का जातीस्मरण हुआ तब वह बसन्ततिलकाके घर गई तहां वरुण पालनेमें झूले था सो ताको कहती भई कि हे बालक! तेरे साथ मेरे छे नाते हैं सो सुन

१ प्रथम तो मेरा भरतार जो धनदेव ताके संयोगतैं तू पैदा भया सो मेरा भी (सौतेला) पुत्र है—२ दूजे धनदेव मेरा भाई है ताका तूं पुत्र तातैं मेरा भतीजा भी है।—३ तीजे तेरी माता बसन्ततिलका सो ही मेरी माता है तिस तैं सहोदर भी है—४ चौथे तू मेरे भरतार धनदेवका छोटा भाई तिसकारण मेरा देवर भी है—५ पांचवें धनदेव मेरी माता बसन्ततिलकाका भरतार है तातैं धनदेव मेरा पिता भया ताका तूं छोटा भाई तातैं मेरा चाचा भी है—६ छठयें मैं बसन्ततिलकाकी सौतिन तातैं धनदेव मेरा पुत्र ताका तूं पुत्र तातैं तू मेरा पोता भी है।

इस प्रकार वरुणके साथ छह नाते कहतो हती सो बसन्ततिलका तहां आई और कमलाको बोली कि तूं कौन है सो मेरे पुत्रसों इस प्रकार छे नाते सुनावै है? तब कमला बोली तेरे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुन—

१ प्रथम तो तू मेरी माता है क्योंकि धनदेवके साथ तेरे ही उदरसे युगल उपजी हूं—२ दूजे धनदेव मेरा भाई ताकी तू स्त्री तातें मेरी भौजाई भी है—तीजे तू मेरी माता ताका भर्तार धनदेव मेरा पिता भया ताकी तू माता तातैं मेरी दादी भी है—४ चौथे मेरा भरतार धनदेव ताको तू स्त्री तातें मेरी सौतिन

भी है—५ पांचवें धनदेव तेरा पुत्र सो मेरा भी पुत्र ताको तू स्त्री तातैं मेरी पुत्रबधू भी है—६ छट्ठे मैं धनदेवकी स्त्री तू धनदेवकी माता सो मेरी सासू भी है।—इस प्रकार वेश्या छै नाते सुनकर चित्तमें विचारने लगी त्यो ही तहां धनदेव आया ताकों देखि कमला बोली कि तुम्हारे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुनो—१ प्रथम तो तूं और मैं इसी वेश्याके उदर सों जुगल उपजे सो मेरा भाई है—२ दूजे तेरा मेरा विवाह भया सो मेरा पति भी है—२ तीजे बसन्ततिलका मेरी माता ताका तू भरतार तातैं मेरा पिता भी है—४ चौथे बरुण तेरा छोटा भाई सो मेरा काका भया ताका तू पिता सो काकाका पिता सो मेरा दादा भी भया—५ पांचव मैं बसन्ततिलकाकी सौति अरु तू मेरा सौतिनि पुत्र तातैं तू मेरा भी पुत्र है—६ छट्टे तू मेरा भरतार तातैं तेरी माता बसन्ततिलका मेरी सासु भई और सासू के तुम भरतार तातैं मेरे ससुर भी भये।

इस प्रकार एक ही जन्ममें इन प्राणियोंके परस्पर अठारह नाते भये ताको उदाहरण (दृष्टांत) कहा कि इस भांति इस संसार की विचित्र विडंबना है इसमें कुछ सन्देह नहीं।

इस प्रकार अठारह नातेका व्योरा समाप्त।

(३०) चौबीस तीर्थंकरोंके चिन्ह।

१ ऋषभनाथके बैल २ अजित नाथके हाथी ३ संभवनाथके घोड़ा ४ अभिनन्दन नाथके बन्दर ५ सुमति नाथके चकवा ६ पद्म प्रभके कमल ७ सुपार्श्वनाथके सांथिया ८ चन्द्रप्रभके चन्द्रमा ९ पुष्पदन्तके नाकू १० शीतलनाथके कल्पवृक्ष ११ श्रेयांसनाथ

के गेंडा १२ वासुपूज्यके भैंसा १३ विमलनाथके सुअर १४ अनंत नाथके सेही १५ धर्मनाथके बज्रदण्ड १६ शान्तिनाथके हिरण १७ कुंथनाथके बकरा १८ अरहनाथके मच्छी १९ मल्लिनाथके कलश २० मुनिसुव्रतनाथके कछवा २१ नमिनाथके कमल २२ नेमिनाथके शंख २३ पार्श्वनाथके सर्प २४ महावीरके सिंह।

(३१) बारह चक्रवर्त्ती।

भरतचक्री, २ सगरचक्री, ३ मघवाचक्री ४ सनत्कुमारचक्री ५ शान्तिनाथचक्री (तीर्थंकर), ६ कुन्थनाथचक्री, (तीर्थंकर), ७ अरनाथकी (तीर्थंकर), ८ सभूमचक्री; ९ पद्मचक्री वा महापद्म १० हरिषेणचक्री, ११ जयचक्री, १२ ब्रह्मदत्तचक्री।

(३२) नव नारायण।

१ त्रिपृष्ट, २ द्विपृष्ट, ३ स्वयंभू, ४ पुरूषोत्तम, ५ पुरुषसिंह, ६ पुण्डरीक, ७ दत्त ८ लक्ष्मण, ९ कृष्ण।

(३३) नव प्रतिनारायण।

१ अश्वग्रीव, २ तारक, ३ मेरक. ४ मधु (मधुकैटभ) ५ निशुंभ, ६ बली, ७ प्रह्लाद, ८ रावण, ९ जरासंघ।

(३४) बलभद्र

१ अचल, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ ५ सुदर्शन, ६ आनंद, ७ नंदन (नंद), ८ पद्म (रामचन्द्र), ९ राम (बलभद्र)।

(३५) नव नारद ।

१ भीम, २ महाभीम, ३ रुद्र, ४ महारुद्र, ५ काल, ६ महाकाल ७ दुर्मुख, ८ नरकमुख, ९ अधोमुख ।

[३६] ग्यारह रुद्र ।

१ भीमबली २ जितशत्रु ३ रुद्र ४ विश्वानल ५ सुप्रतिष्ट ६ अचल ७ पुण्डरीक ८ अजितधर, ९ जितनाभि, १० पींठ, ११ सात्यकी

(३७) चौबीस कामदेव ।

१ बाहुबली, २ अमिततेज,३ श्रीधर ४ दशभद्र,५ प्रसेनजिन्, ६ चंद्रवर्ण, ७ अग्निमुक्ति, ८ सनत्कुमार (चक्रवर्ती) ९ वत्सराज, १० कनकप्रभ, ११ सेघवर्ण, १२ शांतिनाथ (तीर्थंकर), १३ कुंथुनाथ (तीर्थंकर), १५ विजयराज, १६ श्रीचंद्र, १७ राजा नल, १८ हनुमान्, १९ बलराजा, २० वसुदेव, २१ प्रद्युम्न, २२ नागकुमार, २३ श्रीपाल, २४ जंबूस्वामी ।

[३८] चौदह कुलकर

१ प्रतिश्रुति, २ सन्मति, ३ क्षेमंकर, ४ क्षेमंधर, ५ सीमंकर, ६ सीमंधर, ७ विमलवाहन, ८ चक्षुष्मान् ९ यशस्वी, १० अभिचंद्र, ११ चंद्राभ, १२ मरुदेव, १३ प्रसेनजित् १४ नाभिराजा ।

(३९) बारह प्रसिद्ध पुरुष

१ नाभि, २ श्रेयांस, ३ बाहुबली, ४ भरत, ५ रामचन्द्र, ६

नोट—तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, प्रतिनारायण बलभद्र यह त्रेषठ शलाका पुरुष कहाते हैं तथा नारद, रुद्र, कामदेव, कुलकर, और तीर्थंकरोंके मातापिता १६९ पुण्य पुरुष कहाते हैं ।

हनुमान्, ७ सीता, ८ रावण, ९ कृष्ण, १० महादेव, ११ भीम, १२ पार्श्वनाथ।

(४०) विदेहक्षेत्रके २० विद्यमान तीर्थंकर।

१ सीमन्धर, २ युगमंधर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ सुजात, ६ स्वयंप्रभ, ७ वृषभानन, ८ अनन्तवीर्य, ९ सूरप्रभ, १० विशालकीर्त्ति, ११ वज्रधर, १२ चंद्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ भुजंगम, १५ ईश्वर, १६ नेमप्रभ (नमि), १७ वीरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयश, २० अजितवीर्य।

(४१) भूतकालकी चौबीसी

१ श्रीनिर्वाण, २ सागर, ३ महासिंधु, ४ विमलप्रभ, ५ श्रीधर ६ सुदत्त, ७ अमलप्रभ, ८ उद्धर, ९ अंगिर, १० सन्मति, ११ सिंधुनाथ, १२ कुसुमांजलि, १३ शिवगण, १४ उत्साह, १५ ज्ञानेश्वर, १६ परमेश्वर, १७ विमलेश्वर १८ यशोधर, १९ कृष्णमति, २० ज्ञानमति, २१ शुद्धमति, २२ श्रीभद्र, २३ अतिक्रांत, २४ शांति।

४२ भविष्यकी चौबीसी।

१ श्रीमहापद्म, २ सुरदेव, ३ सुपार्श्व, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वात्मभू, ६ श्रीदेव, ७ कुलपुत्रदेव, ८ उदकदेव, ९ प्रोष्ठिलदेव, १० जयकीर्ति, ११ मुनिसुव्रत, १२ अरह (अमम) १३ निष्पाप, १४ निःकषाय, १५ विपुल, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्त, १८ समाधिगुप्त, १९ स्वयंभू, २० अनिवृत्त, २१ जयनाथ, २२ श्रीविमल, २३ देवपाल, २४ अनन्तवीर्य।

(४३) गुणस्थान

१ मिथ्यात्व, २ सासादन, ३ मिश्र, ४ अविरत सम्यक्त्व, ५ देशव्रत, ६ प्रमत्त, ७ अप्रमत्त, ८ अपूर्वकरण, ९ अनिवृत्तिकरण, १० सूक्ष्मसांपराय, ११ उपशांतकषाय वा उपशांतमोह, १२ क्षीण कषाय वा क्षीणमोह, १३ संयोगकेवली, १४ अयोगकेवली ।

(४४) सोलहकारण भावना

१ दर्शनविशुद्धि, २ विनयसंपन्नता, ३ शीलव्रतेष्वनतिचार, ४ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, ५ संवेग, ६ शक्तिस्त्याग, ७ तप ८ साधु-समाधि, ९ वैय्यावृत्य, १० अर्हद्भक्ति, ११ आचार्यभक्ति, १२ बहुश्रुतभक्ति, १३ प्रवचनभक्ति, १४ आवश्यकपरिहाणी, १५ मा०-प्रभावना, १६ प्रवचनवात्सल्य ।

(४५) श्रावकोंके उत्तरगुण ।

१ लज्जावंत, २ दयावंत, ३ प्रसन्नता, ४ प्रतीतिवन्त, ५ पर-दोषाच्छादन, ६ परोपकारी, ७ सौम्यदृष्टि, ८ गुणग्राही, ९ मिष्ट-वादी, १० दीर्घविचारी, ११ दानवंता १२ शोलवंत, १३ कृतज्ञ, १४ तत्वज्ञ, १५ धर्मज्ञ, १६ मिथ्यात्व रहित, १७ संतोषवंत १८ स्याद्वाद भाषी, १९ अभक्ष्यत्यागी, २० षटकर्मप्रवीण २१ ।

(४६) श्रावककी ५३ क्रिया ।

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १ समताभाव, ११ प्रतिमा, ४ दान, ३ रत्नत्रय, जल छाणन क्रिया, १ रात्रिभोजन त्याग और दिनमें अन्नादिक भोजन शोधकर खाना अर्थात् छानबीन कर देख भालकर खाना ।

श्रावकके ८ मूलगुण—५ उद्‌बर । ३ मकार ।

१२ व्रत—५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत ।

५ अणुव्रत—१ अहिंसा अणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ परस्त्री त्याग अणुव्रत, ४ (अचौर्य) चोरी त्याग अणुव्रत, ५ परिग्रहप्रमाण अणुव्रत ।

३ गुणव्रत—१ दिगव्रत २ देशव्रत, ३ अनर्थदंडत्याग ।

४ शिक्षाव्रत—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अतिथि-संविभाग, भोगोपभोगपरिमाण ।

१२ तप

आचार्यके ३६ गुणोंमें लिखे हैं । इनके भी वही नाम । श्रावकोंके अणुव्रत कम परीषहवाले ।

११ प्रतिमा—दर्शनप्रतिमा, व्रत, सामायिक, प्रोषधोपवास, सचित्तत्याग, रात्रिभुक्ति त्याग, ब्रह्मचर्य, आरम्भ त्याग, परिग्रहत्याग, अनुमति, त्याग, उद्दिष्ट त्याग ।

चारदान-आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान, अभयदान

३-रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र ।

दातारके २१ गुण-९ नवधाभक्ति, ७ गुण ५ आभूषण । यह २१ गुण दातारके हैं अर्थात् दान देनेवाले दातामें यह २१ गुण होने चाहिये ।

नवधाभक्ति-पात्रको देख बुलाना, उच्चासनपर बैठाना,

चरण धोना, चरणोदक मस्तकपर चढ़ाना, पूजा करना, मन शुद्ध रखना, विनयरूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना शुद्ध आहार देना।

दातारके सात गुण—श्रद्धावान्, शक्तिवान्, अलोभी, दयावान्, भक्तिवान्, क्षमावान् और विवेकवान्।

दाताके पांच भूषण—आनन्दपूर्वक देवे, आदरपूर्वक देवे प्रिय बचन कहकर देवे, निर्मल भाव रखे, जन्म सफल माने।

दाताके पांच दूषण—बिलम्बसे देवे, विमुख होकर देवे, दुर्वचन कहकर देवे, निरादर करके देवे, देकर पछतावे।

(४७) ग्यारह प्रतिमाओंका सामान्य स्वरूप।

प्रणम पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार; श्रावकप्रतिमा एक दश, कहुं भविजन हितकार॥ १ ॥ सवैया ३१ ॥ श्रद्धाकर व्रत पाले सामयिक दोष टाले, पौसौ मांठ सचित कौं त्यागैलों घटायकैं रात्रिभुक्त परिहरै, ब्रह्मचर्य नित धरै, आरम्भको त्याग करै मन बच कायकैं। परिग्रह काज टारे अघ अनुमत छारैं, स्वनिमित कृत टारैं असत बनायकैं। सब एकादश येह प्रतिमा जु शर्म्म गेह, धारैं देशव्रती उर हरष बढ़ायकैं।

दर्शन प्रतिमा

अष्ट मूलगुण संग्रह करै, विशुन अभक्ष्य सबै परिहरै॥
युत अष्टांग शुद्ध सम्यक्त, धरहिं प्रतिज्ञा दरशन रक्त॥ १ ॥

व्रत प्रतिमा स्वरूप

अणुव्रतपन अतिचार विहीन, धारह जो पुन गुणव्रत तीन,
शिक्षाव्रत संजुत जो सोय; व्रत प्रतिमा धर श्रावक होय॥२॥

सामायक प्रतिमा स्वरूप-गीतका छंद-सब जियन में समभाव धर शुभ भावना संयममहीं, दुरध्यान आरत रौद्र तज कर त्रिविध काल प्रमाणहीं। परमेष्ठि पन जिन वचन निज बृष बिम्ब जिन जिनग्रह तनी, बंदन त्रिकाल करह सुजानहु भव्य सामायक धनी॥ ३॥

प्रोषध प्रतिमा स्वरूप- (पद्धरी छंद —
वर मध्यम जघन्य त्रिविधं धरेय, प्रोषध विधि युत निजबल प्रमेय, प्रति मास चार पर्वो मझार, जानहु सो प्रोषध नियम धार॥४॥

सचित्तत्याग प्रतिमा स्वरूप-चौपाई—
जो परि हरे हरीं सब चीज, पत्र प्रवाल-कंद फल-बीज,
अरु अप्रासुक जल भी सोय, सचित्त त्याग प्रतिमा धर होय

रात्रिभुक्तत्याग प्रतिमा स्वरूप-अडिल्ल छन्द—
मन वच तन कृत कारित अनुमोदे सही, नवविध मैथुन दिवस माहिं जो वर्जे ही। अरु चतुर्विध आहार निशा माही तजै. रात्रिभुक्ति परित्याग प्रतिमा सो सजै॥ ६॥

ब्रह्मचर्यप्रतिमा स्वरूप—चौपाई—
पूर्व उक्त मैथुन नव भेद, सब प्रकार तजै निरखेद,
नारि कथादिक भी परिहरे ब्रह्मचर्य प्रतिमा सो धरे॥ ७॥

आरंभ त्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई—
जो कछु अल्प बहुत अघ काज, ग्रह संबंधी सो सब त्याज,
निरारम्भ ह्वै वृष रत रहै, सो जिय अष्टमो प्रतिमा वहै॥८॥

परिग्रहत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई

वस्त्र मात्र रख परिग्रह अन्य, त्याग करै जो व्रतसंपन्न,
तापे पुनः मूर्छा परहरै, नवमी प्रतिमा सो भवि धरै ॥९॥

अनुमतत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई

जो प्रमाण अघमय उपदेश, देय नहीं परको लवलेस, ॥
अरु तसु अनुमोदन भी तजै, सोही दशमी प्रतिमा सजै ॥१०॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमास्वरूप—चौपाई—

ग्यारम थान भेद हैं दोय, इक क्षुल्लक इक ऐलक सोय,
खण्ड वस्त्रधर प्रथम सुजान, पुन कोपीनहि दुतिय प्रछान॥११॥
ए ग्रह त्याग मुनिन ढिंग रहैं, वा मठ, मन्दिरमें निवसहैं,
उत्तर उदण्ड उचित आहार, करहिं शुद्ध अंत्रायन बार॥
दोहा—इम सब प्रतिमा एकदश दोल देशव्रत यान,
ग्रहै अनुक्रम मूल सह, पालै भवि सुखदान॥

(४८) श्रावकोंके १७ नियम।

१ भोजन,२ अचित वस्तु, ३ गृह, ४ संग्राम, ५ दिशागमन, ६ औषधिविलेपन,७ तांबूल,८ पुष्पसुगन्ध, ९ नाच, १० गीतश्रवण ११ स्नान, १२ ब्रह्मचर्य, १३ आभूषण, १४ वस्त्र १५ शय्या, १६ औषध खानी, १७ घोड़ा बैलादिककी सवारी।※

※ नोट—प्रतिदिन जिन २ चीजोंकी जरूरत हो उसका प्रमाण करे कि आज यह करूंगा; शेषका प्रतिदिन त्याग करे।

(४९) सात व्यसनका त्याग ।

जूवा, मांस, मदिरा, गणिका, शिकार चोरी परस्त्री ।

(५०) बाईस अभक्ष्यका त्याग ।

पांच उदम्बर—१ उदम्बर (गूलर), २ कटूम्बर, ३ बड़फल, ४ पीपलफल, ५ पाकर फल (पिलखन फल) ।

तीन मकार—१ मांस, २ मधु, ३ मदिरा ।

शेष १४ अभक्ष्य—ओला, विदल, रात्रि भोजन, बहुबीजा, बैंगन, कन्दमूल, बगैर जाना फल, अचार, बिष, माटी, बरफ, तुच्छ फल, चलित रस, माखन ।

(५१) श्रावकके षट कर्म ।

देव पूजा, गुरुसेवा, स्वध्याय, संयम, तप, दान यह छह कर्म प्रत्येक श्रावकको करना चाहिये ।

(५२) दशलक्षण धर्म ।

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग आकिंचन, ब्रह्मचर्य ।

(५३) लघु अभिषेक पाठ ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्यजगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष महाभ्यधायि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर जिनचरणोंमें पुष्पांजलि छोड़नी चाहिये)

श्रीमन्मन्दरसुन्दरे शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षतैः
पीठेमुक्तिकरंनिधाय, रचितं त्वपादपद्मस्रजः
इन्द्रोऽहंनिजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे ।

मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥

(इस श्लोकको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीत तथा नाना प्रकारके सुन्दर आभूषण धारण करना चाहिये ।)

सौगन्धसंगतमधुव्रतझंकृतेन, सौवर्ण्यमानमिव गंधमनिंद्यमादौ । आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्य पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानां

इसे पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको अङ्गमें चन्दनके नवतिलक करना चाहिये ।

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदर्पयुता विबोधाः । संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥

(इसको पढ़कर अभिषेकके लिये भूमिका प्रक्षालन करे)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम् । अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभव तापहारि ॥

(जिस सिंहासन पर विराजमान करके अभिषेक करना हो उसका प्रक्षालन करे

श्रीशारदासुमुखनिर्गतबीजवर्णं श्रीमङ्गलीकवरसर्वजनस्य नित्यं । श्रीमत्स्वयं क्षयतयस्य विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णं लिखितं जिन-भद्रपीठे ।

(इस श्लोकको पढ़कर पीठपर श्रीकार लिखना चाहिये ।)

इन्द्राग्निदंडधरनैर्ऋतपाशपाणि वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्र चन्द्राः । आगत्य यूयमिहसानुचराः सचिन्हाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥

(नीचे लिखे मंत्रोंको पढ़कर क्रमसे दश दिकपालोंके लिये अर्घ चढ़ाओ)

१ ॐ आँ क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।

२ ॐ आँ क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा।

३ ॐ आँ क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा।

४ ॐ आँ क्रौं ह्रीं नैर्ऋत आगच्छ आगच्छ नैर्ऋताय स्वाहा।

५ ॐ आँ क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा।

६ ॐ आँ क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा।

७ ॐ आँ क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा।

८ ॐ आँ क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा।

९ ॐ आँ क्रौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छआगच्छ धरणीन्द्रायस्वाहा

१० ॐ आँ क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा।

इति दिक्पाल मन्त्रः।

दध्युज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपः पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण। त्रैलोक्यमङ्गलसुखानलकामतह मारार्तिकं तवविभोरवतारयामि॥ [दधि अक्षत पुष्प और दीप रकाबीमें लेकर मङ्गलपाठ तथा अनेक बादित्रोंके साथ त्रैलोक्यनाथकी आरती उतारनी चाहिये।]

यः पांडुकामलशिलागतमादिदेवमस्नापयन्सुरवराः सुरशैल मूर्धिन। कल्याणमिप्सुरहमक्षततोय पुष्पैः संभावयामि पुरएव तदीयविम्बम्॥

जल अक्षत पुष्प क्षेपकर श्रीकार लिखित पीठपर जिनबिम्बकी स्थापना करना चाहिये।

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्य ताम्रारकूटघटितान्पयसासुपूर्णान्। संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान् संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते।

जलपूरित सुन्दर पत्तोंसे ढके हुए सुवर्णादि धातुके चार कलश वेदीके कोनोंमें स्थापन करना चाहिये ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुले नामुना चन्दनेन,
श्रीदृक्‌पेयैरमीभिः शुचिसदलचये रुद्गमैरेभिरुद्धैः ।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिमेदीपयद्भिः प्रदीपैः
धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥

(इस मंत्र गर्भित श्लोकको पढ़कर यजामि शब्दके पूर्ण होते होते अर्घ चढ़ा देना चाहिये ।)

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटी संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसराङ्घ्रिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या जलै र्जिनपति बहुधा भिषिञ्चे ॥
(इसे पढ़कर जिन प्रतिमापर जलके कलशसे धारा छोड़नी चाहिये)
उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम देहप्रभावलयसङ्गमलुप्तदीप्तिम्। धारां ।
घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां वन्देऽर्हतां सुरभिसांस्नपनोप युक्ताम् ॥
(इस श्लोकको पढ़कर घृतके कलशके स्नपन करना चाहिये ॥)
सम्पूर्णशारदशशाङ्कमरीचिजालस्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः । क्षीरैर्जिनः शुचितरैरभिषिच्यमाणाः सम्पादयन्तुमम चित्त-समीहितानि ॥
(इस श्लोकको पढ़कर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)
दुग्धाब्धिवीचिपयसंचितफेनराशिपांडुत्वकान्तिमवधारयतामतीव
दध्नागताजिनपतेप्रतिमांसुधारासम्पद्यतांसपदि वांछितसिद्धयेव॥।
(इस श्लोकको पढ़कर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)
भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुर-

मर्त्यनाथः। तत्कालपीलितमहेक्षु रसस्यधारा सद्यः पुनातु जिन-बिम्ब गतैव युष्मान्॥

(इस श्लोकको पढ़करइक्षुरसके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)

संस्नापितस्यघृतदुग्धदधीक्षु वाहैः सर्वाभिरोषधिभिरर्हतमुज्ज्वलाभिः। उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला कालेयकुङ्कुमरसोत्कटवारिपूरैः॥

(इसको पढ़कर सर्वौषधीके कलशसे अभिषेक करना चाहिये।)

द्रव्येरनल्पघनसारचतुः समाद्यै रामोदवासितसमस्त दिगान्तरालैः मिश्रीकृतेनपयसा जिनपुङ्गवानांत्र लोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि॥

(इस श्लोकको पढकर केसर कस्तूरी कपूरादिसे बनाये हुये सुगन्धित जलसे स्नपन करना चाहिये।)

इष्टैर्मनोरथशतैरिबभव्यपुंसां पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलैवसानैः। संसारसागरविलंघनहेतुसेतुमाप्लावयेत्रिभुवनैकपति जिनेन्द्रम्॥

(इसे पढ़कर बचे हुये सम्पूर्ण कलशोंसे अभिषेक करना चाहिये।)

मुक्ति श्रीवनिताकरोदमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकम्।
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम्॥
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलता संवृद्धिसम्पादकम्।
कीर्तिश्रीजयसाधकं तवजिन! स्नानस्य गन्धोदकम्॥

(इस श्लोकको पढ़कर अपने अङ्गमें गन्धोदक लगाना चाहिये।)

इति श्री लघुभिषेक विधिः समाप्तः॥

५४ विनय पाठ।

इहि विधि ठाड़ो होयके प्रथम पढ़े जो पाठ॥ धन्य जिनेश्वर

देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥ १ ॥ अनंत चतुष्टयके धनी तुमहो हो शिरताज ॥ मुक्ति वधूके कंथ तुम तीन भुवनके राज ॥ २ ॥ तिहुं जगकी पीड़ा हरण भवदधि शोषनहार ॥ ज्ञायक हो तुम विश्वके शिव सुखके करतार ॥ ३ ॥ हरता अघ अंधियारके करता धर्म प्रकाश ॥ थिरता पद दातार हो। धरता निजगुण रास ॥४॥ धर्मामृत उर जल धसों ज्ञान भानु तुम रूप। तुमरे चरण शरोजको नावत तिहुं जग भूप ॥ ५ ॥ मैं बंदौं जिनदेवकौं कर अतिनिरमल भाव ॥ कर्म बंधके छेदने और न कोई उपाय ॥ ६ ॥ भविजनकों भवि कूपतैं तुमहो काढ़नहार ॥ दीनदयाल अनाथ पति आतम गुण भंडार ॥ ७ ॥ चिदानंद निर्मल कियो धोय कर्म रज मैल ॥ सरल करी या जगतमैं भविजनको शिव गैल ॥८॥ तुम पद पङ्कज पूजतैं बिघ्न रोग टर जाय ॥ शत्रु मित्रताको धरें विष निरविषता थाय ॥९॥ चक्री खग धर इन्द्र पद मिलैं आपतैं आप ॥ अनुक्रम कर शिव पद लहै नेम सकल हन पाप ॥१०॥ तुम बिन मै व्याकुल भयो जैसे जल विन मीन ॥ जन्म जरा मेरी हरो करो मोह स्वाधीन ॥ ११ ॥ पतित बहुत पावन किये गिनती कौन करेव ॥ अञ्जनसे तारे कुधी सु जय जय २ जिनदेव ॥१२॥ थकी नाव भवि दधि विषैं तुम प्रभु पार करेय ॥ खेवटिया तुम हो प्रभू सो जय जय २ जिनदेव ॥ १३ ॥ राग सहित जगमेंरुले मिले सरागी देव ॥ वीतराग मैटो अबै मेटो राग कुटेव ॥ १४ ॥ कित निगोद कित नारकी किय तिर्यञ्च अज्ञान ॥ आज धन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥ १५ ॥ तुमको पूजें सुरपती अहिपति नरपति देव ॥ धन्य भाग्य मेरो भयो करन लगो तुम सेव ॥ १६ ॥

अशरणके तुम शरण हो निराधार आधार ॥ मैं डूबत भवसिन्धुमें खेओ लगायो पार ॥१७॥ इन्द्रादिक गणपति थकी तुम विन्ती भगवान ॥ विनती अपनी टारि के कीजे आप समान ॥ १८ ॥ तुमरी नेक सुदृष्टमें जग उतरत है पार ॥ हाहा डूबो जात हों नेक निहार निकार ॥ १९ ॥ जोमैं कहहूं और सों तो न मिटे उर भार ॥ मेरी तो मोसो बनी तातैं करत पुकार ॥ २० ॥ बन्दौ पाचौं परमगुरु सुरगुरु बन्दन जास ॥ विघन हरन मङ्गल करन पूरत परम प्रकाश ॥ २१ ॥ चौबीसौं जिन पद नमों नमों सारदा माय ॥ शिवमग साधक साधु नमि रचों पाठ सुखदाय ॥२२॥

(५५) देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा ।

प्रथमदेव अरहन्त सु श्रुतसिद्धान्तजू । गुरु निरग्रन्थ महन्त मुकतिपुरपन्थजू ॥ तीन रतन जगमाहि सो ये भवि ध्याइये । तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा-पूजों पद अरहन्तके, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर २ संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गीता छंद।

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, बन्दनीक सु पदप्रभा ।
अति शोभनीकसुवरण उज्ज्वल, देख छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीर समुद्रघटभरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरहन्तश्रुतसिद्धांतगुरु निरग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा—मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय ॥ जलं ।

जे त्रिजग उदरमँझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे ।

तिन अहितहरन सुबचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥

तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन सरस चन्दन घसि सचूं ।अ०।

दोहा—चन्दन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं ।

यह भवसमुद्र अपार तारणके निमित्त सुविधि ठई ।

अति दृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥

उज्जल अखण्डित सालि तन्दुल, पुंजधरि त्रयगुण जचूं । अ०

दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति, परम अखंडित बीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

दोहा—विविधभांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।

तासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।

दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुड़ समान है ।

उत्तम छहों रस युक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ॥अ०६॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोग विनाशाय चरुं ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महाबली ।

तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाशजोति प्रभावली ॥

श्रीबाहुबलिजी, श्रवणबेलगोला।

श्री १०८ मुनि शान्तिसागरजी।

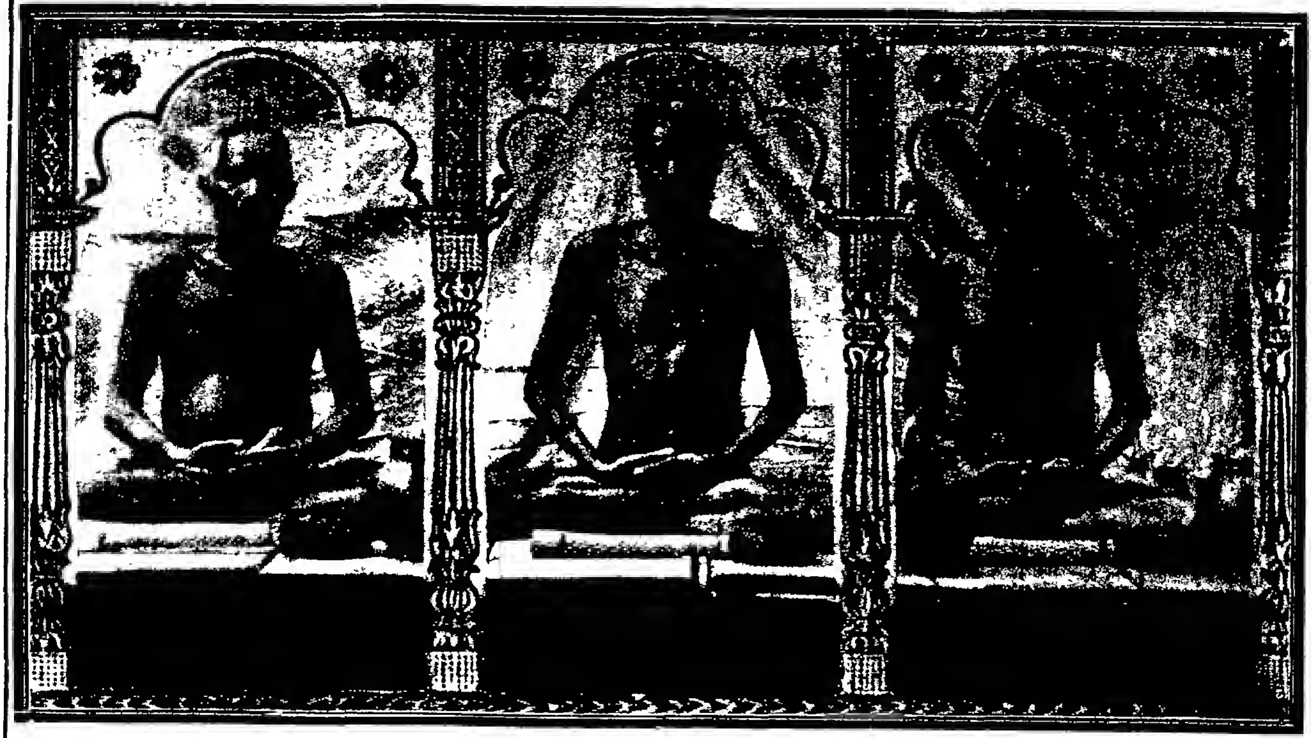

श्रीमुनि शांतिसागरजी श्रीमुनि सूर्यसागरजी श्रीमुनि अनंतसागरजी

इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमैंखचूं । अ० ।

दोहा—स्वपर प्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै ।
वर धूप तासु सुगन्धिताकरि सकल परिमलता हसै ॥
इह भाँति धूप चढ़ाय नित भवज्वलनमांहीं नहिं पचूं ।अ०।

दोहा—अग्निमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन ।
जासों पूजों परम पद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं ॥

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फलगुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन, परम अम्रतरस सचूं ॥अ०॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषैं, पंचकरण-रसलीन ।
जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवाशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥

जल परम उज्जवल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।
वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनमके पातक हरूं ॥
इहभांति अर्घ चढ़ाय नित भवि,करत शिवपङ्कति मचूं ।अ०

दोहा—वसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मन कीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।

भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥

चऊकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि । जीते अष्टादशदोषराशि ।
जे परम सगुण हैं अनँत धीर । कहवतकेछयालिस गुण गँभीर ॥ २

शुभ समवशरणशोभा अपार ! शत इन्द्र नमत कर शीस धार
देवाधिदेव अरहंत देव । बन्दो मनवचतन करि सु सेव ॥ ३॥

जिनकी धुनि है ओंकाररूप । निरक्षरमय महिमा अनूप ।
दश अष्ट महा भाषा समेत । लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥४॥

सो स्याद्वादमय सप्त भङ्ग । गणधर गूंथे बारह सुअङ्ग ।
रविशशि न हरै सो तम हराय । सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ।

गुरु आचारज उवझाय साधु । तन नगन रतनत्रय निधि अगाध ।
संसारदेह बैराग धार । निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥

गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस । भवतारन तरन जिहाज ईस
गुरुकी महिमा वरनी न जाय । गुरु नाम जपों मन बचनकाय ॥ ७॥

सोरठा—कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमर पद भोगवै ॥ ८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्बपामीति स्वाहा ।

(५६) बीसतीर्थंकर पूजा भाषा ।

द्वीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस ।
तिन सबकी पूजा करूं मनवच तन धरि शीस ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र अवतर अवतर ।
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

इन्द्रफणींद्रनरेंद्रबन्द्य, पद निर्मलधारी । शोभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी ।

क्षीरोदधिसम नीरसों (हो) पूजों तृषा निवार ॥
सीमन्धर जिन आदि दे, बीस विदेह मँझार ॥
श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जिहाज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं ॥

(इस पूजामें यदि बीस पुञ्ज करना हो तो इस प्रकार मन्त्र बोलना चाहिये।)

ॐ ह्रीं सीमन्धरयुग्मंधर-बाहु-सुबाहु-सुजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन अनन्तवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशाऽजितवीर्य्येति-विंषतिविद्यमानतीर्थंकरोभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं ॥ १ ॥

तीन लोकके जीव,पाप आताप सताये। तिनकों साता दाता,
शीतल वचन सुहाये ॥ बावन चन्दनसों जजूं (३),भ्रमनतपन
निरवार। सीमं ॥२॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जग नामी ॥
तंदुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार। सीमं० ॥३॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥

भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो।
जतिश्रावकआचार कथनको, तुम्हीं बड़ेहो ॥
फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदन प्रहार। सीमं० ॥४॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनायपुष्पं ॥

कामनाग विषधाम,—नाशको गरुड़ कहे हो।

क्षुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख विडार । सीमं० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनायनैवेद्यं ॥
उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भस्यो है ।
मोह महातम घोर, नाश परकाश कस्यो है ॥
पूजों दीप प्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योः मोहान्धकारविनाशनायनैवेद्यं
कर्म आठ सब काठ,-भार विस्तार निहारा ।
ध्यान अगनि कर प्रगट, सरब कीनों निरवारा ॥
धूप अनूपम खेवतें (हो), दुःख जलैं निरधार । सीमं० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय, धूपंनि०॥
मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं ।
सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं ।
फल अति उत्तमसों जजों (हो), वांछित फल दातार सी०॥८॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं ॥
जल फल आठों दर्व, अरघ कर प्रीत धरी हैं ।
गणधर इन्द्रनिहूंतें, थुति पूरी न करी हैं ।
'द्यानत' सेवक जानके (हो), जगतैं लेहु निकार । सीमं०॥९॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घंनि०

अथ जयमाला आरती ।

सोरठा-ज्ञानसुधाकर चन्द, भविकखेतहित मेघ हो ।
भ्रमतमभान अमन्द, तिर्थंकर बीसों नमों ॥ १ ॥
सीमन्धर सीमन्धर स्वामी । जुगमन्धर जुगमंधर नामी ।

बाहु बाहु जिन जगजन तारे। करम सुबाहु बाहुबलहारे ॥१॥ जात सुजात केवलज्ञानं। स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं। ऋषभानन ऋषि भानन दोषं। अनंत वीरज वीरजकोषं ॥२॥ सौरीप्रभ सौरीगुणमालं। सुगुण विशाल विशाल दयालं ॥ वज्रधार भवगिरिवज्जर हैं। चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥ ३ ॥ भद्रबाहु भद्रनिके करता। श्रीभुजङ्ग भुजङ्गम भरता। ईश्वर सबके ईश्वर छाजे। नेमिप्रभू जस नेमि विराजै ॥ ४ ॥ वीरसेन वीरं जग जाने। महाभद्र महाभद्र बखानै। नमों जसोधर जसधरकारी। नमों अजितवीरज बलधारी ॥ ५ ॥ धनुष पांचसै काय बिराजै। आयु कोड़िपूरब सब छाजै। समवशरण शोभित जिनराजा। भवजलतारनतरन जिहाजा ॥६॥ सम्यक रत्नत्रयनिधि दानी। लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी। शत इन्द्रनिकरि वन्दित सोहैं। सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥७॥

दोहा—तुमको पूजै वन्दना, करै धन्य नर सोय।
'ज्ञानत' सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ विद्यमान बीस तीर्थंकरोंका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषभाननअनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येतिविंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

(५७) अकृत्रिम चैत्यालयोंका अर्घं ।

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीनतान्। वन्दे भावनव्यन्तरान्द्युतिवरान्कल्पामरान्सर्वगान । सद्गन्धाक्षतपुष्पदाम चरुकैर्दीपैश्च धूपैः फलैं नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शान्तये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धीजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं ।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु । यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिन पुङ्गवानाम् ॥ १ ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् । इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ २ ॥

जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवाश्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठकनकप्रावाड्घनाभाजिनः । सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धना भूतानागतवर्त्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ३ ॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बूवृक्षो वृक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषाङ्के । इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥ ४ ॥ द्वौ कुन्देन्दुतुषा- रहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ द्वौ बन्धूकुसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ चप्रियङ्गुप्रभौ । शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः सन्तप्तहेमप्रभास्तेसंज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धअकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामि ॥

इच्छामिभंते-चेइयभत्ति काओसग्गो काओ तस्सालोचेओ अह-

लोय तिरियलोय उढ्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिनचेइ-याणि ताणि सव्वाणि। तीसुविलोएसु भवणवासियवाणवितरजो नसियकल्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गन्धेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुणणेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्वाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइग-मणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(इत्याशीर्वाद:। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्णिकमाध्यान्हिकअपराणिदेववंदनायां पूर्वाचार्यानु क्रमेणसकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपञ्चमहागुरु-भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्। (कायोत्सर्ग करना और नीचे लिखे मंत्रका नौ बार जाप करना)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥ ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

आठवाँ अध्याय

(५८) सिद्धपूजा।

ऊर्द्ध्वा धोरयुतं सबिन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं वर्गापूरितदि-ग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्त्वान्वितम्। अन्त:पत्रतटेष्वनाहत-युतं ह्रींकारसंवेष्टितं देवं ध्यायति य: स मुक्तिसुभगो वैरीभक-

पढीरव: ॥ ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्त मनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयन्त्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं हीनादिभावरहितं भववीत कायम् । रेवापगारवसरो-यमुनोद्भवानां नीरैर्यजे कलशगैर्वर-सिद्धचक्रम ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं ॥

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं सम्यक्त्वशर्मगरिमं जनना-र्तिवीतम् । सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां गन्धैर्यजे परिमलै-र्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं । सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम । सौगन्ध्यशालिवनशालि-वराक्षतानां पुञ्जैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ३ ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् । नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् । मन्दा-रकुन्दकमलादिवनस्पतीनां पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंस-नाय पुष्पं । ऊर्द्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेत ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् । क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै—नित्यं यजे

चरुवरैर्बरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं ॥

आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तं निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम्। कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-दीपैर्यजे रुचिवरैर्बरसिद्धचक्रम् ॥६॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेमोहान्धकारविनाशायदीपं

पश्यन्समस्तभुवनंयुगपन्नितान्तं त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम्। सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं।

सिद्धसुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै, र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम्। नारिङ्गपुंगकदलीफलनारिकेलैः सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधि पतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं।

गन्ध्याढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः सङ्गं वरं चन्दनं पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम्। धूपं गन्धयुतं ददामि विविध श्रेष्ठं फलं लब्धये सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सोनोत्तरं वाञ्छितम् ॥ ९ ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम्। कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं।

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः। सत्यसम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै र्युक्तांस्तानिहतोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११ ॥ (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शान्त निरंश । निरामय निर्भय निर्मल हंस ॥
सुधाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥
विदूरितसंसृतभाव निरङ्ग । समामृतपूरित देव विसङ्ग ॥
अवन्ध कषायविहीन विमोह । प्रसीद विशुद्ध सु सिद्धसमूह ॥ २ ॥
निवारितदुष्कृतकर्मविपास । सदामलकेवलकेलिनिवास ॥
भवोदधिपारग शान्त विमोह । प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥३॥
अनन्तसुखामृतसागर धीर । कलङ्क रजोमलभूरिसमीर ॥
विखण्डितकाम विराम विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥४॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक । विवोधसुनेत्रविलोकित्रिलोक ॥
विहार बिराव बिरङ्ग विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५॥
रजोमल खेदविमुक्त विगात्र । निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ॥
सुदर्शनराजित नाथ विमोह । प्रसीद बिसुद्ध सुसिद्धसमूह ॥६॥
नरामरवन्दित निर्मलभाव । अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव ॥
सदोदय विश्वमहेश विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥७॥
विदंभ वितृष्ण विदोष विनिन्द्र । परापर शङ्कर सार वितन्द्र ॥
विकोप विरूप विशङ्क विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥८
जरामरणोज्झित वीतविहार । विचिन्तित निर्मल निरहङ्कार ॥
अचिन्त्यचरित्र विदर्प विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥
विवर्ण विगंध विमान विलोभ । विमाया विकाय विशब्द विशोभ ॥
अनाकुल केवल सर्व विमोह । प्रसिद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥१०॥
असमयसमयसारं चारुचैतन्यचिन्हं । परपरणतिमुक्तं पद्मनंदीन्द्रवन्द्यम्
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं स्मरति नमति यो वा स्तौति
सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ओंह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अविनाशी अविकार परम रसधाम हो। समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ॥ शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनंत हो। जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥ ध्यानअगनि कर कर्म कलङ्क सबै दहे। नित्य निरञ्जनदेव सरूपी हो रहे ॥ ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिके। सो परमातम सिद्ध नमूं सिरनायके ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशतै, गुण अनन्तकी खान।
ध्यान धरै सो पाइये परम सिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

सिद्धपूजाका भावाष्टक ।

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधार सधारया, सकलबोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ १ जलम् ॥

सहजकर्मकलङ्कविनाशनैरमलभावसुभावितचन्दनैः। अनुपमानगुणावलिनायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥२॥ चन्दनम्।

सहजभावसुनिर्मलतन्दुलैः सकलदोषविशालविशोधनैः। अनुपरोधसुबोधविनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ३ ॥ अक्षतान्।

समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया। परमयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ४ ॥ पुष्पम्।

अकृतबोधसुदिव्यनैवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः। निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ५ ॥ नैवेद्यम् ॥

सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकै रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः। निरवधिस्वविकाशविकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ६ ॥ दीपम्

निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः। विश-

द्बोधसुदीर्घसुखात्मकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ७ ॥ धूपम् ।

परमभावफलावलिसम्पदा सहजभावकुभावविशोधया । निज-गुणाऽऽस्फुरणात्मनिरंजनं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ८ ॥ फलम् ।

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यन्तबोधाय वै
वार्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः संद्दीपधूपैः फलैः ।
यश्चिन्तामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्
सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं संचर्चयामो वयम् ॥ ६ अर्घम्

(६०) सोलहकारणका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥ १ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यो अर्घ्यं ।

(६१) दशलक्षणधर्मका अर्घ ।

उदचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीप सु धूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥२॥
ओं ह्रीं अर्हन्मुख कमलसतोत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्यदशलक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घं ।

(६२) रत्नत्रयका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥३॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-प्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

(६३) सोलह कारण पूजा

अडिल्ल—सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये। हरषे इन्द्र अपार मेरूपै ले गये ॥ पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसौं । हमहू षोड़शकारण भावैं भावसौं ॥१॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोड़शकारणानि ! अत्रावतरअवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितोभव भव वषट् ।

चौपाई—कंचनझारी निरमल नीर । पूजौं जिनवर गुणगंभीर ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं ।

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥२॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यः चन्दनं० ।

तन्दुल धवल सुगन्ध अनूप, । पूजौं जिनवर तिहुँ जगभूप ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

फूल सुगन्ध मधुपगुंजार । पूजौं जिनवर जगदाधार ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः कामवाण विध्वंसनायपुष्पं॥

सद्नेवज बहुविध पकवान । पूजौं श्रीजिनवर गुणखान
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य

दीपकजोति तिमर छयकार । पूजूं श्रीजिन केवलधार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोड़शकाणेभ्यो मोहांधकारविनाशायदीपं ॥

अगर कपूर गन्ध शुभ खेय । श्रीजिनवर आगें महकेय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार । पूजों जिन वांछितदातार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ८ ॥
ओं ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तायेफलं

जल फल आठों दरव चढ़ाय । 'द्यानत' वरत करों मनलाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ९ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—षोड़शकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।
पाप पुण्य सब नाशकै, ज्ञान भान परकास ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा ।

दर्शविशुद्ध धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥
विनय महा धारै जो प्रानी । शिवबनिताकी सखी बखानी ।२।
शील सदा दिढ़ जो नर पालैं । सो औरनकी आपद टालैं ॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं । ताके मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेगभाव विस्तारै । सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥
दान देय मन हरष विशेखै । इह भव जस परभवसुखदेखै ।।४।।

जो तप तपै खपैं अभिलाषा । चूरै करमशिखर गुरु भाषा ॥
साधुसमाधि सदा मन लावै । तिहुँ जगभोग भोगि शिव जावै ॥५॥
निशदिन वयावृत्य करैया । सो निहचै भवनीर तिरैया ॥
जो अरिहन्तभगति मन आनै । सो जन विषय कषाय न जानै ॥६॥
जो आचारजभगति करै हैं । सो निर्मल आचार धरै हैं ॥
वहुश्रुतवंतभगति जो करई । सो नर सम्पूरण श्रुत धरई ॥७॥
प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता । लहैं ज्ञान परमानँद दाता ॥
षट्आवश्य काल जो साधै । सो ही रतनत्रय आराधै ८ ॥
धरमप्रभाव करैं जे ज्ञानी । तिन शिवमारग रीति पिछानी ॥
वात्सलअङ्ग सदा जो ध्यावै । सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥ ९ ॥
दोहा—एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देवइन्द्रनरवन्धपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोड़शकारणेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ॥

(६४) अथ दशलक्षणधर्मपूजा ।

अडिल्ल—उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं । सत्य शौच सञ्जम तप त्याग उपाव हैं ॥ आकिञ्चन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं । चहुँ गतिदुखतैं काढ़ि मुकत करतार हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतर अवतर ! संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा—हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभ ।
भवआताप निवार, दश लच्छन पूजों सदा ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामि ॥ १ ॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा । भवआ० ॥
ओं ह्रीं उत्तमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामि ॥ २ ॥
अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ ॥ भवआ० ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान निर्वपामि ॥३॥
फूल अनेक प्रकार, महकैं ऊरधलोक लों । भवआ० ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥
नेवज विविध प्रकार, उत्तम पटरससंजुतं ॥ भवआ० ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि ॥
बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भवआ० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीप निर्वपामि ॥ ६ ॥
अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता ॥ भवआ० ॥ ७ ॥
ओ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि ॥ ६ ॥
फलकी जाति अपार, घ्राण नयन मनमोहने ॥ भवआ० ॥ ८ ॥
ओ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥
आठों दरब संभार' 'द्यानत' अधिक उछाह सों ॥ भवआ० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घ्यं निर्वपामि ॥ ८ ॥

अंग पूजा ।

सोरठा—पीडैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीताछन्द ।

उत्तम छिमा गहो रे भाई । इहभव जस परभव सुखदाई ॥
गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविधि करै । घरतैं

निकारै तन विदारै, बैर जो न तहां धरै ॥ जे करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा । अति क्रोध अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मान महाविषरूप करहिं नीचगति जगत में । कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥ २ ॥ उत्तम मार्दवगुन मन माना । मान करनको कौन ठिकाना ॥ वस्यो निगोदमाहिं तैं आया । दमरी रूंकन भाग विकाया ॥ रूंकन विकाया भागवशतैं, देव इकइन्द्री भया । उत्तम मुआ चण्डाल हूआ, भूप कीड़ोंमें गया । जीतव्य जोबन धनगुमान, कहा करै जलबुदबुदा । करि बिनय बहुगुन बड़े जनकी, ज्ञानका पावै उदा ।।

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना बसै । सरल सुभावो होय ताके घर बहु सम्पदा ॥३॥ उत्तमआर्जव रीति बखानी । रंचक दगा बहुत दुखदानी ॥ मनमें हो सो बचन उचरिये । बचन होय सो तनसौं करिये ॥ करिये सरल तिहुँ जोग अपने,देख निमल आरसी मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अँगारसी ॥ नहि लहै लछमी अधिक छलकरि, करमबंध विसेखता । भय त्यागि दूध बिलाय पीवै, आपदा नहिं देखता ।

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसौं । शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसारमें ॥ उत्तम शौच सर्व जग जाना । लोभ पापको बाप बखाना ॥ आसाफांस महा दुखदानी । सुख पावै सन्तोषी

प्रानी ॥ प्रानी सदा शुचि शीलजपतप, ज्ञान ध्यान प्रभावतैं । नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतैं । ऊपर अमल मल भरयो भीतर, कौन विध घट शुचि कहै ॥ बहु देह मैली सगुन-थैली, शौचगुन साधू लहै ॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कठिन बचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूंठ तज । सांच जवाहर खोल, सतबादी जगमें सुखी ॥ ५ ॥ उत्तम सत्य वरत पालीजै । परविश्वास घात नहिं कीजै । सांचे झूठे मानुष देखे । आपनपूत स्वपासन पेखे ॥ पेखे तिहायत पुरुष सांचेको, दरब सब दीजिये । मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा,सांचगुन लख लीजिये । ऊंचे सिंहा-सन बैठ वसुनृप, धरमका भूपति भया । बसु झूंठसेती नरक पहुंचा सुरगमें नारद गया ॥

ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो । संयम रतन संभाल, विषयचोर बहु फिरत हैं ॥६॥ उत्तम संजम गहु मन मेरे । भवभव के भाजैं अघ तेरे । सुरग नरक पशुगतिमें नाहीं । आलसहरन करन सुख ठाहीं ॥ ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो । सपरसन रसना घ्रान नैना,कान मन सब वश करो ॥ जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जगकीचमें । इक घरी मत विसरो करो नित, आव जममुख बीचमें ॥

ओं ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तप चाहें सुरराय, करम शिखरको बज्र है । द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥७॥ उत्तम तप सबमांहि बखाना ।

करमशिखरको वज्र समाना ॥ बस्यो अनादिनिगोदमझारा । भूमि-विकलत्रय पशुतन धारा ॥ धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता ॥ श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी भई विषमपयोगता ॥ अति महा दुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै । नरभव-अनूपम कनकघरपर, मणिमयी कलसा धरै ॥

ओं ह्रीं उत्तमतपधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।७॥

दान चार परकार, चार संघको दीजिये । धन विजुली उनहार नरभव लाहौ लीजिये ।।८।। उत्तमत्याग कह्यो जगसारा । औषधि शास्त्र अभय आहारा ।। निहचै रागद्वेष निरवारै । ज्ञाता दोनों दान संभारै ॥ दोनों संभारै कूपजलसम, दरब घरमें परिनया । निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाया खोया बह गया ॥ धनि साध शास्त्र अभयदिवया, त्याग राग विरोधकों ॥ बिन दान श्रावक साध दोनों, लहै नाहीं बोधकों ।।८।।

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करै मुनिराजजी । तिसनाभाव उच्छेद, घटती जान घटाइये ।।९।। उत्तम आकिंचन गुण जानो । परिग्रहचिन्ता दुख ही मानो ॥ फांस तनकसी तनमें सालै । चाह लंगोटीको दुख भालै ॥ भालै न समता सुख कभी नर बिना मुनि मुद्रा धरै । धनि नगनपर तन—नगन ठाड़े, सुर असुर पायन परैं ॥ घरमांहि तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं । बहु धन बुराहू भला कहिये, लीन पर उपकारसौं ।।९।।

ओं ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।९।।

शीलबाड़ि नौ राख, ब्रह्मभाव अंतर लखो । करि दोनों अभि

लाख करहु सफल नरभव सदा ॥१०॥ उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनो। माता बहिन सुता पहिचानो ॥ सहैं बानवरषा बहु सूरे। टिके न नैन बान लखि कूरे ॥ कूरे त्रियाके अशुचितनमें, कामरोगी रति करें। बहु मृतक सड़हिं, मसान मांही, काक ज्यों चोंचैं भरै। संसारमें विषवेल नारी, तज गये जोगीश्वरा। 'द्यानत' धरमदशपैंड़ि चढ़िके, शिवमहलमें पग धरा ॥१०॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

अथ जयमाला।

दोहा—दशलच्छन बंदों सदा, मनवांछित फलदाय।
कहों आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥ १ ॥

वेसरी छंद।

उत्तम छिमां जहां मन होई। अंतरबाहर शत्रु न कोई ॥ उत्तममार्दव विनय प्रकासै। नाना भेद ज्ञान सब भासै ॥ २ ॥ उत्तमआर्जव कपट मिटावै। दुरगति त्याग सुगति उपजावै ॥ उत्तमशौच लोभ परिहारी। संतोषी गुनरतनभंडारी ॥ ३ ॥ उत्तमसत्यवचन मुख बोलै। सो प्रानी संसार न डोलै। उत्तमसंयम पालै ज्ञाता। नरभव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥ उत्तमतप निरवांछित पाले। सो नर करम शत्रुको टालै। उत्तमत्याग करै जो कोई। भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥५॥ उत्तमआकिंचनव्रत धारै। परम समाधिदशा बिसतारै ॥ उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै। नरसुरसहित मुकतिफल पावै ॥ ६ ॥ दोहा—करै करमकी निरजरा, भवपींजरा विनाशि। अजर अमरपदकों लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥७॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यशौचसंयमतप त्यागाकिंचन ब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(६५) पंचमेरु पूजा।

गीताछंद—तीर्थङ्करोंके न्हवनजलतैं, भये तीरथ सर्वदा। तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरनकी सदा॥ दो जलधि ढ़ाईद्वीप में सब, गनतमूल विराजहीं। पूजों असी जिनधाम प्रतिमा, होहि सुख, दुख भाजही॥ १॥

ओं ह्रीं—पञ्चमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट्।

चौपाई (१५ मात्रा)

अथाष्टक—

सीतलमिष्टसुवास मिलाय। जलसों पूजों श्री जिनराय॥ महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों मेरु असी जिन धाम। सब प्रतिमाको करों प्रनाम महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥१॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं

जल केसर करपूर मिलाय। गंधसों पूजों श्रीजिनराय॥

महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों०॥ २॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्य: चन्दनं

अमल अखण्ड सुगन्ध सुहाय। अच्छतसों पूजों जिनराय।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥ पांचों०॥३॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थबिम्बेभ्यो अक्षतान् नि०॥

वरन अनेक रहे महकाय, फूलनसों पूजों जिनराय।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥पांचों०॥ ४॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः । पुष्पं

मनवांछित बहु तुरत बनाय । चरुसों पूजों श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥पांचों० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । नैवेद्यं

तमहर उज्ज्वल जोति जगाय । दीपसों पूजों श्री जिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥६॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । दीपं

खेऊं अगर परिमल अधिकाय । धूपसों पूजों श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । धूपं

सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय फलसों पूजों श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाचों० ॥८॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजितचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः । फलं

आठ दरबमय अर्घ बनाय । 'द्यानत' पूजों श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । अर्घ्यं

अथ जयमाला

सोरठा—प्रथम सुदर्सन स्वामि, विजय अचल मन्दिर कहा ।

विद्य नमाली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥ १ ॥

वेसरी छन्द ।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजे । भद्रसाल वन भूपर छाजे ।

चैत्यालय चारों सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ २ ॥

ऊपरपंच शतक पर सोहै । नन्दनवन देखत मन मोहै ॥ चै० ३ ॥

साढ़े बासठ सहस उंचाई । वन सुमनस शोभै अधिकाई ॥चै०४॥
ऊंचा जोजन सहस छतीसं । पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥चै०५॥
चारों मेरु समान बखानो । भूपर भद्रसाल चहुं जानो ॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी । मनवचतन बंदना हमारी ॥चै० ६॥
ऊंचे पांच शतकपर भाखें । चारों नन्दनबन अभिलाखें ॥ चै० ७॥
साढ़े पचपन सहस उतंगा । वन सौमनस चार बहुरंगा ॥ चै० ८॥
उच्च अट्ठाइस सहस बताये । पाँडुक चारों नवन शुभगाये ॥चै०९॥
सुरनर चारन बंदन आवैं । सो शोभा हम किम मुख गावैं ॥
चैत्यालय अस्सी सुखकारी । मनवचतन बन्दना हमारी ॥चै०१०॥
दोहा—पञ्चमेरुकी आरती, पढ़े सुनै जो कोय ।
'द्यानत' फल जानैं प्रभू तुरत महासुख होय ॥ ११ ॥
ओं ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्य अर्घ्यं ।

(६६) अथ रत्नत्रयपूजा ।

दोहा—चहुं गतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार ।
शिवसुखसदासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥ १ ॥
ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्रावतरावतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ।
ठः ठः अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट ।
सोरठा—क्षीरोदधि उनहार, उज्जल जल अति सोहना ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय भजों ॥
ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशाय जलं निर्व० ॥ १ ॥
चन्दन केसर गार, परिमल महा सुरंग मय । जन्मरो० ॥
ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥ २ ॥

तंदुल अमल विचार, वासमती सुखदासके । जन्मरो०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।। ३ ।।

महकै फूल अपार, अलि गुंजै ज्यों थुति करैं । जन्मरो० ।।०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं ।। ४ ।।

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत । जन्मरो० ।।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं ।। ५ ।।

दीपतरनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें । जन्मरो० ।।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ।। ६ ।।

धूप सुवास विथार, चन्दन अगर कपूरकी । जन्मरो० ।।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ।।७।।

फल शोभा अधिकार, लौंग छुहारे जायफल । जन्मरो० ।।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ।।८।।

आठदरव निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये । जन्मरो०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं ।। ९ ।।

सम्यकदरसनज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।

पार उतारन जान, 'द्यानत' पूजौं व्रतसहित ।। १० ।।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ।

(६७) दर्शनपूजा ।

दोहा—सिद्ध अष्टगुणमय प्रगट, मुक्तजीवसोपान ।

जिहविन ज्ञानचरित अफल, सम्यक्दर्श प्रधान ।। १ ।।

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन । अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल क्षय करै ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥ १ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्ग सम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै । सम्यकद० ॥ २ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अक्षत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख करै । सम्यक० ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकद० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४॥
नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकद० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥
दीपज्योति तमहार घटपट परकाशै महा । सम्यकद० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपापिति स्वाहा ॥६॥
धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै । सम्यकद० ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
श्रीफलआदि विथार निहचै सुरशिव फल करै । सम्यकद० ॥८॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥
जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकद० ॥९॥
ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति ॥ ९ ॥

जयमाला

दोहा—आपआप निहचै लखै तत्त्वप्रीति व्योहार ।
रहितदोष पच्चीस है, सहित अष्ट गुन सार ॥१॥

चौपाईमिश्रित गीता छंद

सम्यकदरसन रतन गहीजे । जिनवचमैं सन्देह न कीजे ।

इहभव विभवचाह दुखदानी । परभवभोग चहै मत प्रानी ॥
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ।
परदोष ढकिये धरम डिगतेको सुथिर कर हरखिये ।
चहुसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना ।
गुन आठसों गुन आठ लहिके, इहां फेर न आवना ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

(६८) ज्ञानपूजा ।

दोहा—पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान ।
मोह तपन हर चन्द्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट्

सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकज्ञान विचार; आठ भेद पूजौं सदा ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

अछत अनुप निहार, दारिद नाशे सुख भरै । सम्यग्ज्ञा० ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकज्ञा० ॥४॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकज्ञा० ॥५॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दीपज्योतितमहार, घटपट परकाशै महा। सम्यक्ज्ञा० ॥६॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

धूपघ्रानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै। सम्यकज्ञा० ॥७॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफल आदि विथार निहचै सुरशिवफल करै। सम्यकज्ञा० ॥८॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीमि स्वाहा० ॥८॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु। सम्यकज्ञा० ॥६॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

अथ जयमाला

दोहा—आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार।

संशय विभ्रम मोह बिन, अष्टअङ्ग गुनकार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछन्द

सम्यकज्ञान रतन मन भाया। आगम तीजा नैन बताया।

अक्षर शुद्ध अरथ पहिचानौ। अच्छर अरथ उभय संग जानौ॥

जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये।

तपरीति गहि बहु मान देकैं, विनयगुन चित लाइये॥

ए आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पन देखना।

इस ज्ञानहीसों भरत सीझा, और सब पटपेखना ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।२।

(६८) चारित्र पूजा।

विषयरोग औषध महा, दवकषायजलधार।

तीर्थंकर जाकौं धरैं, सम्यकचारितसार ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ।ठ: ठ:। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकचारित्र सार, तेरहविधि पूजौं सदा ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामि० ।

जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकचा० ॥२॥ ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा । अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकचा० ॥३॥ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा । पुहपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकचा०॥४॥ ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा । नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरे थिरता करै । सम्यक ॥५॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकचा० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक् चारित्राय दीपं निर्वपामि० ।

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जड़ता हर । सम्यकचा० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफलआदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यकचा० ॥८॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकचा० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

आप आप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार ।
स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीता छंद।

सम्यकचारित रतन सँभालो। पांच पाप तजिकैं व्रत पालो।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै। नरभव सफल करहु तन छीजै॥
छीजै सदा तनकों जतन यह एक संजम पालिये।
बहु रुल्यो नरकनिगोदमांहीं, कषायविषयनि टालिये॥
शुभ करमजोग सुघाट आया पार हो दिन जात है।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है॥ २॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधिसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं।

अथ समुच्चय जयमाला।

दोहा—सम्यकदरशन ज्ञान व्रत, इन बिन मुकत न होय।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जले दव लोय॥ १॥

चौपाई १६ मात्रा।

तापै ध्यान सुथिर बन आवै। ताके करम बंध कट जावै॥
तासों शिवतिय प्रीति बढ़ावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥२॥
ताकों बहु गतिके दुख नाहीं। सो न परै भवसागरमांहीं॥ जनम-
जरामृतु दोष मिटावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥३॥ सोई दश-
लच्छनको साधै। सो सोलहकारण आराधै॥ सो परमातम पद
उपजावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥४॥ सोई शक्रचक्र पद लेई।
तीनलोकके सुख विलसेई॥ सो रागादिक भाव बहावै। जो सम्य
करतनत्रय ध्यावै॥५॥ सोई लोकालोक निहारै। परमानंददशा वि
सतारै॥ आप तिरै औरन तिरवावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥६॥

दोहा—एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय।
तीन भेद व्योहार सब, द्यानतको सुखदाय॥७॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(७०) श्रीनन्दीश्वर पूजा ।

अडिल्ल—सरब परबमें बड़ो अठाई परब है। नंदीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है॥ हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना। पूजों जिनगृह प्रतिमा है हित आपना ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह। अत्र अवतर अवतर। संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

कंचनमणिमय भृंगार, तीरथनीरभरा।
तिहुं धार दयी निरवार, जामन मरन जरा॥
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनदभाव धरों ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चासज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो (इतना मंत्र प्रत्येक अष्टकके अंतमें बोलना चाहिये) जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामोति स्वाहा ॥१॥

भवतपहर शीतलवास, सो चंदननाहीं।
प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठाहीं ॥नंदी०॥

ओ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे भवाताप विनाशनाय चंदनं ॥२॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहैं॥
सब जीते अक्षसमाज; तुम सम अरुको हैं॥ नंदी०॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥३॥

तुम कामविनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं।
लहिं शील लच्छमी एव, छूटें सूलनसौं ॥नंदी०॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं ॥४॥

नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥नन्दी०॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥५॥

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमांहिं लसै ॥

टूटै करमनकी राश, ज्ञानकणी दरसै ॥ नन्दी० ॥

ओं ह्रीं श्री नंदीश्वर द्वीपे मोहान्धकार विनाशनाय दीपं ॥६॥

कृष्णागरुधूपसुवास दशदिशिनारि वरै ।

अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ॥ नन्दी० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

बहुविधफल ले तिहुंकाल, आनंद राचत हैं ।

तुम शिवफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥ नन्दी० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों ।

'द्यानत' कीनो, शिवखेत, भूप समरपत हों ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—कार्तिक फागुन साढ़के, अंत आठ दिनमाहिं ।

नंदीसुर सुर जात हैं, हम पूजै इह ठांहिं ॥ १ ॥

एकसौ त्रेसठ कोड़ि जोजनमहा । लाख चौरासिया एक दिशमें लहा ॥ आठमों द्वीपे नंदीश्वरं भास्वरं । भौन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥ २ ॥ चारदिशि चार अंजनगिरी राजहीं । सहस चौरासिया एकदिश छाजहीं । ढोलसम गोल ऊपर तले सुंदरं ।

भौन० ॥ ३ ॥ एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी। एक इक लाख जोजन अमल जलभरी ॥ चहुं दिशा चार वन लाखजोजन वरं ॥ भौन० ॥ ४ ॥ सोल वापीनमधि सोल गिरि दधिमुखं। सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ॥ बावरीकोंन दो माहिं दो रतिकरं। भौन० ॥ ५ ॥ शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे। चार सोले मिले सर्व बावन लहे ॥ एक इक सीसपर एक जिन-मंदिरं। भौन० ॥ ६ ॥ बिंब अठ एकसौ रतनमई सोह ही। देव-देवी सरव नयनमन मोह ही ॥ पांचसै धनुष तन पद्मआसनपरं। भौन० ॥ ७ ॥ लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं। स्यामरंग भौंह सिर केश छबि देत हैं ॥ वचन बोलत मनों हंसत कालुष-हरं ॥ भौन० ८ ॥ कोटशशि भानदुति तेज छिप जात है। महा-वैराग परिणाम ठहरात है ॥ वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक-धरं। भौन० ॥ ९ ॥

सोरठा—नंदीश्वर जिनधाम, प्रतिमा महिमाको कहे ॥
'द्यानत' लीनों नाम, यही भगति सब सुख करे ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे दिपञ्चाशज्जि-नालयस्थजिनप्रमिमाभ्य: पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(७१) निर्वाणक्षेत्रपूजा।

परम पूज्य चौवीस, जिहं जिहं थानक शिव गये।
सिद्ध भूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि! अत्र अवतरत अवतरत। संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत, ठः ठः अत्र मम सन्नि-हितानि भवत। वषट्।

गीता छंद।

शुचि क्षीर दधि सम नीर निरमल, कनकझारीमें भरौं।
संसारपार उतार स्वामी, जोरकर विनती करौं॥
सम्मेदगिरि गिरनार चंपा, पावापुरी कैलासकों
पूजों सदा चौवीसजिननिर्वाण भूमिनिवासकों॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं॥ १॥

केशर कपूर सुगंध चंदन सलिल शीतल विस्तरौं।
भवपापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौं॥ सम्मे०॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं॥ २॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनंदधरि तरौं।
औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौं॥ सम्मे०
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान्

शुभफूलरास सुबासवासित, खेद सब मनके हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं॥ ४॥

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौं।
यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं॥ ५॥

दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशयविमोहविभरम—तमहर, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं। ६॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं ॥७॥

बहु फल मँगाय चढ़ाय उत्तम, चारगतिसों निरवरौं ।
निहचै मुकतफल देहु मोकौं, जोर कर विनती करौं ॥सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्य: फलं ॥८॥

जल गंध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरों ।
'द्यानत' करो निरभय जगततें, जोर कर विनती करौं ॥सम्मे०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ॥६॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—श्रीचौबीस जिनेश, गिरिकैलाशादिक नमों ।
तीरथ महाप्रदेश महापुरुष निरवाणतैं ॥१॥

चौपाई १६ मात्रा ।

नमों रिषभ कैलासपहारं । नेमिनाथ गिरनार निहारं ॥ वासुपूज्य चंपापुर बंदौं । सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥२॥ बंदौं अजित अजितपददाता । बंदौ संभवभवदुखघाता ॥ बंदौं अभिनंदन गण नायक । बंदो सुमति सुमतिके दायक ॥३॥ बंदौं पदम मुकतिपदमाकर । बंदौं सुपार्श आशपासाहर ॥ बंदौं चंदाप्रभ प्रभुचंदा. बंदौं सुविधि सुविधि निधि कंदा ॥४॥ बंदो शीतल अघ तप शीतल । बंदौं श्रियांस श्रियांस महीतल ॥ बंदौं विमल विमल उपयोगी । बंदौं अनंत अनंत सुखभोगी ॥५॥ बंदौं धर्म धर्म बिसतारा । बंदो शांति शांतिमनधारा ॥ बंदौं कुंथु कुंथु रखवालं । बंदौं अरि अरहर गुणमालं ॥ ६ ॥ बंदौं मल्लि काममल चूरन । बंदौं मुनिसुव्रतव्रतपूरन । बंदौ नमि जिन नमित सुरासुर । बंदौ पार्श्व पास भ्रमजगहर ॥७॥ बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर

सिखर सम्मेद महागिरि भूपर ॥ एकबार वंदे जो कोई । ताहि नरक पशुगति नहिं होई ॥८॥ नरगति नृप सुर शक्र कहावे । तिहुं जग भोग भोगि शिव पावे ॥ विघन विनाशक मंगलकारी । गुण विलास वंदो नरनारी ॥ ९ ॥

घत्ता—जो तीरथ जावे पाप मिटावे, ध्यावे गावे भगति करे ।
ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुणको बुध उचरे ॥१०॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ।

(७२) देवपूजा ।

दोहा—प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ।
तुम पद पूजा करत हूं, हमपै करुना होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंषद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् अत्र अवतरअवतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट् ।

छंद त्रिभंगी ।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्राशुक निर्मल, गुन गायो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो, ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अघतपत निरंतर, अगनि पटंतर, मो उर अंतर, खेद करयौ ।
ले बावन चंदन दाहनिकंदत, तुमपदवंदन, हरष धरयौ ॥ प्रभु० ॥

ॐह्रींअष्टादशदोषरहितषट्‌चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योचन्दनं
औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ।
तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित प्रीति धरै ॥प्र०॥
ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्‌चत्वारिंशद्गुणसहित अक्षतान ।
सुरनर पशुको दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोहि लिया।
ताकेशरलाऊं फूल चढ़ाऊं, भगति बढ़ाऊं, खोल हिया ॥प्रभु०
ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्‌चत्वारिंशद्गुणसहित पुष्पं ।

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा हो, मो लागै ।
सद घेवर बावर, लाडू बहु धर, थार कनक भर तुम आगै।प्र०
ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहित नैवेद्यं० ॥
अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम दुख पावैं ।
तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप सँभारा, जस गावैं ॥ प्रभु०
ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्‌चत्वारिंशद्गुणसहित दीपं ॥
इह कर्म महावन, भूल रह्यो जन, शिवमारग नहिं पावत हैं ।
कृष्णागरधूपं, अमल अनूपं, सिद्धस्वरूपं, ध्यावत हैं ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै दया धरो ॥७॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित धूपं० ॥
सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघ्न करि डारत हैं । फल पुंज विविध भर, नयनमनोहर, श्रीजिनवरपद धारत हैं ॥प्रभु०॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्‌चत्वारिंशद्गुणसहित फलं० ॥
आठौं दुखदानी, आठनिशानी, तुम ढिग आनी, निवारन हो ।
दीनन निस्तारन, अधमउधारन, 'द्यानत' तारन, कारन हो ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित अर्घ्यं ।

अथ जयमाला ।

दोहा—गुण अनंतको कहि सके, छियालीस जिनराय ।
प्रगट सुगुन गिनती कहूं, तुमहो होहु सहाय ॥१॥

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अध्यातम नामी ॥ तीन काल विधि परगट जानी । चार अनंत चतुष्टय ज्ञानी ॥२॥ पंच परावर्तन परकासी । छहों दरबगुनपरजयभासी ॥ सात भंग-वानी परकाशक । आठों कर्म महारिपु नाशक ॥३॥ नव तत्वनके भाखनहारे । दशलच्छनसौं भविजन तारे । ग्यारह प्रतिमाके उप-देशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥४॥ तेरहिविधि चारितके दाता चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥ पंद्रह भेद प्रमाद निवारी । सोलह भा-वन फल अविकारी ॥५॥ तारे सत्रह अङ्क भरत भुव । ठारे थान दान दाता तुव ॥ भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन । बीस अंक गण धरजीकी धुन ॥६॥ इकइस सर्व घात विधि जाने । बाइस बंध नवम गुन थाने ॥ तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर । सो पूजें चौ-बीस जिनेश्वर ॥७॥ नाश पचीस कषाय करी हैं । देशघाति छब्बीस हरी हैं ॥ तत्व दरब सत्ताइस देखे । मति विज्ञान अठाईस पेखे ॥८॥ उनतिस अंक मनुष सब जाने । तीस कुलाचल सर्व बखाने ॥ इकतिस पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समाइक टारे ॥९॥ तेतिस सागर सुखकर आये । चोतिस भेद अलब्धि बताये ॥पैंतिस अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥१०॥ सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अड़तिस पद लहि नरक अपुनमें । उन-तालीस उदीरन तेरम । चालिस भवन इंद्र पूजें नम ॥११॥ इक-

तालीस भेद आराधन। उदै बियालीस तीर्थंकर मन ॥ तैतालीस बंध ज्ञाता नहिं, द्वार चवालिस नर चौथे महिं ॥१२॥ पैंतालीस पल्यके अच्छर छियालीस बिन दोष मुनीश्वर। नरक उदै न छियालिस मुनि धुनि प्रकृति छियालिस नाश दशमगुन ॥ १३ ॥ छियालीस घन राजु सात भुव। अङ्क छियालीस सरसो कहि कुव। भेद छियालीस अन्तर तपवर। छियालीस पूरन गुन जिनवर॥१४॥ अडिल्ल—मिथ्या तपन निवारन चन्द समान हो मोहितिमिर वारनको कारन भान हो ॥ काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो 'द्यानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो ॥१५॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र भवद्भ्यो पूर्णाऽर्घं निर्वपामि ॥ इति श्रीदेव पूजा समाप्त।

[७३] सरस्वती पूजा।

दोहा—जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जड़ रीति।
भवसागरसो ले तिरै, पूजै जिनवचप्रीति ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीवाग्वादिनी! अत्र अवतर अवतर। संवोषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

त्रिभंगी।

छीरोदधि गङ्गा, विमल तरंगा, सलिल अभङ्गा, सुखगङ्गा।
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चङ्गा।
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्येजलं निर्पपामि ।

करपूर मंगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रङ्ग भरी ।
शारदपद वंदौं, मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं दाह हरी ॥तीर्थं० ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्ये जलं निर्वपामि ।

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अतिअनुमोदं, चंदसमं ।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मातामं ॥तीर्थं० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि ।३।

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनंदरासं, लाय धरै ।
मम काम मिटायौ, शील बढ़ायौ, सुख उपजायौ, दोष हरै ॥तीर्थं०

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि ॥४॥

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा ।
पूजूं थुति गाऊं, प्रीत बढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा ॥तीर्थं०

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामी ॥६॥

करि दीपक ज्योतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हम घट भासक, ज्ञान बढ़ै ॥ती०

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि० ॥६॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावैं खेवत हैं ॥तीर्थं०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निवपामि ॥७॥

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं ।
मनवांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥तीर्थं॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि ॥८॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्वलभारी, मोद धरै ।

शुभगंधसम्हारा, वसन निहारा, तुमतर धारा, ज्ञान करै ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गणधरने सुनि अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्य भई ॥
ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामि ॥८॥
जलचंदन अच्छत, फूल चरू चत, दीप धूप अति, फल लावै ।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर"द्यानत"सुख पावै ॥तीर्थ॥
ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामि ॥१०॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—ओङ्कार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल ।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै ॥

वेसरी छन्द—पहला आचारांग बखानो। पद अष्टादश सहस प्रमानो। दूजा सूत्रकृतं अभिलाषं। पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥ १ ॥ तीजा ठाना अंग सुजानं। सहस बियालिस पद-सरधानं ॥ चौथो समवायांग निहारं। चौसठ सहस लाख इकधारं ॥ २ ॥ पंचम व्याख्याप्रगपति दरशं। दोय लाख अट्ठाइस सहसं। छट्ठा ज्ञातृकथा बिसतारं। पांचलाख छप्पन हज्जारं ॥ ३ ॥ सतम उपासकाध्ययनंगं। सत्तर सहस ग्यारलख भंगं। अष्टम अंतकृतंदस ईसं। सहस अठाइस लाख तेईसं ॥४॥ नवम अनुत्तरदस सुविशालं। लाख बानवै सहस चवालं। दशम प्रश्नव्याकरण विचारं। लाख तिरानवै सोल हजारं ॥ ५ ॥ ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं। एक कोड़ चौरासी लाखं। चार कोड़ि अरु पंद्रह लाखं। दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥ द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं। इकसौ आठ कोड़ि पन वेदं ॥ अड़सठ

लाख सहस छप्पन हैं। सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥ इक सो बारह कोड़ि बखानो। लाख तिरासी ऊपर जानो॥ ठावन सहस पंच अधिकाने। द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥ कोड़ि इकावन आठहि लाखं। सहस चुरासी छहसौ भाखं साढ़ै इकीस शिलोक बताये। एक एक पदके ये गाये॥ ६ ॥

घत्ता—जा बानीके ज्ञानमें, सूझे लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हों धोक ॥इत्याशीर्वाद: ॥

(७४) गुरुपूजा।

दोहा—चहुंगति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाज।
रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठ: ठ:। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया।
तिहुं धार तिहुं गतिटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया॥
भवभोगतनवैराग्य धार, निहार शिव तप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु, पूज नित गुणजपत है॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जलं नि०

करपूर चंदन सलिलसौं घसि सुगुरुपद पूजा करौं।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल बिस्तरौं॥
भव भोगतन वैराग धार निहार, शिवतप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराध साधुसु, पूज नितगुन जपत हैं ॥२ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो चन्दनं नि०
झिनवा कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं।
गुनधार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं॥ भव भो० ॥३॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
शुभफूलराशप्रकाश परिमल, सुगुरुपांयनि परत हों।
निरबार मोर उपाधि स्वामी, शील दृढ़ उर धरत हों। भव०॥४॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः पुष्पं।
पकवान मिष्ट सलोन सुंदर, सुगुरु पांयन प्रीतिसौं।
कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसौं ॥भव०॥५॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः नैवेद्यं।
दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा।
तमनाश ज्ञानउजास स्वामी मोहि मोह न हो कदा। भव० ॥६॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो दीपं।
बहु अगर आदि सुगंध खेऊं सुगुण पद पद्महिं खरे।
दुख पुंज काट जलाय स्वामी गुण अछय चितमें धरे॥ भव०७॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि०
भर थार पूर बदाम बहुविधि, सुगुरु क्रम आगें धरों।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर बिनती करों॥ भव०॥८॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०
जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली॥ भव० ॥९॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

अथ जयमाला।

दोहा—कनककामिनी-विषयवश, दीसै सब संसार।
त्यागी वैरागीमहा, साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥
तीन घाटि नव कोड़ सब, बंदो सीस नवाय।
गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूं आरती गाय ॥ २ ॥

वेसरी छंद।

एक दया पालै मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं। तीनों लोक प्रगट सब देखैं, चारों आराधननिकरं ॥ पंच महाव्रत दुद्धर धारे, छहो दरब जानै सुहितं। सप्तभंगवानी मन लावैं, पावैं आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥ नवो पदारथ विधिसों भाखैं, बन्द दशों चूरन शरनं। ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह वृत धरनं। तेरह भेद काठिया चूरे, चौदह गुनथाणक लखियं। महाप्रमाद पंचदश नाशे, सोलकषाय सबै नखियं ॥ ४ ॥ वधादिक सत्रह सुतर लाख, ठारह जन्म न मरन मुनं। एक समय उनईस परीषह, बीस प्ररूपनिमें निपुनं ॥ भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस अभख न त्याग करं। अहिमन्द्रि तेईसों बंदैं, इन्द्र सुरग चौबीस बरं ॥ ५ ॥ पच्चीसों भावन नित भावै, छह सौ अंग उपंग पढैं। सत्ताइसों विषय विनाशै, अट्ठाईसों गुण सु बढैं ॥ शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीषमगिरिसिर जोग धरैं। वर्षा वृक्ष तरैं थिर ठाढ़े आठ करम हनि सिद्ध बरैं ॥ ६ ॥

दोहा—कहो कहाँ लो भेद मैं, बुध थोरी गुन भूर।
हेमराज, सेवक हृदय, भक्ति करो भरपूर ॥७॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधु गुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि।

(७५) मक्सीपार्श्वनाथ पूजा।

दोहा—श्रीपारस परमेसजी, शिखर शीर्ष शिवधार।
यहां पूजता भावसे, थापनकर त्रयवार॥

ओं ह्रीं श्रीमक्सीपार्श्व जिनेभ्यो अत्रवत्रवतर; सम्बौषटाह्वननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं॥ अत्र मम सन्नहितो भव भव वषट् सन्धीसकरणं॥

अथाष्टकं-अष्टपदी छन्द।

ले निर्मल नीर सुछान, प्राशुक ताहि करों। मन वच तन कर वर आन, तुम ढिग धार धरों॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों॥ मम जन्म जरामृत्यु नाश, तुम गुणगावत हों॥ ओं ह्रीं श्री मक्सीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रभ्यो जलं॥१॥ घिस चन्दन सार सुवास, केशर नाहि मिले। मैं पूजूं चरण हुलास मनमें आनंदले। श्री मक्शी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों॥ मम मोहा ताप विनाश, तुम गुण गावत हों॥सुगंधं॥ तन्दुल उज्वल अति आन, तुम ढिग पूज्य धरों। मुक्ताफलके उन्मान, लेकर पूज करों॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों। संसार वास निर्वार, तुम गुण गावत हों॥ अक्षतं॥३॥ ले सुमन विविधिके एव, पूजों तुम चरणा। हो काम विनाशक देव, काम व्यथा हरणा॥ श्रीमक्सीपारसनाथ, मन वच ध्यावत हों। मन वच तन शुद्ध लगाय, तुम गुण गावत हों॥ पुष्पं॥४॥ सजथाल सु नेवज धार, उज्वल तुरत किया लाडू मेवा अधिकार, देखत हर्ष हिया॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच पूज करों। मम क्षुधा रोग निर्वार,

चरणों चित्त धरों ॥ नैवेद्यं ॥५॥ अति उज्वल ज्योति जगाय, पूजत तुम चरणा। मम मोहांधेर नशाय आयो तुम शरणा ॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों। तुम ही त्रिभुवनके नाथ तुम गुण गावत हों ॥ दीपं ॥ ६ ॥

वर धूप दशांग बनाय, सार सुगंध सही अति हर्ष भाव उर ल्याय अग्नि मंझार दही ॥ श्री मक्शी पारसनाथ मनवच ध्यावत हो, वसु कर्महि कीजे क्षार, तुम गुण गावत हों ॥ धूपं ॥ ७ ॥ बादाम छुहारे दाख, पिस्ता धोय धरों। ले आम अनार सुपक, शुचिकर पूज करों ॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों। शिवफल दीजे भगवान, तुम गुण गावत हों ॥ फलं ॥८॥ जल आदिक द्रव्य मिलाय, वसुविधि अर्घ किया। धर साज रकेवी ल्याय, नाचत हर्ष हिया। श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों। तुम भव्योंको शिव साथ, तुम गुण गावत हों ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

दोहा—जल गंधाक्षत पुष्प सो नेवज ल्यायके। दीप धूप फल लेकर अर्घ बनायके ॥ नाचों गाय बजाय हर्ष उर धारकर। पूरण अर्घ चढ़ाय सु जयजयकार कर ॥ पूर्णार्घं ॥ १० ॥

जयमाला।

दोहा—जयजयजय जिनरायजी, श्रीपारसपरमेश।
गुण अनन्त तुम मांहि प्रभु, पर कछु गाऊं लेश ॥१॥

श्रीबानारस नगरी महान। सुरपुर समान जानो सुथान।
तहां विश्वसेन नामा सुभूप। बामादेवी रानी अनूप ॥२॥
आये तसु गर्भविषे सुदेव। वैशाखबदी दोइज स्वयमेव।
माताको सेवें शची आन। आज्ञा तिनकी धर शीश मान ॥३॥

पुन: जन्म भया आनन्दकार। एकादशि पौष बदी विचार।
तब इन्द्र आय आनन्द धार। जन्माभिषेक कीनो सुसार ॥४॥
शतवर्ष तनी तुम आयु जान। कुवरावय तीस बरस प्रमाण।
नव हाथ तुंग राजत शरीर। तन हरित वरण सोहै सुधीर ॥५॥
तुम उरग चिन्ह बर उरग सोई। तुम राजऋद्धि भुगती न कोई।
तप धारा फिर आनन्द पाय। एकादशि पौष बदी सुहाय ॥६॥
फिर कर्म घातिया चार नाश। वर केवल ज्ञान भयो प्रकाश॥
वदि चैत्र चौथि बेला प्रभात। हरि समोसरण रचियो विख्यात ७
नाना रचना देखन सुयोग। दर्शनको आवत भव्य लोग॥ सावन
सुदि सप्तमि दिन सुधारि। तब विधि अघातिया नाश चारि ॥८॥
शिव थान लयो वसुकर्म नाशि। पद सिद्ध भयो आनन्द राशि॥
तुम्हरी प्रतिमा मक्सी मझार। थापी भविजन आनन्दकार ॥९॥
तहां जुरत बहुत भवि जीव आय। कर भक्तिभावसे शीश नाय॥
अतिशय अनेक तहाँ होत जान। यह अतिशय क्षेत्रभयो महान॥१०।
तहां आय भव्य पूजा रचात। कोई स्तुति पढ़ते भांति भांति॥
कोई गावत गान कला विशाल। स्वरताल सहित सुन्दर रसाल॥ ११
कोई नाचत मन आनन्द पाय। तन थेई थेई थेई थेई ध्वनि कराय॥
छम छम नूपर बाजत अनूप। अति नटत नाट सुन्दर सरूप। १२॥
द्रुम द्रुम द्रुमता बाजत मृदङ्ग। सननन सारङ्गी बजति संग॥
झननन नन झल्लरि बजे सोई। घननन घननन ध्वनि घण्ट होई॥
१३॥ इस विधि भवि जीव करें अनन्द। लहैं पुण्यबंध करें
पाप मन्द॥ हम भी बन्दन कीनो अबार। सुदि पौष पञ्चमी
शुक्रवार ॥१४॥ मन देखत क्षेत्र बढ़ो प्रयोग:। जुरामल पूजन कीनी

सुलोग ॥ जहमाल गाय आनन्द पाय । जय जय श्रीपारस जगति राय ॥१४॥ घत्ता—जय पार्श्व जिनेशं नुतनाकेशं चक्रधरेशं ध्यावतहैं । मन वच आराधें भव्य समांधेंते सुरशिवफल पावतहैं ॥

॥ इत्याशीर्वाद: ॥

(७६) श्री गिरनारक्षेत्र पूजा ।

दोहा—बन्दो नेमि जिनेश पद; नेम धर्म दातार । नेम धुरन्धर परमगुरु, भविजन सुख कर्तार ।१। जिनवाणीको प्रणमिकर, गुरु गणधर उरधार । सिद्धक्षेत्र पूजा रचों, सब जीवन हितकार ॥२॥ उर्जयंत गिरिनाम तस, कहो जगत विख्यात । गिरिनारी तासे कहत, देखत मन हर्षात ॥३॥

अड़िल्ल—गिरि सुउन्नत सुभगाकार है। पंचकूट उतंग सुधार हैं ॥
बन मनोहर शिला सुहावनी । लखत सुन्दर मनको भावनी ॥४॥
और कूट अनेक बने तहां । सिद्धथान सुअति सुन्दर जहां ॥
देखि भविजन मन हर्षावते । सकल जन बन्दनको आवते ॥५॥

त्रिभंगी छन्द

तहां नेम कुमारा जप तप धारा कर्म बिदारा शिव पाई ।
मुनि कोटि बहत्तर सात शतक धर ता गिरि ऊपर सुखदाई ॥
भये शिवपुरवासी गुणके राशी विधिथिति नाशी ऋद्धि धरा ।
तिनके गुण गाऊं पूज रचाऊं मन हर्षाऊं सिद्धि करा ॥

दोहा—ऐसो क्षेत्र महान, तिहि पूजत मन बच काय ।
स्थापन त्रय वारिकर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरितारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो ॥ अत्र अत्र वतर: संवौष-

टाह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट् संधीसकरणं ।

अथाष्टकं ।

लेकर नीरसु क्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक भाई ।
दे त्रय धार जजों चरणा हरना मम जन्मजरा दुखदाई ॥
नेमपती तज राजमती भये बालयती तहांसे शिवपाई ।
कोड़ि बहत्तरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सु जजों हरषाई ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो । जलं ॥ १ ॥

चन्दनगारि मिलाय सुगंध सु ल्याय कटोरीमें धरना । मोह महातप मेटन काज सु चर्चतु हों तुम्हरे चरणा । नेमिपती ॥ सुगंध ॥२॥ अक्षत उज्ज्वल ल्याय धरों तहां पुंज करो मनको हर्षाई । देउ अक्षयपद प्रभुकरुणाकरफेर न याभव वास कराई ॥ नेम०अक्षतं फूल गुलाब चमेली वेल कदंब सुचंपक तीर सुल्याई । प्राशुक पुष्प लवंग चढाय सुगाय प्रभू गुण काम नशाई ॥ नेमपती॥ पुष्पं ॥४॥ नेवज नव्य करों भर थाल सुकंचन भाजनमें धर भाई । मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई ॥नेम०नैवेद्यं॥५॥ दीप बनाय धरों मणिका अथवा घृत वाति कपूर जलाई । नृत्य करोंकर आरति ले मम मोह महातम जाय पलाई ॥ नेम०दीपं ॥६॥ धूप दशांग सुगंध मई कर खेवहु अग्नि मझार सुहाई । लेकर अर्ज सुनो जिनजी मम कर्म महावन देउ जराई ॥नेमपती॥ धूपं ॥७॥ ले फल सार सुगंधमई रसनाहृद नेत्रनको सुखदाई । क्षेपत हों तुम्हरे चरणा प्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई ॥नेमपतो०॥फल॥ ले वसु द्रव्य सु अर्घ करों धरथाल सुमध्य महाहर्षाई । पूजत हों तुम्हरे चरणा

हरिये वसु कर्म बली दुःखदाई ॥ नेमपती०अर्घं ॥
दोहा—पूजत हों वसु द्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय ।
निजहित हेतु सुहावनो, पूर्ण अर्घ चढ़ाय ॥ पूर्णार्घं ॥१०॥

पंच कल्याणकाव ।

कार्तिक सुदिकी छठि जानो । गर्भागम तादिन मानो ॥
उत इन्द्र जजे उस थानी । इत पूजत हम हर्षानो ॥
ॐ ह्रीं कार्तिक सुदि छठि गर्भमंगल प्राप्तेभ्यो: अर्घं ॥१॥
श्रावण सुदि छठि सुखकारी । तब जन्ममहोत्सव धारी ॥
सुरराजगिरि अन्हवाई । हम पूजत इत सुख पाई ॥
ओं ह्रीं श्रावण सुदी छठी जन्ममंगल धारणेभ्यो ॥अर्घं॥२॥
सित सावनकी छठि प्यारो । तादिन प्रभु दिक्षाधारी ॥
तप घोर वीर तहां करना । हम पूजत तिनके चरणा ॥
ओं ह्रीं सावन सुदि छठि दिक्षा धारणेभ्यो ॥अर्घं॥३॥
एकम सुदि अश्विन मासा ॥ तब केवलज्ञान प्रकाशा ॥
हरि समवशरण तब कीना । हम पूजत इत सुख लीना ।
ओं ह्रीं अश्विन सुदि एकम केवलकल्याणप्राप्ताय ॥ अर्घं ॥४॥
सित अष्टमि मास अषाढ़ा । तब योग प्रभूने छाँड़ा ॥
जिन लई मोक्ष ठकुराई । इन पूजत चरणा भाई ॥
ओं ह्रीं अषाढ़ सुदि अष्टमी मोक्षमङ्गलप्राप्ताय ॥अर्घं ५॥
अडिल्ल—कोड़ि बहत्तरि सप्त सेकड़ा जानिये ॥ मुनिवर मुक्ति गये तहाँसे सुप्रमाणिये ॥ पूजों तिनके चरण सु मनवचकायके । वसु विधि द्रव्य मिलाय सु गाय बजायके ॥पूर्णार्घं॥

जयमाला।

दोहा—सिद्धक्षेत्र जग उच्च थल, सब जीवन सुखदाय।
कहों तास जयमालका, सुनते पाप नशाय ॥८॥

पद्धडी छंद।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान। गिरिनारि सु गिरि उन्नत बखान॥
तहां झूनागढ़ है नगर सार। सौराष्ट्र देशके मध्यसार ॥२॥
जब झूनागढ़से चले सोई। समभूमि कोस वर तीन होई॥
दरवाजेसे चल कोस आध। एक नदी बहत है जल अगाध ॥३॥
पर्वत उत्तर दक्षिण सुदोय। मध्य नदी बहति उज्ज्वल सुतोय
ता नदी मध्य कई कुण्ड जान। दोनों तट मंदिर बने मान ॥४॥
तहां बैरागी वैष्णव रहांय। भिक्षा कारण तीरथ करांय॥
इक कोस तहां यह मचो ख्याल। आगे एक वरनदी नाल ॥५॥
तहां श्रावकजन करतेस्नान। धो द्रव्य चलत आगे सुजान॥
फिर मृगीकुंड इक नाम जान। तहां वैरागिनके बने थान ॥६॥
वैष्णव तीर्थ जहां रचो सोई। विष्णू पूजत आनन्द होई॥
आगे चल डेढ़ सु कोस जाव। फिर छोटे पर्वतको चढ़ाव ॥७॥
तहां बंधो पैरकारी सुजान। चल तीन कोश आगे प्रमाण॥
तहां तीन कुण्ड सोहैं महान। श्रीजिनके युग मंदिर बखान ॥८॥
दिगाम्बरके जिनके सुथान। श्वेताम्बरके बहुते प्रमाण॥
जहां बनी धर्मशाला सुजोय। जलकुण्ड तहां निर्मल सुतोय ॥९॥
फिर आगे पर्वतपर चढ़ाव। चढ़ प्रथम कूटको चले जाव॥
तहां दर्शनकर आगे सुजाय। तहां द्वितिय टोंकका दर्श पाय॥१०॥
तहां नेमनाथके चरण जान। फिर है उतार भारी महान॥
तहां चढ़कर पञ्चमटोंक जाय। अति कठिन चढ़ाव तहां लखाय॥११॥

श्रीनेमनाथका मुक्ति थान। देखत नयनों अति हर्ष मान॥
इक बिम्ब चरणयुग तहां जान। भवि करत बन्दना हर्ष ठान॥१२॥
कोई करते जय जय भक्ति लाय। कोई स्तुति पढ़ते तहां बनाय॥
तुम त्रिभुवन पति त्रैलोक्य पाल। मम दुःख दूर कीजे दयाल॥१३॥
तुम राज ऋद्धि भुगती न कोई। यह अथिररूप संसार जोई॥
तज मातपिता घर कुटुमद्वार। तज राजमतीसी सती नार॥१४॥
द्वादश भावन भाई निदान। पशुबन्दि छोड़ दे अभय दान॥
शेसावनमें दिक्षा सुधार। तप कर तहां कर्म किये सुक्षार॥ १५ ॥
ताही बन केवल ऋद्धि पाय। इन्द्रादिक पूजे चरण आय॥
तहां समोशरणरचियो विशाल। मणिपञ्च वर्णकर अति रसाल१६
तहां वेदी कोट सभा अनूप। दरवाजे भूमि बनी सुरूप॥
वसु प्रातिहार्य छत्रादि सार। वर द्वादश सभा बनी अपार॥१७॥
करके विहार देशों मझार। भवि जीव करे भवसिन्धु पार॥
पुन टोंक पञ्चमीको सुजाय। शिव थान लहो आनन्द पाय॥१८॥
सो पूजनीक वह थान जान। बंदत जन तिनके पाप हान॥
तहांसे सुबहत्तर कोड़ि और। मुनि सात शतक सब कहे जोर॥१९॥
उस पर्वतसे शिवनाथ पाय। सब भूमि पूजने योग्य थाय॥
तहां देश देशके भव्य आय। बन्दन कर बहु आनन्द पाय॥२०॥
पूजन कर कीनो पाप नाश। बहु पुण्य बन्ध कीनो प्रकाश॥
यह ऐसा क्षेत्र महान जान। हम बन्दना कीनी हर्ष ठान॥२१॥
उनईस शतक उनतीस जान। सम्बत अष्टमि सित फाग मान॥
सब सङ्घ सहित बन्दन कराय। पूजा कीनी आनन्द पाय॥२२॥
सब दुःख दूर कीजे दयाल। कहें चन्द्र कृपा कीजे कृपाल॥

मैं अल्प बुद्धि जयमाल गाय। भवि जीव शुद्ध लेकी बनाय।२३।
तुम दया विशाला सब क्षितिपाला तुम गुणमाला कण्ठधरी।
ते भव्य विशाला तज जग जाला नागत भाला मुक्तिवरी।

इत्याशीर्वादः ॥

(७७) सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पूजा।

अडिल्ल छन्द।

जम्बूद्वीप मझार भरत क्षेत्र सुकहों। आर्यखण्ड सुजान भद्र देशे लहो॥ सुवर्णगिरि अभिराम सुपर्वत है तहां। पञ्चकोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव जहां॥१॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर, बहुत जिनालय जान।
चन्द्रप्रभू जिन आदिदे, पूजों सब भगवान॥२॥

ओं ह्रीं अत्रवत्रवतर: संवोषटाह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं॥ अत्र ममऽसन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक

सारंग छंद—पदमद्रहको नीर ल्याय गंगासे भरके। कनक कटोरी माहि हेम थारनमें धरके। सोनागिरिके शीश भूमि निर्वाण सुहाई, पंचकोडि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुंचे मुनिराई॥ चन्द्रप्रभु जिन आदि सकल जिनवर पद पूजो। स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाय अविचल पद हूजो॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराय।
तिनपद धारा तीन दे, तृषा हरणके काज॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो॥ जलं॥१॥

केसर आदि कपूर मिले मलयागिरि चन्दन। परमल अधिकी तास और सब दाह निकन्दन॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज। ते सुगन्ध कर पूजिये,दाह निकन्दन काज। सुगन्धं॥२॥

तन्दुल धवल सुगन्ध ल्याय जल धोय पखारो। अक्षय पदके हेतु पुंज द्वादश तहां धारो। सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन राज। तिन पद पूजा कीजिये, अक्षय पदके काज ॥अक्षतं॥३॥

बेला और गुलाब मालती कमल मंगाये। पारिजातके पुष्प ल्याय जिन चरण चढ़ाये॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन राज। ते सब पूजों पुष्प ले, मदन विनाशन काज॥ पुष्पं ॥४॥

विंजन जो जगमांहि खांडघृत माहि पकाये। मीठे तुरत बनाय हेम थारी भर ल्याये॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज। ते पूजों नैवेद्य ले, क्षुधा हरणके काज॥ नैवेद्यं ॥५॥

मणिमग दीप प्रजाल धरौं पंकति भरथारी। जिन मन्दिर तम हार करहु दर्शन नरनारी। सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन-राज। करों दीपले आरती, ज्ञान प्रकाशन काज ॥ दीपं ॥६॥

दशविधि धूप अनूप अग्नि भोजनमें डालों। जाकी धूप सुगन्ध रहे भर सर्व दिशालों। सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज धूप कुम्भ आगे धरों, कर्म दहनके काज ॥ ७ ॥

उत्तम फल जग मांहि बहुत मीठे अरु पाके। अमित अनार अचार आदि अमृत रस छाके। सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज। उत्तम फल तिन ले मिलो, कर्म विनाशन काज ॥फलं८

दोहा—जल आदिक बसु द्रव्य अघ करके धर नाचो। बाजे बहुत बजाय पाठ पढ़के मुख सांचो। सोनागिरके शीसपर जेते सब, जिनराज। ते हम पूजें अर्घ ले। मुक्ति रमणके काज ॥ अर्घं ॥९॥

अडिल्ल छन्द।

श्री जिनवरकी भक्ति सो जे नर करत हैं। फल वांछा कुछ

नाहिं प्रेम उर धरत हैं ॥ ज्यों जगमाहिं किसानसु खेतीको करें। नाज काज जिय जान सु शुभ आपहि झरें ॥ ऐसे पूजादान भक्ति वश कीजिये। सुख सम्पति गति मुक्ति सहज पा लीजिये ॥ पूर्णार्घं ॥ १० ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—सोनागिरिके शीसपर, जिन मन्दिर अभिराम ।
तिन गुणकी जयमालिका, वर्णत आशाराम ॥ १ ॥

पद्धरी छंद ।

गिरि नीचे जिन मन्दिर सुचार। ते यतिन रचे शोभा अपार।
तिनके अति दीरघ चौक जान। तिनमें यात्री मेलें सुआन ॥ २ ॥
गुमठी छज्जो शोभित अनूप। ध्वज पंकित सोहैं विविधरूप।
वसु प्रातिहार्य तहां धरे आन। सब मंगल द्रव्यिनकी सुखान ॥३॥
दरवाजोंपर कलशा निहार। करजोर सुजय जय ध्वनि उचार।
इक मन्दिरमें यतिराजमान। आचार्य विजयकीर्तो सुजान ॥ ४ ॥
तिन शिष्य भागीरथ विबुध नाम। जिनराज भक्ति नहिं और काम॥
अब पर्वतको चढ़ चलो जान। दरवाजो तहां इक शोभमान ॥५॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार। तिन वंदि पूज आगे सिधार।
वहां दु:खित भुखितको देत दान। याचकजन जहां हैं अप्रमाण ६
आगे जिन मन्दिर दुहूं ओर। जिन गान होत वादित्र शोर।
माली बहु ठाढ़े चौक पौर। ले हार कलगी तहां देत दौर ॥ ७ ॥
जिन यात्री तिनके हाथ मांहि। बखशीस रीझ तहां देत जाहिं।
दरवाजो तहां दूजो विशाल। तहां क्षेत्रपाल दोउ ओर लाल ॥८॥
दरवाजे भीतर चौक माहिं। जिन भवन रचे प्राचीन आहिं।

तिनकी महिमा बरणी न जाय। दो कुंड सजलकर अति सुहाय८
जिन मन्दिरकी वेदी विशाल। दरवाजो तीनों बहु सुढ़ाल।
ता दरवाजेपर द्वारपाल। ले लकुट खड़े अरु हाथ माल॥ १०॥
जे दुर्जनको नहिं आन देय। ते निन्दकको ना दरश देय॥
चल चन्द्रप्रभूके चौकमाहिं। दालाने तहां चौतर्फ आयं॥ ११॥
तहां मध्य सभामंडप निहार। तिसकी रचना नाना प्रकार।
तहां चन्द्रप्रभुके दरशपाय। फल जात लहो नरजन्म आय॥ १२॥
प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात। कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात।
बंदे पूजें तहां देंय दान। जननृत्य भजनकर मधुरगान॥ १३॥
तार्थेई थेई थेई बाजत सितार। मृदंग वीन मुहचंग सार।
तिनकी ध्वनि सुनि भवि होत प्रेम। जयकार करत नाचत सुप्रम॥
ते स्तुतिकर फिर नाय शीस। भवि चल मनो कर कर्म खीस।
यह सोनागिरि रचना अपार। बरणन करको कवि लहै पार॥१५॥
अति तनक बुद्धि आशासुपाय। बस भक्ति कही इतनी सुगाय।
मैं मन्दबुद्धि किम लहों पार। बुद्धिवान चूक लीजो सुधार॥१६॥
दोहा—सोनागिरि जय मालिका, लघुमति कही बनाय।
पढ़े सुने जो प्रीतिसे, सो नर शिवपुर जाय॥ १७॥

इत्याशीर्वाद:।

(७८) रविव्रतपूजा।

अडिल्ल।

यह भवजन हितकार, सु रविवृत जिन कही। करहु भव्य-जन लोग, सुमन देके सही॥ पूजों पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगाय-

के। मिटै सकल सन्ताप मिले निध आपके॥ मति सागर इक सेठ कथा ग्रन्थन कही। उनहीने यह पूजा कर आनन्द लही॥ ताते रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये। सुख सम्पति सन्तान, अतुल निध लीजिये। दोहा—प्रणमो पार्श्व जिनेशको, हाथजोड़ शिर नाय। परभव सुखके कारने, पूजा करू' बनाय। एतवार वृतके दिना यही पूजन ठान। ता फल सुरग सम्पति लहैं, निश्चय लीजे मान॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर तिष्ठ २ ठ: ठः अत्र मम सन्निहितो।

अष्टक।

उज्वल जल भरके अति लायो रतन कटोरन माहीं। धार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं॥ पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रविव्रतके दिन भाई। सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत ही आनद मंगलदाई॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ मलयागिरि केशर अति सुन्दर कुमकुम रंग बनाई। धार देत जिन चरनन आगे भवआताप नसाई। पारसनाथ०। सुगन्धं। मोती सम अति उज्वल तन्दुल ल्यावो नीर पखारो। अक्षय पदके हेतु भावसो श्री जिनवर ढिग धारो। पारस०। अक्षतं। केला अर मचकुन्द चमेली पारजातके ल्यावो। चुन चुन श्री जिन अग्र चढ़ाऊ मनवान्छित फल पावो। पारस०। पुष्पं। वावर फेनी गोजा आदिक घृतमें लेत पकाई। कञ्चन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई। पारस०। नवेद्यं। मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई। जिनके

आगे आरती करिके मोह तिमिर नस जाई। पारस०। दीपं। चूरनकर मलयागिरि चन्दन धूप दशाङ्ग बनाई तट पावकमें खेय भावसों कर्म नाश हो जाई। पारस०। धूप श्रीफल आदि बदाम सुपारी भांति भांतिके लावो। श्रीजिनचरण चढ़ाय हरस कर तात शिवफल पावो। पारस०। फलं। जल गन्धादिक अष्ट द्रव्य ले अर्घ बनावो भाई। नाचत गावत हर्ष भाव सो कञ्चन थार भराई। पारस०। अर्घं। गीतका छन्द। मन वचन काय विशुद्ध करके पार्श्वनाथ सु पूजिये। जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवन्त सु हूजिये। पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी। जे करत हैं नरनार पूजा लहत सुक्ख अपार जी। पूर्णार्घं।

दोहा—यह जगमें विख्यात हैं, पारसनाथ महान।
जिनगुनकी जयमालका भाषा करों बखान॥

पद्धरी छंद

जय जय प्रणमो श्री पार्श्व देव। इन्द्रादिक तिनकी करत सेव। जय जय सु बनारस जन्म लीन्ह। तिहुं लोक विषे उद्योत कीन। १। जय जिनके पितु श्री विश्वसेन। तिनके घर भए सुख चैन एन। जय बामादेवी मात जान। तिनके उपजे पारस महान। २। जय तीन लोक आनन्द देन। भविजनके दाता भये हैं पेन। जय जिनने प्रभुका शरण लीन। तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन।३। जय नाग नागनी भये अधीन। प्रभु चरनन लाग रहे प्रवीन। तजके सो देह स्वर्ग सुजाय। धरनेन्द्र पद्मावति भये आय। ४। जे चोर अंजना अधम जान। चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान। जे मतिसागर इक सेठ आन। जिन रविव्रत पूजा करी ठान। तिनके

सुत थे परदेश माहि। जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि। ६। जे रविवृत पूजन करी सेठ। ताफलकर सबसे भई भेट। जिन जिन· ने प्रभुका शरण लीन। तिन रिद्धिसिद्धि पाई नवीन। ७। जे रविवृत पूजा करहिं जेय। ते सुख्य अनन्तानन्त लेय। धरनेन्द्र पद्मवति हुय सहाय। प्रभु भक्ति जान ततकाल जाय। ८। पूजा विधान इहि विध रचाय। मन वचन काय तीनों लगाय। जो भक्तिभाव जैमाल गाय। सोही सुख सम्पति अतुल पाय। ९। बाजत मृदंग बीनादि सार। गावत नाचत नाना प्रकार। तन नन नन नन ताल देत। सन नन नन सुर भर सु लेत। १०। ता थेई थेई थेई पग धरत जाय। छम छम छमं छम घुघरू बजाय। जे करहिं निरत इहि भांत भात। ते लहहिं सुख्य शिवपुर सुजात। ११। दोहा। रविव्रत पूजा पार्श्वकी, करे भवक जन कोय। सुख सम्पति इहि भव लहै, तुरत सुरग पद होय। अडिल्ल—रवि वृत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भव मन धरें। भव भवके आताप सकल छिनमे टरे॥ होय सुरेन्द नरेन्द्र आदि पदवो लहै। सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहै॥ फेर सर्व विघ्न पाय भक्ति प्रभु अनुसरे नाना विध सुख भोग बहुरि शिव त्रियवरै॥

इत्यादि आशीर्वादः।

उत्तमोत्तम जैनग्रंथोंके मिलनेका पता—
जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, ६७४८
बड़ाबाजार, कलकत्ता।

नवाँ अध्याय

७६ पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा।

दोहा—जिहि पावापुर छिति अघति, हम सन्मत जगदीश। भये सिद्ध शुभ पानसो, जजों नाय निज शीश॥ ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र अवतर अवतर। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं। अत्रममसन्निहितो भवभव वषट् सन्निधीकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्। अथ अष्टक॥ गीतका छंद॥ शुचि सलिल शीतौ कलिल रीतौं श्रमन चीतो लै जिसो। भर कनक झारी त्रगद हारी दै त्रिधारी जित तृषौ॥ वरपद्म वन भर पद्मसरवर जहिर पावा ग्रामही। शिश धाम सन्मत स्वामि पायो जजों सो सुख दाम ही॥ ओं ह्रीं श्रीपावापुर क्षेत्रे वीरनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥जलं॥ भव भ्रमत २ अशर्म्म तपकी तपन कर तप ताईयो। तसु वलय कंदन मलय चंदन उदय संग घिस ल्याइयो॥ वरपद्म०॥ सुगंधं। तन्दुल नवीने खण्ड लीने लै महीने ऊजरे। मणि कुन्दइन्दु तुषार-द्युत जित कण रकावीमें धरे॥वरपद्म०॥अक्षतं॥ मकरंद लोभन सुमन शोभन सुरम चोभन लेयजी। मद समर हरवर अमर तरके घ्रान दृग हरवेयजी॥ वरपद्म०॥पुष्पं॥ नैवेद्यं॥ णवन क्षुधामिटावनेको सेव्य भावन युत किया। रस मिष्ट पूरत इष्ट सूरत लेयकर प्रभु हित हिया। वरपद्म॥ नैवेद्यं॥ तम अघ नाशक स्वपर भाशक ज्ञेयपरकाशक सही।

हिमपात्रमें धर मौल्य विनवर द्योत धर मणि दीपही ॥ वरपद्म० ॥ दीपं। आमोदकारी वस्तु सारी विध दुचारी जारनी! तसु दूप कर कर धूप लै दश दिश सुरभ विस्तारनी॥ वरपद्म॥ धूपं॥ फल भक्त पक्व सु चक्क सोहन सुक्क जनमन मोहने। वर रस पुरत लव तुरत मधु रत लेय कर अति सोहने। वरपद्म० ॥फलं॥ अल गंध आदि मिलाय वसु विध थार स्वर्ण भरायकें। मन प्रमुदभाव उपाय कर लै आय अर्घ बनायकें॥ वरपद्म० अर्घं॥

अथ जयमाला

दोहा—चरम तीर्थंकरतार श्री, वर्द्धमान जगपाल। कल मल दल विध विकल हुय, गाऊं तिन जयमाल॥१॥ पद्धरि छन्द॥ जय जय सुवीर जिन मुक्ति थान। पावापुर वन सर शोभवान॥ जे शित असाढ़ छठ स्वर्गधाम। तजपुष्पोत्तर सु विमान ठान ॥१॥ कुंडलपुर सिद्धारथ नृपेश। आये त्रिशला जननी उरेश॥ शित चैत्र त्रियोदश युत त्रिज्ञान। जन्में तम अज्ञ निवार भान॥२॥पूर्वान्ह धवल चतुर्दशि दिनेश। किय न्हुन कनकगिरि शिरसुरेश। वयवर्ष तीस पद कुमर काल। सुख द्रव्य भोग भुगते विशाल॥३॥मारगशिर अलि दशमो पवित्र। चढ़ चंद्रप्रभुशिवका विचित्र॥ चल पुरसे सिद्धन शीश नाय। धारो संयम पर शर्म्मदाय॥ ४॥ गत वर्ष दुदश कर तप विधान। दिन शित वैशाख दशैं महान। रिजुकुला सरिता तट स्व सोध। उपजायी जिनवर चरम बोध॥ ५॥ तबही हरि आज्ञा शिर चढ़ाय। रचियो कमवाश्रित धनद राय। चतु संघ प्रभृत गौतम गनेश। युत तीस वरष विहरे जिनेश॥ ६॥ भवि जीवन देशन विविध देत। आये वर पावानग्र खेत॥ कार्तिक अलि अन्तिम

दिवस ईश। व्युतसर्गासन विध अघतिपीश ॥ ७ ॥ इ अकल अमल इक समय माहिं। पंचम गति निवशे श्री जिनाह ॥ तब सुरपति जिन रवि अस्त जान। आये जु तुरत स्व स्व विमान ॥८॥ कर वपु अरचा थुति-विविध भांत। ले विविध द्रव्य परमल विख्यात ॥ तब ही अगनींद्र नवाय शीश। सांस्कार देह श्री त्रि-जगदीश ॥९॥ कर भस्म वंदना स्व स्व महीय। निवसे प्रभु गुन चितवन स्वहीय। पुर नर मुनि गनपति आय आय। वंदी सोरज सिर ल्याय ल्याय ॥ १० ॥ तबहींसे सो दिन पूज्यमान। पूजत जिनग्रह जन हर्ष मान। मैं पुन पुन तिस भुवि शीश धार। वंदो तिन गणधर हृद मझार ॥ ११ ॥ जिनहीका अब भी तीर्थ एह। वर्णत दायक अति शर्म्म गेह॥ अरु दुषम रहे अवसान ताहि। वर्ते गोभव थित हर सदाहि ॥ १२ ॥ छन्द ॥ श्री सन्मत जिन अंघ्रि पद्मजो युग जजै भव्य जो मन वच काय। ताके जन्म जन्म संतत अघ जावहिं इक छिन मांहि पलाय। धनधान्यादि शर्म्म इन्द्रीजन लहे सो शर्म्म अतेन्द्री पाय। अजर अमर अविनाशी शिव थल वर्णी दौल रहैं थिर थाय ॥ इत्यादि आशीर्वादः ॥

८० चंपापुर सिद्धक्षेत्र पूजा।

॥ दोहा ॥ उतसव किय पनवार जहं, सुरगन युत हरि आय। जजों सुथल वसपूज्य सुत, चम्पापुर हर्षाय ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतर संवौषट् इत्याह्वाननं ॥ १ ॥ अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ २ ॥ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत ॥

अष्टक ॥ डाल नन्दीश्वर पूजनकी ॥

सम अमिय विगत त्रस वारि, लै हिम कुंभ भरा। लख सुखद त्रिगद हरतार दे त्रय धार धरा ॥ श्री वासुपूज्य जिनराय, निर्वृत थान प्रिया। चम्पापुर थल सुखदाय, पूजों हर्ष हिया ॥ ओं ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय। जलं ॥ काश्मीर नीर मधगार, प्रीति पवित्र खरी। शीतलचन्दन सद्धसार, लै भव तापहरी ॥ श्री वासुपूज्य० ॥ सुगंधं ॥ २ ॥ मणिद्युत समखंड विहीन, तंदुल लै नीके, सौरभ युत नववरबीन शाल महा नीके ॥ श्री वासुपूज्य० ।अक्षतं ॥३॥ अलि लुभन शुभन दृग घ्राण, सुमन सुरन द्रुमके। लौवाहिम अर्जुनबान, सुमन दमन झुमके ॥ श्री वासुपूज्य० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ रस पुरत तुरत पकवान, पवध यथोक्त घृती। क्षुध मदमद प्रदमन जान, लै विध युक्तकृती। श्रीवासु० ॥ दीपं ॥६॥ वर परमल द्रव्य अनूप, शोध पवित्र करी। तसु चूरण कर कर धूप, लै विध कजहरी ॥ श्रीवासु० ॥७॥ धूपं ॥ फल पक्क मधुररस वान, प्रासुक बहुविधके। लख सुखद रसन दृग घ्रान, लै प्रद पद सिधके ॥ श्रीवासु०॥८॥ फलं ॥ जल फल वसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमथारी ॥ वसु अंग धरा पर ल्याय, प्रमुद रच वितधारी ॥ श्रीवासु० ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाल ॥दोहा॥ भये द्वादशम तीर्थपति, चंपापुर शुभ थान। तिन गुणकी जयमाल कछु, कहों श्रवण सुखदान पद्धरिछन्द ॥

जय जय श्री चंपापुर सो धाम। जहां राजत नृप वसुपुज्ञ नाम ॥
जन पौन पल्यसे धर्महीन। भवभ्रमन दुःखमय लख प्रवीन ॥१॥
उर करुणा भर सो तम विडार। उपजे किरणावलि धर अपार ॥

श्रीवासपूज्य तिन तने बाल। द्वादशम तीर्थंकर्ता विसाल ॥ २ ॥
भवभोग देह सविरत होय। वय बाल माहिं ही नाथ सोय ॥
सिद्धन नम महं धृत भार लीन। तप द्वादशविध उग्रोग्र कीन ॥
तहं लोह सप्तत्रय आयु येह। दशप्रकृति पूर्व ही क्षय करेह ॥
श्रेणीजु क्षपक आरूढ़ होय। गुण नवम भाग नव माहिं सोय
॥ ४ ॥ सोलह बसु इक इक षट इकेय। इक इक इक इम इन
क्रम सहेय ॥ पुन दशम थान इक लोभटार। द्वादशमथान
सोलह विडार ॥५॥ ह्वे अंतिम चतुष्टय युक्त स्वाम। पायों सब
सुखद संयोग ठाम ॥ तह काल त्रिगोचर सर्व गेय। युगपत
हि समय इक महि लखेय ॥ ६ ॥ कछु काल दुविध वृष
अमिय वृष्टि। कर पोषें भव भवि धान्य श्रेष्टि ॥ इक मास आयु
अवशेष जान। जिन योगनकी सुप्रवर्त हान ॥७॥ ताही थल तृति-
शित ध्यान ध्याय। चतुदशम थान निवसे जिनाय ॥ तह दुचरम
समय मझार ईश। प्रकृति जु बहत्तर तिनहि पीश ॥८॥ तेरहको
चरम समय मझार। करके श्री जगतेश्वर प्रहार ॥ अष्टमि अवनी
इक समय मद्ध। निवसे पाकर निज अचल रिद्ध ॥९॥ युत गुण
वसु प्रमुख अमित गुणेश। ह्वै रहे सदाही इमहिं वेश ॥ तबहीसे
मों थानक पवित्र। त्रैलोक्य पूज्य गायो विचित्र। मैं तसु रज
निज मस्तक लगाय। बन्दों पुन पुन भुवि शोशनाय ॥ ताही पद
वांछा उर मझार। धर अन्य चाह बुद्धी विडार ॥११॥

दोहा—श्री चंपापुर जो पुरुष, पूजै मनवच काय।
वरणी "दौल" सो पायही, सुख संपति अधिकाय ॥

इत्यादि आशीर्वादः ॥

८१ जन्मकल्याणक पूजा ।

दोहा—दोष अठारह रहित प्रभु, सहित सुगुण छ्यालीस ।
तिन सबकी पूजा करों, आय तिष्ठ जगदीश ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद्-अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र अवतर! संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्रममसन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक ।

(द्यानतरायकृत नन्दीश्वर द्वीपाष्टककी चाल ।)

शुचिक्षीरउदधिको नीर, हाटक भृंगभरा। तुमपदपूजों गुणधीर, मेटो जन्मजरा ॥ हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें। हम पूजें इनगुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट् चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद्-अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।१। केसर घनसार मिलाय, शीत सुगंध घनी । जुगचरनन चर्चों ल्याय, भवआतापहनी । हरि मेरु०सुगंधं । अक्षत मोती उन हार, स्वेत सुगन्ध भरे । पाऊं अक्षयपद सार, ले तुम भेंट धरे ॥ हरि मेरु० अक्षितं । वेल्हा जूही गुलाब, सुमन अनेक भरे। तुम भेंट धरों जिनराज, काम कलंक हरे ॥ हरि मेरु० पुष्पं । फैनी गोझा पकवान, सुंदर ले ताजे । तुम अग्र धरों गुण खान, रोग क्षुधा भाजे ॥हरि मेरु० नैवेद्यं । कंचन मय दीपक बार, तुम आगे लाऊं मम तिमिर मोह छयकार, केवल पद पाऊं ॥ हरि मेरु० दीपं । कृष्णागरु तगर कपुर, चूर सुगंध करों । तुम आगे खेवत भूर,

वसुविध कर्म हरो ।। हरि मेरु० धूपं । श्रीफल अंगूर अनार,थारक थार भरों। तुम चरन चढ़ाऊं सार,ताफल मुक्ति वरों ।। हरि मेरु० फलं । जल आदिक आठ अदोष, तिनका अर्घ करों । तुम पद पूजों गुण कोष, पूरन पद सुधरों ।। हरि मेरु० अर्घं ।

आरती जोगीरासा ।

जन्मसमय उच्छव करनेको, इन्द्र शची युत धायो । तिहको कछु वरणन करवेको, मेरो मन उमगायो ।। वुधिजन मोंको दोष न दीजो, थोरो बुद्धि भुलायो। साधू दोष क्षमे सब हीके, मेरी करो सहायो ।। १ ॥

(छंद कामिनी—मोहन—मात्रा २०)

जन्म जिनराजको जबहि निज जानियों । इन्द्र धरनिन्द्र सुर सकल अकुलानियों ॥ देव देवाङ्गना चलिय जयकारतीं ! शचिय सुरपति सहित करति जिन आरतीं ॥ २ ॥ साजि गजराज हरि लक्ष जोजन तनो । बदन शत बदन प्रति दन्त बसु सोहनो ।। सजल भरि पूर सरदन्त प्रति धारती । शचिय सुरपति सहित, करति जिन आरती ॥३॥ सरहिं सर पंच दुय एक कमलिनि बनी । तासु प्रति कमल पच्चीस शोभा घनी॥ कमल दल एकसो आठ विसतारतीं । शचिय सुरपति सहित करत जिन आरतीं ॥४॥ दलहिं दल अप्सरा नाचहीं भावसों । करहिं सङ्गीत जयकार सुर चावसों ॥ तगड़दा तगड़ थई करत पग धारतीं । शचियं सुरपति स० ॥५॥ तासु करि बैठि हरि सकल परिवारसों । देहि परदक्षिणा जिनहि जयकारसों ॥ आनि कर शचियं जिन नाथ उर धारतीं। शचियं

सुरपति स० ॥६॥ आनि पांडुकशिला पूर्व मुख थाप जिन । करहिं अभिषेक उच्छाहसो अधिक तिन ॥ देखि प्रभु वदन छवि कोटि रवि वारतीं । शचिय सुरपति सहित कर० ॥ ७ ॥ जोजनह आठ गम्भीर कलशा बने । चारि चौड़ाई मुख एक जोजन तने ॥ सहस अरु आठ भरि कलश शिर ढारतीं । शचिय सुरपति सहि० ॥८॥ छत्र मणि खचित ईशान करतारहीं । सनत माहेंद्र दोऊ चमर शिर ढारहीं ॥ देव देवीय 'पुष्पांजलिय डारतीं । शचिय सुरपति सहित करत जिन० ॥ ८ ॥ जलसु चन्दन पुहप शालि चरु ले धरों । दीप अरु धूप फल अर्घ पूजा करों ॥ पिंडिका और नीरांजना वारतीं । शचिय सुरपति सहित कर० ॥१०॥ कियो शृंगार सब अंग सामानसों । आनि मातहिं दियो वहुरि जिनराजकों ॥ तृपत नहिं होत दृग रूप नीहारतीं । शचिय सुरपति सहित करत जिन आर० ॥ ११ ॥ ताल मिरदंग धुनि सत सुर बाजहीं । नृत्य तांडव करत इन्द्र अति छाजहीं ॥ करत उच्छाहसों निजसु पद धारती। शचिय सुरपति सहित कर० ॥१२॥ भव्य जन आय जिन जन्म उत्सव करैं। आपने जन्मके सकल पातिक हरैं ॥ भक्ति गुरुदेवकी पार उत्तारतीं। शचिय सुरपति साहत करहिं जिन आरतीं ॥१३॥

घत्ता—जिनवर पद पूजा भावसु हूजा, पूरण चित आनन्द भया।
जयवन्त सु हूजौ आसा पूजो, लाल विनोदी भाल नया।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट् चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद्ऽर्हत्परमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौपाई—मंगल गर्भ समयमें जोय। मंगल भयो जन्ममें जोय।

मंगल दीक्षा धारत जोय। मंगल ज्ञान प्राप्तिमें जोय॥ मङ्गल मोक्ष गमनमें जोय। इन्द्रन कीनों हर्षित होय। जाचूं बार बार हौं सोय। हे प्रभु! दीजे मङ्गल मोय।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(८२) श्री सम्मेदशिखरपूजाविधान

दोहा—सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सु थान॥ शिखिर सम्मेद सदा नमौ, होय पापकी हान ॥१॥ अगनित मुनि जहं तें गए, लोक शिखिरके तीर। तिनके पद पंकज नमौ, नासे भवकी पीर ॥२॥ अडिल्ल छन्द—है वह उज्वल क्षेत्र सु अति निर्मल सही, परम पुनीत सुठौर महा गुनकी मही॥ सकल सिद्धि दातार महा रमनीक है। वंदौ निज सुख हेत अचल पद देत है ॥३॥ सोरठा—शिखिर सम्मेद महान, जगमें तीर्थ प्रधान है॥ महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किम कहो ॥ ४ ॥ पद्धरी छन्द—सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है। अति सु उज्वल तीर्थ महान है। करहि भक्तिसो जे गुन गाइकैं। वरहि शिव सुरनर सुख पायकैं॥ ५ ॥ अडिल्ल छन्द—सुर हरि नरपति आदि सुजिन बन्दन करे। भवसागर ते तिरे नहीं भवदधि परें॥ सुफल होय जो जन्म सु जे दर्शन करें। जन्म जन्मके पाप सकल छिनमें टरें ॥६॥ पद्धरी छन्द—श्री तीर्थंकर जिनवर सु बीस। अरु मुनि असंख्य सब गुनन ईस॥ पहुंचे जहं थे केवल सुधाम। तिन सबकों अब मेरी प्रणाम ॥७॥ गीतका छन्द—सम्मेद गढ़ है तीर्थ भारी सबनकौ उज्ज्वल करे। चिरकालके जे कर्म लागे दरस ते छिनमें टरे॥ है

परम पावन पुन्य दाइक अतुल महिमा जानिए। है अनूप सरूप गिरिवर तासु पूजा ठानिए ॥ ८ ॥ दोहा—श्रीसम्मेद शिखिर महा, पूजों मनवचकाय ॥ हरत चतुरगति दुःख को, मन वांछित फल दाय ॥ ॐह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अत्रावतराव-तर संवौषट् इत्याह्वाननम् परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्। ओंह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अष्टक ।

अडिल्ल छन्द—क्षीरोदधि सम नीर सु उज्जल लीजिये। कनक कलस में भरकें धारा दीजिये ॥ पूजों शिखिर सम्मेद सुमन वचकाय जू। नरकादिक दुःख टरैं अचल पद पाय जू॥ ॐह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं। पयसौं घिस मलयागिर चन्दन ल्याइये। केसर आदि कपूर सुगंध मिलाइये॥ पूजो शिखिर० चन्दनं। तंदुल धवल सु उज्जवल खासे धोयके। हेम वरनके थार भरौं शुचिहोय कैं॥ पूजौं शिखिर०। सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षय पदप्राप्ताय अक्षतं ॥३॥ फूल सुगंध सु ल्याय हरष सौं आन चढ़ायौ। रोग शोक मिट जाय मदन सब दूर पलायौ ॥ पूजौं० पुष्पं ॥ षट् रस कर नैवेद्य कनक थारी भर ल्यायो॥ क्षुधा निवारण हेतु सु पूजौ मन हरषायौ ॥पूजौ शिखिर० नैवेद्यं ॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत हो। पूजत होत स्वज्ञान मोह तम नाश हो ॥ पूजौं सिखिर०। दीपं ॥६॥ दस विधि धूप अनूप अग्नि में खेवहूं। अष्ट कर्मको

नाश होत सुख पावहु ॥ पूजौं शिखिर०। धूपं ॥ केला लौंग सुपारी श्रीफल ल्याइये। फल चढ़ाय मन वांछित फल सु पाइये ॥ पूजौं शिखिर०। फलं ॥८॥ जल गंधाक्षित फूल सु नेवज लीजिये। दीप धूप फल लै कर अर्घ चढ़ाइये ॥ पूजौं शिखिर०। अर्घं।

पद्धरी छन्द—श्री बीस तीर्थंकर हैं जिनेन्द्र। अरु हैं असंख्य बहुते मुनेन्द्र ॥ तिनकौं कर जोर करों प्रणाम। तिनको पूजो तज सकल काम ॥ ओं ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्ध क्षेत्रोभ्यो अनर्घपद प्राप्ताय अर्घं ॥ढारजोगी रायसा-श्रीसम्मेदशिखर गिर उन्नत शोभा अधिक प्रमानों। विंशति तिंहपरकूट मनोहर अद्भुत रचना जानो ॥ श्री तीर्थंकर बीस तहांसे शिवपुर पहुंचे जाई। तिनके पद पंकज युग पूजौ प्रत्येक अर्घ चढ़ाई। ओं ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥ प्रथम सिद्धवर कूट मनोहर आनन्द मंगल दाई। अजित प्रभू जहंते शिव पहुंचे पूजो मनवचकाई ॥ कोड़ि जु अस्सी एक अर्व मुनि चौवन लाख सुगाई। कर्म काट निर्वाण पधारे तिनकौ अर्घ चढ़ाई। ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धकूटते श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि एक अर्व अस्सी कोड़ि चौवन लाख मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घनिर्वपामीति स्वाहा ॥२॥ धवल कूट सो नाम दूसरो है सबको सुखदाई। संभव प्रभु सो मुक्ति पधारे पाप तिमिर मिटि जाई। धवलदत्त हैं आदि मुनीश्वर नव कोड़ाकोड़ि जानो। लक्ष बहत्तर सहस बयालिस पंच शतक रिष मानौ ॥ कर्म नाशकर अमरपुरी गए बंदौ सीस नवाई। तिनके पद युग जजौ भावसों हरष हरष चितलाई ॥ ओं ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर धवल कूटत संभवनाथ

जिनेन्द्रादि मुनि नव कोड़ाकोड़ि बहत्तर लाख व्यालिस हजार पांचसे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥३॥ चौपाई ॥ आनन्द कूट महा सुखदाय। प्रभु अभिनन्दन शिवपुर जाय। कोड़ाकोड़ि बहत्तर जानौ। सत्तर कोड़ि लाख छत्तीस मानौ॥ सहस बयालीस शतकजु सात। कहैं जिनागम मैं इस भांत ये ऋष कर्म काट शिव गये, तिनके पद युग पूजत भये॥ ॐ ह्रीं श्री आनन्दकूटतैं अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि मुनि बहत्तर कोड़ाकोड़ि अरु सत्तर कोड़ि छत्तीस लाख ब्यालीस हजार सातसै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४ ॥ अड़िल्ल छन्द—अवचल चौथो कूट महा सुख धामजी। जहं ते सुमति जिनेश गये निर्वाणजी॥ कोड़ाकोड़ो एक मुनीश्वर जानिये। कोड़ि चौरासी लाख बहत्तर मानिये॥ सहस इक्यासी और सातसे गाइये। कर्म काट शिव गये तिन्हें सिर नाईये॥ सो थानिक मैं पूजो मन वच काय जू। पाप दूर हो जाय अचल पद पाय जू॥ ॐ ह्रीं श्री अविचल कूटतैं श्री सुमति जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ि चौरासी कोड़ि बहत्तर लाख इक्यासी हजार सात से मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥५॥ अड़िल्ल छन्द। मोहन कूट महान परम सुन्दर कह्यौ। पद्मप्रभू जिनराय जहां शिव पद लह्यौ॥ कोड़ि निन्यानवे लाख सतासी जानिये। सहस तेतालिस और मुनीश्वर मानिये॥ कहैं जवाहरदास सुदोय कर जोरके। अविनाशी पद देउ कर्मने खोयके॥ ॐ ह्रीं श्री मोहनकूटतैं श्री पद्मप्रभु मुनि निन्यानवे कोड़ि सतासी लाख तेतालीस हजार सातसौ सताउन मुनि निर्वाण पद प्राप्ताय

सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ ६ ॥ सोरठा—कूट प्रभात महान।, सुंदर जग मणि मोहिनो। श्री सुपार्श्व भगवान, मुक्ति गये भव नाश कर। कोड़ाकोड़ी उनचास, कोड़ि चौरासी जानिये। लाख बहत्तर जान, सात सहस अरु सात सै। और कहे व्यालीस जंह ते मुनि मुक्ती गये। तिनकों नमों नितसीस दास जवाहर जोरकर॥ ॐ ह्रीं प्रभास कूटतैं श्री पार्श्व-नाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनचास कोड़ाकोड़ी बहत्तर लाख सात हजार सातसै व्यालीश मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रोभ्यो अर्घं ॥ ७॥ दोहा—पावन परम उतंग है, ललित कूट है नाम॥ चन्द्र प्रभु मुक्ती गये, बंदों आठो याम॥ नवसै अरु बसु जानियो, चौरासी रिषि मान। कोड़ि बहत्तर रिषि कहे, असी लाख परवान। ललित कूट तै शिव गये बंदो शीश नवाय। तिन पद पूजों भाव सो, जिन हित अर्घ चढ़ाय॥ ॐ ह्रीं ललितकूट तैं चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि नव सै चौरासी अर्व बहत्तर कोड़ अस्सी लाख चौरासी हजार पांचसै पचवन मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामि स्वाहा॥ ८॥ पद्धरी छन्द—सुबरनभद्र सो कूट जान। जहां पुष्प दन्तको मुक्त थान॥ मुनि कोड़ाकोड़ी कहै जु भाख। अरु कहै निन्यानवे चार लाख॥ १॥ सौ सात सतक मुनि कहे सात। ऋषि असी और कहे विख्यात। मुनि मुक्ति गये वसु कर्म काट। बंदौकरजोर नवाय माथ॥२॥ ॐह्रीं श्रीसुप्रभकूटतैं पुष्पदंत जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी निन्यानवे लाख सात हजार चार सै अस्सीमुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं॥ ९॥ सुन्दरी छन्द—सुभग विद्युतकूट सु जानिये। परम अद्भुतता

परमानिये ॥ गये शिवपुर शीतलनाथजी। नमहुं तिन पद करि धरि माथ जी ॥ मुनि बसु कोड़ाकोड़ी प्रमानिये और जो लाख व्यालिस जानिये ॥ कहे और जु लाख बत्तीस जू। सहस व्यालिस कहे यतीश जू ॥ और तहंसे नोसै पांच सु जानिये। गये मुनि शिवपुरको और जु मानिये ॥ करहिं पूजा जे मन- लायकें। धरहिं जन्म न भवमें आयकें ॥ ॐ ह्रीं सुभग विद्युत- कूटते श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि अष्ट कोड़ाकोड़ी ब्यालीस लाख बत्तीस हजार नौसै पांच मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रे- भ्यो अर्घं ॥१०॥ ढार योगीरासा—कूटजु संकुल परम मनोहर श्रीयांस जिनराई। कर्म नाश कर अमर पुरी गये, वन्दो शीश न- वाई ॥ कोड़ा कोड़जु है क्ष्यानवै, क्ष्यानवै, कोड़ प्रमानो ॥ लाख क्ष्यानवै साढे नवसे, इकसठ मुनीश्वर जानो। ताऊपर व्यालीस कहे हैं श्री मुनिके गुन गावै। त्रिविध योग कर जो कोई पूजे सहजानंद पद पावै ॥ ॐ ह्रीं संकुल कूटतै श्रीयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि क्ष्यानवै कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवै कोड़ क्ष्यानवै लाख साढे नौ हजार ब्यालीस मुनि सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥११॥ कुसुमलता छन्द—श्री मुनि संकुल कूट परम सुंदर सुखदाई। विमलनाथ भगवान जहां पंचम गति पाई ॥ सात शतक मुनि और व्यालिस जानियै। सत्तर कोड़ सात लाख हजार छ मानिये ॥ दोहा—अष्ट कर्मको नाश कर, मुनि अष्टम क्षिति पाय तिनको मैं बंदन करों, जन्ममरण दुख जाय ॥ ॐ ह्रीं श्री संकुल- कूटतें श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि सत्तर कोड़ सात लाख छे हजार सातसे ब्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं

॥ १२ ॥ अडिल्ल—कूट स्वयंप्रभु नाम परम सुंदर कहौ। प्रभु अनंत जिननाथ जहां शिवपद लहौ ॥ मुनि जु कोड़ाकोड़ी छ्यानवै जानिये। सत्तर कोड़ जु सत्तर लाख बखानिये ॥ सत्तर सहस जु और सात से गाइये। मुक्ति गये मुनि तिन पद शीश नवाईये ॥ कहे जवाहरदास सुनौ मन लायकें। गिरवरकों नित पूजौ मन हरषायकें ॥ ॐ ह्रीं स्वयंभू कूटत श्री अनंतनाथ जिनेंद्रादि मुनि छ्यानवै कोड़ाकोड़ी सत्तर लाख सात हजार सातसै मुनि सिद्ध-पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १३ ॥ चौपाई—कूट सुदत्त महा शुभ जानों। श्री जिनधर्मनाथकों थानौं ॥ मुनिजु कोड़ाकोड़ उनतीस। और कहे ऋषि कोड़ उनीस ॥ नव्वै नौ लाख जु सहस सु जानों। सात शतक पंचानव मानों ॥ मोक्ष गये वसु कर्मन चूर। दिवस रैन तुमहीं भरपूर ॥ ओं ह्रीं सुदत्त कूटतै श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनतीस कोड़ाकोड़ी उनीस कोड़ नव्वे लाख नो हजार सातसैं पंचानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १४ ॥ है प्रभासी कूट सुंदर अति पवित्र सो जानिये। शांतिनाथ जिनेन्द्र जहाँते परम धाम प्रमानिये। ओं ह्रीं प्रभास कूटते श्री शांतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौ कोड़ाकोड़ी नौ लाख नौ हजार नौसै निन्यानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १५ ॥ गीताका छन्द—ज्ञानधर शुभ कूट सुन्दर परम मनको मोहनो। जंहते श्री प्रभुकुंथु स्वामी गये शिवपुरको गनो ॥ कोड़ाकोड़ी छ्यानवे मुनि कोड़ि छ्यानवे जानिये। लाख बत्तीस सहस छ्यानवे अरु सौ सात प्रमानिये ॥ दोहा—और कहे ब्यालीस जो सुमरो हिये मझार।

जिनवर पूजौ भाव सौ, कर भवदधि ते पार ॥ ओं ह्रीं ज्ञानधर-कूटतैं श्रीकुंथुनाथ स्वामी और छ्यानवे कोड़ाकोड़ी मुनि छ्यानवे कोड़ि बत्तीस लाख छ्यानवे हजार अरु सातसौ ब्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १६ ॥ दोहा—कूट जु नाटक परम शुभ, शोभा अपरंपार। जहंते अरह जिनेन्द्रजी पहुंचे मुक्त मझार। कोड़ि निन्यानवै जानि मुनि, लाख निन्यानवै और। कहे सहस निन्यानवै, वन्दौकर जुग जोर ॥ अष्ट कर्मको नाश कर, अविनाशी पद पाय ॥ ते गुरु मम हृदये वसौ, भव दधिपार लगाय ॥ ओं ह्रीं नाटक कूटते श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवै कोड़ि निन्यानवै लाख निन्यानवै हजार मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥१७॥ अडिल्ल छन्द—कूट संवल परम पवित्र जू ॥ गये शिवपुर मल्लि जिनेश जू ॥ मुनि जु छ्यानवै कोड़ि प्रमानिये। पद जिनेश्वर हृदये मानिये ॥ ओं ह्रीं संवल कूटतैं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि छ्यानवै कोड़ाकोड़ी मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १८ ॥ ढार परमादीकी चालमे—मुनिसुव्रत जिनराज सदा आनन्दके दाई। सुन्दर निर्जर कूट जहां तैं शिवपुर पाई ॥ निन्यानवै कोड़ाकोड़ कहे मुनि कोड़ संतावन। नो लाख जोर मुनेन्द्र कहे नौसे निन्यानव। सोरठा—कर्मनाश ऋषिराज, पंचमगतिके सुख लहै। तारन तरन जिहाज मो दुख दूर करौ सकल ॥ ओं ह्रीं श्री निर्जर कूटतैं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवे कोड़ा कोड़ी सन्तावन कोड़ नौ लाख नौ शतक निन्यानवै मुनि सिद्ध प्राप्ताय अर्घं। ढार जोगीरासा—एह मित्रधर कूट मनोहर सुन्दर

अतिछबछाई। श्री नमो जिनेश्वर मुक्ति जहांतैं शिवपुर पहुंचे जाई॥ नौसे कोड़ा कोड़ी मुनीश्वर एक अर्ब ऋषि ज्ञानो। लाख सैतालिस सात सहस अरु नौसे ब्यालीस मानौ। दोहा—बसु कर्मनको नाशकर, अविनाशी पद पाय। पूजौ चरन सरोज ज्यों, मनवांछित फल पाय॥ ओं ह्रीं श्री मित्रधर कूटतैं श्री नमिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौसे कोड़ाकोड़ी एक अर्ब सैतालिस लाख सात हजार नौसे ब्यालिस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं॥ २०॥ दोहा—सुवर्ण भद्र जु कूटतैं, श्री प्रभु पारसनाथ। जहंतैं शिवपुरको गये, नमो जोड़ि जुग हाथ॥ ओं ह्रीं सुवर्णभद्र कूटतैं श्री पार्श्वनाथ स्वामी सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥ याविधि बीस जिनेन्द्रके, बीसौ शिखिर महान॥ और असंख्य मुनि सहजही, पहुंचे शिवपुर थान। ओं ह्रीं श्री बीस कूट सहित अनंत मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं॥ २२॥ ढार कार्तिककी—प्राणी आदीश्वर महाराजजी, अष्टापद शिव थान हो। वांसपूज जिनराजजी चंपापुर शिवपद जान हो॥ प्राणी पूजौ अर्घं चढ़ायके, इह नाशै भयभीत हो। प्राणी पूजौ मनवचकायके॥ ओं ह्रीं श्री ऋषभनाथ कैलाश गिरते श्री महावीरस्वामी पावापुर तैं श्री वांसुपूज्य चंपापुर तैं नेमिनाथ गिरिनारतैं सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं॥२३॥ दोहा—सिद्ध क्षेत्र जे और हैं, भरत क्षेत्रके मांहि॥ और जु अतिशय क्षेत्र हैं, कहे जिनागम मांहि। तिनको नाम जु लेतही, पाप दूर होजाय। ते सब पूजौं अर्घं ले, भव भवकूं सुखदाय। ओं ह्रीं भरतक्षेत्र अतिशय क्षेत्रेभ्यो अर्घं। सोरठा—दीप अढ़ाई मेरु सिद्ध क्षेत्र जे

और हैं । पूजौं अर्घ चढ़ाय भव भवके अघ नाश है ॥

ओं ह्रीं अढ़ाई द्वीप सम्बंधी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अघ ॥२४॥

अथ जयमाला ।

चौपाई—मन मोहन तीरथ शुभ जानौ । पावन परम सुक्षेत्र प्रमानौ ॥ उनतिस शिखिर अनूपम सोहैं । देखत ताहि सुरासुर मोहे । दोहा—तीरथ परम सुहावनो, शिखिर सम्मेद विशाल ॥ कहत अल्प बुध उक्तसो, सुखदायक जयमाल ॥२॥ चौपाई—सिद्ध क्षेत्र तीरथ सुखदाई । बन्दत पाप दूर हो जाई । शिखर शीसपर कूट मनोज्ञ । कहे बीस अतिशय संयोग ॥३॥ प्रथम सिद्ध शुभ कूट सुनाम । अजितनाथ को मुक्ति सु धाम ॥ कूट तनो दर्शन फल कहो । कोड़ि बत्तीस उपास फल लहौ ॥४॥ दूजो धवल कूट है नाम । सम्भव प्रभु जहतें निर्वाण ॥ कूट दरश फल प्रोषध मानौ । लाख ब्यालिस कहे बखानौ ॥५॥ आनन्द कूट महा सुखदाई । जहं तैं अभिनन्दन शिव जाई ॥ कूट तनौ बन्दन इम जानौ । लाख उपास तनौ फल मानौ ॥६॥ अवचल कूट महासुख वेस । मुक्ति गये जंह सुमत जिनेश ॥ कूट भाव धर पूजे कोई । एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥७॥ मोहन कूट मनोहर जान । पद्म प्रभु जंह त निर्वाण ॥ कूट पुन्य फल लहै सुजान । कोड़ उपवास कहे भगवान ॥८॥ मनमोहन शुभ कूट प्रभासा । मुक्ति गये जंहते श्रेयांसा ॥ पूजे कूट महा फल सोई । कोड़ बत्तीस उपवास फल होई ॥९॥ चन्द्र प्रभु की मुक्ति सु धामा । परम बिशाल ललित घट नामा ॥ दर्शन कूट तनौ इम जानौ । प्रोषध सौला लाख बखानो ॥१०॥ सुप्रभ कूट महासुखदाई । जंहतैं पुष्पदंत शिव जाई ॥ पूजैं कूट

महा फल होय। कोड़ उपास कहो जिनदेव ॥११॥ सो विद्युतवर कूट महान। मोक्ष गये शीतल धर ध्यान ॥ पूजे त्रिविध योग कर कोई। कोड़ उपास तनो फल होई ॥१२॥ संकुल कूट महा शुभ जानो। जंह तैं श्रीयांस भगवानो ॥ कूट तनो अब दर्शन सुनो। कोड़ उपास जिनेश्वर भनो ॥१३॥ संकुल कूट परम सुखदाई। विमल जिनेश जहां शिव जाई ॥ मनवच दर्श करै जो कोई। कोड़ उपास तनो फल होई ॥१४॥ कूट स्वयंप्रभ सुभगसु ठाम। गये अनंत अमरपुर धाम ॥ एही कूट कोई दर्शन करै। कोड़ उपवास तनो फल धरै ॥१५॥ हैं सुदत्तवर कूट महान। जंहतै धर्मनाथ निर्वाण ॥ परम विशाल कूट है सोई। कोड़ उपवास दश फल होई ॥१६॥ परम विशाल कूट शुभ कहो। शांति प्रभू जंहतैं शिव लहो ॥ कूट तनो दर्शन है सोई। एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥१७॥ परम ज्ञानधर है शुभ कूट। शिवपुर कुंथु गये अघ छूट ॥ इनकों पूजो कोई कर जोर। फल उपवास कहो इक कोड़ ॥१८॥ नाटक कूट महा शुभ जान। जंहतें अरह मोक्ष भगवान॥ दर्शन करै कूटको जोई। क्ष्यानवे कोड़ उपास फल होई ॥१९॥ संवल कूट मल्लि जिनराय। जहंतें मोक्ष गये निज काय ॥ कूट दरश फल कहो जिनेश। कोड़ि एक प्रोषध फल वेस ॥२०॥ निर्जर कूट महा सुख दाई। मुनिसुव्रत जंह ते शिव जाई ॥ कूट तनो दर्शन है सोई। एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥ २१ ॥ कूट मित्र धरते नमि मोक्ष। पूजत आय सुरासुर जक्ष ॥ कूट तनो फल है सुखदाई। कोड़ उपास कहो जिनराई ॥२२॥ श्रीप्रभु पार्श्वनाथ जिनराज। दुरगति तै छूटे महाराज ॥ सुवर्णभद्र कूटकोनाम। जंह तैं मोक्ष गये

जिन धाम ॥२३॥ तीन लोक हित करत अनूप । मंगल मय जगमें चिद्रूप ॥ चिंतामणी स्वर वृक्ष समान । रिद्धि सिद्धि मङ्गल सुख दान ॥२४॥ पार्श्व और काम सुर धेन। नाना विध आनन्दको देन। व्याध विकार जाहिं सब भाज। मन चिंतै पूरे सब काज ॥२५॥ भवदधि रोग विनाशक होई। जो पद जगमें और न कोई ॥ निर्मल परम धाम उत्कृष्ट । बन्दत पाप भजै अरु दुष्ट ॥२६॥ जो नर ध्यावत पुन्य कमाय । जश गावत ऐ कर्म नशाय ॥ करै अनादि कर्मके पाप । भजै सकल छिनमें सन्ताप ॥२७॥ सुर नर इन्द्र फणिन्द्र जु सबै । और खगेन्द्र महेन्द्र जु नमै ॥ नित सुर सुरी करै उच्चार । नाचत गावत विविध प्रकार ॥२८॥ बहु विध भक्त करै मन लाय । विविध प्रकार वाजिंत्र बजाय ॥२९॥ द्रुम द्रुम द्रुम बाजै मृदङ्ग । घन घन घंट बजै मुह चङ्ग । झन झन झनिया करै उच्चार । सरसारंगी धुन उच्चार ॥ ३० ॥ मुरली बीन बजै धन मिष्ट । पट हांतुरी स्वरान्वत पुष्ट ॥ नित सुरगण थित गावत सार । सुरगण नाचत बहुत प्रकार ॥३१॥ झननन झननन नूपुर तान । तननन तननन टोरत तान । ता थेई थेई थेई थेई थेई चाल । सुर नाचत निज नावत भाल ॥३२॥ गावत नाचत नाना रङ्ग । लेत जहां शुभ आनंद सङ्ग ॥ नित प्रति सुर जहां बन्दे जाय ॥ नाना विध मङ्गल को गाय ॥३३॥ आनन्द धुन सुन मोर जु सोय। प्रापत ब्रतकी अति ही होय ॥ तातैं हमकूं हैं सुख सोई । गिरवर बंदो कर धर दोई ॥३४॥ मारुत मन्द सुगन्ध चलेय । गंधो वृक तहां बरषै सोय ॥ जियकी जात विरोध न होई । गिरवर बंदे कर धर दोई ॥३५॥ ज्ञान चरित तपसा धन होई । निज अनुभौको

ध्यान धरेई ॥ शिव मंदिरको धारै सोई। गिरवर बंदे कर धर दोई ॥३६॥ जो भव बन्दे एक जु वार। नरक निगोद पशू गति टार॥ सुर शिवपदकूं पावै सोय। गिरवर बंदे कर धर दोय ॥३७॥ ता की महिमा अगम अपार। गणधर कबहूं न पावैं पार॥ तुम अद्भुत मैं मतिकर हीन। कहो भक्त वसु केवल लीन ॥३८॥ घत्ता—श्री सिद्ध क्षेत्र अति सुख देत॥ सेवतु नासौ विघ्न हरा॥ अरु कर्म बिनाशे सुक्ख पयासै केवल भासे सुक्ख करा॥ ३९ ॥ ओं ह्रीं सम्मेदशिखिर सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं। दोहा—शिखरसम्मेद पूजो सदा। ममवच तन कर नारि॥ सुर शिवके जे फल लहै, कहते दास जवारि ॥४०॥ इत्यादि आशीर्वाद:।

(८३) दीपमालिका विधान।

श्री महावीर पूजा (कवि मनरङ्गजी)

गीता छंद।

शुभनगर कुण्डलपुर सिद्धारथरायके त्रिशलातिया॥तजि पुष्प उत्तर तासु कुक्ष्या वीर जिन जन्मन लिया॥कर सात उन्नत कनक सा तनु बंशवर इक्ष्वाक है॥ द्वे अधिक सत्तरि वरस आउष सिंह चिन्ह भला कहै ॥१॥

छंदमालिनी—सो जिनवीर दयानिधिके जुग पाद पुनीत पुनीत करेंगे। जावत मोक्ष न होय हमें शुभ तावत थापन रोज करेंगे। आय बिराजहु नाथ इहां हम पूजिके पुण्य भण्डार भरेंगे। ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय पुष्पांजलि क्षिपेत्॥ पुष्पोंको थालीमें डालै। कनक कुंभसु वारि भरायके। विमल भावत्रिशुद्ध लगायके॥ कर

अष्टक छंद द्रुतविलंब ।

मदेव जिनेश्वर वीरके । चरण पूजत नाशक पीरके ॐ ह्रीं श्रीवीर नाथ जिनेन्द्राय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा जलं ॥ १ ॥

परम चन्दन शीतल वासना । करि सुकेशरि मिश्रित पावना ॥
चरमदेव जिनेश्वर वीरके । चरण पूजत नाशक पीरके ॥

ॐ ह्री श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥२॥

धवल अक्षत चाव चढ़ावही । करि सुपुंज महामन भावही ।
चरम० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्री श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥

पुहप माल बनाय हिरायके । जुगतिसो प्रभु पास लियायके ॥
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्री श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विनाशनाय पुष्पं ॥४॥

नवल घेबरबाबर लायके । घृतसुलोलित पूव बनायके ।
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगनाशाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

करि अमोलक रत्नमई दिया । जगत ज्योति उद्योतमई किया ॥
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं॥६॥

उठत धूम्र घटावलि जासुते । इम सुधूप सुगन्धित तासुते ॥
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥७॥

फणसदाड़िम आम्र पके भये । कनक भाजनमें भरके लये ॥

नरमदेव०। ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोक्षपद प्राप्तये मर्घं ॥ ८ ॥

अरघ ले शुभ भाव चढ़ायके। धवल मङ्गलतूर बजायके। चरमदेव०। ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय सर्वसुखप्राप्ताय अर्घं ॥ ८ ॥

अथ पंचकल्याणकं गाथा।

मास आषाढ़ सुदीमे। षष्टीदिन जानि महा सुखकारी।
त्रिसला गरभ पधारे। तुमपद जजत अर्घ सीरी ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय आषाढ़ सुदी ६ गर्भकल्याण काय अर्घं ॥

चैत्र त्रयोदशि कारी। तादिन जनमे प्रभाव बिस्तारी ॥
अर्घ महाकर धारी। जजत तिहारे चरण हितकारी ॥
ओं ह्रीं श्रीवीर जिनेन्द्राय चैत्रसुदीतेरसजन्मकल्याणकायअर्घं ॥२॥

दशमी अगहन बदीमें। लखि सबजग अथिर भये वैरागी ॥
प्रभू महाव्रत धारै। हम पूजत होत बड़ भागी ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अगहनबदी १० तपकल्याणकाय अघ

केवलज्ञानी हूवे। दशमी वैसाख सुदीके माहो।
सकल सुरासुर पूजे। हम इह पद लखि अरघ चढ़ाहो ॥
ओं ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय वैसाखसुदी१०ज्ञानकल्याणकाय अर्घं

कार्त्तिक नष्ट कलादिन। पावापुरके गहनते स्वामी ॥
मुकति तिया परनाई। हम चरण पूजि होत बड़ भागी ॥
ओं ह्रीं श्रीचरमदेव महावीर जिनेन्द्राय कार्त्तिकबदी अमावस निर्वाण कल्याणकाय अर्घं ॥ ५ ॥

जयमाला (छन्द भूलना)

वीर जिन धीरधर सिंहपग चिन्हधर तेजतप धरन जयसूर भारी। धर्मकी धुराधर अक्षर बिनु गिराधर परम पद धरन जय मदन हारी। दयाधर सीमधर पंचवर नाम धर अमल छबि धरण जय शरमकारी। पञ्चपरवर्तकी भर्मना ध्वंसिके अचलपद लहत जयजस बिथारी ॥ १ ॥

(छन्द त्रोटक)

जय आनन्दके घनघोर नमों, जय नाशक हौ भवभीर नमों।
जयनाथ महासुख दायक हौ, जमराजबिहंडन लायक हो ॥ २ ॥
जय चरमशरीर गंभीर नमो, जय चर्मतिर्थंकर धीर नमो।
जय लोक अलोक प्रकाशक हो, जन्मान्तरके दुखनाशक हो ॥ ३ ॥
जय कर्म कुलाचल छेद नमो, जय मोह बिना निरखेद नमो।
जय पूज्यप्रताप सदा सुथिरा, प्रगटी चहुं ओर प्रशस्त गिरा ॥४॥
तन सात सुहास विथाल नमो कनकाभ महा दशतालनमो।
शुभमूरति मो मन माहिं बसी, सिगरी तबते भव भ्रांति नसो ॥५॥
जय क्रोध दवानल मेघ नमो, जय त्याग करो जगनेह नमो।
जय अम्बर छांड़ि दिगम्बर भे, गति अम्बरकी धरि अंमरभे ॥६॥
जय धारक पञ्चकल्याण नमो, जय रोजनमें गुणवान नमो।
जय पाद गहें गणराज रहैं, सचिनायकसे मुहताज रहैं ॥ ७ ॥
जय औषधि तारण सेत नमो, जय जन्म उधारन हेत नमो।
जय मूरति नाथ भली दरसो, करुणामय शांति छया करसी ॥८॥
जय सार्थिक नाम सुवीर नमो, जय धर्मधुराधर वीर नमो।
जय ध्यान महान तुरी चढ़के, शिवखेत लिया अति ही बढ़के ॥९॥

जय पारनवार अपार नमो, जय भार बिना निरधार नमो।
जय रूपरमाधर तो कथनी कथि पार न पावत नागधणी॥ १०॥
जय देव महा कृतकृत्य नमो, जयजीव उधारण वृत्य नमो।
जय अन्नबिना सब लोक जई, ममता तुमते प्रभु दूर गई॥ ११॥
जय केवल लब्धि नवीन नमो, सब बातनमें परवीन नमो।
जय आत्ममहारस पीवन हो; तुम जीवन मूल सजीवन हो॥१२॥
जय तारण देव लिपारसमो, सुनि ले चित दे इहबार समो।
दुखदूखित मो मनकी मनसा, नहिं होत अराम इको क्षणसा॥१३॥
तकि तो पद भेषज नाथ भले, तुम पास गरीब निवाज चले।
मनकी मनसा सब पूजनको, तुमहो इहि लायक दूजनको॥ १४॥
इह कारजके तुम कारण हो, चित ल्याय सुनो तुम तारण हो।
जगजीवनके रखवाल भले, जाय धन्य धन्य किरपाल मिले॥१५॥
सबको मनकी मनसा पुजि है, अब और कुदेव नहीं सुझि है।
सुझि है तुमरे गुम गावनकी, बुझि है तृष्णा भरमावनकी॥१६॥

छन्द काव्य—पूरन यह जयमाल भई अन्तिम जिन केरी।
पढ़त सुनत मनरङ्ग कहै नसिहै भव फेरी॥ बसि हैं शिवथल मांहि
जहां काया नहिं हेरी। ज्ञानमई भगवान जाय है है गुणढ़ेरी॥१७॥
हरौ मोह तमजाल हाल शिवबाल निहारौ। हारौ मिथ्याचाल
नाम चउ कित्ति पसारौ॥ सारौ कारज वेस लेस सममान न
धारौ। धारौ निजगुण चित्त मित्त जिनराज पुकारौ॥ १८॥
मारौ न एको काल माल विद्याकी डार्यो। डारौ औगुण भार
भार दुनियावी जार्यो। जारो नहिं निज रीति प्रीति दुर्गतिको
मार्यो। मारो सननित होउ द्रोह रञ्चक न विचार्यो॥१९॥

(यह पढ़कर जयमालका अर्घ चढ़ावे छन्द छप्पे)

होहु अनङ्गसरूप भूपको पद विस्तार्यो। तारो अपनकुलै भुलै मद माया मार्यो ॥ टारहु नहि निज आनि वानि ममताकी गार्यो । गारौनाकुलकानि जानिकै मदन प्रहार्यो ॥ मनरङ्ग कहत धनधान्य अरु, पुत्रपौत्र करि घर भरो । श्रीवीरचन्द जिन राजते तुमको यह कारज सरो ॥ २० ॥

(इति आशीर्वाद—यह पढ़कर पुष्प चढ़ावै)

(श्री सरस्वती पूजा नीचे लिखे भांति करें)

श्री शारदास्तुति ।

(भुजंग प्रयात छन्द)

जिनादेश जाता जिनेन्द्रा विख्याता। विशुद्धा प्रबुद्धा नमो लोक माता ॥
दुराचार दुर्नैहरा शङ्करानी । नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥१॥
सुधा धर्म संसाधनी धर्मशाला । आताप निर्नाशयी मेघ माला ।
महा मोह विध्वंसनी मोक्षदानी । नमोदेवि वागेश्वरी जैनवाणी ।२।
अखै वृक्षशाखा व्यतीताभिलाखा । कथा संस्कृता प्राकृत देश भाषा ॥
चिदानंद भूपालकी राजधनी । नमो देवि वागेश्वरी जैनबानी ।३।
समाधानरूपा अनूपा अछुद्रा । अनेकान्त धा स्यादवादांक मुद्रा ॥
त्रिधा सप्तधा द्वादशांगी वखानी। नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ४
अकोपा अमाना अदंभा अलोभा । श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा ।
महा पावनी भावना भव्य मानी ।नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ५
अतीता अजीता सदा निर्विकारा । विषैवाटिका खंडिनी खड्ग-धारा ॥ पुरा पाप विक्षेप कर्तृ कृपानी । नमो देवि वागेश्वरी जैन

बाणी ॥ ६ ॥ अगाधा अबाधा निरंध्रा निराशा। अनंता अनादी-श्वरी कर्मनाशा ॥ निशंका निरंका चिदंका भवानी। नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥७॥ अशोका मुदेका विवेका विधानी। जग-ज्जंतु मित्रा विचित्रावसानी ॥ समस्तावलोका निरस्ता निदानी ॥ नमो देवी वागेश्वरी जैनवाणी ॥८॥

इतना पढ़कर थालीमें पुष्प चढ़ावै सरस्वती पूजा ३५८ पृष्ठमें है सो करें।

(८४) श्री खंडगिरी क्षेत्र पूजन।

अंगबंगके पास है देश कलिंग विख्यात। तामें खंडगिरी लसत दर्शन भव्य सुहात। जसरथ राजाके सुत अतिगुणवानजो। और मुनीश्वर पंच सैकड़ा जानजी ॥ अष्टकरम कर नष्ट मोक्षगामी भये। तिनके पूजहुं चरण सकल मंगल ठये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीकलिंगदेशमध्ये खंडगिरीजो सिद्धक्षेत्रसे सिद्धपद प्राप्त दशरथ राजाके सुत तथा पंचशतक मुनि अत्र अवतर अवतर, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव, भव वषट्।

अथाष्टकं।

अति उत्तम शुचि जल ल्याय, कंचन कलश भरा। करुं धार सुमनवचकाय, नाशत जन्म जरा ॥ १ ॥ श्री खंडगिरीके शीश जसरथ तनय कहे। मुनि पंचशतक शिवलीन देशकलिंग दहे ॥ ओं ह्रीं श्री खंडगिरी क्षेत्रभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं ॥

केशर मलयागिरि सार, घिसके सुगंध किया। संसार ताप निरवार, तुमपद वसत हिया ॥ श्री खंड० ॥ चंदनं ॥ मुक्ताफलको उन्मान, अक्षत शुद्ध लिया। मम सर्व दोष निरवार, निजगुण मोह दिया ॥ श्री खंडगिरि० ॥ अक्षतं ॥ ले सुमन कल्पतरु धार,

चुन २ ल्याय धरू'। तुम पदढिग धरतहि बाण काम समूल हरू' ॥ श्री खंडगिरि० ॥ पुष्पं ॥ लाडू घेवर शुचि ल्याय, प्रभुपद पूजनको। धारू' चरनन ढिग आय, मम क्षुध नाशनको ॥ श्रीखंडगिरि० ॥ नैवेद्यं ॥ ले मणिमय दीपक थार, दोय कर जोड़ धरो। मम मोहांधेर निरवार, ज्ञान प्रकाश करो ॥ श्रीखंडगिरी० ॥ दीपं ॥ ले दशविधि गंध कुटाय, अग्नि मझार धरों। मम अष्ट करम जल जांय, यातें पांय परों ॥ श्रीखंडगिरी० ॥ धूपं ॥ श्रीफल पिस्ता सु बदाम, आम नारंगि धरू'। ले प्रासुक हेमके थार, भवतर मोक्षवरू' ॥ श्रीखंडगिरी० ॥ जलफल वसु द्रव्य पुनीत, लेकर अर्घ करू'। नाचू' गाऊ' इहभांत, भवतर मोक्ष वरू' ॥ श्री खंडगिरी० ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला।

दोहा—देश कलिंगके मध्य है, खंडगिरी सुखधाम।
उदयागिरि तसु पास है; गाऊ' जय जय धाम ॥ १ ॥

श्री सिद्ध खंडगिरि क्षेत्र जान, अति सरल चढ़ाई तहां मान। अति सघन वृक्ष फल रहे आय, तिनकी सुगंध दशदिश जु छाय ॥ १ ॥ ताके सुमध्यमें गुफा आय, नव मुनि सुनाम ताको कहाय तामें प्रतिमा दशयोग धार, पद्मासन हैं हरि चंवर ढार ॥ २ ॥ ता दक्षिण दिशा इक गुफा जान, तामें चौविस भगवान मान। प्रति प्रतिमा इन्द्र खड़े दुओर, का चंवर धरें प्रभु भक्ति जोर ॥ ३ ॥ आजू बाजू खड़ि देवि द्वार, पद्मावति चक्रेश्वरी सार। कर द्वादश भुजि हथियार धार, मानहु' निंदक नहिं आवें द्वार। ४। ताके दक्षिण चलि गुफा आय, सत बखरा है ताको कहाय। तामें

चौबीसी बनीसार, अरु त्रय प्रतिमा सब योग धार ॥ ५ ॥ सबमें हरि चमर सुधरहिं हाथ नित आय भव्य नावहिं सुमाथ। ताके ऊपर मंदिर विशाल, देखत भविजन होते निहाल ॥६॥ ता दक्षिण टूटी गुफा आय, तिनमें ग्यारह प्रतिमा सुहाय। पुनि पर्वतके ऊपर सुजाय, मंदिर दीरघ मनको लुभाय ॥ ७ ॥ बुन्देलखंडसे यहां आय, परवार जाति भूषण कहाय। "मंजू" जु नाम उनका लखाय, जिन मंदिर था दीना बनाय ॥ ८ ॥ तामें प्रतिमा भगवान जान, खड्गासन योगधरें महान। ले अष्ट द्रव्य तसु पूज्य कीन, मन बच तन करि मम धोक दीन ॥ ९ ॥ भयो जन्म सफल अपनो सुभाय, दर्शन अनूप देखो जिनाय। अब अष्ट करम होंगे जु चूर, जाते सुख पाहें पूर पूर ॥ १० ॥ पूरव उत्तर द्विय जिन सुधाम, प्रतिमा खड्गासन अति महान। दर्शन करके मन शुद्ध होय, शुभ बंध होय निश्चय जु कोय ॥ ११ ॥ पुनि एक गुफामें बिम्बसार, ताको पूजनकर फिर उतार। पुनि और गुफा खालो अनेक, ते हैं मुनिजनके ध्यान हेत ॥ १२ ॥ पुनि चलकर उदयगिरी सुजाय भारी भारी गुफा लखाय। इक गुफामाहिं जिनराज जान, पद्मासन धर प्रभु करत ध्यान ॥ १३ ॥ जो पूजत है मन बचन काय, सो भव-भवके पातक नशाय। तिनमें इक हाथो गुफा जान, प्राचीन लेख शोभे महान ॥ १४ ॥ महाराज खारवेल नाम जास, जिनने जिनमतका किया प्रकाश। बनावाई गुफा मन्दिर अनेक, अरु करीं प्रतिष्ठा भी अनेक ॥ १५ ॥ इसका प्रमाण वह शिलालेख, बतलाता है जैनत्व एक ॥ प्रारंभ लेखमें यह बखान, सिद्धोंको बन्दन अरु प्रणाम ॥ १६ ॥ स्वस्तिकका चिन्ह विराजमान, जो

जैनधर्मका है महान। मथुरापतिसे उन युद्ध कीन, प्रतिमा आदी-श्वर फेर लीन॥ १७॥ तालाब, कूप, वापी अनेक, खुदवाईं उन कर्त्तव्य पेख। रानी भी दाना थीं विशेष, बनवाई गुफा उनने अनेक॥ १८॥ पुनि और गुफामें लेख जान, पढ़ते जिनमत मानत प्रधान। तहं जसरथ नृपके पुत्र आय, मुनि संग पांचसौ भी लहाय॥ १९॥ तप बारह विधिका यह करंत, बाईस परीषह वह सहन्त। पुनि समिति पंचयुत चलें सार, छयालीस दोष टलकर अहार॥ २०॥ इस विध तप दुर्द्धर करत जोय, सो उपजे केवल ज्ञान सोय। सब इन्द्र आय अति भक्ति धार, पूजा कीनी आनंद धार॥२१॥ पुनि धर्मोपदेश दे भव्य पार, नाना देशनमें कर बिहार। पुनि आये याही शिखर थान, सो ध्यान योग्य माना महान॥२२॥ भये सिद्ध अनन्ते गुणन ईश, तिनके युगपद्पर धरत शीष। तिन सिद्धनको पुनि २ प्रणाम; जिन सुख अविचल माना सुधाम॥२३॥ वंदत भव दुख जावे पलाय, सेवक अनुक्रम शिवपद लहाय। पूजन करता हूं मैं त्रिकाल, कर जोड़ नमत हैं "मुन्नालाल"॥२४॥

घत्ता—उदयागिरि क्षेत्रं अति सुखदेतं तुरतहि भवदधि पार करें। जो पूजे ध्यावे करम नसावे, बांछित पावे मुक्ति वरे॥ २५॥

ॐ ह्रीं श्रीखण्डगिरी सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—श्री खंडगिरि उदयगिरि, जो पूजे त्रैकाल।
पुत्र पौत्र सम्पति लहे, पावे शिव सुख हाल॥ २६॥

(८५) आराधना पाठ।

मैं देवनित अरहंत चाहूं सिद्धका सुमिरन करौं। मैं सूरगुरु

मुनि तीनि पद मैं साधुपद हृदय धरो॥ मैं धर्म करुणामय जु चाहूं जहां हिंसा रंचना। मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूं जासुमैं परपंचना ॥१॥ चौबीस श्रीजिनदेव चाहूं और देव न मन बसै जिन बीस क्षेत्रविदेह चाहूं बन्दितै पातिक नशै॥ गिरनार शिखर समेद चाहूं चंपापुर पावापुरी। कैलास श्रीजिनधाम चाहूं भजत भाजैं भ्रम जुरी ॥२॥ नवतत्वका सरधान चाहूं और तत्व न मन धरों। षद्‌द्रव्य गुन परजाय चाहूं ठीक तासों भय हरों॥ पूजा परम जिनराज चाहूं और देव न हूं सदा। तिहुंकालकी मैं जाप चाहूं पाप नहिं लागै कदा॥ ३॥ सम्यक्त दरशन ज्ञान चारित्र सदा चाहूं भावसों। दशलक्षणीमैं धर्म चाहूं महा हर्ष उछावसों। सोलह जु कारन दुखनिवारण सदा चाहूं प्रीतिसौं॥ मैं चित्त अठाई पर्व चाहूं लहा मङ्गल रीतिसों॥ ४॥ मैं वेद चारौ सदा चाहूं आदि अन्त निबाहसों। पाप धरमके चार चाहूं अधिक चित्त उछाहसों॥ मैं दान चारौ सदा चाहूं भुवनवशि लाहो लहूं। आराधना मैं चारि चाहूं अन्तमैं जेई गहूं॥ ५॥ भावन बारह सदा भाऊं भाव निरमल होत हैं। मैं व्रत जु बारह सदा चाहूं त्याग भाव उद्योत हैं॥ प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूं ध्यान आसन सोहना। वसुकर्म तैं मैं छुटा चाहूं शिवलहूं जाह मोहना॥ ६॥ मैं साधुजनको सङ्ग चाहूं प्रीति तिन हीं सो करौं। मैं पर्बके उपवास चाहूं अरंभै परिहरौं॥ इस दुक्ख पंचमकाल माहीं कुल शरावक मैं लहो। अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं निबल तन मैंने गहो॥ ७॥ आराधना उत्तम सदा चाहूं सुनो जिनरायजी। तुम कृपानाथ अनाथ द्यानत दया करना न्याय जी॥ वसुकर्म.नाश

विकाश ज्ञान प्रकाश मोको कीजिये । करि सुगति गमन समाधिमरन सुभक्ति चरनन दीजिये ॥ ८ ॥

(८६) शान्ति पाठः ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्प वृष्टि करते रहो)

दोधकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यपरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

(वसन्ततिका)

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैःशक्रादिभिः सुरगणैःस्तुतपादपद्मा
ते मे जिनाःप्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराःसततशान्तिकराभवन्तु॥५

इन्द्रवज्रा

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान जिनेन्द्रः ॥६॥

स्रग्धरावृत्तम—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान धार्मिको भूमपालः । काले काले च सम्यःवर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥ दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके । जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप—प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः। कुर्वंतु जगतः शान्ति वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥ प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

अंत्येष्ठ प्रार्थना।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गति सर्वदार्य्यैः। सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्। सर्वस्यापि प्रियहितबचो भावना चात्मतत्वे। सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥९॥

आर्यावृत्तम—तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं पदद्वये लीनम्। तिष्ठत जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥१०॥

आर्या—अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मये भणियं। तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥११॥ दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च वोहिलाहो य। मम होउ जगतवन्धव तव जिणवर चरणशरणेण ॥१२॥ (परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

विसर्जन पाठ—ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया। तत्सर्वं पूर्णं मेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥ आव्हानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम्। विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैवच। तत्सवं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥ आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम्। ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

(८७) भाषास्तुति पाठ।

तुम तरण तारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो। श्रीनाभिनन्दन जगत वंदन, आदिनाथ निरंजनो ॥१॥ तुम आदिनाथ अनादि

सेऊं, सेय पद पूजा करूं। कैलासगिरिपर रिषभजिनवर,पदकमल हिरदे धरूं॥ २॥ तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महा-बली। यह बिरद सुनकर शरण आयो,कृपा कीजे नाथजी॥३॥तुम चन्द्रबदन सुचन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो। महासेननन्दन, जगतबन्दन, चन्द्रनाथ जिनेश्वरो॥ ४॥ तुम शांति पांच कल्याण पूजों, शुद्ध मन वच कायजू। दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलायजू॥ ५॥ तुम बाल ब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविकाशनो श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो॥ ६॥ जिन तजी राजुल राजकन्या,कामसेन्या—वश करी। चारित्र रथ चढ़ि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी॥ ७॥ कन्दर्प दर्प सुसर्प लच्छन कमठ शठ निर्मल कियो। अश्वसेननन्दन जगतबन्दन, सकलसंघ मंगल कियो॥ ८॥ जिन धरी बालकपने दीक्षा, कमठमान विदारकैं। श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमों शिरधारकैं॥ ९॥ तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जान दया करो। सिद्धार्थनन्दन जगतबन्दन, महावीर जिनेश्वरो॥ १०॥ छत्र तीन सोहैं सुर नर मोहैं, बीनती अवधारिये। कर जोड़ि सेवक, बीनवें प्रभु, आवागमन निवारियो॥ ११॥ अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों। कर जोड़ यों बरदान मांगो, मोक्षफल जावत लहों॥ १२। जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहि अनेकनो। इक अनेक की नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो॥ १३॥ मैं तुम चरणकमलगुणगाय। बहुविधि भक्ति करी मनलाय। जनम २ प्रभु पाऊं तोहि। यह सेवाफल दीजे मोहि॥१४॥ कृपा तिहारी ऐसी होय जनम मरन मिटावो मोय। बारबार मैं विनती करूं। तुम से ये

भवसागर तरु॑ ॥ १५ ॥ नाम लेत सब दुख मिट जाय। तुम दर्शन देखो प्रभु आय। तुम हो प्रभु देवनके देव। मैं तो करू॑ चरण तव सेव ॥ १६ ॥ मैं आयो पूजनके काज। मेरो जनम सफल भयो आज। पूजा करके नवाऊ॑ शीश। मुझ अपराध छमहु जगदीश ॥ १७ ॥

दसवाँ अध्याय

(८८) सुगन्ध दशमी व्रत कथा।

चौपाई—वर्द्धमान बंदो जिनराय। गुरु गौतम बंदो सुखदाय ॥ सुगन्ध दशमी व्रतकी कथा। वर्द्धमान सुप्रकाशी यथा ॥ १ ॥ मगधदेश राजगृह नाम। श्रेणिक राज करे अभिराम ॥ नाम चेलना गृह पटरानि। चन्द्ररोहिणी रूप समान ॥२॥ नृप बैठो सिंहासन परे। वनमाली फल लायो हरे ॥ कर प्रणाम बच नृपसे कहो। चित्त प्रमोदसे ठाड़ो रहो ॥३॥ वर्द्धमान आये जिन स्वामि। जिन जीतो उद्यम अरि काम ॥ इतनी सुनत नृपति उठ चलो। पुरजन युत दलबलसे भलो ॥४॥ समोशरण बन्दे भगवान। पूजा भक्ति धार बहुमान ॥ नरकोठा बैठो नृपजाय। हाथ जोड़ पूछे शिर नाय ॥५॥ सुगन्ध दशमी व्रत फल भाषि। ता नरकी कहिये अब साखि ॥ गणधर कहैं सुनों मगधेश। जम्बूद्वीप विजयार्द्ध देश ॥६॥ शिव मन्दिर पुर उत्तरश्रेणी। विद्याधर प्रीत कर जैनी ॥ कमलावती नारि अति रूप। सुरकन्तासे अधिक अनूप ॥ सागरदत्त

बसे तहां साह । जाके जिनव्रतमें उत्साह ॥ धनदत्त बनिका गृह कही । मनोरमा ता पुत्री सही ॥ ८ ॥ सुगुप्तचार्य गृह आइयो । देख मुनीन्द्र दुःख पाइयो ॥ कन्या मुनिकी निन्दा करी । कुछ मनमें नहिं शङ्का धरी ॥९॥ नग्न गात दुर्गन्ध शरीर । प्रगट पने देही नहिं चीर । मुख ताम्बूल हतो मुनि अङ्ग । मानो सुखको कीनो भङ्ग ॥ १० ॥ भोजन अन्तराय जब भयो । मुनि उठ जाय ध्यान वन दियो ॥ समताभाव धरे उरमांहि । किञ्चित् खेद चित्तमें नाहिं ॥११॥ जीत अवधि समय कछु गयो । मनोरमाका काल सु भयो। भई गधी पुनि कुकरी ग्राम । अपर ग्राम भई सूकरी नाम ॥ १२ ॥ मगध सुदेश तिलकपुर जान । विजय सेन तहंका नृप मान ॥ चित्ररेखा ता रानी कहीं । ता पुत्री दुर्गन्धा भई ॥ १३ ॥ एक समय गुरुबन्दन गयो । पूजा कर विनतीको ठयो ॥ मो पुत्री दुर्गन्ध शरीर । कहो भवान्तर गुण गम्भीर ॥ १४ ॥ राजा वचन मुनीश्वर सुने । मुनि वृतान्त रायसे भने ॥ सब वृतान्त हालिजो जान मुनि राजासे कहो बखान ॥ १५ ॥ सुन दुर्गंधा जोड़े हाथ । मो पर कृपा करो मुनिनाथ । ऐसा व्रत उपदेशो मोहि । यासे तनु निरोग अब होहि ॥१६॥ दयावन्त बोले मुनिराय । सुन पुत्री व्रत चित्त लगाय ॥ समता भाव चित्तमें धरो । तुम सुगन्धदशमी व्रत करो ॥१७॥ यह व्रत कीजे मन वच काय । यासे रोग शोक सब जाय ॥ दुर्गंधा विनवे निकुताय । कहिये सविधि महा मुनिराय ॥ १८ ॥ ऐसे वचन सुने मुनि जबै । तब बोले पुत्री सुन अबै ॥ भादों शुक्ल पक्ष जब होय । दशमो दिन आराधो सोय ॥ १९ ॥ चारो रसकी धारा देव । मनमें राखो श्रीजिनदेव ॥ शीतलनाथकी

पूजा करो। मिथ्या मोह दूर परि हरो ॥ २० ॥ व्रतके दिन छोड़ो आरम्भ। यासे मिटे कर्मका दंभ ॥ या के करत पाप क्षय जाय। सो दश वर्ष करो मन लाय ॥२१॥ जब यह व्रत सम्पूर्ण होय। उद्यापन कीजे चित जोय ॥ दश श्री फल अमृत फल जान। नीबू सरस सदा फल आन ॥२२॥ दश दीजे पुस्तक लिखवाय। यह विधि सब मुनि दई बताय ॥ विप्रि सुन दुर्गन्धा व्रत लयो। सब दुर्गन्ध तत्क्षण गयो ॥२३॥ व्रत कर आयु जो पूरण करी। दशवें स्वर्ग भई अप्सरी ॥ जिन चैत्यालय बंदन करे। सम्यक् भाव सदा उर धरे ॥२४॥ भरतक्षेत्र महं मगध सुदेश। भूति तिलकपुर बसे अशेष ॥ राजा महीपाल तहां जान। मदन सुन्दरी त्रिया बखान ॥२५॥ दशवें दिवसे देवी आन। ताके पुत्री भई निदान ॥ मदनावती नाम धर तास। अति सुरूप तनु सकल सुवास ॥२६॥ बहुत बातको करे बखान। सुर कन्या मानो उन्मान। कोसांबी पुर मदन नरेन्द्र। रानी सती करे आनन्द ॥२७॥ पुरुषोत्तम सुत सुन्दर जान। विद्यावंत सुगुणकी खान ॥ जो सुगंध मदना वलि जाय। सो पुरुषोत्तमको परनाय ॥२८॥ राजा मदन सुन्दरी बाल। सुखसे जात न जानो काल ॥ एक दिवस मुनिवर बंदियो। धर्म श्रवण मुनिवर पर कियो ॥२९॥ हाथ जोड़ पूछे तब राय। महा मुनींद्र कहो समझाय ॥ मो गृह रानी मदनावली। ता शरीर शौरभताभली॥३०॥कौन पुन्यसे सुभग सुरूप। सुर वनितासे अधिक अनूप॥ राजा बचन मुनीश्वर सुने। सब वृतांत रायसे भने ॥३१॥ जैसे दुर्गन्धा व्रत लहो। तैसी विधि नरपतिसे कहो ॥ सुने भवांतर जोड़े हाथ। दिक्षाव्रत दीजे मुनिनाथ ॥ ३२ ॥ राजाने जब दिक्षा

लई । रानी तबै अर्जिका भई ॥ तपकर अन्त स्वर्गको गई । सोलम स्वर्ग प्रतेंद्र सो भई ॥३३॥ बाईस सागर काल जो गयो । अन्त-काल ता दिवसे :चयो ॥ भरत सुक्षेत्र मग्ध तहं देश । वसुधा अमर केतुपुर वेश ॥३४॥ तानृप ग्रेह जन्म उन लहो । जो प्रतेन्द्र अच्युत दिव कहो ॥ कनक केतु कञ्चन द्युति देह । वनिता भोग करे शुभ गेह ॥३५॥ अमरकेतु मुनि आगम भयो । कनिक केतु तहं बन्दन गयो ॥ सुनो सुधर्म श्रवण संयोग । तजे परिग्रह अरु भव भोग ॥३६॥ घाति घातिया केवल लयो । पुनि अघाति हनि शिव-पुर गयो ॥ व्रत सुगन्ध दशमी विख्यात । ता फल भयो सुरभि युत गात ॥३७॥ यह व्रत पुरुष नारि जो करे । सो दुःख संकट भूल न परे ॥ शहर गहेली उत्तम वास । जैनधर्मको जहां प्रकाश ॥३८॥ सब श्रावक व्रत संयम धरे । पूजा दानसे पातक हरें ॥ उपदेशी विश्व भूषण सही । हेमराज पंडितने कही ॥३९॥ मन वच पढ़े सुने जो कोय । ताको अजर अमर पद होय ॥ यासे भविजन पढ़ो त्रिकाल । जो छूटे विधिके भ्रम जाल ॥४०॥

॥ श्रीसुगन्ध दशमी व्रत कथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

(८६) अनंत चौदस व्रत कथा ।

दोहा—अनन्तनाथ बन्दों सदा, मनमें कर बहु भाव ।
सुर असुर सेवत जिन्हें, होय मुक्ति पर चाव ॥१॥

चौपाई ।

जम्बूद्वीप द्वीपोंमें सार । लाख योजन ताका विस्तार ॥ मध्य सुदर्शन मेरु बखान । भरत क्षेत्र ता दक्षिण मान ॥२॥ मगध देश देशों

शिरमणी। राजगृह नगरी अति बनी॥ श्रेणिक महाराज गुणवन्त। रानी चेलना गृह शोभन्त॥३॥ धर्मवन्त गुण तेज अपार। राजा राय महागुण सार॥ एक दिवस विपुलाचल वीर। आये जिनवर गुण गम्भीर॥४॥ चार ज्ञानके धारक कहे। गौतम गणधर सो संग रहे॥ छह ऋतुके फल देखे नयन॥बनमाली ले चालो ऐन॥५॥ हर्ष सहित वन माली भयो। पुष्प सहित राजा पर गयो। नमस्कार कर जोड़े हाथ। मो पर कृपा करो नरनाथ॥६॥ विपुलाचल उद्यान कहन्त। महा मुनीश्वर तहां बसन्त॥ सुन राजा अति हर्षित भयो। बहुत दान मालीको दयो॥७॥ सब ध्वनि बाजे बाजन्त। प्रजा सहित राजा चालन्त॥ दे प्रदक्षिणा बैठो राव। जिनवर देख करो चित चाव॥८॥ द्वै विधि धर्म कहो समुझाय। यासे पाप सर्व जर जाय॥ खग तहां आयो एक तुरन्त। सुन्दर रूप महा गुणवन्त॥९॥ नमस्कार जिनवरको करो। जय जयकार शब्द उच्चरो॥ ताहि देख आश्चर्यितयो। राजा श्रेणिक पूछन भयो॥१०॥ सेना सहित महागुण खानि। को यह आयो सुन्दर थानि॥ ताकी बात कहो समुझाय। ज्ञानवन्त मुनिवर तुम आय॥११॥ गौतम बोले बुद्धि अपार। विजया नगर कहो अतिसार॥ मनोकुम्भ राजा राजन्त। श्रीमती रानीको कन्त॥१२॥ ताका पुत्र अरिंजय नाम। पुण्यवन्त सुन्दर गुणधाम॥ पूरब तप कीनो इन जोय। ताका फल भुगते शुभ सोय॥१३॥ ताकी कथा कहूं विस्तार। जम्बूद्वीप द्वीपोंमें सार॥ भरतक्षेत्र तामें सुखकार। कौशल देश विराजे सार॥१४॥ परम सुखद नगरी तहं जान। विप्र सोमशर्मा गुण खान॥ सोमिल्या भामिन ता कही। दुख दरिद्रकी

पूरित महो ॥१५॥ पूरब पाप किये अति घने। ताको दुःख भुगतेही बने॥ सुन राजा याका वृतांत। नगर २ सोग्रमें दुखान्त ॥१६॥ देश विदेश फिरे सुखआश। तोहु न पावे सुक्ख निवास॥ भ्रमत२ सो आयो तहां। समोशरण जिनवरको जहां ॥१७॥

दोहा—अनन्तनाथ जिनराजका, शमोशरण तिहि वार।
सुर नर अति हर्षित भये, देख महा द्युति सार ॥१८॥

चौपाई

विप्र देख अति हर्षित भयो। समोशरण वन्दनको गयो॥ वन्दि जिनेश्वर पूछे सोई। कहा पाप मैं कीनो होई ॥१९॥ दरिद्रा पीड़ा रहे शरीर। सोतो व्याधि हरो गम्भीर॥ गणधर कहैं सुनो द्विजराय। अनन्तव्रत कीजे सुखदाय ॥२०॥ तब विप्र बोलाकर भाय। किस विधि होइ सो देहु बताय॥ किस प्रकार या व्रतको करो। कहा विधान चित्तमें धरों ॥२१॥ भादों मास सुक्खकी खान। चौदश शुक्ल कही सुख दान॥ कर स्नान शुद्ध हो जाय। तब पूजे जिनवर सुखदाय ॥२२॥ गुरु वन्दना करे चितलाय या विधसे व्रत लेय बनाय॥ त्रिकाल पूजे श्रीजिनदेव। रात्रि जागरण कर सुख लेव ॥२३॥ गीतरु नृत्य महोत्सव ज्ञान। धारा जिनवर करो बखान॥ वर्ष चतुर्दश विधिसे धरे। ता पीछे उद्यापन करे ॥२४॥ करे प्रतिष्ठा चौदह सार। या से पाप होइ जर क्षार॥ झारी थारी अधिक अनूप। चरण कलश देवे शुभ रूप ॥२५॥ धी थट झालर संकल माल। और चंद्रोवे उत्तम जाल॥ छत्र सिंघासन विधिसे करे। ताते सर्व पाप परिहरे ॥२६॥ चार प्रकार दान दीजिये। याते अतुल सुक्ख लीजिये॥ मस्तावस्था ले सन्यास।

ताते मिले स्वर्गका वास ॥२७॥ उद्यापनकी शक्ति न होय। कीजे व्रत दूनों भवि लोय॥ विप्र किया व्रत विधिसे आय। सब दुख तसु गयो बिलाय॥२८॥ अन्तकाल धारके सन्यास। ताते पायो स्वर्ग निवास॥ चौथे स्वर्ग देव सो जान। महा ऋद्धि ताके सो बखान॥२९॥ विजयार्द्ध गिरि उत्तम ठौर। कांचोपुर पत्तन शिर-मौर। राजा तहं अपराजित वीर। विजया तासु प्रिया गम्भीर ॥३०॥ ताको पुत्र अरिञ्जय नाम। तिन यह आय करो सो प्रणाम॥ कञ्चनमय सिंहासन आन॥ ता पर भूप बैठो सुख मान॥३१॥ व्योम पटल विनशत लख सन्त। उपजो चित वैराग महंत। राज पुत्रको दयो मुलाय। आप लई दीक्षा शुभ भाय॥ ३२॥ सही परीषह दृढ़ चित धार। ताते कर्म भये अति क्षार॥ घाति घातिया केवल भयो। सिद्धि बुद्धि सो पद निर्भयो॥ ३३॥ रानीने व्रत कीनो सही। देव देह दिव अच्युत लही॥ तहां सु सुख भुगते अधिकाय। तहांसे आय भयो नर राय॥ ३४॥ राज ऋद्धि पाई शुभ सार। फिर तप कर विधि कीने क्षार॥ तहांसे मुक्तिपुर को गयो। ऐसा तिन व्रत का फल लयो॥ ३५॥ ऐसा व्रत पाले जो कोई। स्वर्ग मुक्ति पद पावे सोई॥ विनय सागर गुरु आज्ञा करी। हरि किल पाठ चित्तमें धरी॥३६॥ तब यह कथा करी मन ल्याय। यथा शास्त्र मैं बरणी आय॥ विधि पूर्वक पाले जो कोय। ताको अजर अमर पद होय॥ ३७॥

(६०) रत्नत्रय व्रत कथा।

दोहा--अरहनाथको वन्दिके, वन्दों सरस्वति पांय।
रत्नत्रय व्रतकी कथा, कहूं सुनो मनलाय॥ १॥

चौपाई—जंबूद्वीप भरत शुभ क्षेत्र। मगध देश सुख सम्पति हेत। राजगृह तहाँ नगर बसाय। राजा श्रेणिक राज कराय॥ २॥ विपुलाचल जिनवीर कुंवार। केवल ज्ञान विराजत सार। माली आय जनावो वयो। तत्क्षण राजा वन्दन गयो॥ ३॥ पूजा वन्दन कर शुभ सार। लागो पूछन प्रश्न विचार॥ हे स्वामी रत्नत्रय सार। व्रत कहिये जैसा व्यवहार॥ ४॥ दिव्यध्वनि भगवान बताय। भादों सुदि द्वादश शुभ भाय। कर स्नान स्वच्छ पट श्वेत। पहिनो जिन पूजनके हेत॥ ५॥ आठों द्रव्य लेय शुभ जाय। पूजो जिनवर मन वच काय॥ जीर्ण न्यूनतन जिनके गेह। विंब धरावो तिनमें तेह॥ ६॥ हेम रूप्य पीतलके यन्त्र। तांबा यथा भोजके पत्र॥ यन्त्र करो बहु मन थिर देव। रत्नत्रयके गुण लिख लेव॥ ७॥ निश्शंकादि दर्शन गुण सार। संशय रहित सो ज्ञान अपार॥ अहिंसादि महाव्रत सार। चारित्र के ये गुण हैं धार॥ ८॥ ये तीनोंके गुण हैं आदि। इन्हें आदि जेते गुण वाद॥ शिव मार्गके साधन हेत। ये गुण धारे व्रती सुचेत॥ ९॥ भादों माघ चैत्रमें जान। तीनों काल करो भवि आन॥ या विधि तेरह वर्ष प्रमाण। भावना भावे गुणहि निधान॥ १०॥ लवङ्गादि अष्टोत्तर आन। जपो मन्त्र मन कर श्रद्धान॥ पुनि उद्यापन विधि जो एह। कलशा चमर छत्र शुभ देह॥ ११॥ संग चतुर्विधिको आहार। वस्त्राभरण देउ शुभसार। विंब प्रतिष्ठा आदि अपार। पूजो श्री जिन हो भव पार॥ १२॥

दोहा—इस विधि श्री मुख धर्म सुन, भनो विस्तार आय।
कौने फल पायो प्रभू, सो भाषो समझाय॥ १३॥

चौपाई।

जंबूद्वीप अलंकृत हेर। रह्यो ताहि लवणोदधि घेर॥ मेरु सु दक्षिण दिश है सार। है सो विदेह धर्म अवतार॥ १४॥ कच्छ-वती सुदेश यहां बसे। वीतशोकपुर तामें लसे॥ वश्रिव नाम तहांका राय, करे राज सुरपति सम भाय॥१५॥ मालीने अनायो दयो। विपुल बुद्धि प्रभु वनमें ठयो॥ इतनी सुनि नृप वन्दन गयो। दान बहुत मालीको दयो॥१६॥ हे स्वामी रत्नत्रय धर्म। मोसों कहो मिटे सब भर्म॥ तब स्वामीने सब विध कही। जो पहिले सो प्रकाशी सही॥१७॥ पंचामृत अभिषेक सु ठयो। पूजा प्रभुकी कर सुख लयो॥ जागिरनादि ठयो बहु भाय। इस विधि व्रत कर विश्रिव राय॥१८॥ भाव सहित राजा व्रत करो। धर्म प्रतीत चित्त अनुसरो॥ षोडश भावना भावत भयो। अन्त समाधिमरण तिन करो॥१९॥ गोत्र तीर्थंकर बांधो सार। जो त्रिभुवनमें पूज्य अपार॥ सर्वार्थ सिद्धि पहुंचो जाय। भयो तहां अहमेन्द्र सुभाय॥२०॥ हस्त मात्र तन ऊंचो भयो। तेंतिस सागर आयु सो लयो॥ दिव्य रूप सुखको भण्डार। सत्य निरूपण अवधि विचार॥२१॥ सौधर्मेन्द्र विचारी घरी। यक्षेश्वर को आज्ञा करी॥ वेग देश निर्माप्यो जाय। थापो सुथरापुर अधिकाय॥ २२॥ कुंभपुर राजा तहां बसे। देवी प्रजावती तिस लसे श्री आदिक तहां देवी भाय। गर्भसे सोधना कीनी जाय॥२३॥ रत्न वृष्टि नृप आंगन भई। पन्द्रह मास लो बरसत गई॥ सर्वार्थ-सिद्धिसे सुर आय। प्रजावती सुकुक्ष उपजाय॥ २४॥ मल्लिनाथ सो नामको पाय। दूज चन्द्रसम बढ़त सुभाय॥ अब विवाह मंगल विधि भई। तब प्रभु चित विरागता

लई ॥ २५ ॥ दीक्षा धर वनमें प्रभु गये। घाति कर्म हनि निर्मल ठये ॥ केवल ले निर्वाण सो जाय। पूजा करो सरे सो आय ॥२६॥ यह विधान श्रेणिकने सुनो। व्रत लीने चित अपने गुणो ॥ भक्ति विनय कर उत्तम भाय। पहुंचे अपने गृहको आय ॥२७॥ या विधि जो नर नारी कही। ब्रह्मज्ञान भाषा निर्मही ॥२८॥

(६१) दशलक्षण व्रत कथा।

दोहा—प्रथम वन्दि जिनराजके, शारद गणधर पांय।
दश लक्षण व्रतकी कथा, कहूं अगम सुखदाय ॥१॥

चौपाई—विपुलाचल श्रीवीर कुमार। आये भवभंजन भरतार ॥ सुन भूपति तहां वन्दन गयो। सकल लोक मिलि आनन्द भयो ॥ १ ॥ श्रीजिन पूजे मनधर चाव। स्तुति करी जोड़कर भाव ॥ धर्म कथा तहां सुनो विचार। दान शील तप भेद अपार ॥ ३ ॥ भव दुःख क्षायक दायक शर्म। भाषो प्रभू दशलक्षण धर्म ॥ ताको सुनि श्रेणिक रुचि धरी। गुरु गौतमसे विनती करी ॥ ४ ॥ दश-लक्षण व्रत कथा विशाल। मुझसे भाषो दीनदयाल ॥ बोले गुरु सुन श्रेणिक चन्द्र। दिव्य ध्वनि कहो वीर जिनेन्द्र ॥ ५ ॥ खण्ड धातुकी पूरव भाग। मेरु थकी दक्षिण अनुराग ॥ सीतो दाउ पकंठी सही। नगरी विशालाक्ष शुभ कही ॥ ६ ॥ नाम प्रीतकर भूपति बसे। प्रीयकरी रानी सुत लसे। मृगांकरेखा सुता सुजान। मति शेखर मामा सो प्रधान ॥ ७ ॥ शशिप्रभा ताकी वर नार। सुता कामसेना निरधार ॥ राजसेठ गुणसागर जान। शील सुभद्रा नारि बखान ॥ ८ ॥ सुता मदनरेखा तसु करी। रूपकला लक्षण गुण

भयो ॥ लक्षण भद्र नामा कुमवाल। शशिरेखा नारी गुणमाल ॥९॥ कन्या तास भरे रोहनी। ये चारों बरणी गुरु तनी ॥ शास्त्र पढ़े गुरु पास विचार। स्नेह परस्पर बढ़ा अपार ॥१०॥ मास वसन्त भयो निरधार। कन्या चारों बनहि मंझार ॥ गई मुनीश्वर देखे तहां। तिनको बन्दन कीनो वहां ॥११॥ चारों कन्या मुनिसे कहो त्रिया लिङ्ग ज्यों छूटे सही ॥ ऐसा व्रत उपदेशो अबै। यासे नर तनु पावे सबै ॥ १२ ॥ बोले मुनि दशलक्षण सार। चारों करो होहु भवपार ॥ कन्या बोली किम कीजिये। किस दिनसे व्रतको लीजिये ॥ १३ ॥ तब गुरु बोले बचन रसाल। भादों मास कहो गुणमाल ॥ धवल पंचमी दिनसे सार। पंचामृत अभिषेक उतार ॥ १४ ॥ पूजार्चन कीजे गुणमाल। जिन चौबीस तनी शुभ साल। उत्तम क्षमा आदि अतिसार। दशमो ब्रह्मचर्य गुणधार ॥ १५ ॥ पुष्पांजलि इस विधि दीजिये। तीनोंकाल भक्ति कीजिये ॥ इस विधि दस वासर आचरो। नियमित व्रत शुभ कार्य करो ॥ १६ ॥ उत्तम दश अनशन कर योग। मध्यम व्रत कांजी का भोग ॥ भूमि शयन कीजे दश राति। ब्रह्मचर्य पालो सुख पांति ॥ १७ ॥ इस विधि दश वर्ष जब जांय। तब तक व्रत कीजे घर भाय ॥ फिर व्रत उद्यापन कीजिये। दान सुपात्रोंको दीजिये ॥ १८ ॥ औषधि अभय शास्त्र आहार। पंचामृत अभिषेकहिसार ॥ माडनों रचि पूजा कीजिये। छत्र चमर आदिक दीजिये ॥ १९ ॥ उद्यापन की शक्ति न होय। तो दूनो व्रत कीजे सोय ॥ पुण्य तनो संचय भण्डार। क्रमन पावे मोक्ष सो द्वार ॥ २० ॥ तब चारों कन्या व्रत लियो। मुनिवर भक्ति भाव उर दियो ॥ यथाशक्ति व्रत

पूरण करो। उद्यापन विधिसे आचरो ॥ २१ ॥ अन्तकाल वे कन्या चार। सुमिरण करो पञ्च नवकार ॥चारों मरण समाधि सु कियो। दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥२२॥ षोड़स सागर आयु प्रमाण। धर्म ध्यान सेवें तहां जान ॥ सिद्ध क्षेत्रमें कर विहार। क्षायक सम्यक उदय अपार ॥ २३ ॥ सुभग अवन्ती देश विशाल। उज्जैनी नगरी गुणमाल ॥स्थूलभद्र नामा नरपती। रानी चार सो अति गुणवती ॥ २४ ॥ देव गर्भमें आये चार। ता रानीके उदर मझार प्रथम सुपुत्र देवप्रभु भयो। दूजो सुत गुणचन्द्र भाषियो ॥ २५ ॥ पद्मप्रभा तीनों बलवीर। पद्म स्वारथो चोथो धीर ॥ जन्म महोत्सव तिनको करो। अशुभ दोष ग्रह दोनो हरो ॥ २६ ॥ निकल प्रभा राजाकी सुता। ते चारो परणी गुण युता ॥ प्रथम सुता सो ब्राह्मी नाम। दुतिय कुमारी सो गुणधाम ॥ २७ ॥ रूपवती तीजी सुकुमाल। मृगाक्ष चौथी सो गुणमाल ॥ करो ब्याह घर को आइयो। सकल लोक घर आनन्द कियो ॥ २८ ॥ स्थूलभद्र राजा इक दिना। भोग विरक्त भयो भव तना ॥ राजपुत्रको दीनो सार। बनमें जाय योग शुभ धार ॥ २९ ॥ तपकर उपजो केवल ज्ञान। वसु विधि हनि पायो निर्वाण ॥ अब वे पुत्र राजको करें। पुण्यका फल पावें ते धरें ॥ ३० ॥ चारों बांधव चतुर सुजान। अहि निशि धर्म तनो फल मान ॥ एक समय विरक्त सो भये। आतम कार्य चिन्तवत ठये ॥ ३१ ॥ चारों बान्धव दिक्षा लई। बनमें जाय तपस्या ठई ॥ निज मनमें चिद्र पाराधि। शुक्ल ध्यानको पायो साधि ॥ ३२ ॥ सर्व विमल केवल ऊपनो। सुख अनन्त तबही सो ठनो ॥ करो महोत्सव देव कुमार। जय जय शब्द भयो तिहि

बार ॥ ३३ शेष कर्म निर्बल तिन करे। पहुंचे मुक्तिपुरीमें खरे। अगम अगोचर भव जल पार। दशलक्षण व्रतके फल सार ॥ ३४ ॥ वीर जिनेश्वर कही सु आन। शीतल जिनके बाड़े मान। गौतम गणधर भाषी सार। सुनि श्रेणिक आये दरबार ॥३५॥ जो यह व्रत नरनारी करे। ताके गृह सम्पति अनुसरे ॥ भट्टारक श्री भूषण धीर। तिनके चेला गुण गम्भीर ॥ ३६ ॥ ब्रह्मज्ञान सागर सुविचार। कही कथा दशलक्षण सार ॥ मन वचतन व्रत पाले जोइ। मुक्ति बारांगणा भोगे सोइ ॥३७। सम्पूर्ण।

(६२) मुक्तावली व्रत कथा।

दोहा—ऋषभनाथके पद नमों, भवि सरोज रवि आन।
मुक्तावलि व्रतकी कथा, कहूं सुनो धर ध्यान ॥ १ ॥

चौपाई—मगध देश देशोंमें प्रधान। तामें राजगृह शुभ थान ॥ राज्य करे तहां श्रेणिकराय। धर्मवन्त सबको सुखदाय ॥ २ ॥ ता गृह नारि चेलना सती। धर्म शील पूरण गुणवती ॥ इक दिन समोशरण महावीर। आयो विपुलाचल पर धीर ॥ ३ ॥ सुन नृप अत्यानन्दित भयो। कुटुम सहित बन्दनको गयो ॥ पूजा कर बैठो सुख पाय। हाथ जोड़ कर अर्ज कराय ॥ ४ ॥ हे प्रभु मुक्तावलि-व्रत कहो। यह कर कौने क्या फल लहो ॥ तब गौतम बोले हर्षाय। सुनों कथा मुक्तावलिराय ॥ ५ ॥ याही जम्बूद्वीप मंझार। भरत क्षेत्र दक्षिण दिशि सार ॥ अङ्गदेश सोहै रमनीक। नगर बसे चम्पापुर ठीक ॥ ६ ॥ नगर मध्य इक ब्राह्मण बसे। नाम सोम शर्म्मा तसु लसे ॥ ता गृह एक सुता जो भई। योवन मद

कर पूरण ठई ॥ ७ ॥ इक दिन देखे श्रीगुरु जबे। नग्न गात लखे निन्दे तबे ॥ अति खोटे दुर्वचन कहाय। बहुत ही ग्लानि चित्तमें लाय ॥८॥ ताकरि महा पाप बांधियो। अवधि व्यतीते मरण जु कियो ॥ नरक जाय नाना दुःख सहे। छेदन भेदन जाय न कहे ॥ ९ ॥ नरक आयु पूरी कर जोइ। भव भ्रमि द्विज गृह पुत्री होइ। निर्नामिका पड़ा तिस नाम। अति दुर्गंधा देह निकाम ॥ १० ॥ कोई ढिग आवे नहिं तहां। क्रमकर बड़ो भई सो वहां ॥ अन्न पानकर दुःखित महा। भूठन भखे कष्ट अति लहा ॥ ११ ॥ एक दिवस देखे मुनिराय। कर प्रणाम विनवे शिर नाय ॥ कौन पाप मैं कीनों देव। मैं पायो अति दुःख अमेव ॥ १२ ॥ तब मुनिवर पूरव भव कहे। गुरुकी निन्दासे दुःख लहे। तब दुर्गंधा जोड़े हाथ। ऐसा व्रत दीजे मोहि नाथ ॥ १३ ॥ यासे रोग शोक सब जाय। उत्तम भव पाऊं गुरुराय ॥ तब श्रीगुरु बोले हर्षाय। मुक्तावली करो मन लाय ॥ १४ ॥ तासे सबे पाप जर जाय। सुख सम्पत्ति मिले अधिकाय ॥ तब दुर्गंधा कहे विचार। कौन भांति कीजे व्रत सार ॥ १५ ॥ तब मुनिवर इम वचन कहाय। सुनो भेद व्रतका चित लाय ॥ भादों सुदी सप्तम दिन होइ। ता दिन व्रत कीजे भवि लोइ ॥ १६ ॥ प्रात समय जिन मन्दिर जाय। पूजा कथा सुनो मन लाय ॥ सब आरम्भ तजो दिन मान। संयम शील सजो गुणखान ॥ १७ ॥ भोर भये जिन दर्शन करो। शुद्ध असन कीजे तब वरो ॥ दूजो व्रत पूर्ववत करो। अश्विन वदि छठि पापनि हरो ॥ १८॥ तीजो व्रत कीजे उर धीर। अश्विन वदि तेरसि सुखकार ॥ कर उपवास पालो गुण खरी। चौथी

अश्विन सुदी ग्यारसो ॥१८॥ पञ्चम व्रत कीजे मन लाय। कार्तिक बदी बारसि सुखदाय ॥ फिर छठवां उपवास सुजान। कार्तिक शुक्ल तीज गुणखान ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनवरने कहो। कार्तिक सुदि ग्यारसि शुभ लहो॥ फेर करो अष्टम व्रत लोय। मार्गसिर बदि ग्यारसि अब होय ॥२१॥ नवमों व्रत मार्ग सुदी तीज। ये व्रत धर्म वृक्षके बीज ॥ या विधि करौ नव वर्ष प्रमान। मन वच काय शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत पूरण होय निदान। उद्यापन कीजे गुणखान ॥ श्रीजिनवर अभिषेक कराय। करो माड़नो जिनगृह जाय ॥ २३ ॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो। जन्म २ के पातक हरो ॥ यथाशक्ति उपकरण बनाय। श्रीजिन धाम चढ़ावो जाय ॥ २४ ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय। तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥ सब विधि सुन दुर्गंधा बाल। मन वच तन व्रत लीनो हाल ॥ २५ ॥ गुरु भाषित तिन व्रत ये कियो। पूर्व भव अब पानी दियो ॥ ता फल नारि लिङ्ग छेदियो। सौधर्म स्वर्ग देव सो भयो ॥ २६ ॥ तहां आयु पूरण कर सोय। चलत भयो मथुराको लोय ॥ श्रीधर राजा राज करन्त। ताके सुत उपजो गुणवन्त ॥ २७ ॥ नाम पद्मरथ पंडित भयो। एक दिवस बन क्रीड़ा गयो ॥ गुफा मध्य मुनिवर को देख। बन्दन कर सुन धर्म विशेष ॥ २८ ॥ तहां पूछ मुनिवरसे सोय। तुमसे अधिक प्रभा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले सुन बाल। वासपूज्य जिन दीप्त विशाल ॥ २९ ॥ चम्पापुर राजा जिनराज। तेज पुञ्ज प्रभु धर्म जहाज ॥ यह सुन धर्म विषे चित्त दयो। समोशरण जिन बन्दन गयो ॥ ३० ॥ नमस्कार कर दीक्षा लई। तप कर गणधर पदवी भई ॥ अष्ट कर्म इम विधिसे बार।

पहुंचो शिवपुर सिद्ध मंझार ॥ ३१ ॥ कह्यो भव्य व्रतका जो प्रभाव । राज भोगि भयो शिवपुर राय ॥ जो नर नारि करै व्रत सार । सुर सुख लहि पावे भव पार ॥ ३२ ॥

(६३) पुष्पांजलि व्रत कथा ।

दोहा—वीर देवको प्रणमि कर, अर्चा करों त्रिकाल ।
पुष्पांजलि व्रतकी कथा, सुनो भव्य अघटाल ॥

चौपाई—पर्वत विपुलाचलपर आय । समोशरण जिनवरका पाय । तहां सुन राजा श्रेणिकराय । बन्दन चले प्रियायुत भाय ॥२॥ बन्दन कर पूछे नृप तबे । हे प्रभु पुष्पांजलि व्रत अबे ॥ मोसे कहो करों चित लाय । कोने करो कहा भई आय ॥ ३ ॥ बोले गौतम वचन रसाल । जम्बू द्वीप मध्य सो विशाल । सीता नदी दक्षिण दिशि सार । मंगलावती सुदेश अपार ॥४॥

दोहा—रत्न संचयपुर तहां, वज्रसेन नृप आय ।
अयवंती वनिता लसे, पुत्र विहानी थाय ॥५॥

चौपाई—पुत्र चाह जिन मन्दिर गई । ज्ञानोदधि मुनि वंदित भई ॥
हे मुनिनाथ कहो समझाय । मेरे पुत्र होइके नाय ॥६॥

दोहा—मुनि बोले हे वालकी, पुत्र होय शुभ सार । भूमि छह खंड सुसाधि है,मुक्ति तनो भरतार ।७। सुनके मुनिके वचन तब, उपजो हर्ष अपार । क्रमसे पूरे मास नव, पुत्र भयो शुभ सार ॥८॥ यौवन वयस सो पायके, क्रीडा मण्डप सार । तहां व्योमसे आइयो काम भूप रति सवार ॥९॥ रत्नशेखरको देखकर, बहुत प्रीति उर माहि । मेघवाहनने पांच सो, विद्या दीनीं ताहि ॥१०॥

चौपाई—दोनों मित्र परस्पर प्रीति। गये मेरु वन्दन तज भीति॥ सिद्धकूट चैत्यालय वन्दि। आये पंचपिता आनन्दि॥११॥ ताकी लखी जमाई सार। वेग स्वयम्बर करो तयार॥ भूरि भूप आये तत्काल माल रत्नशेखर गल डाल॥१२॥ धूमकेत विद्याधर देख। क्रोध कियो मन मांहि विशेष॥ कन्या काज दुष्टता धरी। विद्या बल बहुमाया करी॥१३॥ रत्नशेखरसे युद्ध सो करो। बहुत परस्पर विद्या धरो। जीतो रत्नशेखर तिस वार। पाणि ग्रहण कियो व्यवहार॥१४॥मदन मजूषा रानी सङ्ग। आयो अपने ग्रेह असंग॥वजूसेनको कर नमस्कार। मात तात मन सुक्ख अपार॥१५॥ एक दिना मन्दिर गिर योग। पहुंचे मित्र सहित सब लोग॥ चारण मुनि बंदे तिहि वार। सुनो धर्म चित भयो उदार॥१६॥ हे मुनि पूर्व जन्म सम्बन्ध तीनोंके तुम कहो निबन्ध॥ तब मुनि कहैं सुनो चित धार। एक मृणालनगर सुखकार।१७। नृप मंत्री एक तहां श्रुति कीर्ति। बन्धु मती वनिता अति प्रीति॥ एक दिना बन क्रीड़ा गयो। नारी संग रमत सो भयो।१८। पापी सर्प सो भक्षण करी। मंत्री मृतक लखी निज नरी॥ भयो विरक्त जिनालय जाय। दिक्षा लीनी मन हर्षाय॥१९॥ यथाशक्ति तप कुछ दिन करो। पीछे भ्रष्ट भयो तप टरो॥ गृह आरम्भ करन चित ठनो। तब पुत्री मुख ऐसे भनो।२०। तात जो मेरु चढ़ो किहि काज। फिर भव सिंधु पड़े तज लाज॥ यों सुन प्रभावती वच सार। मंत्री कोप कियो अधिकार।२१। तब विद्याको आज्ञा करी। पुत्रीको ले वनमें धरी॥ विद्या जब वनमें ले गई। प्रभावती मन चिन्ता भई।२२। अरहंत भक्ति चित्तमें धरी। तब विद्या फिर आई खरी॥ हैं पुत्री तेरा चित जहां। वेग छोड़

पहुंचाऊं तहां ।२३। पुनी कही कैलाशके भाव । जिन दर्शनको अधिक ही चाव ॥ पूजा करके बैठो वहां । पद्मावती आई सो तहां ॥२४॥ इतने मध्य देव आइयो । प्रभावती से पूछत भयो ॥ हे देवी कहिये किस काज । आये देवी देव सो आज ॥२५॥ पद्मावती बोली वच सार । पुष्पांजलि व्रत है सुअचार ॥ भादों मास शुक्ल पंचमी । पंच दिवस आरम्भ न अमी ॥२६॥ प्रोषध यथा शक्ति व्यवहार । पूजो जिन चोबीसी सार ॥ नाना विधिके पुष्प जो लाय । करी एक माला जो बनाय ।२७। तीन काल वह माला देय ॥ बहुत भक्तिसे विनय करेय । जपो जाप शुभ मंत्र विचार । या विधि पंच वर्ष अवधार ॥२८॥ उद्यापन कीजे पुनि सार । चार प्रकार दान अधिकार ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥२९॥ यह सुन प्रभावती व्रत लयो । पद्मावती कृपाकर दयो ॥ स्वर्ग मुक्ति फलका दातार । है यह पुष्पांजलि व्रतसार ।

दोहा—पद्मावती उपदेशसे, लीना व्रत शुभ सार,
पृथ्वी परसो प्रकाशिके, कियो भक्ति चित धार ।३१।
तप विद्या श्रुत कीर्तिने, पाई अति जो प्रचण्ड ।
पद्मावती व्रत खंडने, आई सो बलवंड ॥३२॥

चौपाई—वासर तीन व्यतीते जबे ।पद्मावति पुनि आई तबे ॥विद्या सब भागी तत्काल । करो सन्यास मरण तिस काल ॥३३॥ कल्प सोलहवं मुख्य सो जान । देव भयो सो पुण्य प्रमाण ॥ तहां देवने कियो विचार । मेरा तात भ्रष्ट आचार ॥ मैं सम्बोधों वाकों अबे । उत्तम गति वह पावे तबे ॥ यही विचार देव आइयो । मरण सन्यास तातको कियो ॥३५॥ वाही स्वर्ग भयो सो देव । पुण्य प्रभाव लयो

फल एव ॥ बन्धुमती माताका जीव । उपजा ताही स्वर्ग अतीव॥३६॥

दोहा—प्रभावतीका जीव तू, रत्नशेखर भयो आय ।
माताका जो जीव हैं, मदन मजूषा थाय ॥३७॥

श्रुतिकीर्तिको जीव जो तहां । मन्त्री मेघ वाहन है यहां ॥ ये तीनोंके सुन पर्याय । भई सो चिन्ता अङ्ग न माय ॥३८॥ सुन व्रत फल अस गुरुको वानि । भयो सुखित व्रत लीनों जानि ॥ अपने थान बहुरि आइयो । चक्रवर्ति पद भोग सु कियो ॥३९॥ समय पाय बैराग सो भयो । राज भार सब सुतको दयो ॥ त्रिगुप्ति मुनिके चरणों पास । दिक्षा लीनो परम हुलास ॥४०॥ रत्नशेखर दिक्षा ली जबे । भये मेघवाहन मुनि तबे ॥ भवि जीवोंको अति सुखकार केवल ज्ञान उपार्जो सार ।४१। घाति कर्म निर्मूल सु करे । पाछे मुक्तिपुरी अनुसरे ॥ या विधि व्रत पाले जो कोई । अजर अमर पद पावे सोई ॥४२॥ ॥ श्रीपुष्पांजलि व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

(६४) नन्दीश्वर व्रत कथा ।

दोहा—चरण नमों जिनरायके, जाते दुरित नशाय ।
शारद वन्दों भावसे, सद्गुरु सदा सहाय ॥१॥

जंबूद्वीप सुदर्शन मेरु । रहो ताहि लवणोदधि घेर ॥ मेरुसे दक्षिण भारत क्षेत्र । मगध देश सुख सम्पति हेतु ॥ २ ॥ राजगृह नगरी शुभ बसे । गढ़ मठ मंदिर सुन्दर लसे ॥ श्रेणिक राज करे सुप्रचंड । जिन लीनों अरिगण पर दंड ।३। पटरानी चेलना सुजान । सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा मध्य बैठो सो जाय । बनमाली सिर नायो आय ॥४॥ दो कर जोड़ करे सो सेव । विपुलाचल आये

जिनदेव ॥ वर्द्धमानको आगम सुनो। अब सुफल चित अपने गुनो ।।५।। राजा रानी पुरजन लोग । वन्दन चले पूजाके योग ॥ चलत चलत सो पहुंचे तहां। समोशरण जिनवरका जहां।।६।।दे प्रदक्षिणा भीतर गये। वर्द्धमानके चरणों नये ॥ पुनि गणधरको कियो प्रणाम। हर्षित चित्त भया अभिराम ।७। दश विधि धर्म सुने जिन पास। उत्तो भयो चित्तका त्रास ।। दोकर जोड़ नृपति वीनयो। अति प्रमोद मेरे मन भयो ।८। प्रभुदयाल अब कृपा करेव। व्रत नंदीश्वर कहो जिन देव ॥ अरु सब विधि कहिये समझाय। भाव सहित यों पूछो राय ।८। अवधि ज्ञान धर मुनिवर कहें। कौशल देश स्वर्ग सम रहें ।। ताके मध्य अयोध्यापुरी। धनकण सुखी छत्तासो कुरी ।१०। तिहिपुर राज करे हरसेन। त्याग तेग बल पूरण सेन। वंश इक्ष्वाक प्रगटे चक्रवे। ताकी आनि खण्ड षट चवे ।११। पाट चन्ध रानी नृप तीन। गन्धारी जेठी गुण लीन ॥ प्रिय मित्रा रूपाश्री नाम। साधे धर्म अर्थ अरु काम ।१२। सुखसे रहत बहुत दिन भये। ऋतु बसन्त वन राजा गये ।। जल क्रीड़ा वन क्रीड़ा करें। हास्य विलास प्रीति अनुसरें ।१३। ता वन मध्य कल्पद्रुम मूल। चन्द्र कांति मणि शिलानुकूल ॥ मण्डप लता अधिक विस्तार। चारण मुनि आये तिहि वार ।१४। आरिञ्जय अमितञ्जय नाम। सोम दयालु धर्मके धाम ॥ राजा रानी पुरजन नारि। देखे मुनि तिन दृष्टि पसारि ।१५। सब नर नारि आनन्दित भये। क्रीड़ा तज मुनि वन्दन गये ॥ त्रिया पुरुष चरणों अनुसरे। अष्ट द्रव्य मुनि पूजे करे ।१६। धर्म ध्यान कहो मुनिराय। श्रद्धा सहित सुनो कर भाय ॥ राजा प्रश्न करी मुनि पास। सुनो धर्म भयो चित्त हुलास ।१७। वृक-

सिद्धक्षेत्र श्रीसोनागिरजी।

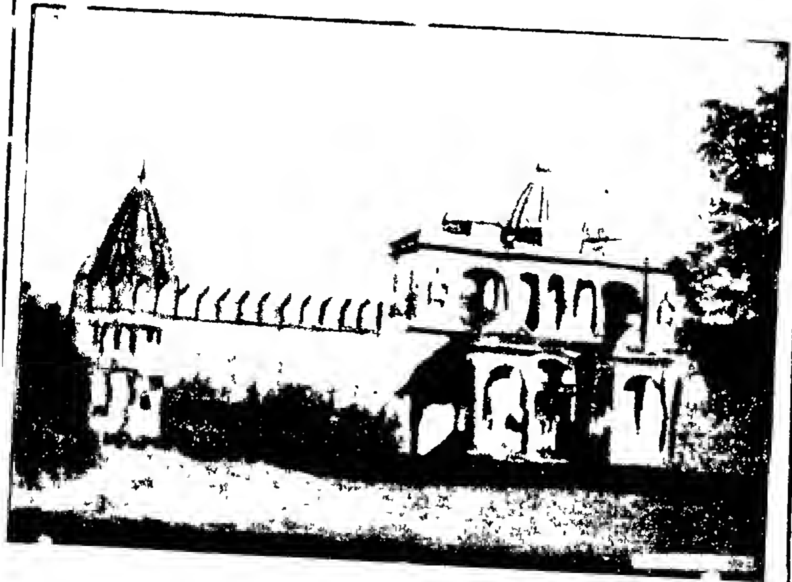

सिद्धक्षेत्र श्रीरामटेकजी।

सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरीजी।

सिद्धक्षेत्र श्रीमांगीतुंगीजी।

बल सहित सम्पदा घनी । और भूमि षट खंड जु तनी ॥ महा
पुण्य जो यह फल होय । गुरु बिन ज्ञान न पावे कोय ।१८। बार
बार बिनवे कर सेव । पूर्व कही भवान्तर देव ॥ अवधिज्ञान बल
मुनिवर कहै । पुर अहिक्षेत्र वनिक इक रहै ॥ सुखित कुबेर मित्रता
नाम । साधे धर्म अर्थ अरु काम ॥ जेष्ठ पुत्र श्रीवर्म्मा कुमार । मध्यम
जयवर्मा गुण सार ।२०। लघु जयकीर्त्ति कीर्त्ति विख्यात । तीनों
शुभ आनन्दित गात ॥ एक दिवस उपजो शुभकर्म बनमें आये मुनि
सौधर्म ।२१। सेठ पुत्र मुनिवर बन्दियो । श्रीवर्म्मा जु अठाई लियो॥
नन्दीश्वर व्रत विधिसे पाल । भव भव पाप पुञ्जको जाल । २२ ।
अन्त समाधि मरणको पाय । इस पुर वज्र बाहु नृप आय ॥ ताके
विमला रानी जान । तुम हरिसेन पुत्र भये आन । २३ । पूरब व्रत
पाले अभिराम । ताते लहो सुक्खको धाम ॥ जयवर्म्मा जयकीर्ति
वीर । निकट भव्य गुण साहस धीर । २४ । वन्दे गुरु जो धुरन्धर
देव । मन वच काय करी बहु सेव ॥ तब मुनि पञ्च अणुव्रत दिये।
दोनों भाव सहित व्रत लिये ।२५। अरु नन्दीश्वर व्रत तिन लियो ।
अन्त समाधि मरण तिन कियो ॥ हस्तनागपुर शुभ जहां बसे ।
तहां विमल वाहन नृप लसे ।२६। ताके नारि श्रीधरा नाम । आ-
रिञ्जय अमितञ्जय धाम ॥ पुत्र युगुल हम उपजे तहां । पूर्व पुण्य
फल पायो जहां ।२७। गुरु समीप जिन दिक्षा लई । तप बल चारण
पदवी भई ॥ यासे हम तुम पूरब भ्रात । देखत प्रेम उपजो गात ।
॥२८॥ पूर्व व्रत नन्दीश्वर कियो । ताते राज चक्र पद लियो ॥
अब फिर व्रत नन्दीश्वर करो । ताते अब स्वर्ग मुक्ति पद धरो
।२९। तब हरिसेन कहे कर जोर । व्रत नन्दीश्वर कहो बहोर ॥

मुनिवर कहें द्वीप आठमो । तास नाम नन्दीश्वर गमो ।३०। ताके चहुं दिश पर्वत परे । अञ्जन दधिमुख रतिकर धरे ॥ तेरह तेरह दिश दिश जान । ये सब पर्वत बावन मान ॥३१॥ पर्वत पर्वत पर जिन गेह । वह परिमाण सुनो कर नेह ॥ सौ योजन ताका आयाम । अरु पचास विस्तार सुताम ॥३२॥ उन्नति है योजन पच्चीस । सुर तहां आय नवावें शीस ॥ अष्टोत्तर सौ प्रतिमा जान । एक एक चैत्यालय मान ।३३। गोपुर मणिमयके सुप्रकार । छत्र चमर ध्वज बन्दनवार ॥ प्रातिहार्य विधि शोभा भली । तिन रवि कोटि सोम छवि छली ।३४। तास द्वीपमें सुरपति आय । पूजा भक्ति करे बहु भाय ॥ देव अव्रती व्रत तहां करे । भाव भक्ति कर पातक हरे ॥३५॥ तास द्वीप सम्बन्धी सार । व्रत नन्दीश्वरको अधिकार । यहां कह्यो जिनवर सुप्रकाशि । आदि अनादि पुण्यकी राशि ।३६। जो व्रत भव्य भावसे करे । ते भव जन्म जरामय हरें ॥ ता व्रतको सुनिये अधिकार । वर्ष २ में त्रय २ वार । ३७ । आषाढ़ कार्तिक अरु जो फाग । शाखा तीन करो अनुराग ॥ आठों दिन आठें पर्यन्त । भक्ति सहित कीजे व्रत सन्त ।३८। सातेको एकासन करो । यथा समय जिनवर मन धरो । आठेंके दिन कर उपवास । जासे छूटे कर्मका त्रास ।३९। करो प्रथम जिनका अभिषेक । जाते पातक जाय अनेक ॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो । मुख परमेष्ठि पञ्च उच्चरो ॥ तादिन व्रत नन्दीश्वर नाम । ताका फल सुनियो अभिराम ॥ फल उपवास लक्ष दश जान । श्रीजिनवरने कत्तो बखान ।४१। दूजे दिन जिन पूजा करो । पात्र दान ते पातिक हरो ॥ अष्ट विभूति नाम दिन सोय । ता दिन

एकासन कर लोय ॥४२॥ फल उपवास सहस्र दश होइ। अब तीजो दिन सुनिये लोइ जिन पूजा कर पात्रहि दान। भोजन पानी भात प्रमान।४३। नाम त्रिलोकसार दिन कहो। साठ लाख प्रोषध फल लहो॥ चतुर्थ दिन कर आमौदर्य। नाम चतुर्मुख दिनसोहर्य ॥४४॥ तहां उपवास लक्ष फल होइ। पञ्चम दिन विधि करियो सोइ॥ जिन पूजा एकासन करो। इय लक्षण जु नाम दिन धरो ॥ ४५ ॥ फल चौरासी लक्ष उपास। जासे जाय भ्रमण भव नास॥ षष्टम दिन जिन पूजा दान। भोजन भात आमिली पान ॥ ४६ ॥ ता दिन नाम स्वर्ग सोपान। व्रत चालीस लक्ष फल जान॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान। कीजे भविजनका सन्मान ॥ ४७ ॥ सब सम्पति नाम दिन सोइ। भोजन भात त्रिवेली होय॥ फल उपवास लक्षकों जान। अष्टम दिन व्रत चितमें आन॥ ४८ ॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो। पात्र दान दे सुकृत गुनो॥ इन्द्रध्वजवृत दिन तस नाम। सुमिरो जिनवर आठों जाम।४९। तीन करोड़ अति लाख पचास। यह फल होय हरे सब त्रास॥ यह विधि आठ वर्षमें होइ। भाव सहित कीजे भवि लोइ।५०। उत्तम सात वर्ष विधि जान। मध्यम पांच तीन लघु मान॥ उद्यापन विधि पूर्वक सचो। वेदी मध्य माडनो रचो।५१। जिन पूजारु महा अभिषेक। चन्द्रोपम ध्वज कलश अनेक॥ छत्र चमर सिंहासन करो। बहुविधि जिन पूजा अघ हरो ॥५२॥ चारों दान सुपात्रहि देउ। बहुत भक्ति कर विनय करेउ। बहु विधि जिन प्रभावना होइ। शक्ति समान करो भवि लोइ।५३। उद्यापनकी शक्ति न होय। तो दूनो व्रत कीजे लोइ॥ जिन

यह व्रत कीनो अभिराम । तिन पद् लयो सु खको धाम । ५४ ।
यह व्रत पूर्व महा फल लियो । प्रथम ऋषभ जिनवरने कियो ॥
अनन्तवीर्य्य अपराजित पाल । चक्रवर्त्ति पद्वी भई हाल । ५५ ।
श्रीपाल मैंना सुन्दरी । व्रत कर कुष्ट व्याधि सब हरी ॥ बहुतक
नर नारी व्रत करो । तिन सब अजर अमर पद् धरो । ५६ ।
सुनो विधानराय हरसेन । अति प्रमोद् मुख जंपे बेन ॥ सब परि-
वार सहित व्रत लयो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर दयो । ५७ । व्रत
कर फिर उद्यापन करो । धर्म ध्यान कर शुभ पद धरो ॥ अन्त
समाधिमरणको पाय । भयो देव हरसेन सुराय । ५८ । पर्या-
यान्तर जैहैं मुक्ति । श्रेणिक सुनो सकल व्रत युक्ति ॥ गौतम कहो
सकल अधिकार । सुनो मगधपति चित्त उदार । ५९ । जो नर
नारी यह व्रत करें । निश्चय स्वर्ग मुक्ति पद धरैं ॥ संकट रोग
शोक सब जाहिं । दुःख दरिद्रता दूर बिलाहिं । ६० । यह व्रत
नन्दीश्वरकी कथा । हेमराज सु प्रकाशी यथा ॥ शहर इटावा उत्तम
थान । श्रावक करें धर्म शुभ ध्यान । ६१ । सुने सदा ये जैन
पुराण । गुणीजनोंका राखैं मान । तिहिठा सुना धर्म सम्बन्ध ।
कीनी कथा चौपाई बंध । ६२ । कहैं सुनें देवें उपदेश । लहैं
भावसे पुण्य अशेष ॥ जाके नाम पाप मिट जांय । ता जिनवरके
बन्दों पांय ॥ ६३ ॥ श्रीनन्दीश्वर व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

(६६) निशिभोजन कथा ।

दोहा—नमों सारदा सार बुध, करैं हरैं अघ लेप ।
निशि भोजनभुंजकी कथा, लिखूं सुगम संक्षेप ॥ १ ॥

जंबूद्वीप जगत विख्यात। भरत खंड छवि कहिय न जात॥ तहां देश कुरु जांगल नाम। हस्तनागपुर उत्तम ठाम॥ यशो भद्र भूपत गुण वास। रुद्रदत्त द्विज प्रोहित तास॥ सप्तमास तिथि दिन आराध। पहिली पड़वा कियो सराध॥ बहुत विनय सों नगरी तने। न्योत जिमाये ब्राह्मण घने॥ दान मान सबहीकों दियो। आप विप्र भोजन नहिं कियो॥ इतने राय पठायो दास। प्रोहित गयो रायके पास॥ राज काज कछु ऐसो भयो। करम करावत सब दिन गयो॥ घरमें रात रसोई करी। चुल्हे ऊपर हांड़ी धरी॥ हींग लेन उठि बाहर गई। यहां विधाता औरहीठई। मैंडक उछल परो ता माहि। त्रिया तहां कछु जानो नाहिं। बेंगन-छोंक दिये तत्काल। मैंडक मरो होय बेहाल॥ तबहुं विप्र नहि आयो धाम। धरी उठाय रसोई ताम॥ पराधीनकी ऐसी बात। औसर पायो आधी रात॥ सोय रहे सब घरके लोग। आग न दीवा कर्म संयोग॥ भूखो प्रोहित निकसे प्रान। ततछिन बैठो रोटी खान॥ बेगन भोले लीनो ग्रास मेंडक मुंहमें आयो तास॥ दांतन चले चबा नहिं जबै। काढ़ धरो थालीमें तब॥ प्रात हुए मैंडक पहिचान। तौ भी विप्र न करी गिलान॥ तिथि पूरी कर छोड़ी काय। पशुकी योनी उपजो आय॥

सोरठा छन्द—१ घुघ्घू २ काग ३ विलाव, ४ साबर ५ गिरध्र पखेरुआ। ६ सूकर ७ अजगर भाव, ८ वाघ ९ गोह जलमें १० मगर। दश भव इहि विधि थाय, दसों जन्म नरकहि गयो। दुर्गति कारण पाय, फली पाप वट बीजवत्।

दोहा—निशि भोजन करिये नहीं, प्रगट दोष अविलोय।
परभवसब सुख संपजे यह भव रोग न होय॥

छप्पय (छन्द)

कोड़ी बुध बल हरे, कम्प गद करे कसारी। मकड़ी कारण पाय कोढ़ उपजे दुख भारी। जुआं जलोदर जने फांस गल विथा बढ़ावे। बाल सबे सुरभंग वमन माखी उपजावे॥ तालुवे छिद्र बीछू भखत और व्याधि बहुकरहि सब। यह प्रगट दोष निश असनके परभव दोष परोक्ष फल॥

जो अघ इहि भव दुख करे, परभव क्यों न करेय। डसत सांप पीछे तुरत, लहर क्यों न दुख देय। सुवचन सुन डाहारजे, मूरख मुदित न होय। मणिधर फण फेरे सही, नहीं सांप नहीं होय॥ सुवचन सत गुरुके वचन, और न सुवचन कोय। सत गुरु वही पिछानिये,जा उर लोभ न होय॥५॥ भूधर सुवचन सांभलो,स्वपर-पक्ष कर बौन। समुद्र रेणुका जो मिले, तोड़े तें गुण कौन॥इति

(६७) श्रीरविव्रत कथा

चौपाई—श्रीसुखदायक पार्स जिनेश। सुमति सुगति दाता परमेश॥ सुमिरों शारद पद अरविन्द। तिनकर व्रत प्रगटो सानंद॥१॥ वाणारस नगरी सुविशाल। प्रजापाल प्रगटो भूपाल॥ मतिसागर तहां सेठ सुजान। ताका भूप करे सन्मान॥ २॥ तासु त्रिया गुणसुन्दरि नाम। सात पुत्र ताके अभिराम॥ षट् सुत भोग करें परणीत। बाल रूप गुण धर सुविनीत॥ ३॥ सहस्त्रकूट शोभित जिन धाम। आये यति पति वंछित काम॥ सुनि मुनि आगम हर्षित भये। सर्व लोग वन्दनको गये॥ ४॥ गुरु वाणी सुनिके गुणवती। सेठिन तब जो करी वीनती॥ ५॥ करुणा-

निधि भाषैं मुनिराय। सुनो भव्य तुम चित्त लगाय ॥ अब आषाढ़ सुदि पक्ष विचार। तब कीजे अंतिम रविवार ॥ ६ ॥ अनशन अथवा लघु आहार। लवणादिक जो करे परिहार ॥ नवफल युत पंचामृत धार। वसु प्रकार पूजो भवहार ॥ ७ ॥ उत्तम फल इक्यासी जान। नवश्रावक घर दीजे आन ॥ या विधि करो नव वर्ष प्रमाण। याते होय सर्व कल्याण ॥ ८ ॥ अथवा एक वर्ष एक सार। कीजे रविव्रत मनहिं विचार ॥ सुन साहुन निज घरको गई। व्रत निन्दासे निन्दित भई ॥ ९ ॥ व्रत निन्दासे निर्धन भये। सात पुत्र अयोध्यापुर गये ॥ तहां जिनदत्त सेठ गृह रहे। पूर्व दुःकृतका फल लहैं ॥ १० ॥ मात पिता गृह दुःखित सदा। अवधि सहित मुनि पूछे तदा ॥ दया-वन्त मुनि ऐसे कहो। व्रत निन्दासे तुम दुःख लहो ॥ ११ ॥ सुन गुरु वचन बहुरि व्रत लयो। पुण्य कियो घरमें धन भयो ॥ भवि-जन सुनो कथा सम्बन्ध। जहाँ रहते थे वे सब नन्द ॥१२॥ एक दिवस गुणधर सुकुमार। घास ले आये गृह द्वार ॥ क्षुधा वन्त भावज पे गयो। दंत बिना नहिं भोजन दयो ॥ १३ ॥ बहुरि गये जहां भूलों दन्त। देखो तासे अहि लिपटन्त ॥ फणिपतिकी तहां विनती करी। पद्मावति प्रगटी सुंदरी ॥ १४ ॥ सुन्दर मणि-मय पारसनाथ। प्रतिमा पंचरत्न शुभ हाथ ॥ देकर कहो कुंवर कर भोग। करो क्षणक पूजा सयोग ॥१५॥ आनबिंब निज घरमें धरो। तिहकर तिनको दारिद्र हरो ॥ सुख बिलास सेवे सब नन्द। नित प्रति पूजों पार्स जिनेन्द्र ॥ १६ ॥ साकेत नगरी अभिराम। जिन प्रसाद राचा शुभ धाम ॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य

संयोग । आये भविजन संग सो लोग ॥ १७ ॥ संघ चतुर्विधिको सन्मान । कियो दियो मन वांछित दान ॥ देख सेठ तिनकी सम्पदा । जाय कही भूपतिसे तदा ॥ १८ ॥ भूपति तब पूछी वृत्तान्त । सत्य कहो गुणधर गुणवन्त ॥ देख सुलक्षणताको रूप । अत्यानन्द भयो सो भूप ॥ १९ ॥ भूपति गृह तनुजा सुंदरी । गुणधरको दीनी गुण भरी ॥ कर विवाह मंगल सानन्द। हय गय पुरजन परमानन्द ॥ २० ॥ मन वांछित पाये सुख भोग विस्मित भये सकल पुर लोग ॥ सुखसे रहित बहुत दिन भये । यब सब बन्धु बनारस गये ॥ २१ ॥ मात पिताके परशे पांय । अत्यानन्द हृदय न समाय ॥ बिघटो विषम विषम वियोग । भया सकल पुरजन संयोग ॥ २२ ॥ आठ सात सोलहके अंक । रवि-व्रत कथा रची अकलंक ॥ थोड़े अर्थ ग्रन्थ विस्तार । कहें कवीश्वर जो गुणसार ॥ २३ ॥ यह व्रत जो नर नारी करें सो कबहूं दुर्गति नहिं परें ॥ भाव सहित सो शिव सुख लहैं । भानुकीर्त्ति मुनिवर इमि कहैं ॥२४॥ इति श्री रविव्रत कथा सम्पूर्ण ॥

(६८) अथ ज्येष्ठजिनवर कथा ।

चौपाई—वंदौ रिषभदेव जिनराज । फुनि सारद वंदौं सुख साज ॥ गोतम बंदौं शुभ मति लहौं । कथा जेठ जिनवर की कहौं ॥ १ ॥ आरज खंड देस गुजरात । खंभपुरी नगरी सु वि-ख्यात ॥ चन्द्र सिखर राजा गुनवन्त । रानी चन्द्रमतीको कन्त ॥ २ ॥ विप्र सोमशर्मा इक वसै । सौमिल्या बनिता सुख लसै ॥ जब बालक जाको सुत जान । सोमश्री ता त्रिया बखान ॥ ३ ॥ सोम विप्रको मरन जु भयो । जब बालकको अति दुख थयो ॥

सोमश्री सों सासू कही। नूतन कलस भरनको दई॥ ४ ॥ विप्रन के घर देहु पठाय। अरु पीपरको सींचउ आय॥ आज्ञा लै पनिघट पै गई। मिली सखी तहं ठांढो भई॥ ५॥ ता पै जेठ जिनालो वर्त। आज सबो नगरी सब कर्त॥ सुनि कर सोमश्री सुधि भई। भरि लै घट चैत्यालय गई॥६॥ तिन गुरु पास लियो बृत सही। जैसी विध ग्रन्थनमें कही॥ उत्तम विध चोविस जो वर्ष। मध्यम बारह लेखन हर्ष॥ ७॥ लै बृत पूजा जिनकी करी। मिथ्या बुद्धि सकल परिहरी॥ काहु दुष्ट सासु सों कही। बहू गई चैत्यालय सही॥८॥ वह कलसा जिनवर पर ढरयो। सुनते ब्राह्मनि कोप जो करयों॥ सोमश्री घरमें जब गई। सासु वचन कटु बोलत भई॥ ८॥ तू घरमें आवेगी तवै। मेरो घट्ट ल्यावेगी जबै॥ ऐसे वचन सासुके सुने। सोमश्री तब मस्तक धुने॥ १०॥ वह गई तहां जहां हतो कुम्हार। भैया मेरो वचन सम्हार। सोने को तू कंकन लेहु। कलस तोस दिन हमको देहु॥ ११॥ तब कुम्हार कंकन नहिं लयो। तिन कलसा लै ताको दयौ॥ धनि पुत्री तू करि बृत अबै। मेरे ते घट लीजे सबै॥ १२॥ मास जेष्ठ तौ यह व्रत करौ। कछुक पुन्य मेरो अनुसरौ॥ तब तिन तापे तै घट लियौ। भरि जल जाय सासुको दियौ॥ १३॥ बृत अनमोद कुम्हार जो मरौ। श्रीधर राजा सो अवतर्यौ॥ करि बृत सोमश्री जो मरी। श्रीधरके पुत्री अवतरी॥ १४॥ कुम्भश्री है ताको नाम। राखै चित्त जिनेश्वर धाम॥ ऐसे करत बहुत दिन गये। मुनिवर वनमें आये नये॥ १५॥ परिजन सहित राय संग गयौ। नगर लोग अनन्दित भयौ॥ द्वै विध कर्म किया परकास।

सुनि कर गयौ चित्तको त्रास ॥ १६॥ वहां सोमल्या देखी दुखी। तन कुचील अरु नेक न सुखी ॥ पूछे राय कहा इन कौन। जाते भई महा आधीन ॥ १७॥ सुनि मुनि अवधि ज्ञान परकास। यह है सोमश्री की सासु ॥ निंद्यो वृत जिनवरकों तबै। ताको दुख भुगतत है अबै ॥ १८॥ कुष्टरोग माथेमें भयौ। पूरब पावनको फल लयौ ॥ सोमश्री मार उपजी सुता। सो यह कु-म्भश्री गुण युता ॥ १९॥ सुनि कुम्भश्री जोरे हाथ। मो पर कृपा करौ मुनिनाथ ॥ यह मेरी सासूको जीव। [illegible] कल शरीर ॥ २०॥ ऐसी विध उपदेशो अबै ॥ [illegible] दुखख भजि सवै ॥ मुनिवर कहै याहि तू छुवै। अरुगंधोदक ऊपर चुवै ॥ २१॥ अरु सेवौ जिनवरके पांय। सब दरिद्र दुख वेगि मि-टाय ॥ तब कुम्भश्री कियो उपगार। दुर्गन्धाको गयो विकार ॥ २२॥ सोमिल्या रु अर्जिका भई। तप करि प्रथम स्वर्गमें भई ॥ कुम्भश्री फिर यह वृत कर्यौ। दूजे स्वर्ग देव अवतर्यौ ॥ २३॥ परम्परा वहं जे हैं मुक्ति। भवि जन करौ सबै वृत युक्ति ॥ सत्रह पर अट्ठावन जान। पण्डित जन संवत्सर मान ॥ २४॥ जेष्ठ शुक्ल गुरु एकादसी। नगर गहेली शुभ मतिवसी ॥ जो यह करै भव्य वृत कोय। सो नर नारि अमर पति होय ॥ २५॥ रोग सोग दुख संकट जाय। ताकी जिनवर करी सहाय ॥ जो नर नारी इक चित करै। मन वांछित सुख संपति वरै ॥ २६॥ इति ॥

(६६) शील महात्म्य

जिनराज देव कीजिये मुझ दीन पर करुना। भवि वृन्दको अब

दीजिये बस शीलका शरना ॥ टेक ॥ शीलकी धारामें जो स्नान करे है। मल कर्मको सो धोयके शिवनार वरै है ॥ ब्रतराज सो वेताल व्याल काल डरे है। उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरे हैं ॥ १ ॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग अचारा। इस शीलसे सब धर्मके मु'हका है उजारा ॥ शिवपन्थ ग्रन्थ मंथके निर्ग्रंथ निकारा। बिन शील कौन कर सके संसारसे पारा ॥ २ ॥ इस शीलसे निर्वाण नगरकी है अवादी। त्रेसठ शलाका कौन थे ही शील सवादी ॥ सब पूज्यके पदवीमें है परधान ये गादी। अठारा, सहस्र भेद भने वेद अवादी ॥ ३ ॥ इस शीलसे सीताको हुआ आगसे पानी। पुर द्वार खुला चलनिमें भर कूप सों पानी ॥ नृप ताप टरा शीलसे रानी दिया पानी। गङ्गामें ग्राह सों बची इस शीलसे रानी ॥ ४ ॥ इस शील हीसे सांप सुमन माल हुआ है। दुःख अंजनाका शीलसे उद्धार हुआ है ॥ यह सिन्धुमें श्रीपालको आधार हुआ है। वप्राका परम शील होसे यार हुआ है ॥ ५ ॥ द्रोपदीका हुआ शीलसे अम्बरका अमारा। जा धातु द्वीप कृष्णने सब कष्ट निवारा ॥ सब चन्दना सतीकी व्यथा शीलने टारा। इस शीलसे ही शक्ति विशल्याने निकारा ॥ ६ ॥ वह कोट शिला शीलसे लक्ष्मणने उठाई। इससे ही नागको नाथा श्रीकृष्ण कन्हाई इस शीलने श्रीपालजीकी कोढ़ मिटाई। अरु रैन मञ्जूसाको लिया शील बचाई ॥ ७ ॥ इस शीलसे रनपालकु'अरकी कटी बेड़ी इस शीलसे विष सेठकी नन्दनकी निबेड़ी ॥ शूलीसे सिंह पीठ हुआ सिंहही सेरी। इस शीलसे कर माल सुमन माल गलेरी ।८। समन्तभद्रजीने यही शील सम्हारा। शिव पिण्डते जिनचन्द्रका

प्रति बिम्ब निकारा॥ मुन मानतुङ्गजीने यही शील सुधारी। तब आनके चक्रेश्वरी सब बात सम्हारा॥ ८॥ अकलङ्कदेवजीने इसी शीलसे भाई। ताराका हरा मान विजय बौद्धसे पाई॥ गुरु कुन्द-कुन्दजीने इसी शीलसे जाई। गिरनार पै पाषाणकी देवीको बुलाई॥१०॥ इत्यादि इसी शीलकी महिमा है घनेरी। विस्तारसे कहनेमें बड़ो होयगी देरी॥ पल एकमें सब कष्टको यह नष्ट करेगी॥ इस ही से मिले रिद्धि सिद्धि वृद्धि सबेरी। ११॥ बिन शील खता खाते हैं सब कांछके ढ़ीले। इस शील बिना तन्त्र मन्त्र जन्त्र ही फोले॥ सब देव कर सेव इसी शीलके हीले। इस शील ही से चाहे तो निर्वाण पदी ले॥ १२॥ सम्यक्त्व सहित शीलको पाले हैं जो अन्दर। सो शील धर्म होय है कल्याणका मन्दिर इससे हुये भव पार हैं कुल कौल और बन्दर। इस शीलकी महिमा ने सके भाष पुरन्दर॥ १३॥ जिसे शीलके कहनेमें थका सहस बदन है। जिस शीलसे भय पाय भगा कूर मदन है॥ सो शील ही भविवृन्दको कल्याण प्रदन है। दश पैंड हो इस पैंडसे निर्वाण सदन है॥ १४ इति॥

१०० चेतन चरित्र।

लावनी

कुमति सुमति दो त्रिय चेतनके तिनका कथन सुनो नर नार। जासु श्रवणसे निज स्वरूप लखि भव थिति घटि छूटे संसार॥ टेक॥ मिथ्या नींदसे अचेत होकर सोवे सेज चतुर्गतिया। वक्त तीव्र बीता चिन्मूरति काल लब्धि आई हतिया सुरुचि तिष्ट हिय सम्यग् दर्शन छोड़ गये अब निज लतिया।

सचेत होकर सुमतिसे क्यों न लगी मेरी छतिया ॥ शेर ॥ सुबुधि बोली कंथसे वैरिन कुमति बलवान रे। लखि आपको के जिन भनो करजेर डारों खानरे ॥ वर बुद्धिवाला सीख धर तब कुबुद्धि रिस होकर चली। तातसे पुत्री भने पिव हरी मोंको बे कली ॥ सुता बात सुन अनंग भजा चलो बुलाया है दरबार। जासु० ॥ १ ॥ कहा दूतसे जाउ न जावें लड़नेका सामा होगा। कही आय नृपसे नहीं आवे लड़ने फौज जाना होगा ॥ राग द्वेषको हुकम दिया सब सुभट यहां लाना होगा। सात व्यसन सरदार सात हो चलके समर ठाना होगा ॥ शेर—करते गमन दल ले वहांसे सप्तको आगे किया। पहुंच पुर चितको लखो गढ़ निकट जा डेरा किया ॥ चिदानंद लखिसेनको अब तुरत ही बुलाया ज्ञानको। आके कहा लड़नेकी त्यारी कर हरो बेईमानको ॥ कहे बोधसे बड़े शूरमा बुलाबो न आवें मम दरबार। जासु० ॥२॥ दान शील नव भाव धार सत चारित्र बल धर सजि आया। दर्शन उपशम शंतोष सम भाव सुभावको भी बुलवाया ॥ विवेक चेतन सुध्यान युत बल दलका पार नहीं पाया। सावधान हो प्रबोध लड़नेका डंका बजवाया ॥ शेर—युद्ध दोनो मिल हुआ मोहन भजा होगा फला। मरा विवेकने सातको पुर देश भागा काफला। हार अव्रत कहे जा प्रतिख्याना पकड़ला। और सेना साथ ले व्रत भंग करके अकड़ला ॥ पहुंचे लड़नको सब दल लेकर साजे सूरमा ले हथियार ॥ जासु० ॥ ३ ॥ दोनोंमें मिल पड़ी लड़ाई मची मार होड़ा होड़ी। मिथ्या सास्वादन में जीवको करे मोह छोड़ा छोड़ी ॥ मोह बली जिसे करे जेर सत्रह कोड़ा कोड़ी।

तिसे जीतजा मिले अव्रतपुर जोड़ा जोड़ी ॥ शैर—मिल एक दस प्रतिमासु पहुंचे देश व्रत पुर सारमें । आगे ना जाते शस्त्र वृंधे रोक बैठे द्वारमें ॥ ध्यान तेगा मारके सप्तम नगर चलता हुवा । तब मोहने सब सूर ले लड़नेको फिर चलता हुआ ॥ राग संग चले कषाय निन्द्रा विषय त्याय प्रमत्तमें डार ॥ जासु० ॥४॥ अप्रमत्त किय राज होय कहैं हंस इन्से कैसे छूटे । अट्ठाइस गुण दो दश तप वे बाइस परीष सहै इम लूटे ॥ सप्तम पुर आजा रावल जब ध्यान तेजकी लौ फूटे । प्रथम शुक्ल बल अष्टम शिरता नवमें मोह नहीं टूटे ॥ शैर—सब ग्राम जीते जायके हता मोह यह कैसे टले । जा शूर ले घेरा गाँव सब उपसन्त तक मेरा चले ॥ पहुंचे वहां छिप शूरमा जिय निकस जात हरायके । सूक्ष्म सांपराय नगरी आप प्रगटे आयके ॥ लोभ मार वह भये निशंकित कौन लड़ेगा बारम्बार ॥ जासु० ॥५॥ पकड़ बांह मिथ्यातमें डाल करा मोहने ऐसा बल । चिदा नद निज चला लड़नेको जोरा अपना दल ॥ तीन करणसे सातों क्षय करि लीना अव्रतपुर झट चल । देशव्रत पुर लिया अनूपम अप्रयिख्यान डारा दलमल ॥ शैर—प्रतिख्यानको नाश कर षट् सप्त पहुंचे जायके । दो कारणसे तीन मारे लीना बसुपुर जायके । अनुव्रत करण छत्तीस मारे लोभको ततक्षिण हरा । तबही उपशम उलंघिके बारहमें पोंहचा जा खरा ॥ प्रतिख्यान चारित्र प्रघट तहां द्वितीय शुक्ल असि कर गहिसार ॥ जासु० ॥६॥ सोलह शूरमा तहां विनाशे दोष अठारह गये कट फट ।; प्रघटे गुण छ्यालीस जहां पर लोका लोक लखा चटपट ॥ निरोध योग निवृत्य क्रिया कर कृपाण गहि लीना झट-

पद। अयोगपरका राज लिया जहां प्रकृति पचासी गईं हटछट॥ शेर—पहुंचे जाकर मोक्षपुर जहां गुण होते भये। अक्षय अनादि अनन्त सुखमें लीन जब होते भये॥ निज शरीरसे हीन कछुक पुरु षाकार प्रदेश है। आपे आप निमग्न परका नहीं लवलेश है॥ क्षमा धार शोधों ज्ञानी जिन लघु धी रूपचन्द कहै पुकार जासु०॥ ७॥

१०१ दौलत कृत पद

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावे, जाको जिनवानी न सुहावे॥ ऐसा०॥ बीतरागसे देव छोड़कर भैरव यक्ष मनावे, कल्प लता दयालुता तजि हिंसा इन्द्रायति वावै॥ ऐसा०॥१॥ रुचे न गुरु निर्ग्रन्थ भेष बहु परिग्रही गुरु भावै। परधन परितियको अभि लाषै, अशन अशोधित खावें॥ ऐसा०॥२॥ परकी विभव देख है सो भी पर दुःख हरण लहावे। धर्म हेतु इक दाम न खरचे, उप- वन लक्ष बहावे॥ ऐसा०॥ ज्यों गृहमें रुंचै बहु अघ त्यों, बनहू में उपजावे। अम्बर त्याग कहाय दिगम्बर बाघम्बर तन छावै॥ ऐसा०॥४॥ आरम्भ तजे शठ यंत्र मंत्र करि जन पै पूज्य मनावे। धाम वाम तज दासो राखै बाहिर मढ़ी बनावे॥ ऐसा०॥५॥ नाम धराय जती तपसी मन विषयनमें ललचावें॥ दौलत सो अनन्त मन भटके औरनको भटकावे॥ ऐसा०॥६॥

१०२ बुधजन कृत राग अहिंग।

तैं क्या किया नादान, तैं तो अमृत तज विष लीना॥तैं टेक॥ लख चौरासी जौनि माहि तैं श्रावककुल मैं आया। अब तज तीन लोकके साहिब, नवग्रह पूजन धाया॥तैं०॥१॥ बीतरागके

दरशन ही तैं उदासीनता आवे, तू तो जिनके सन्मुख ठाढा सुतको ख्याल खिलावे ॥तैं० ॥२॥ सुरग सम्पदा सहजे पावे, निश्चय मुक्ति मिलावे। ऐसी जिनवर पूजन सेती, जगत कामना चावे ॥तैं०॥ ॥३॥ बुधजन मिले सलाह कहैं तब, तूं वापे खिजि जावे। जथा जोगको अजथा माने। जनम जनम दुःख पावे ॥ तैं० ॥४॥

१०३ भूधरकृत—राग कलिंगड़ा।

चरखा चलता नाहीं, चरखा हुआ पुराना ॥टेक॥ पग खूंटे द्वो हालन लागे उर मदरा खखराना। छीदी हुई पांखड़ी पांसू, फिरै नहीं मनमाना ॥ चरखा० ॥१॥ टेक ॥ रसना तक लीने बल खाया सो अब कैसे खूटै ॥ सबद सूत सूधा नहिं निकसै, घड़ी घड़ी पल टूटै ॥ चरखा० ॥ २ ॥ आयु मालका नहीं भरोसा अंग चलाचल सारे। रोज इलाज मरम्मत चाहे, बैद बाढ़ ही हारे ॥ चरखा० ॥ ३ ॥ नया चरखला रंगा चंगा, सबका चित्त चुरावे। पलटा चरन गये गुन अगले, अब देखें नहिं भावे ॥ चरखा० ॥ ४ ॥ मोटा महीं कात कर भाई! कर अपना सुरझेरा। अन्त आगमें ईन्धन होगा, 'भूधर' समझ सबेरा ॥ चरखा० ॥ ५ ॥

१०४ न्यामत कृत गजल।

तुम्हारे दर्श बिन स्वामी मुझे नहिं चैन पड़ती है। छवी वैराग्य तेरी सामने आंखोंके फिरती है ॥ टेक ॥ निरा भूषण विगत दूषण परम आसन मधुर भाषण। नजर नैनोंकी नाशाकी अनीसे पर गुजरती है॥ १ ॥ नहीं करमोंका डर हमको कि जब लग ध्यान चरणेमें। तेरे दर्शनसे सुनते कर्म रेखा भी बदलती है

॥ २ ॥ मिले गर स्वर्गकी संपति, अचंभा कौनसा इसमें, तुम्हें जो नयन भर देखे गती दुरगतिकी टरती है ॥ ३ ॥ हजारों मूरतें हमने बहुत सी गौर कर देखीं, शांति मूरत तुम्हारी सो नहीं नजरों में चढ़ती है ॥ ४ ॥ जगत सरताज हो जिनराज, न्यामतको दरश दीजे, तुम्हारा क्या बिगड़ता है, मेरी बिगड़ी सुधरती है ॥ ५ ॥

(१०५) अटल—नियम।

मरना जरूर होगा करना जो चाहो करलो।
फल उसका पाना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ टेक ॥

पाया मनुष जनम है, जिसका न मोल कम है। जबतक कि तनमें दमहै, करना जो चाहो करलो ॥ १ ॥ जीवन के साथ मरना, जोबनका फल बुढ़ापा। धन का भी नाश होगा, करना जो चाहो करलो ॥ २ ॥ बोओगे बीज जैसा, फल प्राप्त होगा वैसा। होना है वोही होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ३॥ रोओगे वा हंसोगे, शीशे को देख कर तुम। प्रतिबिम्ब वैसा होगा करना जो चाहो करलो ॥ ४ ॥ करलो भलाई भाई, करते हो क्यों बुराई। दिन चार जीना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ५ ॥ कर करके छल कपट जो, लाखों रुपये कमाये। सब छोड़ जाना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ६ ॥ अपने मजेकी खातिर परके गले न काटो। दुख तुम को पाना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ७ ॥ उपकार को न भूलो, जो चाहते भलाई ॥ ये ही तो साथ देगा, करना जो चाहो करलो ॥ ८ ॥ शुभ काम करके मरना, समझो इसीको जीना। जीना न और होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ९ ॥ जो आज धर्म्म करना, छोड़ो

न उसको कल पर। साथी धरम ही होगा, करना जो चाहो करलो ॥ १० ॥ है मोल जगमें सब का, पर मोल ना समय का। "बालक" यह :कहना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ११ ॥

१०६ दर्श अभिलाषा गजल कव्वाली

प्रभू मन मेरा व्याकुल है, दरश दोगे तो क्या होगा। मुझे है चाह दर्शनकी, अगर दोगे तो क्या होगा ॥ १ ॥ टेक ॥ हम सब घर बार तज करके, चरण सेवाको आये हैं। पड़े मझधारमें दुखिया, उबारोगे तो क्या होगा ॥ २ ॥ नहीं तुम सृष्टि करता हो, जगतके दुःख हरता हो। खड़े बिलखा रहे भविजन, हंसाओगे तो क्या होगा ॥ ३ ॥ तुम्हारी भक्ति ओ प्रीती, यहां तक खींच लाई है। पड़े दुखमें तड़फते हैं, जिलाओगे तो क्या होगा ॥ ४ ॥ "विद्या" सिर ताज जिनराजा, शरण दर्शन चरण आशा। प्रभू मन तीव्र अभिलाषा, दरश दोगे तो क्या होगा ॥ ५ ॥

१०७ जैन महत्व

(तर्ज:—मन लागो—रामफकीरीमें)

सुख पायो जैन धरम हितमें ॥ टेक ॥ जो सुख भाई जैन धरममें, सो सुख नाहीं अनमतमें ॥ सुख०॥ जैन धरममें हिंसा पाप है दुख पशु हिंसा हिम्मतमें ॥ सु० ॥टेक ॥ मोक्ष मार्गका जैन सुगम पथ, उत्तम मुक्ति नसीयतमें ॥ सु० ॥ नहीं सतावो किसी जीवको, दुःख अनेको पशुगतमें ॥ सु० ॥ टेक ॥ अन्य धरम विष भरा कटोरा, दुःख कुदेवी अमृतमें ॥ सु० ॥ पान करो रस जिनमत "विद्या' त्यागे जावे दुरगतमें ॥ सु० ॥ टेक ॥

१०८ नारि भूषण राग मल्हार

निश दिन श्री जिन मोहिअधार, हमारा शील धर्म शृंगार ॥टेक ॥ शील अनूपम स्त्री भूषण, शील रत्न गल हार ॥हमारा०॥ टेक॥शीलकी अद्‌भुत विचित्र महिमा शील कीर्ति पतवार॥टेक॥ ह० ॥ शील धर्म बिन नारी पशु सम व्यर्थ जन्म संसार ॥ टेक ॥ ह० ॥ पति भक्ती नितनेम धरमसे किया करो हरवार ॥ टेक ॥ ह० ॥ पतिको परमेश्वर सम जानो प्रेम भक्ति मन प्यार॥टेक॥ह०॥ पतिके गुण अवगुण अमृत सम पती मोक्ष मग द्वार ॥टेक ॥ह०॥ पति भक्तिसे मुक्तीजानो "विद्या" तन, मन, वार ॥ टेक ॥

१०६ हमारा कर्त्तव्य

(तर्ज—कत्ल करते हैं मगर—कहते हैं जीना होगा)

जिन चरणोंमें सदा माथ नवाना होगा। रोज सुबह शाम तुम्हें फर्ज़ बजाना होगा ॥ १ ॥ कुछ भी करो पाप पुन्य मर्जी तुम्हारी साहेब। जीवनका जमा, खर्च अन्त बताना होगा ॥ २ ॥ ये ख़ामो ख्याल ग़लत मरनेके पीछे क्या हो। जो ये सोचेगा उसे नर्कमें जाना होगा ॥ ३ ॥ दान पुण्य, धरम—शुभ कामसे प्रीती रक्खो। इनसे मूं मोड़नेसे दुःख उठाना—होगा ॥ ४ ॥ औषधि, दान, अभय—, शास्त्र, अहारा, देना। लोभ, मद, क्रोधसे, दिल शीघ्र हटाना होगा ॥ ५ ॥ 'विद्या" घबड़ाना नहिं, भक्तिका फल अमृत जानो। श्री जी भक्तिमें चेतन, सरको झुकाना होगा ॥ ६ ॥

११० पार्श्व पूजन ।

सुनियो प्यारे महराज—तुम हो मेरे सरताज, आई पूजनके काज समलिया जान ॥ टेक ॥ प्रभु पारस कृपाल मुझपर होवो दयाल । राखो दुखियाकी लाज अरजिया जान ॥ टेक ॥ मुझको देवो सुबुद्धि दूर होगी कुबुद्धि । आई चरणोंमें आज शरणिया जान ॥ टेक ॥ तारे अंजनसे चोर कृपा होवे इस ओर । मैं हूं दुखिया संसारी भ्रमतिया जान ॥टेक॥ "विद्या" दासी तुम्हारी, दुखसे होवे न्यारी । जाती जिनमत पे वारी खबरिया जान ॥टेक॥

१११ राजुलका वैराग्य ।

श्री जिन धर्मकी श्रद्धा मेरे मन अब समाई है । छवी बैराग्यकी मूरत मुझे प्रियतर सुहाई है ॥ पिता मुझको इज़ाज़तदो प्रभू नेमीके ढिग जाऊं । मुझे क्यों रोकती माता बताओ क्या भलाई है ॥ बिना प्रभु नेमके जीवन निरा नीरस मेरे भाई । मेरे गिरनारी जानेसे तुम्हारी क्या बुराई है ॥ मेरा दूजा नहीं कोई जो मैं गिरनारी न जाऊं । मुझे बस नेमही प्यारा जो लव उनसें लगाई हैं ॥ गई राजुलजी गिरनारी तपाई देह अति भारी । 'विद्या' दासी तुम्हारी भी शरण चरणोंमें आई है ॥

११२ जीवनकी चार पर्यायें ।

चंचल मनको धरममें लगाना रे, कुदेवमसे ये दिल हटानारे प्यारा भारत वतन, दुर्लभ मनुष रतन । बिन धर्म है पतन, निश्चयसे कर जतन ॥ अपने मनको धरममें लगाना रे, जिसमें

सुक्खोंका नाहीं ठिकाना रे ॥ शुभ कर्म जब किया, मानुष जनम लिया, फिर क्या बता किया, बिन धर्म क्यों जिया ॥ मिथ्या मतमें न धन अब गमाना रे, जिन चरणोंमें सरको झुकाना रे। खेलतमें बालबन, भार्या जवानी पन, मध्यम गोरख भवन, अब आया वृद्धपन तुझे मखमलका विस्तर सुहाना रे, अब निश्चय नरक दुख उठानारे ॥ अब भी संभल संभल, गिन्नीपे मत फिसल, कोरत भवन अटल, दिव्य शक्ति आतमबल ॥ दान देना दिलाना करानारे "विद्या" गिरतोंको मारग बतानारे ॥

११३ धर्म निष्ठा ।

प्रभु आश लगी मनतेरे दरशकी सो चरणन शीश झुकाय दिया। छवि वराग्य बसी मेरे इस दिल, वो मन मिथ्यातम हटाय लिया ॥ इस मोह महातम नींदने मुझको, घोर अघोरी बनाय दिया। अब शीघ्रही आकर तारो प्रभू इस नींदने खूब सुलाय दिया ॥ जरादेके दरश मेरे मनको बैराग्य छवि दिखला नैननको। देखे बिना नहि चैन इस तनको, चिन्ताने देह जलाय दिया। "विद्या" आई शरण प्रभु आज तुमारे, तुम दुखियनके लाल प्यारे। सबजीवनके हो तारन हारे, ओसमें आशन जमाय दिया ॥

श्रीविद्यावती कृत

(११४) पर्युषण पर्व भजनावली

उत्तम क्षमा—गजल कव्वाली

उत्तम क्षमाको धारो, दशलक्ष पर्व वालो। मनमें न क्रोध लाओ, हे ऊंचे भाव वालो ॥ १ ॥ उत्तम क्षमाके धारी फैला दो कीति

सारी। सुमरो क्षमाकी मुद्रा, जैनी कहाने वालो ॥ २ ॥ फेरो क्षमाकी माला, फैला ये मंत्र आला। उत्तम क्षमाको रटलो भक्ती-के मार्ग वालो ॥ ३ ॥ फैलादो शांति जगमें,उत्तम क्षमासे सबमें। भावोंकी शुद्धि करलो, खोटे विचार वालो ॥ ४ ॥ माया ममत्व छोड़ो, प्रभुजीसे नेह जोड़ो। तृष्णाको अब घटाओ, दानी कहाने वालो ॥५॥ दश दिन न क्रोध करना, पापोंसे डरते रहना। विद्या विनयको सुनलो मुक्तीके जाने वालो ॥ ६ ॥

उत्तम मार्दव

उत्तम मार्दव व्रत करो सब मान कुछ करना नहीं। मान कर-नेसे कभी भी लाभ कुछ होता नहीं ॥ मानी नरकमें दुख उठाते, जायकर नर्कोंमें वे। अभिमानसे होती है सबको फायदा बिलकुल नहीं ॥ अभिमानमें रावण मरा अरु दुर्दशा उसकी हुई। दुख उठाये सैकड़ों पर सुख मिला कुछ भी नहीं ॥ दश पर्व व्रतोंके दिनोंमें भाव समताके धरो। संतोष व्रत धारण करो अरु धैर्यको त्यागो नहीं। योग्य नित प्रभु दर्श करना,अष्ट द्रव्यीमेलसे। निश्चल है कैसी शांत मुद्रा मान इसमें कुछ नहीं। मान विषका कूप है गति नीचमें ले जायगा अभिमान ज्ञानी मत करो, अरु धर्मको विसरो नहीं। जाप मार्दव की जपो,छोटे बड़ोंको सम लखो। करती विनय "विद्या" यही कि, मान कुछ करना नहीं।

उत्तम आर्जव कहरवा।

(तर्ज:—हो जिन तुम सुजस उजागर तम हर सूर सूर सूर)

व्रतपालो उत्तम आर्जव,छलसे दूर दूर दूर। आओ कपट नीतिसे बाज कपटी दूर दूर दूर ॥ १ ॥ अब जपलो आर्जव माला, छलका करदे

मूं काला। ये मंत्रोंमें मंत्र निराला,सुखसे पूर पूर पूर॥२॥सब सुन लो जैनी भाई, ये छल है बहु दुख दाई। है निश्चय धरम सहाई, विपदा चूर चूर चूर ॥ ३ ॥ कोई रंचक दगा न करना, छलियासे डरते रहना। सब मनमें सदा सुमरना, जिनका नूर नूर नूर ॥४॥ हे सरल स्वभावी जैनी, इस छलकी धारा पैनी। "विद्या" मत चढ़ये नसैनी, श्रावक शूर शूर शूर ॥ ५ ॥

उत्तम सत्य

जगत में उत्तम सत्य महान !

बुद्धिवान गुणवान ॥जगतमें॥ झूठ बचन नहिं मुखसे बोलो, झूठ महा दुख खान ॥जगतमें०॥ दुनियामें है सत्यकी महिमा, सत्य ही मंत्र महान ॥जगतमें०॥ दृढ़ प्रतिज्ञ बन जो सत बोले तो निश्चय कल्याण ॥ जगतमें० ॥ पर विश्वास घात न करना,और न करना मान ॥ जगतमें० ॥ पर वस्तुमें मन न लुभानो, चाहे जावें प्राण ॥ जगतमें० ॥ सत्य सत्य सब नित्य ही सुमरो, गाकर उसका गान ॥ जगतमें० ॥ उत्तम सत्यकी माला जपलो,धरकर हृदे ध्यान ॥जगतमें०॥हाथ जोड़ सब शीश नवावें, दे प्रभु यह बरदान ॥जगत में० ॥ विद्या विनय यही है प्रभुजी, पाऊं उच्च स्थान ॥ जगतमें० ॥

उत्तम शौच

जैनी धारियो जी,उत्तम शौच आज मन भाया ॥टेक॥ दुख दाई लालच दुख देता सुनलो उसका हाल। सच्चे मनसे लोभ त्याग दो ये जीका जंजाल ॥१॥टेक॥ कौन कहत है लोभ बिना तुम,होवोगे कंगाल। दूर हटाओ दिलसे इसको कैसा रही ख्याल ॥२॥ टेक ॥ निर्लोभी बननेकी शिक्षा प्रभुसे लेलो आज। उत्तम शौचकी आप

अपलो मुक्त का ये साज ॥ ३ ॥ टेक ॥ राग द्वेष मनमें नहिं लाना ये है काला पाप । निज सरूप पहिचान लो फिर देखो आपहि आप ॥ ४॥टेक॥हृदे में संतोष धारो निश्चय बेड़ा पार । "विद्या" पर्वके उत्तम दिनमें कर अपना उद्धार ॥५॥ टेक ॥

उत्तम संयम राग रेखता

(तर्ज-भगवान आदिनाथ सो मन मेरा लगा)

संयममें तेरा मन बता, अब क्यों नहीं लगता । संयम चेतन करता नहिं भोगोंमें क्यों फंसता ॥ १ ॥ चेतन सभंलजा अब भी नरकोंमें क्यों धसता । करकरके कपट जाल क्यों भोगोंको है करता ॥ २ ॥ संयम रतन सभांल ले विषयोंमें विष दिखता । भव भव बिगड़ गये तेरे अब क्यों नहीं सुनता ॥ ३ ॥ जग सून्य है संयम बिना पापोंसे नहिं लजता । छहकायके जीवों पै रहम क्यों नहीं करता ॥ ४ ॥ सब इन्द्रियां बशमें रखो धारण करो समता । इतना किये बिन पापसे कैसे भला बचता ॥ ५ ॥ दुनियांमें कहीं भी रहो कुछ हो नहीं सकता । "विद्या" बिना संयमके देखो कैसा है रुलता ॥

उत्तम तप गजल

आज उत्तम तप विरतमें मन लगाना चाहिये । इस दुःख दाई लाभसे अब दिल हटाना चाहिये ॥ १ ॥ निर्लोभी अब बन जाइये लोभ है जहरी छुरा । लोभ लालचको हृदयसे अब घटाना चाहिये ॥ २ ॥ ये लोभ दुश्मन जानका है जीव लेकर जायगा । इस कष्ट मय जीवनको सुखसे अब बिताना चाहिये ॥ द्वादश विधिके तप कठिन है, कैसे कबये होयंगे । पर्वके उत्तम दिनोंमें तन तपाना

चाहिये ॥ ४ ॥ नर भव महा दुर्लभ रतन मुश्किलसे "विद्या" है मिला ॥ तो क्या बिना तपके इसे, योंही गमाना चाहिये ॥ ५ ॥

उत्तम त्याग (राग-बंजारा)

मन उत्तम त्याग समाया, नरभव जीवनका पाया। है दान चार परकारा, दे औषधि दान अहारा ॥ टेक ॥ दिल अभय शास्त्र मनभाया, नरभव जीवनका पाया। तप, राग द्वेष, निरवारे, मेरे कर्म शत्रुको मारे। मुनियोंने देह तपाया, मेरे मन त्याग सुहाया।२॥ ये जीवन बहु दुखदाई; ये विपदा तप बिन आई। क्यों पाप कूप खुदवाया, नर भव जीवनका पाया ॥ ३ ॥ दुनिया भी अन्तमें न्यारी "विद्या" निश्चय है ख्वारो। कह प्रभुसे नेह लगाया, मेरे मन त्याग समाया॥ ४ ॥

(उत्तम आकिंचन)

(रघुवर कौशल्याके लाल मुनिकी यज्ञ रचाने वाले)

उत्तम आकिंचन व्रतधार जैनी मात्र कहाने वाले। जनी मात्र कहाने वाले, त्यागका रूप दिखाने वाले ॥ १ ॥ त्यागो चौबिस परिग्रह भेद। फिर घर तीरथ सिखर सम्मेद करना अवश्यक नहीं खेद, धर्मकी बाढ़ बढ़ाने वाले ॥ २ ॥ निश्चय जिनवाणी श्रद्धान, जगमें जैनी धर्म प्रधान। कहते बुद्धिवान गुणवान, जग उपदेश सिखाने वाले॥ ३ ॥ ये है दुखदाई संसार, इसमें सुखपाना दुश्वार। जीवके दुश्मन कई हजार, पग पग दु:ख दिलाने वाले ॥ ४ ॥ है दुनियां निस्सार जायेंगे सब कोई हाथ पसार। "विद्या" दान चार परकार, मुक्तिकी राह बताने वाले ॥ ५ ॥

नोट—श्री मती विद्यावती कृत "विद्याविनोद" नामक बड़ा संग्रह अलग तैयार हो रहा।

(११५) गुर्वावली।

जैवन्त दयावन्त सुगुरु देव हमारे। संसार विषम खारसों जिन भक्त उधारे ॥टेक॥ जिनवीरके पीछे यहां निर्वानके थानो। बासठ बरषमें तीन भये केवल ज्ञानी ॥ फिर सौ वरषमें पांच श्रुत केवली भये। सर्वाङ्ग द्वादशांगके उमंग रस लये ॥ जैवंत० ॥१॥ तिस बाद वर्ष एक शतक और तिरासी। इसमें हुए दश पूर्व ग्यार अङ्गके भाषी ॥ ग्यारे महामुनीश ज्ञानदानके दाता। गुरुदेव सोइ देंहिगे भविवृन्दको साता ॥ जैवन्त ॥२॥ तिसबाद वर्ष दोय शतक बीसके माहीं। मुनि पंच ग्यार अङ्गके पाठी हुए यांहीं ॥ तिसबाद बरस एकसौ अठारमें जानी। मुनि चार हुए एक आचारांग के ज्ञानी ॥ जैवन्त ॥३॥ तिसबाद हुए हैं जु सुगुरु पूर्वके धारक। करुणानिधान भक्तको भवसिन्धु उधारक ॥ करकंजतैं गुरु मेरे ऊपर छांह कीजिये। दुख द्वन्द्को निकन्दके आनन्द दीजिये ॥ जैवन्त० ॥४॥ जिनवीरके पीछेसों बरस छहसौ तिरासी। तब तक रहे इक अङ्गके गुरु देव अभ्यासी ॥ तिसबाद कोई फिर न हुए अङ्गके धारी। पर होते भये महा सुविद्वान उदारी ॥ जैवन्त ॥५॥ जिनसों रहा इस कालमें जिनधर्म्मका साका। रोपा है सात भंग-का अभङ्ग पताका ॥ गुरुदेव नयंधरको आदि दे बड़े नामी। निरग्रंथ जैनपंथके गुरु देव जो स्वामी ॥ जैवन्त ॥६॥ भाषों कहां लो नाम बड़ी वार लगेगा ॥ परनाम करों जिस्से बेड़ा पार लगेगा ॥ जिसमेंसे कछु इक नाम सूत्रकारके कहों। जिन नामके प्रभावसे परभावको दहों ॥ जैवन्त ॥७॥ तत्वार्थसूत्र नामि उमास्वामि किया

है। गुरुदेवने संक्षेपसे बया काम किया है॥ जिसमें अपार अर्थने विश्राम लिया है। बुधवृंद जिसे ओरसे परनाम किया है॥ जैवंत० वह सूत्र है इस कालमें जिनपंथकी पूंजी। सम्यक्त्व ज्ञान भाव है जिस सूत्रकी कुंजी॥ लड़ते हैं उसी सूत्रसों परवादके मूंजी। फिर हारके हट जाते हैं इक पक्षके लूंजी। जैवंत ॥८॥ स्वामी समन्तभद्र महाभाष्य रचा है। सवंग सात भंगका उमंग मचा है॥ परवादियोंका सर्व गर्व जिससे पचा है। निर्वान सदनका सोई सोपान जचा है॥ जैवंत० ॥१०॥ अकलंक देव राजवारतीक बनाया। परमान नय निछेसों सब वस्तु बताया॥ इश्लोक वारतीक विद्यानन्दजी मंडा। गुरुदेवने जड़मूल सी पाखण्डको खंडा॥ जैवंत ॥११॥ गुरु पूज्यपादजी हुये मरजादके धोरी। सर्वार्थसिद्धि सूत्रकी टीका जिन्हों जोरी॥ जिसके लखे सों फिर न रहे चित्तमें भरम॥ भविजीवको भावे है सुपरभावका मरम॥ जैवंत० ॥१२॥ धरसेन गुरूजी हरो भवि वृंदकी बीथा। अग्रायणीय पूर्वमें कुछ ज्ञान जिन्हें था॥ तिनके हुए दो शिष्य पुष्पदन्त भुजबली। धवलादिकोंका सूत्र किया जिस्से मग चली॥ जै० ॥१३॥ गुरु औरने उस सूत्रका सब अर्थ लहा है। तिन धवल महाधवल जयसुधवल कहा है॥ गुरु नेमिचन्द्रजी हुये धवलादिके पाठी। सिद्धान्तके चक्रीशकी पदवी जिन्हों गांठी॥जै०॥ ॥१४॥ तिन तीनोंही सिद्धान्तके अनुसारसों प्यारे। गोमट्टसार आदि सुसिद्धान्त उचारे॥ यह पहिले सुसिद्धान्तका विरतंत कहा है। अब और सुनो भावसों जो भेद महा है॥ जै० ॥१५॥ गुणधर मुनीशने पढ़ा था तीजा पराभृत। ज्ञानप्रवाद पूर्वमें जो भेद हैं आश्रित॥ गुरु हस्तिनागजीने सोई

जिनसो लहा है । फिर तिन सों यतीनायकने मूल गहा है ॥जै० ॥१६॥ तिन चूणिका स्वरूप तिस्से सूत्र बनाया । परमान छ हजार यों सिद्धान्तमें गाया ॥ तिसका किया उद्धरण समुद्धरण जु टीका । बारह हजारके प्रमान ज्ञानकी टीका ॥ जै०॥१७॥ तिस हीसे रचा कुंदकुंदजीने सुशासन । जो आत्मीक पर्म धर्मका है प्रकाशन ॥ पंचास्तिकाय समयसार सारप्रवचन । इत्यादि सुसिद्धान्त स्याद्वादका रचन ॥ जै० ॥१८॥ सम्यक्त्वज्ञान दर्श सुचारित्र अनूपा । गुरुदेवने अध्यात्मीक धर्म निरूपा ॥ गुरुदेव अमीइंदुने तिनकी करी टीका ॥ झरता है निजानन्द अमीवृंद सरीका ॥जै०॥ ॥१८॥ चरणानुवेद भेदके निवेदके करता । गुरुदेव जे भये हैं पापतापके हरता ॥ श्रीवट्टकेर देवजी वसुनंदजी चक्री । निरग्रन्थ ग्रंथ पंथके निरग्रंथके शक्री ॥ जै वन्त ॥२०॥ योगींद्रदेवने रचा परमात्मा प्रकाशं । शुभचन्द्रने किया है ज्ञान आरणौ विकाश ॥ की पद्मनन्दजीने पद्मनन्द पचीसी । शिव कोटिने अराधना सुसार रचीसी ॥ जै वन्त० ॥२१॥ दोसंघ तीन संघ चारसंघ पांचसंघ । षटसंघ । जातसंघलो गुरु रचा प्रबन्ध ॥ गुरु देवनंदिने किया जिनेन्द्र व्याकरन । जिस्से हुआ परवादियोंके मानका हरन ॥ जै वन्त० ॥२२॥ गुरुदेवने रची है रुचिर जैन संहिता । वरनाश्रमादिकी क्रिया कही हैं संहिता ॥ वसुनन्दि वीरनंदि यशोनंदि संहिता । इत्यादि बनी हैं दशों परकार संहिता ॥जै वन्त ॥२३॥ परमेयकमलमारतण्ड-के हुए कर्त्ता । माणिक्यनंदि देव नयप्रमाणके भर्ता ॥ जै वन्त सिद्ध सेन सुगुरु देव दिवाकर । जै वादिसिंह देवसिंह जैति यशोधर ॥ जै वन्त ॥२४॥ श्रीदत्त काण भिक्षु और पात्रकेसरी । श्रीवज्रसूर

महासेन श्रीप्रभाकरी ॥ श्रीजटाचार्य वीरसेन महासेन हैं। जै सेन शिरीपाल मुझे कामधेन हैं ॥जै वंत॥२५॥ इन एक एक गुरूने जो ग्रंथ बनाया। कहि कौन सके नाम कोई पार न पाया॥ जिनसेन गुरूने महापुराण रचा है। मरजाद क्रिया कांडका सब भेद सचा है ॥ जै वंत ॥२६॥ गुणभद्र गुरूने रचा उत्तर पुराणको। सो देव सुगुरु देवजी कल्याण थानको॥ रविसेन गुरूजीने रचा रामका पुरान। जो मोह तिमर भाननेको भानुके समान॥ जै० ॥२७॥ पुन्नाट गणविषै हुये जिनसेन दूसरे*। हरिवंशको बनाके दास आसको भरे॥ इत्यादि जे वसुबीस सुगुण मूलके धारी। निर्ग्रंथ हुए हैं गुरु जिनग्रंथके कारी॥ जै वंत ॥२८॥ बन्दौं तिन्हें मुनि जे हुये कवि काव्य करैया। बन्दामि गमक साधु जो टीकाके धरैया॥ वादी नमो मुनिवादमें परवाद हरैया। गुरु आगमीकको नमों उपदेश भरैया॥ जै वंत ॥२९॥ ये नाम सुगुरु देवका कल्याण कर है। भवि वृन्दका ततकाल ही दुख द्वन्द हरै है॥ धनधान्य ऋद्धि सिद्धि नवो निद्धि भरै है। आनन्द कंद देहि सबी विघ्न टरै है॥ जैवन्त ॥ ३० ॥ इस कण्ठमें धारै जो सुगुरु नामकी माला। परतीतिसों उरप्रीतिसों ध्यावे जु त्रिकाला॥ यह लोक का सुख भोग सो सुरलोकमें जावै। नरलोकमें फिर आयके निरवानको पावै ॥३१॥ जैवन्त दयावन्त सुगुरु देव हमारे॥ संसार विषय खारसों जिन भक्त उधारे॥ इति

११६ मंगलाष्टक

कवित्त ३१ मात्रा।

संघ सहित श्रीकुन्दकुन्द गुरु, वंदन हेत गए गिरनार। वाद

परो तहं संशयमतिसों, साक्षी वदी अम्बिकाकार ॥ सत्य पंथ निरग्रंथ दिगम्बर, कही सुरी तहं प्रगट पुकार । सो गुरुदेव बसो उर मेरे, विघ्न हरण मंगल करतार ॥१॥ श्रीअकलंक देव मुनिवर सों, वाद रच्यों जहं बौद्ध विचार । तारा देवी घटमें थापी, पटके ओट करत उच्चार ॥ जीत्यो स्याद्वाद बल मुनिवर, बौद्ध बेधि तारा मद टार ॥ सो० ॥२॥ स्वामि समंतभद्र मुनिवरसों, शिवकोटी हठ कियो अपार । बन्दन करो शंभुपिण्डीको, तब गुरु रच्यो स्वयंभू भार ॥ बन्दन करत पिण्डिका फाटी, प्रगट भये जिनचन्द्र उदार ॥ सो० ॥३॥ श्रीमत मानतुङ्ग मुनिवरपर, भूप कोप जब कियो गंवार बन्द कियो तालेमें तबहीं, भक्तामर गुरु रच्यो उदार ॥ चक्रेश्वरी प्रकट तब ह्वैके, बंधन काट कियो जयकार ॥ सो० ॥ ४ ॥ श्रीमत-वादिराज मुनिवरसों, कह्यो कुष्ठ भूपति तिहिं वार श्रावकसेठ कह्यो तिहं अवसर, मेरे गुरु कंचन तन धार ॥ तबहीं एकीभाव रच्यो गुरु, तन सुवर्णदुति भयो अपार । सो० ॥ ५ ॥ श्रीमत कुमुदचंद्र मुनिवरसों, वादपरो जहं सभा मझार । तबहीं श्रीकल्याणधाम थुति, श्रीगुरु रचना रची अपार ॥ तब प्रतिमा श्रीपार्श्वनाथकी, प्रगट भई त्रिभुवन जयकार । सो० ।६ श्रीमत । विद्यानन्दि जबै, श्रीदेवागम थुति सुनी सुधार । अर्थ हेत पहुंचो जिनमंदिर, मिलो अर्थ तिहं सुखदातार ॥ तबव्रत परम दिगम्बरको धर, परमतको कीनो परिहार । सो० ।७। श्रीमत अभयचंद गुरुसों जब, दिल्लीपति इमिकही पुकार । के तुम मोहि दिखावहु अतिशय, के पकरो मेरो मतसार ॥ तब गुरु प्रगट अलौलिक अतिशय, तुरत हरो ताको मदभार । सो गुरुदेव बसो उर मेरे, विघ्न हरण मंगल करतार ॥ ८ ॥

दोहा—बिघन हरण मंगल करण वांछित फल दातार।
वृंदावन अष्टक रच्यो, करो कंठ सुखकार॥

११७ लाकनी तिर्थंकर चिन्ह।

अब कहूं चिन्ह सो प्रभुके चित लगैये। धरि ध्यान तिनहिंकी भवसागरतरि जैये॥ टेक॥ श्री आदिनाथके बृषभचिन्ह राजे है। जिन अजितनाथके कुंजर छवि छाजे है॥ श्रीसंभवनाथ तुरंग चिन्ह है तनमें। अरु अभिनन्दनके मरकट लखि चिन्हनमें चकवा श्रीसुमतिजिनेश प्रभूके राजै। अरु पद्मप्रभूके पद्मचिन्ह है छाजे॥ पहिचान चिन्ह जब जिनको शीश नवैये॥ धरि०॥ १॥ सांथिया सुपार्श्वनाथ प्रभूके राजै। जिनचन्द्रप्रभूके चंद्रचिन्ह छवि छाजै॥ श्रीपुष्पदंतके लक्षण मगर सुना है। श्रीशीतलप्रभुके पगमें वृक्ष गिना है॥ श्रेयांसनाथके गैंड़ा सुन रे भाई। अरु वांसुपूज्यके महिषाकी छवि छाई॥ अरू वांसुपूज्यजा रक्तवरण चित लैये॥ धरि०॥२॥ पग लक्षण विमल बराह प्रभूके जानो। श्रीजिन अनंतके सेई पग पहिचानो॥ श्रीधर्मनाथके बज्र चिन्ह है पगमें। श्रीशांतिनाथके चिन्ह सुना है मृग में॥ श्रीकुंथुनाथके छेला जानो मन में। श्रीअरहनाथके मीनचिन्ह है तनमें॥ ये देख चिन्ह जब जिनको शीश नवैये॥ धरि०॥३॥ श्रीमल्लिनाथके कुंभदेख शिरनाऊं। श्रीमुनिसुव्रतके कच्छ देख मैं ध्याऊं॥ नमिनाथ प्रभूके कमलचिन्ह चितदेना। श्रीनेमिनाथके शंख चिन्ह लखि लेना। श्रीपार्श्वनाथके नाग देख लो तनमें। श्रीमहावीरके सिंह छबी चिन्हन

में ॥ इह खुशीलालकी अरजु हृदयमें लैये ॥:धरि ध्यान तिनहिं का भवसागर तरि जैये ॥४॥ इति ॥

११८ संसार दुख दर्पण ।

दोहा—बीर जिनेश्वर पद नमूं, जगजीवन सुखदाय ।
कहूं दशा संसारकी सुनो भविक मन लाय ॥

जोगी रासा—या जगमें नहिं दीखत कोई, जीव सुखी संसारी । दुखिया सब जग जीव दिखाई,देत अनेक प्रकारी॥कबहूं जियने जाय नरक गति, सागर लों थिति पाई । मारन छेदन ताड़न पीड़न, कष्ट लहे अधिकाई ॥ छूवत भूमि हुई इम पीड़ा, बिच्छू सहस डसाना । भूख लगी तिहुं जगका खाऊं, अन्न मिला नहिं दाना ॥ होय तृषातुर चह्यो सिंधु जल, बून्द एक नहिं पाई । रक्त राधसे पूरित नदियां, बहती हैं दुःखदाई ॥ असि सम तीक्ष्ण पत्र वृक्षके, जो तन चीर बिदारें । टूटे फल ज्यों पत्थर बरसैं, खण्ड खण्ड कर डारें ॥ गरमी सरदी कष्ट दायनी, है अन्धियार भयाना । पृथ्वी की रज अति दुर्गन्धा, व्याकुल करत महाना ॥ कष्ट नरकके जांय न बरने, जो बहुकाल सहे हैं । पशु गति पाई फिर दुख दाई, कष्ट अनेक लहे हैं ॥ भार बहन अरु छेदन भेदन, भूख प्यास दुखकारी । जलचर, नभचर,थलचर पशुको, मारत आन शिकारी । पिंजरे पड़ कर, खूंटे बंध कर, बन्धनके दुख पावें । चाबुक पैनी, डंडा, लाठी, मार सभीसे खावें ॥ पापी हिरदे धार दुष्टता, पंचेन्द्री पशु मारे । देवी पर बलिदान नामसे । असिके घाट उतारे ॥ है पशुगति अति कष्ट दायनी, पाय लहैं दुख प्रानी । जो भोगे दुख,

वह जिय जाने, या प्रभु केवल ज्ञानी॥ कुछ शुभ भावन कर या जियने, सुरगति सुन्दर पाई। पर मन इच्छित सुख नहिं पायो, दुख पायो अधिकाई॥ रंक भयो, लख सम्पत परकी, झुर झुर बदन फिरायो। देख २ सुख भोग पराये, कर चिन्ता, दुख पायो॥ बहु दुख माना, चिन्ता कीनी, रुदन किया दुःखदाई। जब मृत्युसे मास छः पहिले, गलमाला मुरझाई॥ हा हा! यह सुख भोग छुटेंगे अब होगी थिति पूरी। इच्छा मनकी पूरी नाहीं, रह गई हाय अधूरी॥ कोई पुन्य उदय जब आयो, तब मानुष गति पाई। कर्म उदय कर या गति मांहो, कष्ट अनेक लहाई॥ पुत्र बिना दुखिया नर कोई, चिन्तत मनमें ऐसे। मम धन संपति कौन भोगवै, नाम चलेगा कैसे॥ होत पुत्र मरजाय दुखी तब, यह कह रुदन मचावे। जो ना होता तो अच्छा था, कष्ट सहा नहिं जावें॥ जोयो पुत्र भयो दुर्व्यसनी धन सम्पति सब खोयो। अब दुख मानत मातपिता सब, कुलका नाम डुबोयो॥ मित्र स्वारथी स्वारथ सावन कर आंखें दिखलावे। बैरी बनकर धन यश प्राणन, का ग्राहक बन जावे॥ कुलटा नारी कहल कारणी, कर्कश बचन उचारें। दोऊ कुलकी लाज गंवावे, पतिको विष दे मारे॥ वेश्यागामी, परतिय लम्पट, ज्वारी, मांसाहारी। मद मतवाले पतिसे दुखिया हैं पतिबरता नारी॥ पुत्र पिता पर अरि सम टूटे, चाहे यह मर जावे। पिता पुत्र पर रुष्ट होय कर, घर से दूर करावे॥ भाई भाई लड़त स्वान सम, हैं प्राणनके लेवा। धार कषाय उपाधि मचावे, हैं दोऊ दुख देवा॥ विधवा नारि पती बिन दुखिया बिन नारी पति कोई। कोई बाला वृद्ध पती पा,

दुखित भतो मन होई ॥ इष्ट मित्रका होय बिछोहा, शोक करत तम छीजे। बाल अनाथ न कोउ सहाई, किसका आश्रय लीजे॥ कुल कुटुम्बके लोग स्वार्थी, स्वारथ वश दुख देवें। दाव लगेपर धन सम्पति क्यों, प्राणन तक हर लेवें ॥ नृप अन्यायी सब धन छीने, अत्याचार करै है। बन्दी गृहमें डार मार कर, सम्पति सर्व हरे है ॥ धर्म नाम पर लड़त भयाने, धन लूटैं अघतापी। मार छेद कर प्राण लेत हर, रक्त बहावें पापी ॥ न्यायासन पर बैठ करैं अन्याय, घूस कोई लेवे। दोषीको निर्दोष बनावे, दण्ड सुजनको देवे॥ मारै लूटैं चोर लुटेरे, स्याल व्याल डरपावें। नीर डुबावें अगनि जलावें सिंहादिक हन खावें ॥ मरी रोग दुर्भिक्ष सतावे, बिजुरी तनको जारै कालभ थानक नित डरपावत, आन अचानक मारैं ॥ क्रोध मान माया अरु तृष्णा, या वश हो अघ कीनो। मार, किया अपमान, कपट कर, धन संपति सब छीनो ॥ परधन धरणी तियको हरकर, संकट आप उपायो। कारागृहमें कष्ट उठाये, कुलको लांछन लायो ॥ पायो निर्बल तन अति रोगी, या विदरूप भयाना। अंगहीन लंगड़ या लूला, हुआ अन्ध या काना ॥ कानन सुनत, न बोलत मुखसे, देखत नाहीं आपा। कुष्ट रोगसे गलित भयो तन, तब दारुण दुख व्यापा ॥ वृद्धावस्था अर्ध मृतक सम, पाय महा दुख माने जाहि मृत्युसे जग भय खावे, ताहि निकट अब आने ॥ कोई भिखारी दर दर याचत, दुर दुर वचन कहावे। रूखे सूखे झूठे टुकड़े, पाकर भूख मिटावे ॥ बिन धन, निर्धन, जन, निज मन में कल्पे और दुख मानै, देख धनी जनको दुख पावे, द्वेषईर्षादिक ठानैं ॥ धनी पुरुष मन, तोष न रंचक, तृष्णा वश दुख पावे।

लोभ पापका बाप, धरै मन, यासे कष्ट उठावै ॥ धनको लूटें चोर लुटेरे, अगनि जलै नस जावै ॥ तब देखो धनवान पुरुषको, सोच सोच मर जावे ॥ काहूके व्यवहार वणिजमें, टोटा आय गयो है ॥ टोटा खोटा दुखका कारण, यासे दुखित भयो है ॥ तृष्णाके वश धनपति भूपति, नरपति हैं सब कोई। संतोषामृत पान कियो नहिं, फिर कैसे सुख होई ॥ इन्द्रिय पांचों कर विषयनरत, बहु विध नाच नचावैं। मनकी गति अति चंचलपनकी, लेय विषयमें धावै ॥ रूप रंग रस गंध राग पर, जगजिय मन ललचावै। हो आशक्त दुखित अति होवें, अपने प्राण गमावें ॥ विषसम विषय विनासें धनबल, यश, दुखी, शुचिताई। प्राणआंय विषखाय विषय पर, भव भवमें दुखदाई ॥ जो माने सुख या जग माही, विषयादिक विष खाके। वह नर स्वान समान सुखी है, सूखा हाड़ चबाके ॥ है असार संसार दुखोंका द्वार विपतिका घर है। क्षण२ दुखकी हो बढ़वारी, आधि व्याधिका डर है ॥ मोही मोह में अंध होयकर, जग वस्तु थिर माने। मेरा घर दर धन जन धरना, बन्धु मित्र निज जाने ॥ हाड़ मांस अरु रक्त राधकी, देह अशुचि घिणकारी। रूप रंग पर याके मोहित, होत मनुष अ-विचारी ॥ जानत नाहीं रूप ढरै यह, ज्यों तरुवरकी छाया। बालू भींत समान नसै है, कंचन जैसी काया ॥ स्वारथके सब सगे संघाती, इष्ट मित्र जन प्यारे। निज स्वारथको साधन करके पलमें होवे न्यारे ॥ और किसीकी बात कहा यह, देह संग नहि आवै। जाको पोषें नित संतोषे, बहु विधि चैन करावै या संसार महावन भीतर, सार वस्तु नहि कोई ॥ कौन पदारथ

ऐसा कहिये, नास न जाको होई ॥ जल बुद् बुद्वत् जीवन जगमें, आस नहीं इक दिनकी । काल बली मुख खोलत जोहै, बाट एक पल छिनकी ॥ फिर जगमें, किससे मोह कीजे, कौन वस्तु थिर कहिये । ऐसे जग जंजाल जालमें, फँसकर बहु दुख लहिये ॥ कूए भांग पड़ीको पीकर, सबने सुध बुध खोई । उत्तम नर भव क्षेत्र पायकर, बेल न सुखकी बोई ॥ धर्म साध, परहित नहिं कीना, योंही जन्म गँवाया । मूढ़ पुरुषने रत्न अमोलक, सागर बीच डुबाया ॥ सुख चाहत भी सुख नहिं पावत, दुख पाव संसारी । याका कारण, मोह अज्ञता, अरु मिथ्यात दुखारी ॥ जो चाहे सुख, जिय संसारी, आपा परको जान । हित अनहित अरु पाप पुन्यका, सभी भेद पहिचानै ॥ विश्व प्रेम हिरदय बिच धारै, पर उपकारी होवै । पाप पंक आतम पर लागो संजम जलसे धोवै ॥ दर्शन; ज्ञान, सु चारित्र पालै, इच्छा भाव घटावै । पंच महाव्रत धारण करके, जगसे मोह हटावै ॥ यह जग वस्तु समस्त विनासैं, इनसे ममता त्यागै । आतम चिंतवन कर, निजमनमें, आतम हितमें लागै ॥ मैं आतम परमातम, चिद् आनन्द रूप सुख रूपी । अजर अमर गुण ज्ञान शांतिमय हूं आनंद स्वरूपी ॥ यह तन रूप स्वरूप न मेरो, मैं चेतन अविनाशी । ज्ञाता दृष्टा सुख अनन्त मय, हूं शिवपुर का वासी ॥ मेरी केवल ज्ञान ज्योतिसे, भरम तिमर नस जावे । मैं ऐसा शुद्धात्म, चिदानन्द, जब यह जीव लखावे ॥ तब ही कर्म कलंक विनासे, जीव अमर पद पावै । मिले निराकुल सुख अविनाशी, परमातम कहलावै ॥ आवे कब वह शुभ दिन जब मम, ज्ञान "ज्योति" जग जावै । सत्य अमर आतम को पाकर, मम जियरा सुख पावै ॥

दोहा—मेरी है यह भावना, सुख पावे संसार ।
मिले निराकुलता मुझे, हो आनन्द अपार ॥